TEXT CROSS WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186140

UNIVERSAL
LIBRARY

Osmania University

Call No. H 370 T423

Accession No. H 3197

Author

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.

बुनियादी शिक्षा-शास्त्र

[बुनियादी प्रशिक्षण विद्यालयों एवं
महाविद्यालयों के छात्राध्यापकों के लिए]

लेखक

राममोहन तिवारी

एम० ए०, बी० एड़ (बेसिक)

विनोद पुस्तक मन्दिर

हॉस्पिटल रोड, आगरा

प्रकाशक—

राजकिशोर अग्रवाल

विनोद पुस्तक मन्दिर

हास्पिटल रोड, आगरा

प्रथम संस्करण

सन् १९६१

मूल्य ४'५०

मुद्रक —

राजकिशोर अग्रवाल, कैलाश प्रिंटिंग प्रेस, बाग मुजफ्फर खाँ, आगरा

अपनी कहनी

प्रिय छात्र बन्धुओ,

आपके हितार्थ मेरी लेखनी ग्रीष्मावकाश मे भी जब—'बरसा रहा है रवि अनल, भूतल तवा सा जल रहा' : चलती रही और उसने फिर भी आपकी मांग को पूर्ण कर बुनियादी शिक्षा शास्त्र आपके कर कमलो मे पहुँचा ही दिया। लो ! भाषा भी सरल और सुबोध एव शैली रोचक तिस पर उच्च कोटि की भरपूर पाठ्य सामग्री। गागर मे सागर समझो। इसे पढ़ो, और कई बार पढ़ो।

यह तो रही तुम से बात। हाँ ! इस स्थल पर मैं उन सभी लेखको एवं विचारकों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, जिनके ग्रन्थो और विचारो के प्रकाश मे इस पुस्तक का निर्माण तुम्हारे लिए कर सका हूँ और जिनके उद्धरण इस पुस्तक को उपयोगी बनाने मे लिए गये है।

रचनात्मक सुझावो का आमन्त्रण है.
आपके मगल भविष्य की कामना करते हुए..

आर० एम० तिवारी

विषय-सूची

(१) बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्त एवं बाल मनोविज्ञान

१. **शिक्षा का अर्थ**—परिभाषाऐं, बुनियादी तालीम का अर्थ बापू के अनुसार शिक्षा । १

२. **शिक्षा के उद्देश्य**—शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य, वैयक्तिक एवं सामाजिक उद्देश्य—बुनियादी तालीम मे मान्य उद्देश्य । ३

३. **प्रचलित शिक्षा प्रणाली के दोष**—भूमिका-दोष उन्मूलन के उपाय—बुनियादी तालीम की उपयोगिता । ७

४. **सर्वोदय और शिक्षा**—सर्वोदय का अर्थ, सर्वोदयी समाज के गुण—सर्वोदय और बुनियादी शिक्षा । ११

५. **प्रजातन्त्र और शिक्षा**—प्रजातन्त्र का अर्थ, प्रजातन्त्र का प्रारम्भ, शिक्षा मे प्रजातन्त्र का श्रीगणेश, जनतन्त्रात्मक शिक्षा की विशेषताऐं, बुनियादो तालीम की जनतन्त्रात्मकता । १३

६. **मानव सभ्यता और शिक्षा**—भूमिका—मानव सभ्यता का—क्रमिक विकास और शिक्षा का विकसित स्वरूप । १७

७. **विश्व शान्ति और बुनियादी तालीम**—भूमिका अशान्ति क्यो—शान्ति स्थापित करने का उपाय, बुनियादी शिक्षा का विश्व शान्ति मे योग । १९

८. **स्वस्थ मनोरंजन और शिक्षा**—आवश्यकता, शिक्षा द्वारा स्वस्थ मनोरंजन का चयन—शाला द्वारा योग—बुनियादी तालीम और स्वस्थ मनोरंजन । २१

९. **बुनियादी शिक्षा के मूल सिद्धांत** २३

१०. **मूलोद्योग का चयन**—परिचय, चयन के बिन्दु-प्राथमिक शाला मे मूलोद्योग और उनका शैक्षणिक महत्व। २४

११. **बुनियादी तालीम के विभिन्न स्तर**—पूर्व बुनियादी, बुनियादी, उत्तर बुनियादी और प्रौढ़ शिक्षा। २६

१२. **बुनियादी शिक्षा और सर्वाङ्गीण विकास**—परिचय-मूलोद्योग केन्द्रित शिक्षण—सामुदायिक जीवन—खेल द्वारा शिक्षा, शारीरिक एव मानसिक विकास का समन्वय। २८

१३. **शिक्षा और मूलोद्योग एवं मूलोद्योग द्वारा शिक्षा**—स्पष्टीकरण—शिक्षा और मूलोद्योग—मूलोद्योग द्वारा शिक्षा। ३०

१४. **अबुनियादी तालीम और बुनियादी तालीम का अन्तर** ३२

१५. **मनोविज्ञान का क्षेत्र एवं विस्तार**—मनोविज्ञान की परिभाषा-मनोविज्ञान का क्षेत्र और विस्तार। ३४

१६. **शिक्षक और मनोविज्ञान**—शिक्षक के लिए मनोविज्ञान की आवश्यकता। ३७

१७. **मूलप्रवृत्तियां**—परिचय, सहज क्रियाऐं, मूल प्रवृत्तियाँ, मूल प्रवृत्तियो की विशेषताऐं—मूलप्रवृत्तियों और सहज प्रवृत्तियों में अन्तर, मानव और पशुओं की मूल प्रवृत्तियो मे अन्तर, मूलप्रवृत्तियाँ आदत के समान, मूलप्रवृत्तियो का शिक्षा में उपयोग—मूल प्रवृत्तियों का समाजीकरण। ३८

१८. **वंश परम्परा और वातावरण**—वंश परम्परा—वातावरण-वंश परम्परा के नियम। ४७

१९. **अवधान**—परिचय-अवधान का रूप, अवधान के प्रेरक, अवधान केन्द्रित करने के उपाय। ५३

२०. **बाल विकास की अवस्थाएं**। ५७

२१. **काम और खेल में अन्तर**—खेल की विशेषताएं, खेल तथा शिक्षा-शिक्षण पद्धतियो और उनमें खेल का उपयोग। ६०

२२. **स्मृति**—परिचय, अच्छ स्मृति की विशेषताएं। ६३

२३. **सीखना**—अर्थ—सीखने के नियम। ६५

२४. आदत—परिचय, आदत डालने के नियम—बुरी आदत मिटाना। ६६

२५. कार्य एवं थकान—थकान के लक्षण—कारण—दूर करने के उपाय। ७०

२६. कल्पना—प्रकार—शैक्षणिक महत्व। ७१

२७. चरित्र—परिचय, चरित्र गठन—बुनियादी शाला और चरित्र गठन। ७४

(२) शिक्षण की विशिष्ट पद्धतियाँ

२८ प्रोजेक्ट प्रणाली—भूमिका—प्राजेक्ट का अर्थ प्रोजेक्ट की क्रिया—शिक्षक की स्थिति—गुण—दोष, बुनियादी शिक्षा और प्रोजेक्ट विधि समानताएँ और असमानताएँ। ८१

२९ किंडरगार्टन—परिचय, पेस्टालाली की शिक्षा दर्शन-कार्य प्रणाली दैनिक कार्यक्रम, उपहार—गुण—दोष बुनियादी शिक्षा और किंडरगार्टन पद्धति। ८५

३०. डाल्टन—भूमिका, इतिहास, उद्देश्य एवं स्वरूप—मूल सिद्धान्त—कार्य प्रणाली—समय विभाग चक्र—शिक्षक की स्थिति, कार्य विवरण-प्रणाली के गुण—बुनियादी शिक्षा और डाल्टन योजना—भारत और डाल्टन प्रणाली। ८९

३१. क्रीड़ा पद्धति— ९४

३२. बुनियादी शिक्षा योजना—परिचय—कारण—सिद्धान्त, स्तर, पाठ्यक्रम, मूल्यांकन, शिक्षक का स्थान, शंका समाधान। ९६

३३. पूर्व बुनियादी शिक्षा। १००

३४. पाठन पद्धति—अर्थ—चयन एवं महत्व—अच्छी पाठनपद्धति १०३

३५. अध्यापन के सूत्र। १०४

३६. शिक्षकों के लिए आवश्यक निर्देश—शिक्षण क्रियाशीलता—

लोक शिक्षा—पाठ की तैयारी—पाठन—उच्चारण—भाव भंगिमा—कक्षा में अनुशासन। १०८

३७. **अध्यापन की युक्तियाँ**—अर्थ—प्रश्न करने के उद्देश्य—अच्छे प्रश्नों के लक्षण-अवांछनीय प्रश्न—बालको के उत्तर—भाषण विधि—कथन विधि—व्याख्या विधि— १११

३८. **सहायक सामग्री**—तात्पर्य—उपयोग—दृश्य—श्रव्य—नक्शे—चार्ट—चित्र—उद्योग सम्बन्धी सामान—श्याम-पाट—पाठ्यवस्तु—बुनियादी शिक्षा और सहायक सामग्री। ११६

३९. **पाठों के प्रकार**—परिचय—ज्ञानात्मक पाठ—भावोद्दीपक पाठ—कला पाठ। १२०

४०. **हरबर्ट के पंच सोपान**—पृष्ठ भूमि—प्रत्येक पद का परिचय १२२

४१. **पाठ सूत्र निर्माण**—विषय—प्रकरण—उद्देश्य, सहायक सामग्री—पूर्व ज्ञान—प्रस्तावना—उद्देश्य कथन—प्रस्तुतीकरण व्याख्या—बोध परीक्षा—पुनरावृत्ति और प्रयोग। १२४

४२. **गणित शिक्षण**—महत्व—शिक्षण के अवसर विश्लेषण—संश्लेषण—आगमन-निगमन—प्रयोग विधि—खोजप्रणाली—पुस्तक प्रणाली—मुखाग्र और लेखी गणित-त्रुटि संशोधन—सहायक सामग्री अन्य बातें। १२७

४३. **मातृभाषा शिक्षण**—महत्व—पाठो के उद्देश्य—शिक्षण के अवसर और केन्द्र—विभिन्न अङ्गों की शिक्षा। १३२

४४. **सामान्य विज्ञान का शिक्षण**—उपयोगिता—उद्देश्य—विधियाँ। १३९

४५. **सामाजिक अध्ययन**—तात्पर्य—उद्देश्य, अङ्ग—अवसर—शिक्षण विधि। १४४

४६. **मूलोद्योग शिक्षण**—महत्व-उद्देश्य, आधार-चयन—मूलोद्योग केन्द्रित शिक्षण क्यो ? निर्देश-विधि। १४८

४७. **संगीत शिक्षण**—परिचय-उद्देश्य-शिक्षण—अन्य बातें। १५४

४८. **कला शिक्षण**। १५६

४९. **अच्छे पाठ के गुण**। १५८

५०. **पाठ का समालोचना**—परिचय-उद्देश्य-सिद्धान्त—प्रश्नावली। १६०
५१. **शारीरिक शिक्षण**। १६३
५२. **समवाय**—पृष्ठ भूमि-केन्द्र-आधार-प्रकार—अच्छा एवं दूषित समवाय-उदाहरण। १६६
५३. **समवायी पाठ सूत्र निर्माण**—समवाय पाठ संकेत का प्रारूप समवाय पाठ सूत्र। १७४

(३) बुनियादी पाठशाला संगठन

५४. **बुनियादीशाला संगठन के निर्देशक सिद्धान्त**। २०७
५५. **बुनियादी पाठ्यक्रम**—परिभाषा, नियम-बुनियादी—पाठ्यक्रम—विशेषताऐं। २०९
५६. **कार्य योजना निर्माण**—अर्थ-सावधानियां-उद्योग कार्य की योजना। २१२
५७. **समय विभाग चक्र**—उपयोगिता-परम्परित शाला मे—बुनियादी शाला मे—समय विभाग चक्र का नमूना। २१४
५८. **सफल शिक्षण के गुण**—भूमिका—गुण। २१६
५९. **प्रधानाध्यापक**—शाला मे स्थिति-कार्य। २१९
६०. **उठने बैठने और लिखने का सही ढग**। २२०
६१. **सामुदायिक जीवन**—महत्व - स्वरूप - मूल्याङ्कन एवं नियम। २२३
६२. **बुनियादी शाला भवन**—स्थिति-बनावट प्रकाश और वायु। २२५
६३. **सक्रामक रोग**—परिचय-सुरक्षा-प्रमुख रोग उनका बचाव। २२८
६४. **शाला ग्राम विकास का केन्द्र**—आवश्यक-प्रवृत्तियाँ। २३२
६५. **शालाओं का बुनियादीकरण**—क्यो-प्रवृत्तियों। २३५
६६. **पुस्तकालय**—भूमिका-पुस्तक चयन एवं व्यवस्था। २३७
६७. **पुरस्कार एव दण्ड**—परिचय-उपयोग। २३८
६८ **शाला द्वारा ग्रामोन्नति**—प्रवृत्तियाँ। २४०
६९. **ग्राम का अध्ययन**—सामाजिक-शैक्षणिक। २४२

७०. **दैनन्दिनी लेखन**—जरूरत-अवलोकनीय—बिन्दु-नोट । २४५
७१. **परीक्षाएँ**—अर्थ विभाजन-दोष-सुधार । २४५
७२. **शाला की लोकप्रियता**—जरूरत-कार्यक्रम । २४८
७३. **शाला में स्वायत्त शासन**—तात्पर्य, मन्त्रिमण्डल । २५०
७४. **समाज सम्पर्क**—सम्पर्क के अवसर । २५३
७५. **रिकार्ड**—जरूरत-प्रकार सावधानियाँ । २५५
७६. **संग्रहालय एवं प्रदर्शिनी**—परिचय-सामग्री प्रदर्शन । २५६

(४) शिक्षा की आधुनिक विचार धाराएँ

७७. **रूसो**—जीवन परिचय—पुस्तकें—विचार—उसकी शिक्षा योजना—विशेषताएँ । २६१
७८. **मान्तेसरी**—जीवन परिचय—सिद्धान्त—कार्य प्रणाली—गुण—दोष—मान्तेसरी प्रणाली और बुनियादी शिक्षा—भारत और मान्तेसरी प्रणाली । २६६
७९. **जान डीवी**—परिचय—शिक्षा—उद्देश्य—स्कूल—पाठ्यक्रम—शिक्षण—पद्धति शिक्षक—डीवी की विचारधारा और बुनियादी शिक्षा । २७१
८०. **रवीन्द्रनाथ टैगोर**—परिचय—उनकी शिक्षा योजना का आधार—शिक्षा दर्शन—विशेषताएँ—शिक्षा विषयक अन्य विचार । २७४
८१. **महात्मा गांधी**—परिचय—शिक्षा दर्शन बुनियादी तालीम की महत्ता—शिक्षा की परिभाषा एवं लक्ष्य—सिद्धान्त स्तर पाठ्यक्रम—शिक्षण विधि—आधार । २७९
८२. **विनोबा** -परिचय ग्रन्थ शिक्षा विषयक विचार—विवेचन बुनियादी तालीम के पोषक । २८४
८३. **वर्तमान भारत में शिक्षा** —भूमिका—पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक एवं पूर्व माध्यमिक, माध्यमिक शिक्षा—स्वतन्त्रता के उपरान्त शिक्षा—पंचवर्षीय योजनाओं में शिक्षा । २८७

८४. **पूर्व प्राथसिक शिक्षा का स्वरूप एवं विकास**—तात्पर्य एवं आवश्यकता—विभिन्न प्रणालियाँ—शिशु शिक्षण का आदर्श स्वरूप—पूर्व बुनियादी शिक्षा का स्वरूप—भारत में विकास—पंचवर्षीय योजनाओं में विकास। २९१

८५. **प्राथमिक एवं पूर्व माध्यमिक शिक्षा**—महत्त्व—स्वतन्त्रता से पूर्व—बाद में बुनियादी का क्रमिक विकास। प्राथमिक एवं पूर्व माध्यमिक शिक्षा का स्वरूप। ३००

८६. **विशिष्ट बुनियादी शिक्षा केन्द्र**—सेवाग्राम-गांधी ग्राम एवं विश्वभारती। ३१०

८७. **शिक्षक प्रशिक्षण**—महत्व—भारत में शिक्षक प्रशिक्षण—उद्देश्य, स्वरूप—शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाएँ। ३१६

८८. **मध्यप्रदेश में शिक्षा**—अनुदान—पाठ्यक्रम प्राथमिक शिक्षा शिक्षार्थी—स्त्री शिक्षा शालाओं का बुनियादी करण—पाच साला योजना में शिक्षा—वेतनमान—पूर्व माध्यमिक माध्यमिक—प्रशिक्षण सुविधाएँ। ३१९

८९. **विभिन्न राज्यों में शिक्षा**—केन्द्रीय संगठन मध्यप्रदेश में शिक्षा संगठन—बिहार मे शिक्षा संगठन—उत्तरप्रदेश मे शिक्षा संगठन। ३२८

९०. **अनिवार्य शिक्षा**—समस्याऐं। ३३२

९१. **सामाजिक एवं प्रौढ़ शिक्षा**—तात्पर्य—स्वरूप एवं समस्याएं। ३३४

९२. **जामिया मिलिया दिल्ली**—उद्देश्य—कार्य प्रणाली एवं स्वरूप—योगदान ३३९

(५) बुनियादी शिक्षा सामान्य विज्ञान

९३. **वायु का दबाव**—प्रयोग—वायु दाब मापक यन्त्र-मौसम ३४५

९४. **शक्ति**— ३५०

९५. **ताप**—ऊष्मा उत्पादक, उष्मा का संचालन । ३५५

९६. **श्वासोच्छ्वास**—दूषित वायु का श्वासन क्रिया पर प्रभाव । ३६०

९७. **कीड़े मकोड़े**—परिचय मक्खी—खटमल-जूं मधुमक्खी—लाभदायक कीट । ३६२

९८. **प्राथमिक उपचार**—रक्त स्राव—हड्डी टूटना—झुलसना या जलना । ३६८

९९. बिच्छू का काटना—सांप का काटना उपचार—सावधानियाँ । ३७२

१०० **वस्त्र**—प्रकार ऊनी, रेशमी और कपास के वस्त्र इनके गुण और अवगुण । ३७३

१०१. **इमारत बनाने की सामग्री**—सामग्री—ईंटों के प्रकार गुण—पहिचान—अच्छी ईंटें—चूना—सीमेट खपरे—उनके प्रकार—लड़की और लोहा आदि । ३७५

१०२. **हृदय तथा फेफड़े**—हृदय की स्थिति बनावट—भाग—आलिन्द—कार्य—हृदय की धडकन । फेफड़े—बनावट—भाग—कार्य । ३७८

१०३. **आक्सीजन**—इतिहास—मिलने का स्थान—बनाने की विधि—प्रयोग—गुण—उपयोग । ३८१

१०४. **नाइट्रोजन**—इतिहास—मिलने का स्थान—बनाने की विधि—प्रयोग—गुण । ३८२

१०५. **कार्बनडाइआक्साइड**—इतिहास—मिलने का स्थान—निर्माण विधि—प्रयोग—गुण । पौधों द्वारा कार्बनडाइ आक्साइड का उपयोग । ३८३

१०६. **सूर्य**—परिचय—कार्य—चन्द्र—चन्द्र कलाएँ सूर्य ग्रहण और चन्द्र ग्रहण सौर जगत । ३८५

१०७. **टेलिस्कोप**—बनावट—विस्तृत—परिचय । ३८८

१०८. **स्पूतनिक**—मानव की आकांक्षा—पृष्ठ भूमि—रूस एवं अमेरिका द्वारा प्रयास—सफलता प्राप्ति । ३९०

१०९. **पाचन संस्थान**—मुँह—दाँत—दाँतों का विस्तृत विवरण—दाँतो के प्रकार—निकलना कार्य । ३९२

११०. **सतुलित भोजन**—लाभ एवं उपयोगिता—भोजन के तत्व—औसत व्यक्ति के लिए भोजन की मात्रा । ३९४

१११. **रिक्त स्थानों की पूर्ति**— ४००

११२. **सही हैं अथवा गलत**— ४०१

११३. **समस्याओं के उत्तर ठीक स्थान पर रखना**— ४०३

बुनियादी शिक्षा के सिद्धांत एवं बाल मनोविज्ञान

प्रथम प्रश्न पत्र

बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्त

प्रश्न १—शिक्षा का क्या अर्थ है ? पूर्व एवं पश्चिम के शिक्षाशास्त्रियों के मतों को उद्धृत करते हुए अपने मत की पुष्टि कीजिए ।

हम सभी लोग शिक्षा को सामान्य रूप से जानते है । हम जानते है कि ऐसा व्यक्ति **जो लिखना-पढ़ना जानता हो, जिसे भाषा, सामाजिक विषय और गणित आदि का पर्याप्त ज्ञान हो, वही शिक्षित है, पढ़ा-लिखा है** । इस विचार के अनुसार अनेक विषयों का ज्ञाता व्यक्ति पढे-लिखे अथवा शिक्षित की कोटि में आ जाता है । वस्तुतः यह तो ज्ञान का **एक पहलू मात्र** ही हुआ । इसे हम **'सम्पूर्ण शिक्षा'** स्वीकार नही कर सकते । यदि इस ज्ञान के साथ मानवीय गुण जैसे **सत्यं, शिवं, सुन्दरम्** के गुण मानव मे विकसित नहीं हुए तो ऐसा **ज्ञान** थोथा ही माना जायगा । अगर सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो पता लगेगा कि उदारता एवं सत्यता आदि उच्च मानवीय गुण लेखन-पठन एवं ज्ञानार्जन से आते हैं।

प्राचीन काल से ही देश, काल एवं परिस्थितियों के अनुसार शिक्षा की अनेकों परिभाषाएँ शिक्षाशास्त्रियों ने प्रस्तुत की है । शिक्षा को अँग्रेजी में कहते है—**'एडूकेशन'** । इस शब्द का निर्माण लेटिन भाषा के **'एडूकेटम'** से हुआ है जिसका तात्पर्य होता है **शिक्षित करना** । यदि हम इस शब्द की विवे-

चना करें तो इसका आशय निकलेगा—**अन्तर्निहित क्षमताओं को बाहर की ओर अग्रगति देना या बढ़ाना।**

भारत के अतीत के अनुसार इसका निर्माण देव भाषा संस्कृत के शिक्षा शब्द से हुआ है, जिसका मतलब है—**ज्ञान प्राप्त करना।** शिक्षा की प्रमुख परिभाषाएँ यहाँ देना प्रासंगिक होगा। शिक्षा की प्रमुख परिभाषाएँ इस प्रकार हैं—

"प्रत्येक मनुष्य को सद्गुणी समाज मे सद्गुणी जीवन व्यतीत कर उच्च कोटि के आनन्द को प्राप्त करने मे सहायता देना ही शिक्षा है।"

"स्वस्थ शरीर मे स्वस्थ मन निर्माण करना ही शिक्षा है।"

—अरस्तू

"शिक्षा जीवन है और उसका उद्देश्य व्यक्ति का विकास करना है।"

—रूसो

"शिक्षा मनुष्य की सम्पूर्ण शक्तियों का स्वाभाविक, प्रगतिशील और अबाध विकास है।"

—पेस्टालाजी

"शिक्षा मनुष्य के अन्दर और बाहर का सम्बन्ध स्थापित करना है।"

—स्पेंसर

"शिक्षा विकास का वह क्रम है जिसके अनुसार मनुष्य बाल्यावस्था तक पहुँचता है और जिससे वह प्राकृतिक, सामाजिक और आत्मिक वायुमण्डल के अनुरूप बनाने का प्रयत्न करता है।"

—टी० रेमंट

"शिक्षा संग्रहीत अनुभवों का निरन्तर पुनर्निर्माण करने वाली क्रिया है।"

"शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसे सम्भव बनाने के लिए शालाओ को प्रजातान्त्रिक समाज का रूप धारण करना होगा।"

—जान डीवी

"मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को व्यक्त करना ही शिक्षा है।"

—विवेकानन्द

"शिक्षा से मेरा मतलब है बच्चे या मनुष्य की तमाम शारीरिक, मानसिक

एवं कर्त्तव्यों का पालन करते हुए स्वतन्त्रतापूर्वक जीवन यापन कर सकता है। प्रजातन्त्र अपने प्रत्येक नागरिक को उन्नति करने का समान अवसर प्रदान करता है। नागरिक परस्पर समानता का व्यवहार करते है। **जियो और जीने दो** के सिद्धान्त का पालन किया जाता है। नागरिकों का परस्पर व्यवहार मृदु एवं प्रेमपूर्ण होता है। सामुदायिक जीवन का लोकतन्त्र में विशेष स्थान है। समाज का प्रत्येक समुदाय अपनी **आत्म तुष्टि के लिए समुदाय का मेम्बर बन** जाता है। यह समुदाय अपने जीवन को समान आदर्श एवं इच्छाएं आदि के अनुसार व्यतीत करता है। अर्थात प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक जीवन व्यतीत करता है। प्रजातन्त्र मे यह जरूरी है।

लोकतन्त्रात्मक शिक्षा—वह है जो हमे जनतन्त्र के अनुरूप जीवन बिताने का प्रशिक्षण प्रदान करे। आधुनिक काल मे प्रजातान्त्रिक शिक्षा पर अमेरिकी शिक्षा शास्त्री जान डीवी ने सर्वाधिक जोर डाला है। इसके अनुसार शाला की व्यवस्था, पाठ्यक्रम निर्धारण, शिक्षक के कर्त्तव्य प्रजातन्त्र के अनुरूप होने चाहिए।

जनतान्त्रिक अध्यापक—प्रजातान्त्रिक शिक्षा मे बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है वह बालकों के स्वभाव रुचि एवं परिस्थिति के अनुसार शिक्षालय निश्चित कर शिक्षा प्रदान करता है। जनतन्त्र मे विश्वास रखने वाले शिक्षक शालाओं मे रखे जाते है।

शिक्षार्थी—प्रजातन्त्र में बालक के सर्वतोमुखी विकास अर्थात् उसका **शारीरिक मानसिक एवं नैतिक** विकास पर बल दिया जाता है। बालक का सम्मान किया जाता है। उनमे आत्मानुशासन के भाव जाग्रत किए जाते है। उनकी क्रियाशीलता का शिक्षा मे सदुपयोग किया जाता है। उनमें सद्गुणों का विकास किया जाता है। उन्हे सामुदायिक जीवन का प्रशिक्षण प्रदान कर प्रजातन्त्र के अधिकाधिक अनुकूल बनाया जाता है।

शाला का जनतन्त्रात्मक स्वरूप—जनतन्त्र मे शाला के विभिन्न कार्य शिक्षक एवं बालक करते हैं। वे मिलकर विभिन्न कार्यों की योजना बनाते और तदनुरूप क्रियान्वीकरण करते हैं। बालकों को जिम्मेदारी निभाना आता है।

शाला का संगठन लोकतन्त्रात्मक विधि से किया जाता है कि बालक आगे चलकर सुनागरिक के रूप मे विकसित हों। शाला का सुसंचालन शिक्षक करते है शिक्षक यहाँ मार्गदर्शक होता है। अधिकांश कार्य बालक ही करते हैं शिक्षक आवश्यक सुझाव भर देते है।

पाठ्यक्रम—शिक्षा का पाठ्यक्रम इस ढंग से निर्मित किया जाता है कि जिससे बालक पक्के लोकतन्त्रवादी बन जाये। यहाँ शिक्षाक्रम को बनाने एवं निर्वाह करने मे शिक्षक को बड़ी स्वतन्त्रता होती है तभो वह बालरुचि एवं परिस्थिति के अनुकूल जीवन द्वारा जीवन की शिक्षा देता है। क्रिया द्वारा ज्ञान देने की व्यवस्था होती है। शिक्षक बालकों के सहयोग से कार्य की रूपरेखा बनाते हैं। बालकों को मनोवैज्ञानिक ढंग से शिक्षण दिया जाता है। सामाजिक विषयों को इसमें स्थान दिया जाता। स्वराष्ट्र प्रेम, कर्त्तव्यपालन, सह-परिचय सहयोग आदि के पाठ बालकों को पढ़ाये जाते हैं। बालक स्वयं का मूल्यांकन करते हैं।

जनतन्त्रात्मक शिक्षा की विशेषतायें—

(१) **सर्वसुलभ** हो और बिना किसी भेदभाव के दी जाय।

(२) बालक का **चौमुखी विकास** करे और बालक की रुचि एवं क्षमताओ के अनुकूल हो।

(३) बालक सहज क्रियाशीलता द्वारा स्वाभाविक ढंग से ज्ञानार्जन करे।

(४) शिष्ट **सामुदायिकता** के गुण बालकों मे विकसित करे।

(५) **श्रम में गौरव और सेवा में आनन्द** के गुण बालक में भर दे।

(६) छात्रों मे **स्वावलम्बन, सुनागरिकता** एवं उच्च सास्कृतिक गुणो का विकास करे।

(७) अध्यापकों को शिक्षकोपयोगी सुविधायें मिली हुई हों।

(८) **शिक्षक प्रजातन्त्रवादी** हों तथा उन्हे शिक्षण कार्य में स्वतन्त्रता दी जाय।

(९) **घर, शाला एवं समाज में आपसी सहयोग** हो।

(१०) शालेय **संगठन जनतन्त्रात्मक पद्धति** पर किया जाय अर्थात शाला मे बालकों के मन्त्रिमण्डल एवं आम सभा की आयोजना हो।

बुनियादी तालीम और उसकी जनतन्त्रात्मकता—

(१) बुनियादी तालीम प्रजातन्त्र के अनुरूप **सर्वसुलभ है**। इसमें बिना किसी भेदभाव के ६ से १४ वर्ष तक के सभी बालकों को उनकी रुचियों के अनुकूल क्रिया द्वारा शिक्षा दी जाती है।

(२) बुनियादी तालीम **अनिवार्य और निःशुल्क** होती है।

(३) बुनियादी शिक्षा में **मात्र भाषा** के **माध्यम** से ज्ञान देने की व्यवस्था है।

(४) **बुनियादी** विद्यालय **जनतन्त्रात्मक पद्धति** के अनुसार **संगठित** किए जाते है। यहाँ बालको का अपना मन्त्रिमण्डल, आम सभा, न्यायालय एवं समितियाँ होती है। वे ही शालेय पाठ्येतर कार्यक्रम करते है। अर्थात् विभिन्न पर्वोत्सवों सामाजिक समारोहों का संचालन एवं शाला स्वच्छता बालक ही करते हैं।

(५) बुनियादी विद्यालय बालको को **शिष्ट सामुदायिक जीवन व्यतीत करना सिखाते** है। उनमे सहकारिता सहयोग, प्रेम, परिश्रम, सामाजिकता के गुणों का विकास होता है जो प्रजातन्त्र के नागरिक में होना अति आवश्यक हैं। इसी प्रकार प्रजातान्त्रिक शिक्षा के अन्य गुण भी बुनियादी तालीम मे है। प्रजातन्त्र की सभी विशेषतायें बुनियादी तालीम मे पाई जाती है।

प्रश्न १०—मानव सभ्यता के आदिकाल, मध्यकाल और वर्तमान काल में शिक्षा के स्वरूप एवं उसके कारणों का उल्लेख कीजिए ?

प्रश्न ११—मानव सभ्यता के विकासानुसार शिक्षा के परिवर्तित हुये स्वरूप पर अपने विचार व्यक्त कीजिए ?

प्रश्न १२—मानव सभ्यता के विकास और शिक्षा पर संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।

भूमिका—शिक्षा का आविर्भाव सृष्टि के साथ हुआ है । इन्सान और शिक्षा का पक्का नाता है । जन्म से मौत तक के काल मे शिक्षा अबाधगति से निरन्तर कार्य करती रहती है । मनुष्य के साथ ही शिक्षा विकसित हुई । हाँ ! काल एवं परिस्थिति के अनुसार उसका स्वरूप अवश्य परिवर्तित होता रहा है जैसा कि पूर्व के अध्यायों मे वर्णित शिक्षा के उद्देश्यों से स्पष्ट भासित होता है ।

आखेट युग प्रारम्भिक मानव आखेटी था । वह आखेट कर एवं जंगली फल फूल खाकर उदर पोषण करता था । उसके वसन थे—वृक्ष की छाल और आवास—पर्वतीय कन्दरायें एवं गुफायें । अतः इस युग में मानव अपनी संतति को घर में ही "**अपनी संस्कृति जातीय कौशल एवँ मान्यताएं**" दे देता था । बालक अपने परिवार के सदस्यों का अनुकरण इन्हें स्वतः ग्रहण कर लेता था । क्योंकि इनका सम्बन्ध जीवन की मौलिक आवश्यकताओ से था ।

पशुपालक युग— इसके बाद मानव ने पशुपालन युग मे प्रवेश किया । वह पशुओं को पालने लगा जो भोजन की समस्या को हल कर सकेंगे । उसके आवास का रूप भी बदला । अपने पशुओ के टोल के साथ उसने चरागाह खोजने प्रारम्भ कर दिये । चर्मवस्त्र धारण करने लगा । पहले की अपेक्षा अब उसका विकास हो रहा था । वह कुटुम्ब के विभिन्न कार्यों को देख एवं उनमे भाग लेकर सीखता जाता था ।

कृषक युग—अब इन्सान ने खेती करना शुरू किया । बीज, जलवायु का उसे ज्ञान होने से उसने घुसक्कड़ जीवन त्याग एक स्थान पर स्थाई रहने का विचार किया । उसने कृषि करना शुरू किया । फसल उगाईं । अब बाजार का जन्म हुआ । जरूरतें बढी । उसका जीवन मँजने लगा । वह परिष्कृत होने लगा । अब तक बालक अपने माता-पिता एवं वातावरण से अनियन्त्रित शिक्षा ग्रहण करता चला आरहा था । इसमे मोड़ आने लगा । यह कम होने लगी और नियन्त्रित अथवा सविधिक शिक्षा का आविर्भाव हुआ । ग्रामों मे बस गये । पण्डित बालको को शिक्षा प्रदान करने लगे । **अध्यापक** एवं **शिष्य** की परम्परा का उद्गम हुआ जो नियन्त्रित शिक्षा का प्रतीक है । शिक्षा का महत्व बढ चला । शिक्षक के सम्मान में वृद्धि हुई । शिक्षा के उद्देश्य सामने आये । शिक्षण विधि भी बदली पहले अनुकरण विधि का पालन होता था । जीवन की विविधता के कारण पाठक

कथन विधि द्वारा शिक्षार्थियों को इकट्ठा कर शिक्षा देने लगे इसे उपदेश विधि कह सकते है। इसके **अनन्तर कथन** विधि का खूब विकास हुआ। विद्यार्थी **सूत्रों एवं श्लोकों** को कण्ठाग्र करने लगे।

मध्यकाल—मानव सभ्यता विकास की ओर अग्रसर हो रही थी। इस समय **व्याख्यान, प्रश्नोत्तर, आगमन निगमन** का प्रादुर्भाव हुआ। इसके अनन्तर शिक्षण प्रणाली को वर्तमान रूप दिया जाने लगा विज्ञान ने शिक्षा के क्षेत्र मे परिवर्तन कर दिया।

वर्तमान काल—इस युग तक आते आते शिक्षण विधि का रूप बिलकुल बदल ही गया। शिक्षा में मनोविज्ञान का समावेश होने लगा। फलतः **बाल केन्द्रित** शिक्षा देने पर शिक्षा शास्त्री जोर देने लगे। अब शिक्षा शास्त्री **जीवन केन्द्रित** शिक्षा पर जोर देते हैं **अब जीवन द्वारा जीवन की शिक्षा** का नारा गाँधी जी ने शिक्षा जगत को प्रदान किया है।

इस प्रकार मानब सभ्यता के विकास के साथ शिक्षा **वर्तमान उन्नत स्वरूप तक आ पहुँची** है।

प्रश्न १३—बुनियादी शिक्षाविश्व शान्ति में किस प्रकार सहायक है ?

भूमिका—आज विश्व शान्ति स्थापित करने की बात करना कुछ बनावटी सा एवं 'शान्ति' का उपहास करता सा प्रतीत होता है। मानव शक्ति निर्माण कार्य की अपेक्षा उसके संहार करने की ओर अधिक लगी हुई है। विश्व दो महायुद्ध का विकराल रूप देख चुका है परन्तु फिर भी शस्त्र निर्माण की दौड लगी हुई है। यदि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का हनन करता है तो बुरा समझा जाता है परन्तु जब एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को पद दलित करता है तो यह राष्ट्रीयता समझती है। यही संकुचित राष्ट्रीयता युद्ध और कलह एवं अशान्ति का प्रमुख कारण बन जाती है।

अशान्ति क्यों ?—एक शिक्षाविद् का कथन है कि अशान्ति का प्रमुख कारण है—"मनुष्य का नैतिक विकास उसके बौद्धिक विकास के अनुपात से नही हुआ है। केवल बुद्धि बल के ही बढ़ते जाने से युद्ध की विभीषिका भी सुरसा के मुख की भाँति प्रसरित होती जाती हैं"—

शान्ति स्थापित करने का उपाय—वे ही महोदय आगे लिखते हैं—"आज की दुनियां अर्थवाद के तांडव से त्रस्त है, उसमें आध्यात्मिकता का लेश भी नहीं है। इसलिए यदि भौतिक संसार को कायम रखना है और विनाश से बचाना है तो उसको आध्यात्मिक और नैतिक बन्धनों में बांधा जाना चाहिए। भौतिकवाद और आध्यात्मवाद का समन्वय ही यह कार्य कर सकता है। किन्तु इस प्रकार का समन्वय शिक्षा के बिना सम्भव नहीं है क्योंकि शिक्षा ही जीवन को गढ़ने की टकसाल है जिसमें मनुष्य समाज में रहने की क्रिया सीखता है। मनुष्य की प्रत्येक शक्ति का उद्देश्य सफल सामाजिक जीवन की योग्यता प्राप्त करना है"

बुनियादी शिक्षा द्वारा विश्व शान्ति में योग—हमारे देश में अँग्रेजों द्वारा पोषित शिक्षा प्रणाली विश्व शान्ति के स्थापन मे योग नहीं दे सकती थी। विश्व शान्ति के अग्रदूत बापू द्वारा प्रतिपादित बुनियादी तालीम में वे गुण विद्यमान हैं जो विश्वशान्ति को कायम रखने में सहायक होंगे। एक अन्य शिक्षा शास्त्री के शब्दों में "वर्तमान शिक्षा पद्धतियों में जोर व्यक्तिगत सफलता पर है। इतिहास, गणित व विज्ञान के अध्ययन में व्यक्तिगत प्रयास निजी यश चाहता है और हर छात्र को यह फिक्र रहती है कि उसका साथी उससे आगे न बढ़ जाय अथवा उसके काम व ढंग की नकल न करले, पर शिल्प का काम करते हुए छात्र एक दूसरे से मदद माँगते हैं और बड़े शौक से देते हैं। चाहे वह अलग अलग कक्षाओं व जातियो के हों, चाहे उनकी रुचि और सहानुभूति विभिन्न दिशा में हो, साथ साथ काम करते हुए नवयुवक छात्र परस्पर सहायता और सहयोग का पाठ सीखते है। शिल्प के काम मे परस्पर सहयोग जरूरी और स्वाभाविक है और वहाँ जो परस्पर सहयोग और सहानुभूति की भावना उदय होगी वह ऐसे आदर्श सहकारी समाज का बीज बोयेगी जिसमे आक्रमण प्रति स्पर्द्धा, शोषण और दूसरे के अधिकारों का अपहरण असम्भव और असह्य होंगे। एक मौन सामाजिक क्रान्ति के लिए बेसिक पद्धति एक शक्तिशाली प्रभाव है और जब महात्मा गान्धी ने दावा किया कि यह पद्धति सत्य और अहिंसा पर अवलम्बित है उनका अभिप्राय यह था कि सच्ची शिक्षा और हिसा में परस्पर मूलभूत विरोध है। शिक्षा द्वारा लोगों के मन और चरित्र को इतना प्रभावित किया जा सकता है कि वे हिंसा और लड़ाई से घृणा करने लगें,

अधिकार-अपहरण, अस्वस्थ प्रतिस्पर्धा और उनके परिणाम स्वरूप घृणा का बहिष्कार हो जायगा। लड़ाई अधिक दूर और असम्भव होने लगेगी। आजकल की लड़ाइयाँ प्रतिस्पर्द्धा और शोषण से शुरू होती है और वही खत्म होती है, और अगर हम लड़ाइयों का अन्त करना चाहते हैं तो हमे शिक्षा पद्धति के सुधार से शुरू करना चाहिए जिससे नवयुवक छात्र प्रतिस्पर्द्धा और शोषण की जगह सहयोग और सहकारिता का सबक सीखें। जहाँ तक बेसिक शिक्षा इन मनोवृत्तियो और संस्कारो की वृद्धि के विकास मे सहायक होगी वहाँ वह विश्व-शान्ति की स्थापना में एक शक्तिशाली प्रभाव सिद्ध होगी।"

प्रश्न १४—स्वस्थ मनोरंजन की आवश्यकता बताइये।

प्रश्न १५—स्वस्थ मनोरंजन शिक्षा का उद्देश्य क्यों स्वीकार किया जाना चाहिए ?

प्रश्न १६—स्वस्थ मनोरंजन के लिए बुनियादी तालीम में क्या व्यवस्था है?

भूमिका—आदमी काम करता है। काम करने के उपरान्त थक जाता है। पुनः कार्य करने के लिए उसे विश्राम भी चाहिए ताकि वह फिर शक्ति अर्जित करके काम करने लग जाय। काम गुजर बसर करने के लिए जरूरी है। विश्राम के अतिरिक्त मनोरंजन थकान मिटाने का दूसरा उपाय है।

श्रम भी नियन्त्रित एवं अनियमित किया जाता है। काल सीमाओ को लाँघकर निरन्तर श्रम करते रहते अथवा अनियमित ढंग से श्रम करते है चाहे वह शारीरिक हो अथवा मानसिक अस्वास्थ्यप्रद साबित होता है। वर्तमान शिक्षा में बालक वर्ष भर नियमित श्रम करते नही जब सालाना परीक्षा आती है तब दिनरात एक कर देते है। इसके प्रतिकूल प्रभाव से हम सभी परिचित हैं। इसी प्रकार मनोरंजन की बात है। नियमित मनोरंजन करने वाले स्वस्थ एवं प्रसन्न प्रतीत होते हैं एवं अनियमित मनोरंजन करने वाले अस्वस्थ एवं दुर्गुणों के शिकार। सर्वतोमुखी विकास मे अनियमित मनोरंजन बाधक है।

वर्तमान शिक्षा बालक के सन्तुलित सर्वांगीण विकास बल देती है। अतः वह बालक में **नियन्त्रित स्वस्थ मनोरंजन एव श्रम की आदत डाले।**

शिक्षा द्वारा स्वस्थ मनोरंजन का चयन—शाला बालकों को निर्देशित करे

कि वे किस प्रकार स्वस्थ मनोरंजन का चुनाव करें। उदाहरणार्थ प्रातः भ्रमण खेल; सायं समाचार वाचन एवं खेल तथा रात्रि के संक्षिप्त सांस्कृतिक आयोजन आदि की सुसलाह दे सकती है। जो व्यक्ति मानसिक श्रम करते है । वे मानसिक खेल न खेलते हुए शारीरिक खेल खेलें इसी प्रकार शरीरिक क्रियायें करने वाले मानसिक मनोरंजन करें तो ठीक रहेगा । स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ने से बच जायगा । मनोरंजन की मात्रा भी निश्चित कर दी जाय आदि।

शाला द्वारा योग—

(१) शाला बालको को पाठ्यान्तर कार्यक्रमो मे छात्रो को भाग दिला कर (नाटक, प्रहसन, साहित्यिक आयोजन, कैरम, अन्य खेल) स्वस्थ मनोरंजन की परम्परा का उनके जीवन मे प्रवेश कर दें। इससे वे शाला से प्रेम करेंगे। घबड़ायेंगे नही। शिक्षा मे उनकी रुचि बनी रहेगी। उनकी **सृजनात्मक एवं कल्पना** शक्ति को विकसित होने सुअवसर प्राप्त होगा।

(२) शालाओ मे कागज का काम, चित्र बनाने, मूर्ति निर्मित करने इसी प्रकार का मनोरंजन करने वाली दस्तकारी सिखाई जा सकती है।

(३) बालको को देशाटन, गोठ आदि पर बाहर ले जाया जा सकता है चलचित्र दिखाये जा सकते है । क्रीड़ा प्रतियोगिताएँ आयोजित की जा सकती है।

इनसे बालको का स्वस्थ मगोरंजन तो होगा ही साथ ही उन्हें समय का ठीक ढंग से उपयोग करना भी आजायगा।

बुनियादी तालीम एवं स्वस्थ मनोरंजन—बुनियादी तालीम का लक्ष्य है बालक का सर्वतोमुखी विकास। इसीलिए बुनियादी शिक्षा के पाँच अभ्यासो मे एक अभ्यासो **रचनात्मक एवं सांस्कृतिक जीवन का अभ्यास** भी रखा गया है। इसके अन्तर्गत बालको को स्वस्थ मनोरंजन करने के सुअवसर नित्य ही मिलते हैं। बुनियादी शिक्षा मे विभिन्न औद्योगिक क्रियाएँ, खेलों की व्यवस्था, सांस्कृतिक कार्यक्रम, सामाजिक समारोह निर्वाचन, विभिन्न प्रतियोगिताएँ सभी तो

बालक का स्वस्थ मनोरंजन करती है। यहाँ तो शिक्षण अर्थात् समवादी पाठन की ये वाहन या माध्यम बन जाती है। संक्षेप मे बुनियादी तालीम इन क्रियाओ से बालकों का स्वस्थ मनोरंजन करती है तो दूसरी ओर उन्हे जीवनोपयोगी शिक्षण भी देती चलती हैं। शरीर एवं मन का विकास होता है। यही बुनियादी तालीम की मौलिकता है।

प्रश्न १७—बुनियादी तालीम के मूलभूत सिद्धान्त कौन से हैं ?

बुनियादी तालीम के मूलभूत सिद्धान्त संक्षेप मे निम्नलिखित है:—

(१) समग्र राष्ट्र के लिए अनिवार्य निशुल्क शिक्षा।
(२) उद्योग द्वारा शिक्षा।
(३) शिक्षा का माध्यम मातृ भाषा।
(४) स्वावलम्बन
(५) शोषणविहीन सर्वोदयवाद।

समग्र राष्ट्र के लिए अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा—

भारत एक लोकतन्त्रवादी देश है। लोकतन्त्र मे सभी का शिक्षित होना अत्यावश्यक एवं अनिवार्य है। लेकिन यह शिक्षा सच्ची एवं जीवन के लिए उपयोगी हो। तभी राष्ट्र का कल्याण होगा। गाधी जो के कथन के अनुसार शिक्षा हो अर्थात् **'सा विद्या या विमुक्तये'**। इसमे कोई व्यक्ति ज्ञान के आलोक से वंचित न रहे इसलिये बुनियादो तालीम का पहला सिद्धान्त **अनिवार्य निःशुल्क तालीम** रखा गया है। इसमे ६ वर्ष से १४ वर्ष तक के सभी बालक बालिकाओ के लिये निःशुल्क शिक्षा होगी। यह लोकतन्त्र के अनुरूप है। इसीलिये इसे राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली सम्बोधित किया गया है। राष्ट्र को सुनागरिक सुलभ होंगे।

(२) **मूलोद्योग द्वारा शिक्षा**—यह दूसरा सिद्धान्त है। इसमे मूलोद्योग ज्ञान का वाहन बनता है। मूलोद्योगी क्रियाओ से जीवनोपयोगी एवं समाजपयोगी ज्ञान दिया जाता है। मूलोद्योग बुनियादो तालीम मे ज्ञान का स्त्रोत है।

(३) **शिक्षा का माध्यम मातृ भाषा**—इसके विषय मे सभी एक मत है कि बालकों को मातृभाषा के द्वारा शिक्षा दी जाय तभी बालक स्वाभाविक एवं

सरल ढंग से शिक्षा ग्रहण कर सकेंगे। लोकभाषाओं का विकास होने लगेगा। संस्कृति का विनाश रुक जायगा। पहले अँग्रेजी हमारी शिक्षा का माध्यम थी। मातृ भाषा के माध्यम से शिक्षा देना मनोवैज्ञानिक है। इसीलिये इसे सिद्धान्त के रूप बुनियादी तालीम में मान्यता प्रदान की गई है।

(४) **स्वावलम्बन**—यह बुनियादी तालीम का मूलभूत सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त बालकों को आत्मनिर्भर बनायेगा। मूलोद्योग बालकों में आत्मविश्वास का सृजन करेंगे। शाला में आंशिक रूप से चाहे वे स्वावलम्बन प्राप्त कर सकें परन्तु भावी जीवन में वे आर्थिक, बौद्धिक एवं आत्मनियन्त्रक रूप से स्वावलम्बन प्राप्त कर सकेंगे संक्षेप में स्वावलम्बन का वास्तविक अर्थ बुनियादी तालीम मे कम से कम परावलम्बन से है।

(५) **शोषण विहीन सर्वोदयवाद**—यह भी बुनियादी तालीम का सिद्धान्त है। सर्वोदयवाद जीवमात्र मे प्रेम एवं सहानुभूति वर्ग भेद का अन्त, समानता में गौरव की स्थापना करना चाहता है। बुनियादी तालीम एक ऐसे सर्वोदयी समाज की रचना करती है जिसकी बुनियाद हो—न्याय और मूलमन्त्र हो—सत्य एवं अहिंसा। इस प्रकार **यह समाज को नव स्फूर्ति प्रदान कर स्वाश्रयी, जीवनपूर्ण एवं अदम्य उत्साह से भरे व्यक्ति का निर्माण करने का उद्देश्य** सम्मुख रखती है।

बुनियादी शिक्षा के उपर्युक्त मूल शिक्षा सिद्धान्तो को अपने सम्मुख रख बुनियादी शिक्षा के क्षेत्र मे रत प्रत्येक **कार्यकर्ता को ईमानदारी और दत्तचित्तता** से कार्य करना चाहिए तब ही एक लेखक के शब्दों मे **'हमारा राष्ट्र स्वस्थ, त्यागी, परोपकारी, सुदृढ़, सृजनशील उत्पादक और हमारे गाँव उसके विकेन्द्रित स्वावलम्बी तथा स्वशासित आधार होंगे।"**

प्रश्न १८—अपनी पाठशाला के लिए मूलोद्योग का चुनाव करते समय आप किन किन बातों का ध्यान रखेंगे ?

प्रश्न १९—प्राथमिक शाला में कौन-कौन से मूलोद्योग प्रारम्भ किए जा सकते हैं। इनका शैक्षणिक महत्व बताइये ?

उत्तर—"बुनियादी तालीम के कर्म के साथ ज्ञान की साधना है।" यह बालक का शारीरिक मानसिक एवं नैतिक विकास करती है। इसीलिए इसमे

मूलोद्योग को ज्ञान के वाहन के रूप में अङ्गीकार किया गया है। बालक मूलोद्योग की क्रियाओं को करते हुए रचनात्मक प्रवृत्ति की तुष्टि करते हैं तथा इस पर से जीवनोपयोगी एवं समाजोपयोगी ज्ञान अर्जित करते चलते हैं। हाँ, मूलोद्योग का चयन बड़ी सावधानी से किया जावे।

मूलोद्योग का चुनाव करते समय ध्यान में रखने योग्य बिन्दु—

(१) देशकाल परिस्थिति एवं वातावरण के अनुसार हो।

(२) समाज की प्रमुख आवश्यकतायें जैसे भोजन एवं वस्त्रादि की पूर्ति करने की आशा रखता हो।

(३) कच्चा सामान आसानी से मिल सके तथा खपत भी शीघ्रता एवं आसपास के क्षेत्र में हो सके।

(४) अधिक कीमती सामान की आवश्यकता न पड़ती हो। यन्त्र सरल व सस्ते हों तथा साधारण बुद्धि वाले बालक आसानी से कर सकें।

(५) उद्योग को प्रारम्भ करने के लिए आरम्भिक व्यय अधिक न हो।

(६) ऐसा हो कि कच्चा माल वर्ष भर तक मिलता रहे।

(७) बालको का रुचि शक्ति तथा योग्यता के अनुकूल हो।

(८) कम से कम परिश्रम लगता हो।

(९) मूलोद्योग ऐसा हो जिसको आधार मानकर अधिक से अधिक विषयों का ज्ञान सुगमता तथा स्वाभाविक रूप से दिया जा सके।

(१०) यह बालको का शारीरिक एवं मानसिक विकास करने की शक्ति रखता हो। इसकी क्रियाओं मे उत्सुकता तथा कौतुहल द्वारा स्वाभाविक समस्यायें उपस्थित होती हों।

(११) " 'मूलोद्योग की क्रियाओं मे सरलता से कठिनता की ओर' बढ़ाये जाने की क्षमता हो ताकि एक ही उद्योग का सिलसिला निम्न कक्षाओं से ऊँची कक्षाओं तक चला जावे।"

प्राथमिक शाला में मूलोद्योग एवं उनका शैक्षणिक महत्व—प्राथमिक शाला में मुख्यतः कृषि-कताई-बुनाई, कागज एवं गत्ते का कार्य, मिट्टी के

खिलौने एवं अन्य गृहउद्योग जैसे गुलाल, अबरी, मंजन, अमृतधारा आदि जीवनोपयोगी वस्तुओ के निर्माण को मूलद्योग के रूप मे स्वीकार किया जा सकता है। मूलोद्योग का चयन बहुत कुछ शाला की स्थिति पर निर्भर करेगा। यदि शाला ग्रामीण क्षेत्रो मे है तो वहाँ कृषि एवं कताई बुनाई तथा स्थानीय मृदु उद्योगो जैसे डलिया बनाना को स्वीकार किया जाय शहरी क्षेत्रो मे कागज का कार्य, कताई बुनाई तथा ऐसे ही अन्य उद्योग स्वीकार किये जावें। कृषि एवं बागवानी तथा कताई बुनाई को मुख्य उद्योग के रूप मे स्वीकार करना उपयुक्त होगा क्योकि इनमे शैक्षणिक सम्भावनाएँ क्रमिक रूप से बढ़ती जाती है। मूलोद्योग की स्थिति बुनियादी तालीम मे ज्ञान के वाहन के रूप मे है। वही मूलोद्योग जिसमें जो समवाय शिक्षण का आधार बन सके महत्व रखता है। ऐसा उद्योग जो बालक शिक्षण का आधार न बने व बुनियादी तालीम में स्थान नही पा सकता है।

प्रश्न २०—बुनियादी तालीम के विभिन्न स्तर कौन-कौन से हैं ? विस्तार से प्रकाश डालिए ?

भूमिका— बापू द्वारा प्रस्तावित बुनियादी तालीम समग्र जीवन के लिए तालीम है। यह सम्पूर्ण मानव जीवन मे व्याप्त शिक्षा योजना है। इसमें बालक के माँ के गर्भ मे आने से लेकर उसने मृत्यु पर्याप्त शिक्षा की उत्तम व्यवस्था है। स्पष्ट है कि बुनियादी तालीम का कार्यक्रम व्यापक है। यह जीवन की विभिन्न अवस्थाओ के अनुसार सुन्दर योजना है। इसे चार भागो मे विभक्त किया जा सकता है—

(१) **पूर्व बुनियादी तालीम**—गर्भाशय से लेकर छै वर्ष तक की अवस्था तक शिक्षा।

(२) **बुनियादी तालीम**—सात साल से लेकर १४ वर्ष तक के बालक बालिकाओ के लिए शिक्षा।

(३) **उत्तर बुनियादी तालीम**—बुनियादी शिक्षालय को पूर्ण करने के उपरान्त चोदह वर्ष से १८ वर्ष तक के युवको के लिए शिक्षा।

(४) **प्रौढ़ शिक्षा**—प्रौढ़ों के लिए।

[छात्राध्यापक उत्तर बुनियादी के अतिरिक्त शेष स्तर शिक्षा की आधुनिक विचारधारा के अन्तर्गत पढ़ें]

उत्तर बुनियादी—इसके सम्बन्ध मे एक लेखक कहते है "इस आयु के बाद बहुत से बालक अपने जीवन मे पदार्पण करते है, कुछ थोड़े से विद्यार्थी उच्च शिक्षा के लिए आगे बढते है उच्च शिक्षा मे बौद्धिक कार्य की प्रधानता अवश्य हो जाती है परन्तु इसे बुनियादी आधार देने का तात्पर्य यह है कि उच्च किक्षा मे भी कर्म की प्रधानता सो। कक्षा मे बैठकर लेक्चर सुनने से जो ज्ञान प्राप्त होता है, वह अपूर्ण है। विश्वविद्यालय के विद्यार्थियो को, समाज के लिए, प्रोत्साहित करना चाहिए। स्वदेश की धार्मिक, सॉस्कृतिक, राजनैतिक, आर्थिक और औद्योगिक समस्याओ को लक्ष्य मे रखकर विषयो की पढ़ाई की जानी चाहिए। यही बुनियादी शिक्षा है। इन समस्याओ का प्रत्यक्ष ज्ञान, उनके कारणों की खोज और उन्हे हल करने के उपाय—इन पर विशेष जोर दिया जाय और विश्वविद्यालयो के बाहर, इन्हे हल करने के लिए जनता और सरकार की ओर से जो प्रयत्न हो रहे हो हो उनमे वे सहयोग दें।

बुनियादी तालीम के अन्य स्तरो की भाँति इस स्तर पर भी छात्रो मे मानवीय गुण जैसे श्रम मे गोरव, सहयोग, समाज सेवा, स्वाश्रियता विकसित करने का लक्ष्य सम्मुख रहता है। इस समय नीचे लिखे उद्देश्यो का प्रशिक्षण बालको को दिया जाता है एक अनिवार्य एवं एक वैकल्पिक रूप मे अर्थात दो उद्योगो का प्रशिक्षण छात्र प्राप्त करते है।

(१) खेती बारी।
(२) पशु पालना।
(३) फल पैदा करना एवं बागवानी।
(४) तेल घानी।
(५) कताई बुनाई।
(६) काष्ठकला एवं धातु कर्म।
(७) दर्जी का काम।
(८) गृहविज्ञान (छात्राओं के लिए)

(९) भवन का निर्माण करना एवं ग्रामोपयोगी इंजीनियरी।

(१०) समाज शिक्षकों एवं ग्राम सेवको की ट्रेनिंग विषय निम्न लिखित है—

(१) भाषा-मातृभाषा एवं राष्ट्र भाषा, अँग्रेजी तथा एक अन्य भारतीय भाषा।

(२) विज्ञान गणित।

(२) समाजशास्त्र एवं अर्थशास्त्र।

(४) संगीत।

वैकल्पिक विषय इस प्रकार होते है—

(१) स्वास्थ्य विज्ञान एवं व्यायाम।

(२) शिक्षा शास्त्र एवं मनोविज्ञान।

(३) हिसाब एवं मुनीमी।

प्रश्न २१—बुनियादी शिक्षा में मानसिक और शारीरिक शिक्षा का उचित समन्वय किया गया है? आप इस कथन से कहाँ तक सहमत हैं? कारण सहित उत्तर दीजिए?

प्रचलित शिक्षा के दोष पिछले अध्यायो मे हम पढ़ चुके है। आज वही शिक्षा प्रणाली उत्तम समझी जाती है जो बालको का सन्तुलित सर्वांगीण अर्थात् शारीरिक, मानसिक और नैतिक विकास कर सके। प्रचलित तालीम केवल मानसिक विकास पर प्रमुखतया बल देती है। इसका कुफल हमारे सबके समक्ष है। अल्पायु मे बालको की आँखों पर चश्मा चढ़ जाता है और वे अपना स्वास्थ्य खो बैठते हैं एवं नैतिकता का तो कहना ही क्या है। समाज मे अशान्ति कलह, द्वेष, फैला हुआ है। बुनियादी तालीम ने इसका हल ढूंढ़ निकाला है। यह बालक का सर्वांगीण विकास करने की क्षमता रखती है। यह कर्म के साथ ज्ञान की साधना है। यह बात नीचे के विवेचन से स्पष्ट है।

मूलोद्योग के माध्यम से शिक्षा—बुनियादी तालीम में किसी मूलोद्योग के माध्यम से शिक्षा दी जाती है अर्थात् बालक विभिन्न क्रियाशीलनो को करते हुये जो जीवनोपयोगी ज्ञान होता है लेते चलते है। मूलोद्योग कर्म का प्रतीक है

शारीरिक क्रियाओं का प्रतीक है। मूलोद्योग की क्रियाओं को करते समय शरीर के विभिन्न अंग क्रियाशील जाते हैं, शरीर दृढ़ बनता है। विभिन्न अंग शक्तिशाली बनते हैं। उदाहरणार्थ कृषि कार्य खोदते समय, पानी देते समय, वस्तुएँ ढोते समय, दैनिक सफाई, काष्ठ कला कार्य में रंदा करते समय मूर्त्ति को बनाते समय सभी में तो शरीर के ससुचित विकास की सम्भावनाएँ निहित हैं। ये क्रियाएँ शारीरिक विकास की दृष्टि से उचित होने के साथ ही साथ बालकों में चित्त की एकाग्रता, कर्मठता, आत्मनिर्भरता एवं विभिन्न कौशलों का विकास करती है।

खेल व्यवस्था—बुनियादी शिक्षा शारीरिक रूप से क्षीण एवं सुस्त नागरिक देश को नही देना चाहती। मूलोद्योगी क्रियाओं से बालकों का शारीरिक विकास तो होगा ही परन्तु हो सकता है किसी मूलोद्योग में शरीर के विभिन्न अंगों का संचालन आनुपातिक रूप से न हो। अतः बालकों के मनोरजनार्थ, थकान मिटाने, नवीन स्फूर्ति देने एवं शरीर के सम्पूर्ण अंगों को अभ्यास देने के लिए विभिन्न प्रकार के खेल एवं व्यायामों की व्यवस्था की जाती है।

जीवन द्वारा जीवन की शिक्षा—बुनियादी तालीम जीवन द्वारा जोवन की शिक्षा प्रदान करती है। सामुदायिक जीवन के अन्तर्गत बालक अनेक क्रियाएँ करते हैं यथा स्वल्पाहार अथवा पूर्णाहार बनाना एवं खाना, साँस्कृतिक आयोजन करना आदि इनके अन्तर्गत उन्हे पर्याप्त शारीरिक परिश्रम करना पड़ता है जो उनके शारीरिक विकास मे सहायक है।

समवाय शिक्षण—लेकिन बुनियादी शिक्षा बालक के शारीरिक विकास के साथ मानसिक विकास के प्रति भी यथोचित रूप से जागरूक है। यहाँ मूलोद्योग शिक्षण के वाहन बन जाते है केवल ऐसे मूलोद्योग ही चुने जाते है जिनकी क्रियाओं एवं प्रक्रियाओं में शिक्षण की पर्याप्त सम्भावनाएँ निहित हों। उदाहरणार्थ कताई बुनाई के द्वारा बालकों को भाषा गणित, सामाजिक अध्ययन, सामान्य ज्ञान सभी पढ़ाये जा सकते है। इस प्रकार के पाठन को बुनियादी शिक्षा में समवाय पाठन पद्धति के नाम से सम्बन्धित किया गया है।

शैक्षणिक खेल—यहाँ शरीर को अनावश्यक रूप से थकाने वाले खेलों को कोई स्थान नहीं है यहाँ तो शैक्षणिक खेल ही प्रमुखतः खेले जाते हैं अर्थात

कबड्डी के मैदान द्वारा बालकों को ज्यॉमिति के अन्तर्गत खेल ही खेल मे समकोण, सरल रेखा आदि का ज्ञान आसानी से कराया जा सकता है।

सामुदायिक जीवन—सामुदायिक जीवन की विभिन्न क्रियाओं एवं पाठ्यन्तर क्रियाओं की योजना बनाना उनका अनुसरण करना सब बालक ही तो करते हैं। ये भी शिक्षण से अमूल्य साधन बन जाते है। इसका क्रियान्वीकरण शरीरिक विकास करता है और इस पर से कक्षा में तथा क्रियान्वीकरण के साथ साथ बालक जीवनोपयोगी ज्ञान भी लेते चलते है।

एक लेखक ने बुनियादी शिक्षण को इस प्रकार चित्रित किया है—

बुनियादी शिक्षा

भावनामूलक विकास (भाषा, श्रम तथा सामाजिक कार्यों द्वारा)	कर्म मूलक विकास (उद्योग द्वारा)	ज्ञान मूलक विकास (विज्ञान तथा अन्य विषयों द्वारा)

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है बुनियादी तालीम मे मानसिक एवं शारीरिक शिक्षा का समन्वय किया गया है।

प्रश्न २२—'शिक्षा और मूलोद्योग' एवं मूलोद्योग द्वारा शिक्षा में क्या अन्तर है? बालक के सर्वांगीण विकास की दृष्टि से किस कथन को आप उपयुक्त समझते हैं? क्यों?

शिक्षा और मूलोद्योग का तात्पर्य—

इसमे शिक्षा और मूलोद्योग का परस्पर कोई अभिन्न सम्बन्ध नही होता। देश में प्रचलित शिक्षा प्रणाली के अनुसार हिन्दी, भूगोल, अंग्रेजी के समान यह पृथक विषय के रूप में बालकों को सिखाया जाता है। इसका प्रमुख उद्देश्य बालक को कोई कौशल सिखा देना होता है। यह व्यवसायिक उद्देश्य की पूर्ति करता है। इसमें किसी दस्तकारी मे पटुता प्राप्त करना है। अन्य विषयो की भाँति इसकी भी एक पृथक विषय के समान परीक्षा ले ली जाती है। यह बुद्धि के

विकास मे उपयोगी नही है। बर्स बालक श्रमिक की भाँति किसी क्रिया अर्थात् लकडी का काम, दर्जीगीरी खिलौने बनाना आदि सीखते रहते है आवश्यकतानुसार उन्हे कल पुर्जो का उपयोग करना किसी वस्तु के विभिन्न अंगों को जोडने का कार्य सिखाया जाता है। यह बालक का केवल शारीरिक विकास ही करता है। बालक के सर्वांगीण विकास मे इसका महत्व नही है। बस आर्थिक रूप से स्वावलम्बन प्राप्त होता है। बुनियादी तालीम मे इसका कोई महत्व नही है।

मूलोद्योग द्वारा शिक्षा—

इसके अन्तर्गत मूलोद्योग निर्धारित सिद्धान्तों के अनुसार होशियारी से चयन किया जाता है। यहाँ मूलोद्योग की क्रियाओ एवं प्रक्रियाओं के माध्यम से समवायी ज्ञान अभिन्न अखण्ड समष्टि के रूप में दिया जाता है। यह ज्ञान का आगार बन जाता है। इसके अन्तर्गत बालक के हाथ एवं मस्तिष्क क्रियाशील रहते है। बालक मूलोद्योग की योजना बनाता और उसमे संशोधन परिवर्द्धन की बात सोचता है उसको रचनात्मक प्रवृत्तियो को तुष्टि मिलती है। इसमे श्रम के द्वारा ज्ञानार्जन होता है। यहाँ न तो क्रिया ही गौण समझी जाती है और न ज्ञान ही वरन् क्रिया एवं ज्ञान दोनो का समान महत्व आँका जाता है। व्यावहारिक दृष्टि से अब शालाओ मे क्रिया की अपेक्षा ज्ञान को अधिक महत्व दिया जा रहा है। कर्म तो साधन है क्रिया तो भावी जीवन के व्यावसायिक तैयारी की पृष्ठभूमि मात्र होती है। यहाँ मूलोद्योग द्वारा साहित्यिक कलात्मक, आध्यात्मिक विकास किया जाता है। श्रम मे गौरव की प्रतिष्ठा की जाती है बुद्धिजीवी एवं श्रमजीवी का भेद मिटाकर सर्वोदयी समाज की स्थापना मे सहायक है। यह बालको को आर्थिक ही नही वरन् बौद्धिक एवं आत्मिक नियंत्रित स्वावलम्बन भी प्रदान करता है।

मूलोद्योग के दोनो पहलुओ पर विचार करने के उपरान्त हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते है कि बुनियादी तालीम मे मूलोद्योग द्वारा शिक्षा को ही स्थान प्राप्त है। यह बुनियादी तालीम का प्रमुख मूलभूत सिद्धान्त है। यह बालक के सन्तुलित सर्वांगीण विकास का द्योतक है।

प्रश्न २३—बुनियादी शिक्षा एवं अबुनियादी शिक्षा का अन्तर स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न २४—पुरानी तालीम एवं नई तालीम का तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत कीजिये ?

बुनियादी तालीम एवं अबुनियादी तालीम में अन्तर निम्न प्रकार है—

बुनियादी शिक्षा	अबुनियादी शिक्षा
(१) इसमें बालक को शिक्षा का केन्द्र समझा जाता है। वह कार्य की योजना का निर्माण करता एवं तदनुरूप आचरण कर ज्ञानार्जन करता है। शिक्षक तो आवश्यकतानुसार उसका मार्ग दर्शन भरकर देते हैं।	(१) यहाँ शिक्षक की प्रधानता होती है। उसी की प्रत्येक इच्छा का पालन करना शिक्षार्थी अपना इष्ट कार्य समझते है।
(२) यहाँ बालक खोज करते हैं, नवीन चीज बनाते हैं।	(२) इसमें शिक्षक द्वारा प्रदत्त सूचनाओं को रटना विद्यार्थी का धर्म है।
(३) बालकों की वैयक्तिक गुणों का ध्यान रखकर शिक्षा दी जाती है।	(३) यहाँ सबको एक लाठी से हाँका जाता है।
(४) यहां विद्यार्थी को मौलिकता प्रदर्शन करने की स्वतन्त्रता रहती है।	(४) पाठक के द्वारा प्रदत ज्ञान को अन्धविश्वास के साथ विद्यार्थी पालन करता है।
(५) पाठ्यक्रम में आवश्यकतानुसार हेर फेर सम्भव है।	(५) इसमें पूर्व निर्धारित पाठ्यक्रम में दैनिक परिस्थितियों के अनुसार फेर बदल नहीं हो सकती।
(६) जीवन द्वारा जीवन की शिक्षा दी जाती है।	(६) शिक्षा जीवन से दूर रखी जाती है।

(७) शिक्षा रुचि के साथ प्राप्त करते है ।	(७) विद्यार्थी आदेश का पालन करते हैं ।
(८) करो और सीखो के सिद्धान्त के अनुसार बालक ज्ञानार्जन करते है ।	(८) अनुसरण करो के सिद्धान्त का का अक्षरशः पालन होता है ।
(९) बालक स्वतन्त्र रहते है ।	(९) बालक बन्धन में रहते हैं ।
(१०) मूलोद्योग केन्द्रित शिक्षण प्रदान किया जाता है । बालक इसमे कौशल प्राप्त करते है ।	(१०) दस्तकारी का हल्का ज्ञान होता है, दस्तकारी की विशेषताओं पर समुचित ध्यान नहीं दिया जाता ।
(११) समवाय पाठन पद्धति व्यवहार में लाई जाती है । समाज, प्रवृत्ति एवं मूलोद्योग के द्वारा ज्ञान अभिन्न अखण्ड समष्टि के रूप में दिया जाता है ।	(११) विषय अलग अलग पढ़ाये जाते हैं ।
(१२) बालक का सन्तुलित सर्वांगीण विकास करती है ।	(१२) बालक का एकांगी विकास करती है ।
(१३) शालेय संगठन जनतन्त्रात्मक प्रणाली के आधार पर किया जाता है । पाठ्येतर कार्यक्रमों का बालक संचालन करते है एवं ये शिक्षण के साधन बनाये जाते है ।	(१३) यहाँ पाठ्येतर क्रियाओं का मनोरंजनात्मक पहलू ही प्रमुख होता है शैक्षणिक न्यूनतम । पाठ्येतर क्रियाओ की अधिकांशतः उपेक्षा कर दी जाती है ।
(१४) शाला समाज का सुसंस्कृत लघु रूप होता है एवं ग्राम विकास का केन्द्र ।	(१४) विद्यालय एवं समाज से अलग माना जाता है स्थानीय विकास प्रवृत्तियों का केन्द्र शाला नहीं होती ।
(१५) मूल्याकन का नियमित रिकार्ड	(१५) केवल वर्ष मे एक या दो बार

रखा जाता है जिसमें बालक की विभिन्न गतिविधियों की प्रगति का अंकन किया हुआ होता है। यहाँ मूल्यांकन में बालकों की विभिन्न उद्योग धन्धों में प्रगति, उत्पादन कौशल, सामुदायिक जीवन में सोत्साह भाग, समाज का नेतृत्व, पाठ्येतर क्रियाओं का आयोजन एवं संचालन, सेवा कार्य, चरित्र गठन, दैनन्दिनी, अन्य रिकार्ड एवं संदर्शन आदि के आधार पर मूल्यांकन किया जाता है। इसमें परीक्षा बालक के विकास में सहायक होती है। उनमें नियमित रूप से विभिन्न कार्यों को सम्पादित करने की अच्छी आदत का विकास कर देती है। साथ ही बालक की सर्वांग शक्तियों की जाँच की जाती है।

सैद्धान्तिक परीक्षा हो जाती है। यहाँ तो बस कुछ प्रश्नों के उत्तर लिखा लिये जाते हैं, उन्हीं के आधार पर कक्षोत्तीर्ण बालक हो जाते हैं। यहाँ की परीक्षा योजना बालकों के शरीर एवं मन पर हानिकर असर डालती है एवं बालक की सम्पूर्ण शक्तियो का अंकन नही हो पाता।

(१६) श्रमजीवी एवं बुद्धिजीवी के भेद को पाटती है।

(१६) श्रमजीबी एवं बुद्धिजीवी का भेद उत्पन्न कर समाज मे अशान्ति को जन्म देती है।

(१७) विद्यार्थी स्वावलम्बी बनते हैं।

(१७) विद्यार्थी परावलम्बी बनते है।

बाल मनोविज्ञान—

प्रश्न २५— मनोविज्ञान का क्षेत्र एवं विस्तार बताइये ?

अथवा

मनोविज्ञान और शिक्षा का सम्बन्ध स्पष्ट करते हुए सिद्ध कीजिये कि शिक्षक के लिए मनोविज्ञान का अध्ययन क्यों आवश्यक है ?

अथवा

प्रमाण्य नही किया जा सकता ऐसे बहुत से व्यक्ति हुए है जो कि अच्छा वातावरण मिलने पर उन्नति कर गये हैं भले ही वे किसी साधारण परिवार मे जन्मे थे। इसके विपरीत अच्छे परिवारो मे उत्पन्न बालक भी दूषित वातावरण पाकर अवनति को प्राप्त हुए।

वश परम्परा और वातावरण मे से बाल विकास पर किसका अधिक प्रभाव पड़ता है यह जानने के लिए हम निम्नलिखित विद्वानों के मतों से परिचय प्राप्त करेंगे।

डाल्टन महोदय—आप वंश परम्परा के **पोषक हैं**। आप का कथन है कि बाल विकास पर वंशानुक्रम गुणों का ही प्रभाव पड़ता है वातावरण का नहीं। अपनी इस उक्ति को विभिन्न प्रयोगो द्वारा सिद्ध किया है। उन्होने इस विषय पर निम्न रूप में अध्ययन किया।

(१) **परिवारों का**, (२) **जुड़ुआं बालकों का** (३) **कलाकार परिवार**।

१—**परिवारों का** डाल्टन ने **७०० परिवारों** का अध्ययन किया। ये परिवार विशिष्ट और सामान्य दोनो प्रकार के थे जो विशिष्ट परिवार वे उनमे जन्म लेने वाले अधिकांश व्यक्ति डाक्टर, वकील, साहित्यकार, राजनीतिज्ञ, सेनापति आदि हुए इनके विपरीत सामान्य परिवारों में जन्म लेने वाले व्यक्ति सामान्यतया अपना भरण पोषण कर सके। इसलिए डाल्टन महोदय ने कहा कि वंश परम्परा के गुणों का प्रभाव भी व्यक्ति के जीवन पर पड़ता है।

२—**गाल्टन** ने ८० **जुड़ुआं** बालकों का अध्ययन किया और देखा कि उन बालकों के आचार विचार, व्यवहार बुद्धि आदि में बहुत समानता थी। इससे भी गाल्टन **इसी निष्कर्ष पर पहुँचे कि वंश परम्परा का प्रभाव ही प्रमुख होता है**।

३—**गाल्टन** ने ऐसे २० परिवारों का अध्ययन किया कि जिनके स्त्री पुरुष दोनो ही कलाकार थे और देखा कि ऐसे परिवारों के ६६% बच्चे कलाकार हुए। इसके विपरीत उन्होंने १२० ऐसे परिवारों का अध्ययन किया जिनके माँ बाप कला विहीन थे और देखा कि ऐसे परिवारों के केवल २१% बच्चे कलाकार हुए अतः इस अध्ययन से ही उन्होंने यही निष्कर्ष निकाला कि बालकों

के जीवन पर उनके पैतृक गुणों का ही प्रभाव पड़ता है जो कि उन्हें वंश परम्परा से प्राप्त होते हैं।

गोडार्ड—गोडार्ड महोदय ने कालिकाक नामक एक सैनिक परिवार का अध्ययन किया। कालिकाक ने दो शादियों कीं पहली पत्नी का जन्म उच्च वंश में हुआ था और दूसरी पत्नी का जन्म एक तुच्छ वंश मे हुआ था। उच्च वंशीय नारी से जितनी भी सन्तानें हुईं वह सब तीव्र बुद्धि एवं मेधावी थी। इसके विपरीत तुच्छ वंशीय जो सन्तानें हुईं वो सभी दुश्चरित्र वाली थीं। अतः गोडार्ड महोदय भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचे **कि वंश परम्परा का प्रभाव ही महत्त्व पूर्ण होता है।**

विशिप—इन्होंने रिचार्ड एडवर्ड नामक एक परिवार का अध्ययन किया। एडवर्ड महोदय ने भी दो शादियों की थी। इन दोनों पत्नियो से जो संताने उत्पन्न हुईं। एक पत्नी का जन्म उच्च घराने में हुआ था और दूसरी पत्नी होटल की एक सेविका थी। पहली पत्नी से जो संतानें उत्पन्न हुईं वो सब विद्वान और चरित्रवान थी। इसके अतिरिक्त दूसरी पत्नी से जो संतानें हुई वह **दुश्चरित्र एवं दुर्बुद्धि थी। अतः विशिप महोदय ने भी गाल्टन और गोडार्ड मत का समर्थन किया।**

वूड—**इन्होंने ६७१ राष्ट्रीय** परिवारों के व्यक्तियों का जीवन साहित्य का अध्ययन किया। अपने अध्ययन के फल स्वरूप आप इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इन सभी व्यक्तियों का जन्म उच्च वंशों मे हुआ था जिसके फलस्वरूप ये सभी व्यक्ति, विद्वान और प्रतिभाशाली बने। इस प्रकार प्रकार वूड महोदय भी वंशानुक्रम के प्रभाव को ही महत्वपूर्ण बतलाते हैं।

डगडेल और स्टेबुक—इन दोनों विद्वानों ने अँग्रेज काल के एक ज्यूक कुल का अध्ययन किया। ज्यूक कुल माझी और शिकारी खानदान था। इस कुल के प्रायः सभी मनुष्यो का विवाह नीची जाति के तुच्छ खानदान की स्त्रियों से हुआ था जिससे कि इस वंश मे जितनी भी सन्तानें हुई वो सभी **दुराचारी एवं अल्पबुद्धि वाली थीं।** दो ढाई हजार व्यक्तियों में से केवल ३०० के लगभग व्यक्ति अतिसाधारण जीवन व्यतीत करने के योग्य थे। इस अध्ययन के पश्चात

डगडेल और स्टेबुक ने भी **वंश परम्परा के प्रभाव को ही महत्वपूर्ण बतलाया है।**

परिस्थिति (वातावरण)—

जिस प्रकार कुछ विद्वानों ने वंशपरम्परा का अध्ययन किया उसी प्रकार कतिपय विद्वानों ने परिस्थिति के प्रभाव का अध्ययन किया जिनके विचार निम्नलिखित है।

लॉक—आपका मत है कि बालक का **मस्तिष्क एक साफ स्लेट** की भाँति होता है। जिस प्रकार स्लेट पर चाहे कुछ अंकित किया जा सकता है उसी प्रकार बालक को भी वातावरण के अनुसार चाहे जैसा बनाया जा सकता है। **बालक का यथेष्ठ विकास उसकी शिक्षा पर निर्भर रहता है।** यदि शिक्षा ठीक मिलती है तो बालक का विकास भी समुचित रूप होता है अन्यथा विकास की स्थिति विपरीत हो जाती है। इस प्रकार **लॉक महोदय वातावरण के प्रभाव को महत्वपूर्ण मानते हैं।**

हेवर्ड—हेवर्ड महोदय ने भी वातावरण के प्रभाव को मान्यता दी है। आपका कथन है **"प्रायः अच्छे वातावरण में रहने वाले तथा अच्छी शिक्षा पाने वाले बालक साधारण घरों में जन्म लेने पर भी उन्नति कर जाते हैं।"** आप अनाथालय के बालकों का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं और बतलाते हैं कि अनाथालय के बालक बुद्धिहीन परिवारों मे जन्म लेते है वह भी उचित शिक्षा मिलने पर प्रतिभाशाली व्यक्ति बन जाते है।

हेलविसियस—आपका कथन है कि **दो बालकों की योग्यताओं में जो अन्तर होता है। वह उनके वातावरण के कारण ही होता है।** अच्छा वातावरण और अच्छी शिक्षा मिलने पर बालक का विकास सुन्दर ढंग से होता है और दूषित वातावरण में रहने वाले बालक का दूषित रूप से।

इस प्रकार हेलविसियस महोदय भी लॉक के विचारों की पुष्टि करते हैं।

ओवन—**ओवन महोदय** भी उपरोक्त विद्वानों के मतों से सहमत हैं। आपका विचार है कि **व्यक्ति के बनाने और बिगाड़ने में समाज का पूर्णरूपेण हाथ होता है। यदि समाज उत्तम साधन प्रस्तुत करता है तो व्यक्ति उन्नति कर**

जाते हैं और यदि समाज अच्छे साधन प्रस्तुत नहीं कर पाता तो व्यक्ति का यथेष्ठ विकास नहीं हो पाता। समाज के विकास के इन साधनों में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। इस प्रकार ओवन महोदय भी वातावरण के प्रभाव को ही मान्यता देते हैं।

केन्डोल—केण्डोल महोदय ने ३५२ राजकीय परिवारों के व्यक्तियों के जीवन साहित्य का अध्ययन किया और देखा कि इन व्यक्तियों में से अधिकांश व्यक्ति लंदन की रॉयल सोसाइटी के सदस्य थे। बर्लिन की रोयल एकेडमी तथा पेरिस की साहित्यिक परिषद के सदस्य थे। इन व्यक्तियों को सदैव ही उचित वातावरण तथा उन्नति के अच्छे साधन और अवसर प्राप्त होते रहे। इसके फलस्वरूप ये व्यक्ति महान बन सके। अतः केन्डोल ने भी उक्त विद्वानों के मतों का समर्थन किया है।

वाटसन—आपका कहना है कि बच्चे के विकास पर वातावरण का ही मूल प्रभाव पड़ता है वो कहते हैं कि आप मुझे एक बच्चा दो मैं उस बच्चे को वकील, डाक्टर, सैनिक, राजनीतिज्ञ आप जो चाहे बना सकता हूँ।

उक्त विद्वानों के दोनों पक्ष के विचारों से अवगत होने के पश्चात हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि केवल ये मान लेना कि विकास पर वंशपरम्परा अथवा वातावरण में से किसी एक ही हाथ रहता है भूल होगी है। बालक के विकास पर वंशपरम्परा और वातावरण दोनों का प्रभाव यथेष्ठ रूप से पडता है। जैसा कि वुडवर्थ महोदय ने बताया कि अच्छी फसल उगाने के लिए अच्छे बीज और अच्छी भूमि व फसल की रक्षा के साधन जुटाने की आवश्यकता होती है केवल अच्छी भूमि या अच्छे बीज ये अच्छी फसल नहीं हो सकती। इसी प्रकार सुन्दर इमारत बनाने के लिए अच्छे सामान और अच्छे कारीगर की आवश्यकता पड़ती है। इसलिये अन्त में हम ये कह सकते हैं कि बालक के सम्यक विकास के लिये वंशपरम्परा और वातावरण दोनों ही महत्वपूर्ण होते हैं (वंशपरम्परा से बालक शारीरिक और मानसिक गुण प्राप्त करता है तथा वातावरण उन गुणों को विकसित करने अथवा अविकसित करने में योग देता है।

खेल में भी सफलता प्राप्त करना या खुशी हासिल करना उद्देश्य है। इसका उत्तर यह दिया जा सकता है कि खेल असली उद्देश्य नही। वह तो अपनी मन की मौज का उद्देश्य है। 'काम' का उद्देश्य उपयोगिता की दृष्टि से देखा जाता है। खेल का उद्देश्य मन की मौज के सिवा कुछ नहीं। इसको हम एक उदाहरण से हम यों स्पष्ट कर सकते है कि खेल का उद्देश्य विजय ही प्राप्त करना है, तो हम कमजोर के साथ खेल कर विजय प्राप्त करके भी अपने उद्देश्य की पूर्ति कर सकते है मगर हम क्यों बराबर वाले के साय टक्कर लेने में आनन्द लेते हैं और संतुष्ट होते हैं।''

(२) 'काम' में स्वतन्त्रता नहीं होती हमे काम करना ही होता है 'खेल' में स्वतंत्रता रहती है जब मर्जी हो खेल सकते है जब मर्जी न हो तब न खेलें। हाँ खेल में भी नियम होते हैं परन्तु हम उन नियमों को सुविधानुसार परिवर्तित कर सकते है और जब इच्छा हो खेल बंद कर सकते है परन्तु कार्य तो करना ही पड़ता है।

(३) काम में प्रसन्नता होना आवश्यक शर्त नही। काम मे कष्ट हो तब भी करना ही पड़ता है। 'खेल' में प्रसन्नता आवश्यक शर्त है।

खेल की विशेषताये

इस विवेचन और भेद से स्पष्ट है कि खेल स्वयं में साध्य है न कि किसी साध्य के लिए साधन। दूसरा खेल बंधन से मुक्त एक स्वतंत्र क्रिया है। खेल की तीसरी विशेषता है उसकी 'मनोरंजकता' अथवा मौज।

खेल तथा शिक्षा

''शिक्षा में खेल की प्रणाली को आजकल बहुत महत्त्व दिया जाता है। इस बात का उद्योग किया जाता है कि बालक तथा शिक्षक शिक्षा को 'काम' न समझकर 'खेल' समझें और बालक को खेल खेल मे बहुत कुछ सिखा दिया जाय। खेल में प्रसन्नता तथा स्वतंत्रता का अंश रहता है। शिक्षा देते हुए इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बालक पढ़ते हुए प्रसन्नता से सब कुछ पढ़ जाय और साथ ही अपने को बंधा हुआ अनुभव न करे। प्राचीन शिक्षा इस विचार से कोसों दूर थी। आजकल शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में 'खेल' को आधारभूत बनाया जा रहा है शिक्षा देने के तरीके, स्कूल नियंत्रण, प्रबंध तथा पढ़ाई

में खेल की प्रणाली को काम में लाया जा रहा है। आजकल कितनी भी शिक्षा प्रणालियाँ आविष्कृत हुई है है उन सब को समझने के लिये शिक्षा में खेल के महत्व को समझना जरूरी हो गया है।

खेल की प्रणाली पर आधारित जो शिक्षण पद्धतियाँ इस समय प्रचलित हैं उनका विवरण संक्षेप में इस प्रकार है।

(१) **माण्टेसरी शिक्षा पद्धति**—इस प्रणाली में बालक खिलौनों के साथ खेलते हैं। खेल खेल में ही वस्तुओं के नाप, तोल रंग आदि का ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। उन्हें पूर्ण स्वतन्त्रता रहती है क्योंकि वहाँ कोई शिक्षक नहीं होता। सहायता के रूप मे एक निरीक्षक रहता है इस प्रकार के काम मे उनको आनंद भी खूब मिलता है।

(४) **डाल्टन शिक्षा प्रणाली**—इसका जन्म ही प्राचीन प्रणाली के विरोध मे हुआ है। इसमें न समय विभाग का बंधन होता है न घण्टी की पावन्दी। बालक मन के मुताविक जितनी देर तक चाहे जिस विषय को पढ़ सकता है। यहाँ भी शिक्षक सहायक के रूप में ही कार्य करता है। इसके द्वारा वाह्य बंधन से मुक्त बालक के व्यक्तित्व का उच्च विकास संभव है।

(३) **प्रोजेक्ट शिक्षा प्रणाली**—शिक्षा को खेल के समान रुचिकर प्रिय तथा सरल बनाने का एक और तरीका प्रोजेक्ट प्रणाली है इसमें स्कूल के कार्य को जीवन की समस्याओं के साथ जोड़कर बालकों के सम्मुख एक 'प्रयोजन' रख दिया जाता है। बालक उन समस्याओं का अपने ढंग से अपने आप प्रेम, लगन और उत्साह के साथ हल करने में जुट जाते हैं। इस प्रकार बात ही बात मे वे बहुत कुछ सीख जाते हैं।

(४) **अभिनय प्रणाली**—प्रणाली से बालक इतिहास और साहित्य बड़ी सुगमता से सीखते है। उन्हें रटना नहीं पड़ता। राणा प्रताप और अकबर का अभिनय करके बालक उनकी जीवन की घटनाओं को ही आसानी से नहीं सीख सकते वरन् उनके चरित्र पर भी इसका स्थाई प्रभाव पड़ जाता है।

(५) **बेसिक शिक्षा प्रणाली**—इस प्रणाली में उद्योग की क्रियाओं द्वारा बालक बहुत ज्ञान प्राप्त करता है। क्रिया भी एक प्रकार का खेल है। सामाजिक एवं प्राकृतिक प्रतिवेश ज्ञान के बाहन बनते हैं।

प्रश्न ६— बुनियादी शिक्षा के प्रति उठी शंकाओं का उल्लेख कीजिए। उनका निराकरण किस प्रकार करेंगे ?

उत्तर— शंका और समाधान—कुछ लोगों ने इस तालीम की आलोचना की है तथा कमियों की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। अधिकांश आलोचनाएँ उस समय की हैं जबकि गांधी जी ने इसे सर्वप्रथम देश के सामने रखा था। "तबसे अब तक अनेक शोधें हो चुकी है जिनका समाधान किया जा चुका है।" कुछ आलोचनाएँ थोथी एवं बुनियादी तालीम के उथले अध्ययन पर आधारित है। कुछ आलोचनाओं को उदाहरणस्वरूप यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। जैसे धार्मिक शिक्षा की इसमे व्यवस्था नहीं है। सर्वधर्म समानत्व की प्रार्थना इसका उत्तर है। दूसरे स्कूल कारखाने बन जावेंगे और बालक काम के भार से दब जावेगा। इसका उत्तर है कि कर्म तो ज्ञान का वाहन माना गया है। केवल वे ही क्रियायें रखी जावेंगी जो बालकों के अनुकूल हो और जिनके शिक्षक की पर्याप्त सम्भावनाएँ हों, बालक कर्म को स्वाभाविक गति से स्वाभाविक अभ्यास करते हुए शिक्षा ग्रहण करता हुआ चलेगा। स्वावलम्बन भी भ्रम का कारण हुआ है। इससे तात्पर्य है कि बालक आत्मविश्वासी बने, कम से कम परालम्बी हो और प्रत्येक कार्य अपने आप करने का अभ्यास करे। इसमें न तो उद्योग शिक्षण ही गौण है और न ज्ञानोपार्जन ही। "कर्म द्वारा ज्ञान देने की समवाय प्रणाली शिक्षा शास्त्र सम्मत एवं नवीनतम शिक्षा एवं मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के अनुकूल है। बालक को विषयवार ज्ञान देना अनुचित, अमनोवैज्ञानिक एवं अनुपयोगी है।"

आधुनिक बुनियादी शिक्षा शास्त्रियों का विचार यहाँ तक है कि जहाँ समवायी प्रणाली द्वारा किसी विशेष पाठ पढाने मे कठिनाई होती हो वहाँ वे आधुनिकतम प्रगतिशील प्रणालियों का उपयोग कर सकते हैं। "कुछ कहते है कि इसमें स्वाध्याय की गुंजाइश नही है। यह उनका भ्रम है।" प्रचलित प्रणाली की अपेक्षा इसमे अधिक पुस्तकें पढ़ेंगे परन्तु जीवनोपयोगी। "नाटकाभिनय करने, उद्योगो का चयन, योजना बनाने, सामुदायिक जीवन का रिकार्ड रखने, निरीक्षण परीक्षण करने के लिए उन्हें पर्याप्त पुस्तकों को पढ़ने को आवश्यकता होगी। इसी प्रकार क्रियाओं के करते, ज्ञान लेते शारीरिक श्रम भी करेंगे।

कहने का सार है ऐसे आलोचकों को सफल बुनियादी शालाओं का अवलोकन कर अपने भ्रमों का निवारण कर लेना चाहिए। यह तालीम भारतीय आवश्यकताओं के अनुकूल है।

'पूर्व बुनियादी शिक्षा'

प्रश्न ७—'पूर्व बुनियादी शिक्षा' की संक्षेप में चर्चा करते हुए स्पष्ट कीजिए कि इसमें बालक की माँ को महत्त्वपूर्ण स्थान क्यों दिया गया है ?

उत्तर—इस तालीम में पूर्व बुनियादी शिक्षा से तात्पर्य सात वर्ष से कम आयु के बालकों की शिक्षा से है। वास्तव मे इस शिक्षा का श्रीगणेश माँ के उदर मे ही प्रारम्भ हो जाता है। बिनोबाजी मत है कि बालक की प्रारम्भिक शिक्षा माता-पिता द्वारा सम्पन्न होनी चाहिए। "दुर्भाग्यवश अधिकांश मातापिता अशिक्षित ही है तथा परिवार का वातावरण भी सदोष है।" जो शिक्षित हैं भी तो उनके पास समय का अभाव है। यदि समय है भी तो वे बालको को ठीक ढंग से पढ़ाने मे अपने को असमर्थ पाते हैं। इस कमी को दूर करने, बालकों को कुप्रभावो से बचाने, तथा बुनियादी तालीम के लिए बालको को तैयार करने एवं उनका सामंजस्यपूर्ण सर्वतोमुखी विकास करने के उद्देश्य से पूर्व बुनियादी शिक्षा की व्यवस्था की गई है।

प्रथम चरण—"पूर्व बुनियादी शिक्षा का प्रथम चरण जब बालक अपनी माँ के गर्भ में होता है तभी प्रारम्भ हो जाता है।" ऐसी अवस्था में गर्भवती माँ के लिए संतुलित एवं नियमित भोजन की व्यवस्था की जावे; उसके कपडे तंग न हों, उसे स्वास्थ्य प्रद स्वच्छ कमरे मे रखा जावे तथा ऐसा कोई कार्य न कराया जावे जिससे बालक के शारीरिक गठन पर प्रभाव पड़े; माँ को पर्याप्त विश्राम दिया जावे तथा उसके चारों ओर का वातावरण स्निग्ध एवं उल्लासपूर्ण हो। ऐसा करने से बालक को अपनी माँ के उदर मे शांति और सुविधा मिलेगी और उसका भावीजीवन मंगलकारी होगा। ऐसी अवस्था मे "माँ को सत्साहित्य पढ़ने को प्रदान" करना उचित होगा। बालकों के भावी विचार इससे प्रभावित होंगे। कहने का सार है कि "माता का शिक्षण बालक के जन्म के पूर्व का शिक्षण" होगा। वर्तमान परिस्थितियों मे अति अल्प परिवारों में ही कदाचित ऊपर लिखी बातों का ध्यान रखा जाता होगा। ऐसी अवस्था में

सरकार की ओर से प्रशिक्षित दाइयों का व्यवस्था की जावे तथा 'ग्राम सेविकाओ' से लाभ उठाया जावे। परिवार नियोजन का घर-घर में प्रचार हो। अगर ये कार्य शाला के माध्यम से हों तो ठीक रहेगा।

द्वितीय चरण—पूर्व बुनियदी शिक्षा का द्वितीय चरण जन्म से ढाई वर्ष की उम्र तक रहता है। जन्म के उपरान्त जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि प्रशिक्षित दाइयो की व्यवस्था हो जो स्वामिनो भाव न रखकर सेवा-भाव की इच्छा से माता एवं शिशुओ की देख-रेख कर सकें। इस अवसर पर बालक को समुचित मात्रा मे समुचित आहार ठीक समयो पर दिया जावे। "बालक का पालन-पोषण सुखद वातावरण मे हो, परिचारिका, ग्राम-सेविका अथवा अध्यापक जब बालक की देख-रेख करें तो उनके माता-पिताओं को आवश्यक बातें बतावें।" बालक को पर्याप्त विश्राम दिया जावे ताकि उसका विकास शीघ्रता से हो ? बालक व उसके कपड़ों की सफाई रखी जावे और बिछौना कोमल हो। उनके साथ प्रेम और सहानुभूति का व्यवहार किया जावे तथा उन्हे पर्याप्त मात्रा मे खेल की सामग्री प्रदान की जावे।

प्रारम्भ मे ऊपर की बातो की जिम्मेदारी माँ और परिचारिकारियों को होगी। ग्राम-सेविका, शिशु प्रतियोगिता अथवा प्रदर्शनी आयोजित करे और आवश्यक बातें बतावे तथा बालको सम्बन्धी ज्ञान दें।

तृतीय चरण—ढाई वर्ष की अवस्था के पश्चात् पूर्व बुनियादी शिक्षा का तृतीय चरण प्रारम्भ होता है। इसे ढाई वर्ष के बाल-बालिकाओ की शिक्षा का विधान कहते है। इस अवस्था मे बालक शिशु-मन्दिर मे प्रवेश करता है, साथियो और अध्यापक से परिचय प्राप्त करता है। बाहरी दुनिया के सम्पर्क मे आता है और उसकी देख-रेख की जिम्मेदारी शिशु-मन्दिर के कार्यकर्त्ताओ पर आ पड़ती है। 'यही नियमित, व्यवस्थित एवं नियंत्रित शिक्षा की भूमिका' तैयार होती है। पिछले पाठों मे बालको के उपयुक्त मान्तेसरी आदि पद्धतियो की विवेचना की जा चुकी है, वे किसी न किसी रूप मे बालक का विकास करती है। इस अवसर पर बालकों को शाला मे स्वस्थ वातावरण, स्वास्थ्यदायिनी एवं उल्लासदायिनी सामग्री दी जावें। उनका मनोरंजन किया जावे, अच्छी आदतें डाली जावें। उनकी कल्पना शक्ति का विकास किया जावे। मिलजुल कर रहे।

सामाजिक जीवन बिताने का अभ्यास कराया जावे। शाला और घर में सम्पर्क रहे। इस प्रकार बालक खेलेंगे, शिक्षित होगे और उनका समुचित विकास होगा।

चौथा चरण—पूर्व बुनियादी शिक्षा का चौथा अथवा अन्तिम चरण है पाँच वर्ष से छः वर्ष तक की शिक्षा का। इस काल के अंतर्गत बालक बुनियादी शिक्षालय मे प्रवेश की तैयारी करता है। पाँचवें वर्ष मे बालक-खेलता कूदता अधिक है। शिक्षक उसके खेलो को रचनात्मक रूप दें। मान्तेसरी प्रणाली इस अवस्था के अधिक उपयुक्त है। किंचित हेर-फेर से इसे अपनाया जासकता है। "उनके खेल की सामग्री मे छोटी डलियाँ, फावड़े, तकली आदि का समावेश करना चाहिये तथा इनके द्वारा द्वारा छोटी-छोटी क्यारियों मे खेल शुरू करवाये जाने चाहिए। उनका विकास करने के लिए वे स्थानीय समाज द्वारा निर्मित वस्तुओ का उपयोग करेंगे। इससे उनके सवेदन की शिक्षा होगी।" उनका शारीरिक और मानसिक विकास होगा। निश्चित समय पर उन्हे भोजन, विश्राम एवं डाक्टरी सहायता दी जावेगी। उनमे सामाजिकता का विकास करने के लिए सामूहिक भोजन, खेल, ईश-विनय आदि की व्यवस्था की जावेगी। वैसे बापू ने स्वावलम्बन को बुनियादी शिक्षा की तेजाबी जाँच कहा है किन्तु इस अवस्था मे आर्थिक स्वावलम्बन को गौण स्थान प्रदान कर बालक को मानसिक शारीरिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से स्वावलम्बन की ओर उन्मुख करने का प्रयास किया जावेगा। गाधीजी ने कहा है कि बच्चे खेलते-खेलते सीखें अतः उनमे खेलते-खेलते काम करने की आदत डाली जावेगी और रचनात्मक कार्यों की ओर प्रवृत्त किया जावेगा।

पाठ्यक्रम—इस अवस्था के बालको के पाठ्यक्रम में "भाषा, गणित, संगीत, कला, विज्ञान, सामाजिक अध्ययन, खेल-कूद, कसरत, पशु व पक्षिपालन, सफाई और स्वावलम्बन" आदि विषयो का समावेश किया गया है।

इन विषयो का ज्ञान प्रथक-प्रथक न होकर समवायी ढंग से खेलते-खेलते दिया जावेगा। पहले बालको से ड्राइंग खिचाकर हाथ सधवाया जावेगा, तदन्तर लिखना बताया जावेगा। संगीत का ज्ञान सामूहिक गीत के अवसर पर दिया जावेगा। कहने का सार है कि स्वाभाविक अवसरो द्वारा बालक की

रुचि के अनुकूल खेल ही खेल में ज्ञान दिया जावेगा। आवश्यक है कि शिक्षक अपने कार्य में दक्ष हो और ऐसे अवसरों से लाभ उठाना जानता हो। इसलिए इस पूर्व बुनियादी तालीम के सिद्धान्त सहयोग से कार्य, बालक की रुचि एवं प्रवृत्ति के अनुसार शिक्षा तथा भावी जीवन की क्रियाओं से परिचित करना रखे गये है।

अतः बालक को अधिकाधिक लाभकारी बनाने के लिए "शिक्षक अपनी योजना, शिक्षण बालको की रुचि, प्रवृत्ति, वातावरण एवं आवश्यकता के अनुसार बनावे।"

पाठन पद्धति

प्रश्न ८— पाठन पद्धति से क्या तात्पर्य है? इसकी आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए उसे रुचिकर बनाने के उपायों की संक्षेप में चर्चा कीजिए।

अर्थ—सामान्यतया दैनिक व्यवहार की भाषा में हम किसी भी व्यवस्थित और निश्चित कार्य प्रणाली को पद्धति कहते है। पाठन प्रणाली अथवा अध्यापन पद्धति एक ऐसी कला है जिसके द्वारा शिक्षक अपना ज्ञान बालको को देता किसी एक विषय के पाठन मे जिस कार्य प्रणाली का प्रयोग होता है उस विषय का विस्तृत वर्णन ही उस विषय की पाठन पद्धति कहलाती है। इस प्रकार हम कह सकते है कि एक कार्य मे जो कार्यविधि प्रयुक्त होती है उसका विस्तृत ब्यौरा उस पाठ की पाठन पद्धति है। साराश यह है कि "पाठन पद्धति अपना ज्ञान दूसरों को देने की कला ही है।"

चयन एवं महत्त्व—किसी पाठ सूत्र मे पद्धति सर्वाधिक महत्व का विषय है। पाठ सूत्र मे पाठन पद्धति का चयन भलीभाँति सोच समझ करना चाहिए। उसे पाठ्य वस्तु और पढ़ाने के तरीके पर पर्याप्त विचार कर लेना चाहिये। पाठ के उद्देश्यो एवं विषयो की विभिन्नता के अनुसार पाठन पद्धति भी भिन्न-भिन्न अपनाई जाती हैं। यह भी सम्भव है कि एक ही पाठ पढ़ाने के लिए काल और परिस्थिति के अनुसार अलग-अलग पाठन पद्धतियाँ अपनानी पड़ें। वास्तव में पाठ्य वस्तु के महत्व के पढ़ाने का तरीका भी बड़ा ही महत्वपूर्ण है। पाठ्य वस्तु कितनी भी उत्तम आकर्षक एवं मनोवैज्ञानिक हो परन्तु पढ़ाने की विधि नीरस, त्रुटिपूर्ण है तो बालक पाठ में रुचि नही लेगा और अनुशासन-

हीनता कक्षा में फैलेगी। साथ ही साथ यदि शिक्षक को पहले ही ज्ञात होगा कि बालको को किस विधि से पढ़ाना है। रोचक ढंग से पाठ पढा सकेगा।

पाठन पद्धति परिवर्तित एवं विकसित होती रहती है परन्तु पढाये जाने वाला विषय प्रायः स्थिर रहता है। इसके चयन में प्रारम्भ में कुछ कठिनता अवश्य मालूम हो सकती है। शिक्षक को चाहिए कि वह वहले वस्तुसार का चयन कर ले और पाठ सूत्र मे दो कॉलम खीच ले। एक मे वस्तुसार अंकित कर दे। शिक्षक इस वस्तुसार के प्रत्येक शीर्षक को अलग-अलग से उठाकर उनके अनुकूल विधि से पढ़ाने का पता स्वयं से प्रश्न करके लगाये। यही उस शीर्षक की पाठन पद्धति कहलाएगी। इसे क्रम से वस्तुसार के सामने वाले कॉलम मे लिखता जावे। अब पाठन पद्धति तैयार हो गई।

अच्छी पाठन पद्धति—पाठन विधि का अर्थ एवं आवश्यकता समझ लेने के पश्चात यह बताना आवश्यक है कि इसे रोचक कैसे बनावें। उत्तम पाठन विधि विषयाकूल होती है। मनोवैज्ञानिक होती है। सहायक सामग्री का सहारा ग्रहण करती है। रोचक ढंग से प्रस्तुत की जाती है। बालकों को क्रियाशील बनाती है। ज्ञान बालकों पर थोपती नही है। पूर्व ज्ञान पर आधारित होती हैं। बालक केन्द्रित होती है।"

अध्यापन के सूत्र

प्रश्न ६—अध्यापन के सूत्रों का शिक्षण में क्या महत्त्व है? बुनियादी-शिक्षा की दृष्टि से किन्हीं दो सिद्धान्तों को सोदाहरण समझाइये।

भूमिका—शिक्षा-शास्त्रियों ने गहन अध्ययन, मनन और परीक्षण के पश्चात कुछ सिद्धान्त निश्चित किये हैं इनका विकास शनैः शनैः हुआ है। ऊपर से ये सिद्धान्त एक से प्रतीत होते है परन्तु सूक्ष्म दृष्टि से इनका अवलोकन किया जावे ता प्रतीत होगा कि ये बड़े उपयोगी है और इनकी रचना विभिन्न विषयों एवं विभिन्न परिस्थितियो के लिए की गई है। अध्यापन कला में इनका बड़ा महत्व है। इनका ज्ञान शिक्षक के कार्य को सरल बनाता है, उसे अनावश्यक मानसिक श्रम नहीं करना पड़ता। बुनियादी शिक्षा मे जिन अध्यापन सूत्रो को प्रयुक्त किया जाता है वे निम्नलिखित हैं—

ज्ञात से अज्ञात की ओर—जिन बातों का विद्यार्थियों को ज्ञान है, उससे

आगे का ज्ञान बालकों को दिया जावे अर्थात पूर्व ज्ञान से नवीन ज्ञान का सम्बन्ध स्थापित कर दिया जाय। उदाहरणार्थ यदि कोई छात्र ९ का अंक जानता है तो उसमे २ और जोड़ने को कहा जावे और फिर बताया जाय कि नौ और दो ग्यारह होते हैं, इस भाँति अपने घर की व्यवस्था से धीरे धीरे देश की व्यवस्था का ज्ञान कराया जा सकता है। यदि जिराफ की जानकारी देनी है तो ऊँट से इसका बोध तुलना करके उसकी आकृति का चित्र बालकों के ध्यान में लाया जा सकता है। इस प्रकार परिचित वस्तुओं से अपरिचित वस्तुओ का सम्बन्ध स्थापित हो जाने से बालक पाठ में रुचि लेने लगते है। इसी प्रकार बुनियादी शिक्षा मे एक क्रिया उसके आगे की क्रिया के सम्पादन मे पूर्वज्ञान (ज्ञात) का कार्य करती है।

सरल से कठिन की ओर—इस सूत्र के अनुसार शिक्षक बालक को वस्तु की सरल बातों का ज्ञान कराता है और फिर शनैः शनैः उसके कठिन स्वरूप का ज्ञान देता है। उदाहरणार्थ भूगोल का ज्ञान देना है तो पहले विभिन्न प्रदेशो के रहने वाले लोगो की कहानियाँ, इसके अनन्तर प्रान्त, देश एवं विश्व के भूगोल की शिक्षा दी जा सकती है। इस सूत्र को उपयोग मे लाने से पूर्व शिक्षक यह पता लगाले कि कौन सी वस्तु बालको के लिये सरल है कौन कठिन। इस सरल एवं कठिन का निर्णय बालकों के वय, रुचि और ज्ञान के ही अनुसार होना चाहिए। कभी-कभी ऐसा होता है कि जिस बात को शिक्षक सरल मानता है वह बालकों के लिये कठिन होती है फलतः अध्यापन कार्य असफल हो जाता है। इस हेतु शिक्षक मे इतनी सामान्य बुद्धि एवं मनोविज्ञान का ज्ञान होना चाहिए कि वह बालको की सरलता एवं कठिनता का ठीक निर्णय कर सके तब ही बालको का मानसिक विकास कर सकेगा। बुनियादी शिक्षा उद्योग केंद्रित है अतः जैसे-जैसे बालक उद्योग सीखेंगे वैसे-वैसे अपनी रुचि के अनुसार अपनी कठिनाई को दूर करने का मार्ग ढूँढ़ेंगे। अतः ऐसे मूलोद्योगों को ही स्थान दिया जावे जिनकी क्रियायें सरल से क्रमशः कठिन होती जावें।

प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर—इसे स्थूल से सूक्ष्म की ओर जाना भी कहते हैं। इसमे बालको को उन वस्तुओं के सहयोग से ज्ञान प्रदान किया जाता है

जिनसे बालक परिचित होता है। नवीनतम शिक्षा प्रणालियों में इसका उपयोग होता है। सर्वप्रथम जो भी नवीन ज्ञान बालकों को दिया जावे वह प्रत्यक्ष अथवा स्थूल वस्तुओं द्वारा दिया जावे। उदाहरणार्थ ४ कौड़ी और ८ कौड़ी बराबर बारह कौड़ी हुईं। बालक परिचित वस्तुओं की सहायता से जोड़ना तथा घटाना सीखता है। बालक कौड़ियों से खेलते है और गिन सकते है और जब जोड़ने के लिए कहा जाता है तो बालक इनकी सहायता से गिन लेता है परन्तु बिना इनकी सहायता के वह गिन नही पाता क्योकि उसकी कल्पना से ७ चार और ८ का जो सूक्ष्म रूप है नही आता। लेकिन जब ४ कौडी कहा जाता है तो उसे समझने मे कठिनाई नही होती। शिक्षक का लक्ष्य यह हो कि थोड़े समय के पश्चात् वह ४+८=१२ इस प्रकार असम्बन्धित संख्याओ का जोड़ करावें। सामाजिक अध्ययन और मातृभाषा मे नवीन वस्तु बताते समय सहायक सामग्रो अथवा शिक्षण की युक्तियों का सहारा लेना चाहिये। बुनियादी तालीम मे बालक स्वाभाविक क्रियाओ मे ही सम्पूर्ण ज्ञान प्रत्यक्ष द्वारा अर्जित करते हैं। वस्तु व्यावहारिक रूप मे सामने होती है। वे परीक्षण, निरीक्षण करते है उपयोग एवं व्यवहार मे लाते हे। उन्हें प्रत्यक्ष अनुभव होता है। एक उदाहरण से इसे इस प्रकार स्पष्ट कर सकते है कि बालक को कताई मे रुचि लेना उसे सामान्य विज्ञान की ओर अग्रसर करती है। इसकी विभिन्न क्रियाओ से गणित का ज्ञान दिया जाता है। यह सब स्थूल से सूक्ष्म अथवा प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर जाना ही है। बड़े बालको को इसकी कम आवश्यकता होती जाती है।

विशेष से सामान्य की ओर—बालकों को अपने दैनिक जीवन मे अनेक अनुभव होते है परन्तु उसके मस्तिष्क मे ये अनुभव अव्यवस्थित रूप मे रहते है। शिक्षक का पुनीत कर्त्तव्य है कि वह इन घटनाओ से प्राप्त अनुभवो को इकट्ठा कर एक सामान्य नियम बनवायें। उदाहरणार्थ विद्यार्थी जानते है कि पानी डेगची मे उबाला जावे तो भाप बनती है। इससे बालक इस परिणाम पर पहुंचते है कि पानी खौलने से भाप बन जाती है। ऐसे ही बालको को अनुभव है गर्मी से लोहा पिघलता है और तरल पदार्थ के रूप मे बदल जाता है। अब शिक्षक बालको को यह सामान्य नियम बनवा दे कि धातुएँ गर्मी से

पिघल जाती हैं। इसका उपयोग गणित और सामान्य विज्ञान विषयों में अधिक होता है।

निश्चित से अनिश्चित की ओर—बालक अपने दैनिक व्यवहारों और निरीक्षणादि द्वारा अनेक प्रकार का धुँधला, अधूरा और अनिश्चित ज्ञान प्राप्त करते रहते है। शिक्षक को उचित है कि वह क्रमबद्ध रीति से ज्ञान को स्पष्ट निश्चित और पूर्ण बना दे। उदाहरण के लिये बालक अपने शालीय उद्यान के पेड़ पौधो को सींचते है, इसका उन्हे निश्चित ज्ञान है, इसके द्वारा उन्हे भारत में सिचाई के साधनो का ज्ञान दिया जा सकता है। बुनियादी शिक्षालयों में स्वायत्त शासन (मंत्रिमंडल) की व्यवस्था करके नागरिकशास्त्र के निश्चित ज्ञान की ओर बालको को अग्रसर किया जा सकता है। इस प्रकार बालक मूलोद्योग से निश्चित ज्ञान प्राप्त करते है।

सम्पूर्ण से विभिन्न की ओर—इस सूत्र के अनुसार किसी वस्तु का पूरा ज्ञान दिया जाता है। फिर उसके विभिन्न अंगो की दशा का बोध कराया जाता है। सम्पूर्ण का तात्पर्य है कि बालक की कल्पना मे किसी वस्तु का जो रूप आता है उसे पूर्ण मानकर उसके विभिन्न अंगो का बालको को ज्ञान दिया जावे। उदाहरणार्थ बालक को पौधा दिखाकर उसके विभिन्न अंगो से बालको को परिचित कराना चाहिए। चरखा का उपयोग करते समय उसके विभिन्न हिस्सो के कार्य, उससे सम्बन्धित विधान के सिद्धान्तो का बालको को ज्ञान दिया जा सकता है।

अनुभव से सिद्धांत की ओर—बुनियादी तालीम का मूल है—अनुभव के द्वारा शिक्षा का होना। इसमें बालक निरोक्षण, परीक्षण, प्रयोग और अनुभव से शिक्षा ग्रहण करते है। बालक करके सीखते है, उनमें अनुभव से शून्य पुस्तकीय ज्ञान नही ठूँसा जाता है। कौनसी ऋतु मे कौनसी फसल बोई जाती है, उसमें कितना खाद और सिचाई करनी है बालक अनुभव करके सीखते है। और उनके आधार पर बालक आसानी से तत्सम्बन्धी नियम बना लेते है। इस प्रकार निर्मित सिद्धान्त अपेक्षाकृत स्पष्ट और सरल होते है।

मनोवैज्ञानिक क्रम से शास्त्रीय क्रम की ओर—इसके अनुसार छात्रो की वय, रुचि ज्ञान के अनुसार ही शिक्षण का क्रम निर्धारित किया जाता है।

किसी वस्तु का बालक की इच्छा एवं सुगमता के अनुसार ज्ञान देना ही मनोवैज्ञानिक क्रम है। इस प्रकार बालक को ज्ञानार्जन कराकर उसे व्यवस्थित कर शास्त्रीय अथवा नियमित ढंग से रखा जाता है। पुस्तकीय ज्ञान में मनोवैज्ञानिक क्रम को विशेष महत्व प्रदान न कर शास्त्रीय क्रम का विशेष ध्यान रखा जाता है। उसे परिभाषाएँ रटाई जाती है उसकी रुचि के अनुसार दिखाकर, ऐसे ज्ञान में बालक की रुचि नहीं होती। बालक भ्रमण करना चाहता है, उसे अपने मुहल्ले अथवा ग्राम की बहुत सी बातों का ज्ञान है। इस ज्ञान की सहायता से शास्त्रीय ज्ञान दिया जाता है। पाठ में प्रस्तुतीकरण की बेला मे पाठ के खण्ड मनोवैज्ञानिक ढंग पर कर लिये जाते है और एक दूसरे का सम्बन्ध जोड़ने पर उनकी व्यवस्था शास्त्रीय ढंग पर अन्त में कर ली जाती है।

आवश्यक निर्देश

प्रश्न १०--'अध्यापन एक कला है'। इस कथन की समीक्षा कीजिए। सफल अध्यापन हेतु आप शिक्षक को क्या निर्देश देना चाहेंगे ?

उत्तर—जन साधारण की यह धारणा है कि बालकों को निश्चित पाठ्य-वस्तु का ज्ञान कराकर परीक्षाएँ उत्तीर्ण कराना ही शिक्षा है। शिक्षा-शास्त्र से अनभिज्ञ व्यक्तियो की यह विचारधारा भ्रमपूर्ण होने के साथ ही साथ घातक भी है। "वास्तविक शिक्षण में शिक्षक कोरा निर्देशक तथा बालक निष्क्रिय श्रोता नहीं होता है वरन् बालक एवं पाठक दोनो ही क्रियाशील रहते हैं।" सही शिक्षण तो वही है जिसमे बालक भलीभाँति ज्ञान अर्जित करे और उसमे इस ज्ञान को भावी जीवन मे विभिन्न परिस्थितियो मे सफलतापूर्वक उपयोग करने की शक्ति उत्पन्न हो जाय। सफल शिक्षण तो वही कहा जा सकता है जो बाल केन्द्रित हो, उद्देश्यपूर्ण हो, क्रमबद्ध हो और जनतन्त्र की भावना से अनुप्राणित हो, बालको में शक्ति उत्पन्न करता, शिक्षक एवं बालक के परस्पर सहयोग से चलता हो, बालक के पूर्व ज्ञान पर आधारित हो, बालक के दोषों को दूर करता हो और प्रेमपूर्वक ढंग से दिया गया हो। "शिक्षक कलाकार है और शिक्षण उसकी कला। सच्चा कलाकार वह तब ही माना जावेगा और कला

सार्थक होगी जब कि शिक्षक शिक्षा-शास्त्र का पूर्ण ज्ञाता हो और निरन्तर इसका उपयोग कर अभ्यास करे।"

लोकतंत्र के इस युग में सबको शिक्षित करना है, ऐसी अवस्था में व्यक्तिगत शिक्षण तो असम्भव ही है क्योंकि न तो इतना धन ही है और न इतने शिक्षक ही। इसी कमी को दूर करने हेतु कक्षा अथवा समूह में पढाने की व्यवस्था की गई है। ऐसी दशा में शिक्षक पर विशेष उत्तरदायित्व आ पडा है, उसे कक्षा के विभिन्न स्तर, रुचियों एवं स्वभाव के बालको को शिक्षण देना होता है और बालक का अधिकाधिक व्यक्तिगत विकास करते हुए उसे समाज का कल्याणकारी सदस्य बनाना होता है। इसलिये उसे अनेक बातों पर ध्यान देना लाभदायक होगा।

कक्षाध्यापन प्रणाली में बालक और पाठक में पर्याप्त सम्पर्क नहीं हो पाता है, उसे विभिन्न रुचि वाले, मानसिक स्तर वाले बालकों से पाला पड़ता है। "प्रत्येक बालक की रुचि, स्तर और बुद्धि का अनुमान लगाकर पढाना" पड़ता है। अतः शिक्षक बालकों के मन के सामान्य ज्ञान का पता लगकार शिक्षण दे तभी सफल हो सकता है। बालको के अनुकूल शिक्षण शिक्षण विधि उपयोग में ला सकता है; शिक्षण को सरल एवं ग्रहण योग्य बना सकता है तथा सद्कार्यों की प्रेरणा दे सकता है। नई तालीम मे तो कर्म द्वारा शिक्षा दी जाती है अतः बालक की क्रियाशीलता का सदुपयोग करने के लिये मनोविज्ञान का ज्ञान विशेष सहायक होता है। मनोविज्ञान के बाद शिक्षण मे शिक्षा-विधि को बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। "शिक्षण-कला मे पारंगत शिक्षक किसी भी विषय को सरल, मनोरंजक और आकर्षक बनाकर बालक के सम्मुख प्रस्तुत करता है। इसी उद्देश्य से शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया जाता है। क्या बालक को देना है ? यह इतना महत्वपूर्ण नहीं वरन् कैसे देना है ? यह महत्वपूर्ण है। किसी विषय का विशेषज्ञ बनना बात और है और उस ज्ञान को बालक में बैठा देना बात और। शिक्षक पैदा होते हैं बनाये नहीं जाते परन्तु ऐसे शिक्षक मिलते ही कहाँ हैं ! इसलिये शिक्षा-शास्त्र का अध्ययन कर शिक्षा के सिद्धांतों का अभ्यास अपने प्रशिक्षण

काल में प्राप्त करले तदनुसार बालकों को शिक्षित करे तथा उन विशिष्ट पद्धतियों का ज्ञान प्राप्त करे तथा जहाँ जिस पद्धति को अनुकूल पाये वही प्रयोग करे तो शिक्षण कार्य सरल हो जावेगा, बालक सुगमता से समझ जावेंगे और शिक्षक को झुँझलाहट नही आवेगी ।

आमतौर पर शिक्षक यह कहते हुए सुने जाते हैं कि छोटी कक्षाओं को पढाने में क्या तैयारी करें कक्षा में जाकर ही सब पढा लेंगे । किन्ही अनुभवी शिक्षकों के लिये यह बात ठीक हो सकती है परन्तु पाठ्यवस्तु के समुचित ज्ञान के अभाव में शिक्षण कदापि सम्भव नही हो सकता । शिक्षक आत्मविश्वास खो बैठेगा, विषयानुकूल पद्धति चुनने में असुविधा होगी । यदि किसी प्रकार चुनने में सफल भी हो गया तो उसका प्रयोग ठीक ढंग से नही कर पावेगा । "शिक्षण को सफल बनाने के लिए विषय का सम्यक् ज्ञान बहुत ही जरूरी है ।"

"प्रत्येक शिक्षक को कक्षा प्रवेश से पूर्व पाठ्य विधि पर मनन करना अभीष्ट होगा । बालको के काठिन्य निवारण, शिक्षण को उपयोगी एवं सरल बनाने आदि के लिये व्यवस्थित रूप से पाठ संकेत बनाना आवश्यक है । पाठ की तैयारी करते समय बालक के पूर्व ज्ञान को अपने मस्तिष्क से ओझल नहीं होने देना चाहिये । नियमित अध्यापकों को संक्षेप मे यह नियम लिख लेना चाहिये परन्तु प्रशिक्षण प्राप्त कर्त्ताओं को विस्तार से पाठ संकेत बनाने चाहिए ताकि निरीक्षक प्रत्येक बात को समझले ।" पाठ संकेत बनाने की हरबर्टीय एवं समवायी प्रणाली पृथक-पृथक अनुच्छेदों में दी गई है ।

शिक्षक को कक्षा में बोलना पड़ता है । "वह सरल एवं बोध गम्य भाषा प्रयोग करे, उसके शब्द सरल, वाक्य छोटे एव स्पष्ट होने चाहिये । उसका स्वर मधुर हो, कर्कश नहीं । वाणी प्रभावशील हो । आवाज मे आवश्यकतानुसार उतार चढ़ाव हो । न बहुत मन्द ही बोले न अधिक तीव्र ही ।" शिक्षक लगातार न बोलते रहें वरन् बालकों के के अवधान को विश्राम देने के मध्य में प्रश्नादि कर लेने चाहिए । समुचित प्रश्नोत्तर, समुचित सहायक सामग्री और उनके समुचित प्रयोगादि की पाठ में व्यवस्था होना चाहिये ।

अक्सर शिक्षक पढ़ाने की धुन में रहते है लेकिन लिखित अभ्यासों को

बुनियादी शिक्षा में सामान्य एवं विशेष पद्धतियाँ

द्वितीय प्रश्न-पत्र

शिक्षण की विशिष्ट पद्धतियाँ

प्रोजेक्ट प्रणाली

प्रश्न १—"बुनियादी शिक्षा" प्रोजेक्ट पद्धति का निखरा हुआ रूप है।" इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं ? सकारण उत्तर दीजिए ?

भूमिका—आज के युग में 'शिक्षा के लिए शिक्षा' का यह प्राचीन आदर्श धूमिल होता जा रहा है। अब बालक के सर्वाङ्गीण विकास की ओर अधिकाधिक ध्यान दिया जाने लगा है। प्रोजेक्ट प्रणाली मे भी शिक्षालय, पाठ्यक्रम और शिक्षा-विधान आदि बातों को बालक के विकास की दृष्टि से देखा जाता है। प्रोजेक्ट प्रणाली शिक्षा को बालक के अनुकूल बनाती है और आकर्षण प्रदान करती है। प्रोजेक्ट का अर्थ है—योजना। स्पष्ट है कि शिक्षा को अत्यधिक प्रभावपूर्ण और लाभदायक बनाने के लिए शिक्षकों मे एकनिष्ठा और कार्य में बड़ी लगन की आवश्यकता है। किलपैट्रिक ने कहा है "प्रोजेक्ट, दत्तचित्त होकर किया जाने वाला वह उद्देश्यपूर्ण कार्य है, जो सामाजिक वातावरण में सम्पन्न हो।"[1] ऐसी ही दूसरी परिभाषा स्टीवेन्सन ने बताई है, "योजना

1—Project is a purposeful activity proceeding in a social lenvironment.

एक ऐसा समस्यामूलक कार्य है जो वास्तविक परिस्थितियों में पूरा किया जाय।"[1]

अतः यह बालकों की समस्यामूलक कार्य विद्या है जिसमें उसकी सन्तुष्टि कार्य की पूर्ति होती है। वह जीवन की प्रणाली है। जीवन स्वयं विद्या है, जिसकी सफलता उसके प्रयोग की योग्यता और क्षमता पर निर्भर है। जैसा कि प्रोफेसर बेलार्ड ने कहा है कि "प्रोजेक्ट वास्तविक जीवन का एक व्यावहारिक अंग है जिसको शाला मे शिक्षा प्रणाली के रूप में स्वीकार कर लिया गया है।" कहने का सार यह है कि विद्यालय में जिन विषयों का पाठन किया जाये, वे पाठ्य विषय कहकर नही वरन् वास्तविक कार्य के रूप में सिखलाये जावें।

उपर्युक्त तथ्य को भाषा शिक्षण के एक उदाहरण से इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है। मान लीजिये, हम बालकों को एक निमन्त्रण-पत्र लिखवाना चाहते हैं। अतः जिस दिन शाला में उत्सव हो उस दिन बालकों से कहा जावेगा कि वे पालकों एवं नागरिको के लिए उत्सव मे पधारने के लिए निमन्त्रण पत्र तैयार करें और उनके पास भेजें। बालक निमन्त्रित किये जाने वाले व्यक्तियों की नामावली बनायेंगे, निमन्त्रण लिखेंगे और उनके पास भेज देंगे। इस प्रकार बालकों को निमन्त्रण पत्र का सही रूप सिद्ध हो जावेगा। इस प्रकार यह समस्यामूलक कार्य वास्तविक परिस्थिति मे सम्पन्न हुआ। आधुनिक शिक्षा शास्त्री जान डीवी ने भी प्रोजेक्ट विधि की जोरदार वकालत की है।

प्रयोग दो प्रकार के होते हैं—एक व्यापारी (एक समस्या वाले) और बहु व्यापारी (अनेक समस्याओं वाले)। प्रयोग करने समय हमे नीचे लिखी बातों का ध्यान रखना चाहिए—

(१) प्रयोग कोई प्रयोजनशील कार्य हो, जिसमे बालक कुछ शारीरिक श्रम भी करें।

(२) कार्य समस्यात्मक हो, इसके विषय मे बालकों को सोचना और समझना पड़े।

1—Project is a problematic act carried to completion in its natural setting.

हो। ऐसा करने से बालक श्रम करेगा। शिक्षा बालक प्रधान होनी चाहिए विषय प्रधान नहीं। यदि ऐसा हो गया तो बालक खुशी-खुशी पढ़ेगा, स्कूल आवेगा, शिक्षक के दण्ड-प्रहार करने की नौबत न आवेगी, बालक अनुशासित होगे।

काम खेल नही है, काम में स्वतन्त्रता का अभाव है खेल में स्वतन्त्रता है। खेल में भी नियम होते है किन्तु वे सुविधानुसार परिवर्तित किये जा सकते है और इच्छानुसार खेल बन्द किया का सकता है। परन्तु कार्य तो करना ही पडेगा। कान में प्रसन्नता होना आवश्यक शर्त नही है, कष्ट होने पर भी कार्य करना पढता है, परन्तु खेल में प्रसन्नता एक आवश्यक शर्त है। कहने का सारांश यह है कि खेल स्वयं में साध्य है न किसी साध्य के लिए साधन। दूसरे खेल बन्धन से मुक्त एक स्वतन्त्र क्रिया है। तीसरे मनोरंजकता अथवा मनकी मौज इसकी एक आवश्यक विशेषता है।

शिक्षा में आजकल खेल की प्रणाली को बहुत स्थान दिया है। इस बात का प्रयास किया जाता है कि बालक तथा शिक्षक शिक्षा को 'काम' न समझ कर 'खेल' समझें और बालक को खेल ही खेल में बहुत कुछ सिखा दिया जाय। बालक पढते हुए प्रसन्नता का अनुभव करें, बन्धनमुक्त समझें। बालको की शिक्षा में खेल को आधारभूत बताया जा रहा है। शिक्षा के देने के तरीके, शाला, नियन्त्रण, प्रबन्ध तथा पाटन में क्रीड़ा पद्धति को काम में लाया जा रहा है। मान्तेसरी, डाल्टन, प्रोजेक्ट, अभिनय, बालचर, किंडरगार्टन, आदि पद्धतियाँ खेल द्वारा शिक्षा के सिद्धान्त पर आधारित है। इसी पुस्तक में वर्णित विभिन्न प्रणालियों के अध्ययन से यह बात सिद्ध होती है।

बुनियादी विद्यार्थियों में मूल उद्योग की क्रियाओ में बालक खेल का सा आनन्द लेते है और इस तरह काम करके खेल का ही आनन्द प्राप्त करते है और उनमें अनेक सद्गुणो का विकास होते हुए श्रम का सदुपयोग भी होता जाता है और बालक क्रियाओ द्वारा स्वाभाविक गति से ज्ञानार्जन भी करता जाता है।

बुनियादी शिक्षा योजना

प्रश्न ५—बुनियादी शिक्षा की रूप रेखा पर अपने विचार प्रकट करते हुए बताइये कि इसमें शिक्षक का क्या स्थान है ?

उत्तर—पूज्य बापू इस प्रणाली के प्रवर्तक है। यह प्रचलित दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली के विरुद्ध एक प्रतिक्रिया है। यह आधुनिकतम शिक्षा प्रणाली है। विश्व में प्रचलित विभिन्न शिक्षा प्रणालियो की अच्छाइयो का इस में समावेश किया गया है। यह बालक का सर्वांगीण विकास एक समाज का नवनिर्माण करती है। यह भारतीय आवश्यकताओं के अनुकूल है। इसके अनेक नाम है 'बुनियादी तालीम', 'बेसिक शिक्षा', 'नई तालीम' आदि। इन विभिन्न नामों के कारण है—(१) इसका जीवनोपयोगी ज्ञान देना (२) बालक को बुनियादी जरूरतो को पूरा करना, (३) बालक के अनुकूल होना, (४) प्रमुख उद्योगो से सम्बन्धित होना, (५) देश की सभ्यता एवं संस्कृति तथा शिक्षा व्यवस्था का आधार होना एवं (६) वर्गविहीन सर्वोदयी समाज निर्माण की आधार शिला होना।

इस योजन का जन्म सन् १९३७ में हुआ था। इसे देश भक्तो का समर्थन प्राप्त हुआ था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात इसे राष्ट्रीय शिक्षा योजना के रूप में स्वीकार कर लिया गया है तथा विभिन्न राज्यो में बुनियादी शिक्षालय उत्तरोत्तर बढ़ते ही जा रहे है। इस प्रणाली के सिद्धान्त, कार्यप्रणाली आदि बताने से पूर्व यहाँ पर उन कारणो का संक्षिप्त विवरण देना समीचीन होगा जिन्होने इसे अंकुरित, पुष्पित और पल्लवित होने में सहयोग दिया है। वे कारण है—(१) आग्ल शासन का लड़खड़ाना; (२) सन् १९३५ के कानून द्वारा प्रान्तीय स्वराज्य का सूत्रपात जिससे जनतन्त्र प्रणाली के अनुरूप शिक्षा देना; (३) निरक्षरता और प्रचलित शिक्षा का सदोष होना, (४) शिक्षको की बेकारी का निवारण करना; (५) पुस्तकीय एवं अव्यावहारिक शिक्षा का होना, (६) परीक्षा केन्द्रित शिक्षा के स्थान पर जीवन केन्द्रित शिक्षा देना, (७) खर्चीली शिक्षा के स्थान पर अपेक्षाकृत कम व्यय वाली शिक्षा देना, (८) मातृभाषा के माध्यम से स्वाभाविक एवं सरस तरीके से ज्ञान देकर सास्कृतिक उन्नयन करना, (९) प्रेम में गौरव बढ़ाना; (१०) पूँजीवाद को रोकना एवं (११) हस्त

कौशल का ह्रास न होने देना, (१२) गरीबी का अन्त करना (१३) शिक्षा हेतु शासन के समक्ष अर्थाभाव की समस्या को करना आदि।

स्पष्ट है कि भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा मुफ्त, अनिवार्य और पर्याप्त मात्रा में हो। शिक्षा प्राप्त कर बालक जीविकोपार्जन कर सके, श्रम मे गौरव बढ़ावे, समझे, और सुनागरिक बने। शिक्षा सबको समान अवसर प्रदान कर श्रेणीविहीन सर्वोदयी समान की स्थापना में योग दे। मातृभाषा एवं राष्ट्रभाषा को समुचित स्थान प्राप्त हो। इसमें भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के कल्याणकारी तत्वों का समावेश हो। बालक की रुचि का ध्यान रखकर उसे स्वाश्रयी बनाये। बुनियादी शिक्षा इन आवश्यकताओ को पूरा करती है। इसीलिए इसके मूलभूत सिद्धांत है सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए—(१) अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा, (२) कर्म केन्द्रित अर्थात जीवन केन्द्रित शिक्षा; (३) शिक्षा का माध्यम मातृभाषा; (४) समाज शिक्षा या समग्र शिक्षा, (५) जीवन की स्वाश्रितता और (६) सर्वोदयी समाज की रचना।

स्तर—बापू ने सन् १९४५ के सम्मेलन मे बुनियादी शिक्षा को 'जीवन की शिक्षा' का रूप दिया और बताया कि इस शिक्षा का क्षेत्र गर्भाधान से लेकर जीवन की अन्तिम साँस तक होगा। इसी समय 'जीवन शिक्षा' का कार्य उन चार भागों में विभाजन किया गया था—(१) पूर्व बुनियादी शिक्षा (सात वर्ष से कम आयु वालों के लिए शिक्षा) (२) बुनियादी शिक्षा (७ से १४ वर्ष के बालको की शिक्षा) (३) उत्तर बुनियादी शिक्षा (चौदह वर्ष के बाद नवयुवको के लिए शिक्षा) ( ) प्रौढ शिक्षा (मातृभाषा के माध्यम से बड़ी आयु के लोगो के लिए शिक्षा)।

पाठ्यक्रम—इसमे सात वर्ष से १४ वर्ष तक के बालकों के लिए निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की गई है। इसके पाठ्यक्रम मे गणित मातृभाषा, सामान्य विज्ञान, सामाजिक अध्ययन, चित्रकला, संगीत और राष्ट्रभाषा को रखा गया है। शारीरिक व्यायाम प्रत्येक के लिए अनिवार्य रखा गया है।

इसमे उद्योग के माध्यम से शिक्षण किया जावेगा। आवश्यकतानुसार सामाजिक एवं प्राकृतिक प्रतिवेशों को शिक्षण का साधन बनाया जावेगा। कर्म

से अभिन्न, अखण्ड और परस्पर सम्बन्ध रूप में पढ़ाये जावेंगे। इसी को इस प्रणाली मे समवायी विधि के नाम से सम्बोधित किया गया है। मातृभाषा का पहले मौखिक ज्ञान दिया जावेगा। इसके अनन्तर पढना-लिखना बताया जावेगा। ऐसे उद्योगों को इसमें स्थान दिया गया है जो बालकों की क्षमता के अनुसार हों एवं जिसमें शिक्षण की पर्याप्त सम्भावनाएँ हों। स्थानीय उद्योग जो ऐसी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं, इसमें स्थान दिया जाता है। वैसे इस योजना में कताई-बुनाई, गत्ते का काम, मिट्टी का काम, मृदु उद्योग, कृषि, बढईगीरी, चर्मकार्य, मछली पालन आदि को प्रमुख स्थान दिया गया है।

ऊपर दिये गये विषयों को पढ़ने के लिए समय-विभाग-चक्र, (दिन का तथा छात्रावासयुक्त शालाओं मे सर्वकालीन) बनाया जाता है। विस्तृत अध्ययन के लिए लेखक की बुनियादी विद्यालय संगठन पुस्तक का अवलोकन करें।

मूल्यांकन—प्रचलित परीक्षा प्रणाली का उन्मूलन कर साप्ताहिक, पाक्षिक मासिक आदि परीक्षाएँ रखी जावेंगी, अर्जित ज्ञान एवं सामुदायिक जीवन का रिकार्ड रख मूल्यांकन किया जावेगा।

अध्यापक का स्थान—"बुनियादी शिक्षक, समाज संगठक एवं समाज का नेता भी है, वह समाज को कुशल नेतृत्व प्रदान करेगा।" बालकों को आदेश नही देगा वरन् मार्गदर्शक के रूप मे उनकी सहायता करेगा। केवल प्रशिक्षित शिक्षक ही शिक्षालय मे रखे जावेंगे। यह प्रणाली नवीनतम शिक्षा प्रणाली है। इसमें पर्याप्त शोध कार्य होना है अतः शिक्षालयो एवं प्रशिक्षण केन्द्रों मे जो भी प्रयोग हो उनको समायोजित करके प्रकाश मे लाया जावे तथा उनका प्रसार एवं प्रचार किया जाय।

यह प्रणाली भारत की "शैक्षणिक आवश्यकताओं को पूरा कर सकती है।" मनोवैज्ञानिक है। यह शिक्षा शास्त्र सम्मत है। बालक का संतुलित सर्वांगीण विकास करती है। ज्ञान अभिन्न एवं अखण्ड समष्टि के रूप में दिया जाता है; विषय परस्पर सम्बन्ध होते हैं। मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देती है। बालक कमाते हुए सीखते हैं। इसमें विभिन्न आधुनिक एवं प्रगतिशील शिक्षा प्रणालियों की अच्छाइयों का समावेश किया गया है। सर्वोदय इसका उद्देश्य है।

सुधारने में रुचि नही लेते हैं। शिक्षक को चाहिये कि कक्षा में पढ़ाते समय सुपरवीजन करते हुए उनकी त्रुटियों को सुधार दें। बालकों की भूलों का सुधार श्याम पट्ट पर लिखवा कर बालको द्वारा ही करवाया जावे। बालकों को बहुत कम त्रुटियाँ करने का मौका दिया जाय। उदाहरण के लिए कठिन शब्दो को श्याम पट्ट पर लिख दिया जावे और देख लिया जावे कि बच्चों ने सही लिखा है अथवा नही। प्रारम्भिक कक्षाओ में जहाँ ११ वर्ष से कम वय के बालक पढते है, गृह कार्य न दिया जावे वरन् कक्षा में ही अभ्यास करा दिया जावे। इसके अलावा सफल शिक्षक शिक्षण में बालकों से अधिकाधिक सहयोग प्राप्त कर पाठ को विकसित करता है। "उसे समवायी शिक्षण में इतना सजग रहना चाहिए कि अनुकूल अवसरों का पता लगाकर तदनुसार शिक्षा दे।"

प्रश्न ११–कक्षा में अनुशासन किस प्रकार स्थापित किया जा सकता है ?

उत्तर––कक्षा में अनुशासन की समस्या प्रमुख होती है। इसका उत्तम उपाय यही है कि शिक्षक "नेत्र नियन्त्रण रखें।" एक से अधिक बालकों को एक साथ न बोलने दें। उसकी दृष्टि सम्पूर्ण कक्षा पर हो। बालक चंचल होते हैं अतः उन्हें किसी न किसी काम में लगाये रखना चाहिये। "कक्षा में प्रेम और उल्लास का साम्राज्य हो।" साथ ही शिक्षक आवश्यकतानुसार कठोर भी बनें और अनुशासनहीनता को न पनपने दें। अशिष्ट व्यवहार का तिरस्कार करें। शिक्षक सम्पूर्ण बालको के साथ एकसा व्यवहार करे। इसके अतिरिक्त को चाहिए कि वह कक्षा व्यवस्था देख ले कि बालक ठीक ढंग से बैठे हैं अथवा नही। छोटे बालक आगे व बडे बालक पीछे बैठाये जावें। समवायी पाठों में प्रत्येक बालक के पास कार्य करने के लिये पर्याप्त स्थान दिया जावे। कक्षा स्वच्छ हो। सामग्री यथास्थान रखी हो। बालक क्रम से बैठे हों; मेज कुर्सी यथा स्थान रखी हो, टाट पट्टी ठीक तरीके से बिछी हो।

अध्यापन की युक्तियाँ

शिक्षक कक्षा में बालकों को कुछ कहकर ही ज्ञान देते हैं और पाठ्य-वस्तु को स्पष्ट करने के लिए कुछ युक्तियों जैसे "तुलना, भाषण, प्रश्नोत्तर" आदि का सहारा लेते हैं। इन्हें मुखाग्र विधि भी कहते है। ये बड़ी उपयोगी हैं। इनके द्वारा बालक शीघ्रता से अपनी ओर आकर्षित किये जासते है; उनकी इच्छा

के अनुसार शिक्षा दी जा सकती है; उन्हें नवीनतम् ज्ञान से परिचित कराया जा सकता है; दिया गया ज्ञान तीव्र गति से संचरित किया जा सकता है; बालकों के स्तर के अनुसार ज्ञान देने में सुविधा होती है। साथ ही साथ इनकी कुछ कमियाँ भी खलती है जैसे बालक एक निष्क्रिय श्रोता मात्र रह जाता है। शिक्षक बालकों की उपेक्षा कर विस्तृत व्याख्या करने लगते हैं जिससे समय की हानि होती है तथा कक्षा में अनुशासनहीनता फैलती है। संयोगवश शिक्षक की वाणी रुचिकर न हुई तो बालक ऊब जाते है। बालक विषय की ओर ध्यान न देकर शिक्षक के हाव-भाव की ओर अधिक ध्यान देने लगते हैं। वर्णन में आये कठिन शब्दो का बालक अर्थ नही समझ पाते। सबसे बड़ा दोष तो यह है कि एक बार सुना हुआ ज्ञान बालक शीघ्र भुला देते है और फिर उसे पुनः प्राप्त करने का कोई साधन नही है। यह कमियाँ शिक्षक की योग्यता पर निर्भर है। अतः शिक्षक को इन युक्तियो का प्रयोग करते समय उन दोषों से बचना चाहिए।

प्रश्न १२—प्रश्न करने के क्या उद्देश्य हैं ?

उत्तर—शिक्षक इस विधि को शिक्षण में सर्वाधिक अपनाते है। अतः शिक्षकों को इस विधि को बडी लगन से सीचना चाहिए। एक विद्वान का कथन है, "प्रश्न करने की एक उत्तम शैली की प्राप्ति निश्चय ही एक युवक अध्यापक की आवश्यक महत्वाकांक्षा होनी चाहिए।" प्रश्न बालको की परीक्षा लेने, पाठ्य-वस्तु के किसी विशेष अंग पर बालक का ध्यान केन्द्रित करने; बालक के ज्ञान को दृढ, स्पष्ट व व्यवस्थित करने; पुनरावृत्ति करने, छात्रों की स्मृति, कल्पना; विचार आदि शक्तियो को अभ्यास देने, बालक के मस्तिष्क को सक्रिय बनाने; पाठ में रुचि उत्पन्न करने; पूर्व ज्ञान का पता लगाने एवं नवीन ज्ञान देने हेतु, पूर्व ज्ञान को उभाड़ने के लिये; पाठ्य वस्तु में ध्यान आकर्षित करने, पाठ के एक भाग को दूसरे भाग से जोड़ते समय एवं पुनरावृत्ति करते समय पूछे जाते है।

प्रश्न १३—अच्छे प्रश्नों के क्या लक्षण हैं ? उदाहरण देकर समझाइए।

अच्छे प्रश्न व उनके करने की विधि—अच्छे प्रश्नों की भाषा सरल और स्पष्ट होती है। प्रश्न सीधे हों और एक प्रश्न का एक ही मतलब

निकलता हो। प्रश्न अधिक लम्बे न हों। समस्त प्रश्न एक ही भाषा में हों। प्रश्न स्वीकारात्मक न हों जैसे गंगा नदी गिरती है—कहाँ ? प्रश्न स्वरचितहों। "प्रश्न का उत्तर 'हाँ' अथवा 'ना' में न निकलता हो। प्रश्न बालकों के अनुकूल हों। प्रश्न विचारोत्तेजक, तर्कोत्पादक, प्रासंगिक तथा उद्देश्यपूर्ण हों।" उनका उत्तर अधिक लम्बा न निकलता हो तथा वे अपने स्वरूप में अपूर्ण न हो। प्रश्न का मुख्य शब्द अन्त में आता हो। प्रश्न सरल होते हुए कुछ कठिन भी हो। प्रश्न एक बालक से न पूछे जाकर कक्षा से सामूहिक रूप में पूछे जावें, किन्तु उत्तर एक बालक से ही ग्रहण किया जावे। प्रश्न सम्पूर्ण कक्षा पर फैले हुए हो। एक बालक से ही अधिक प्रश्न न किये जावें। शिक्षक अपने द्वारा किये गये प्रश्नो एवं बालकों द्वारा उत्तारों को दुहरावें नहीं।

प्रश्न १०—**अवांछनीय प्रश्नों के तीन उदाहरण दीजिए।**

उत्तर—दोषयुक्त प्रश्न खराब प्रश्न वे है जिनका उत्तार 'हाँ' अथवा 'ना' मे आता हो। कभी-कभी शिक्षक कई प्रश्न एक साथ मिलाकर पूछ लेते हैं जिससे प्रश्न जटिल बन जाता है जैसे; ग्वालियर क्या है ? उसे किसने, कब और क्यों बसाया था ? ऐसे प्रश्न सदोष हैं। सांकेतिक प्रश्न भी नहीं करने चाहिये जैसे; "क्या यह कलम सुन्दर नही है" इस प्रश्न से विचार उत्तेजित नही होते। बालक शिक्षक के संकेत को समझकर उत्तार 'हाँ' या 'ना' में दे देते है। अपूर्ण प्रश्नो का भी बहिष्कार किया जावे। इसमें शिक्षक एक प्रश्न करते है और प्रश्न के वाक्य को पूरा न कर अपनी भाव-भंगिमा अथवा उच्चारण प्रक्रिया से बालको को उसे पूरा करने के लिए कहते है। इसी प्रकार द्विविधासूचक प्रश्न भी नही करने चाहिए जैसे, "सीता स्वयम्वर में राम ने धनुष तोड़ा था अथवा लक्ष्मण ने ?' इसमे राम अथवा लक्ष्मण एक उत्तार ठीक है ऐसे, प्रश्न न करने चाहिये।

प्रश्न १५—**बालकों के उत्तरों पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।**

उत्तर—प्रश्न से साथ उत्तार का अटूट सम्बन्ध है। कुशल प्रश्नकर्त्ता को उत्तार ग्रहण करने में भी दक्ष होना चाहिये। उसे चाहिये कि वह समुचित उत्तारों का स्वागत करे तथा अधूरे एवं अस्पष्ट उत्तारो को तिरष्कृत करे।

बालकों के सही उत्तरों को अन्य बालकों से दुहरवाकर अभ्यास करावे। सामूहिक उत्तरों को निरुत्साहित किया जावे। यदि बालक उत्तर न दे सकें तो शिक्षक स्वयं उत्तर न बताकर बालकों के सहयोग से ही उत्तर निकलवायें। यदि असंभावित उत्तर प्राप्त हों और उससे पाठ के विकास मे सहायता मिलती हो तो स्वीकार कर लिये जावें।

अच्छे उत्तरों के गुण बताना भी सामयिक होगा। उत्तर की भाषा सरल और स्पष्ट हो। उत्तर प्रश्न की पूर्ण जानकारी हो। उत्तर संक्षिप्त और पूरे वाक्य मे हो। एक ही बात को बार-बार न दुहराते हों। यथा संभव एक ही वाक्य में पूरा होता हो तो ठीक होगा। उत्तर बालक की मूर्खता अथवा ढीटता का बोध न कराते हों। उत्तर स्वाभाविक ढंग से व चुस्ती से सोच समझकर दिये गये हों। उत्तर देते समय बालक ठीक ढंग से खड़ा हो। उसकी आवाज ऐसी ऐसी हो कि सम्पूर्ण कक्षा के बालक सुन सकें। पूछे गये बालक ही उत्तर दें तो उत्तम होगा।

बालकों के प्रश्न—पाठन-पठन के मध्य बालक भी प्रश्न करते है। पाठ्य विषय से सम्बन्धित प्रश्नो का शिक्षक को स्वागत करना चाहिए। इनकी संख्या अधिक न बढ़ने दी जावे। शिक्षक का प्रयास हो कि ऐसे प्रश्नो के उत्तर बालकों से ही निकलवायें। असमर्थता की दशा मे शिक्षक स्वयं बतायें। यदि स्वयं भी न बता सकें तो आने वाले दिन बताने के लिये कह दिया जावे। शिक्षक के उत्तर से बालक संतुष्ट न हों तो शिक्षक उन्हें झिड़की न देकर समझाने का भरसक प्रयास करें।

प्रश्न १६—**भाषण विधि के दोष बताते हुए इसे उपयोगी बनाने का उपाय सुझाइये।**

भाषण विधि—यह विधि उच्च कक्षाओं के लिए ही उपयुक्त है। इसमे शिक्षण एकांगी हो जाता है। कक्षा मे शिक्षक की प्रधानता हो जाती है और बालक निष्क्रिय श्रोता बन जाता है। इसमे पाठक किसी विषय पर लगातार बोलता है। आवश्यकता पड़ने पर कुछ सावधानी बरतते हुए हम इसका उपयोग कर सकते हैं, जब कि इसकी बहुत ही जरूरत आ पड़ी हो; भाषण प्रत्येक बालक सुन और समझ सके। इसका उपयोग करने से पूर्व काफी समय पहले

बालकों को बता दिया जाय। भाषा बालकों के स्तर के अनुकूल हो। भाषण के अन्त में सार रूप में सारी बातें दुहराई जावें। शिक्षक स्वयं भाषण न देकर बालकों द्वारा भाषण दिलाने का प्रयास करें। कक्षा में वाद-विवाद प्रतियोगिता आयोजित करके भाषण दिलाये जाते है। बालकों का इससे बड़ा हित होगा।

प्रश्न १७—कथन-विधि अथवा व्याख्या विधि में से किसी एक का विवेचन कीजिए।

उत्तर—महापुरुषों की जीवनियाँ, लोक कथाएँ तथा चुटकले आदि इस विधि द्वारा बालकों को बताये जा सकते हैं। बालक इसमें रस लेते है। उन्हें इस प्रकार सद्गुणी, वीर और स्वावलम्बी बनाया जा सकता है इस विधि का सामाजिक अध्ययन, सामान्य विज्ञान और साहित्य के पाठों मे भली-भाँति उपयोग किया जा सकता है। इस विधि मे सफलता प्राप्त करने के लिए पाठ को अन्वितियों मे विभक्त कर बालको के समक्ष सरल रूप मे प्रस्तुत करना चाहिये। उदाहरणार्थ यदि महात्मा गान्धी का हाल बताना है तो पहले प्रारम्भिक जीवन, तरुणावस्था, जीवन की प्रमुख बातें एवं स्वर्गवास आदि टुकड़ों मे विभाजित कर बताना चाहिए। कहने का तरीका भी रोचक तथा बालकों की आयु, रुचि, स्तर के अनुसार होना चाहिए। वर्णन कल्पना-शक्ति को जाग्रत करने वाला होना चाहिये। कक्षा के मध्य शिक्षक को रुकना नहीं चाहिये। कथन के अनुसार शिक्षक हाव-भाव भी करे तो बालक आनन्द लेंगे। सहायक सामग्री का उपयोग भी लाभप्रद होगा। जहाँ तक सम्भव हो कथित वस्तु जीवन से सम्बन्धित हो। कथन का निष्कर्ष बालकों द्वारा ही निकलवाया जाये।

व्याख्या—अन्य विषयों की अपेक्षा भाषा-शिक्षण में इस विधि का अधिक प्रयोग होता है। कठिन को सरल बना देना ही इस विधि का तात्पर्य है। इसके द्वारा शब्दो, वाक्यों, मुहावरों आदि को व्याख्या करके इतना सरल बना दिया जाता है कि बालक वस्तु को सरलता से सीख लेते हैं। शिक्षक इसके प्रयोग में कुछ सावधानी बरतें। अति सरल प्रसंगों की व्याख्या न करें। याख्या मे सरल शब्द प्रयुक्त हो और बालकों का सहयोग लिया गया हो।

उचित प्रसंग की उचित स्थान पर व्याख्या की जावे । व्याख्या की आवश्यक बातें बालकों को नोट करवा दी जावें । उन्हे व्याख्या के प्रति जागरूक बना दिया जावे । यह पता लगा लेना चाहिये कि बालक ठीक ढंग से व्याख्या समझ भी पा रहे है अथवा नहीं । व्याख्या स्पष्ट करने में चित्र, श्यामपट्ट, विलोम शब्द, चित्रादि का आश्रय लिया जाना हितकारी होता है ।

सहायक सामग्री

प्रश्न १८—सहायक सामग्री की पाठ में क्या उपयोगिता है ? इसके कितने भेद हैं । संक्षेप में इनका हाल लिखिये ।

प्रश्न—१९ अथवा—दृश्य शिक्षण सामग्री के तीन उदाहरण दीजिये तथा बतलाइये कि उनके द्वारा कठिन को सरल किस प्रकार बनाया जाता है ?

अथवा

प्रश्न २०—प्राथमिक बुनियादी शाला में प्रयुक्त होने वाली शिक्षण सामग्री का हाल लिखिये ।

प्रश्न २१—सहायक सामग्री कैसी होनी चाहिये ? इसके प्रदर्शन में क्या-क्या सावधानियाँ रखना आवश्यक है ?

महत्त्व—सहायक सामग्री पाठ्य विषय को स्पष्ट एवं रोचक बनाती है । इसका सयमानुसार सही उपयोग पाठ को रुचिपूर्ण, सरल और स्पष्ट बनाता है । साथ ही साथ बालक कठिन से कठिन प्रसंग को आसानी से समझ लेते है । इसके दो भेद है—प्रथम मौखिक (वाचिक उदाहरण) द्वितीय सामग्री (वस्तुरूप उदाहरण ।

उद्देश्य- मौखिक सामग्री के अन्तर्गत कविताएँ, कहानियाँ,बालकों से वार्तालाप वर्णन, व्याख्या, तुलना, मुहावरे लोकोक्तियाँ आते है । इनका प्रयोग स्वाभाविक, सरल एवं समुचित होना चाहिये । इनका उद्देश्य कहानियाँ एवं चुटकुलो की सहायता लेना, तर्क, एवं सूझ शक्ति का विकास करना, सिद्धान्त विशेष मे बालकों की रुचि को जागृत करना; स्थायी ज्ञान देना; कल्पना शक्ति का विकास करना एवं बालक को क्रियाशील बनाने की प्रेरणा देना है । स्पष्ट है कि इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु, शिक्षण-सामग्री आकर्षक एवं व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत की जावे । इसीलिए यह कहा जाता है कि यह सादा, सरल और बालकों के दैनिक जीवन के अनुभवों पर आधारित हो । बालकों के उपयुक्त हो । कमजोर

बालकों के लिये विशेष हितकारी हो। पाठ के विकास में सहायक हो। निश्चित और पर्याप्त हो। मौखिक सामग्री को शिक्षण की युक्तियाँ अथवा अध्यापन के रूप भी कहते है। यहाँ इनका सामान्य परिचय दिया जाकर प्रथक परिच्छेद मे विस्तार से चर्चा की गई है।

वस्तुरूप सामग्री मे चार्टस, नक्शे, रेखाचित्र, चलचित्र आदि का समावेश होता है। प्रत्येक स्थिति मे इनका उपयोग सम्भव तो नही है किन्तु ऐसी अवस्था में मिलती-जुलती दूसरी वस्तु दिखाकर काम चलाया जा सकता है। इस प्रकार की सामग्री का उपयोग प्राथमिक कक्षाओ के लिए बडा ही उपयोगी है। कमजोर बालको के लिए तो इनका उपयोग बड़ा हितकर है। अतः शिक्षक जरूरत के मुताबिक इनका उपयोग करें। ये दो प्रकार के होते है। पहले वे जो कक्षा अथवा शाला में ही होते है, दूसरे वे जो शाला से बाहर तथा पर्यटन आदि के अवसर पर प्राप्त होते है। इनका चयन बड़ी सावधानी से करना चाहिये। "यह नितान्त आवश्यक हो, कीमत अनुकूल हो तथा विभिन्न अवसरो पर विभिन्न ढंग से प्रयुक्त की जा सके।" यह समय की बचत करने वाली, प्रभावशील, भावों की उत्तेजना देने वाली, बालको की रुचि के अनुकूल एवं स्थायी होनी चाहिये। इसका उपयोग सावधानी से हो तथा संगठित रूप मे प्रस्तुत की जावे। उपयोग से पूर्व शिक्षक को उसका निरीक्षण कर लेना चाहिये। आकार ऐसा हो कि बालक सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंग का भी सुगमता से अवलोकन कर सके। इसका उपयोग करने से पूर्व बालको को भूमिका दे दी जावे। ये पाठ्य-वस्तु को स्पष्ट करते हो, बालको की ओर से प्रतिक्रिया हो। वे उत्तर दे, तभी उपयोग सार्थक माना जावेगा। लेखक का यह अनुभव है कि छात्राध्यापक अपने पाठो मे सहायक सामग्री की व्यवस्था करते है परन्तु यह भौड़ी, भद्दी, कुड़ौल होती है तथा समयानुसार ठीक प्रकार से इसको प्रस्तुत नही की जाती। इसका कुफल यह होता है कि यह पाठ के विकास मे सहायक न होकर बाधक बन जाती है, बालक के विचार उलझ जाते है। सहायक सामग्री की पाठ मे व्यवस्था इतनी महत्वपूर्ण नहीं जितनी कि कौशलपूर्वक रीति से उसका प्रस्तुतीकरण।

वस्तुरूप उदाहरण दो प्रकार के होते है। प्रथम दृश्य (visual) अर्थात् जो नेत्रो से देखे जा सकें जैसे फोटोग्राफ, चित्र, कृष्ण पट आदि। चित्र, फोटोग्राफ

सही, समुचित, निश्चित विचार और भाव वाले होने चाहिए। ये इतने बड़े हों कि प्रत्येक अंग स्पष्ट दिखाई देती हो। ये सुयोजित होने चाहिये। पुस्तकें चित्रों वाली, वार्तालाप शैली में रोचक, बालकों के अनुकूल मोटे अक्षरो वाली होनी चाहिये।

नक्शे—नक्शों का उपयोग सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में विशेष रूप से किया जाता है। प्राथमिक कक्षाओ मे बाजार से खरीदा हुआ नक्शा प्रयोग न करके रोल अप बोर्ड पर बना हाथ का नक्शा ही अधिक उपयोगी रहता है। नक्शा फटा न होना चाहिये। निर्धारित स्थानों का ही बालको को अवलोकन कराया जाना चाहिये। जब एक से अधिक नक्शो का उपयोग करना हो तो एक के बाद एक नक्शा आवश्यकतानुसार खोला जावे तथा दिखाने के उपरान्त सही रीति से बन्द करके रख दिया जावे। सब नक्शे एक साथ खोल कर टाँगना तथा एक के ऊपर एक टांगे जाना ठीक नही है। नक्शे सावधानी के साथ उपयोग मे जाये लावें। ये केन्द्रस्थान पर लटकाये जावे ताकि प्रत्येक बालक भली-भाँति देख सके। नक्शे धीरे-धीरे खोला जावे तथा संकेतक (pointer) का उपयोग किया जावे, रूल अथवा उंगलो का नही। शिक्षक नक्शे की बगल मे खड़ा हो।

चार्ट और चित्रादि—ये समय और विषय दोनो के अनुकूल होने चाहिये। आकार बालको के देखने लायक हो। ये रंगीन तथा तड़क-भड़क वाले हो जिससे बालक आकर्षित हो सकें, जटिल न हो। क्षमतानुसार इनके निर्माण में बालको का सहयोग लेना ठीक रहेगा। शिक्षण मे इनका बाहुल्य न हो जावे अन्यथा शिक्षण गौण रह जावेगा। शिक्षणोपरान्त इनको होशियारी से यथा-स्थान रख दिया जावे।

उद्योग सम्बन्धी सामान—बुनियादी तालीम मे समवायी विधि से उद्योग-केन्द्रित शिक्षा की आयोजना की जाती है। अतः प्रत्येक शाला मे कुछ उद्योगों की व्यवस्था रहती ही है। ऐसी अवस्था मे शिक्षक को उद्योग मे निपुण होना चाहिये। कक्षा मे प्रवेश से पूर्व उद्योग-सामग्री की पूर्ण व्यवस्था कर लेनी चाहिए। कक्षा मे पर्याप्त सामग्री लेकर ही शिक्षण होना चाहिए। इसके अभाव मे कुछ बालक क्रियाशील और कुछ क्रियाहीन रूप से बैठे रहते है। यही बात सामान्य विज्ञान के उपकरणों पर भी लागू हो सकती है। इनका उपयोग बड़ी

सावधानी और कुशलता से किया जावे तथा प्रयोग उपरान्त व्यवस्थित ढंग से यथास्थान रख दिये जावें।

प्रश्न २१—'श्यामपट्ट' पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

अथवा

"कक्षा में श्यामपट्ट का उपयोग 'ना' हुआ, शिक्षक का पाठ 'ढ़ा' हुआ।" विवेचन कीजिये।

श्याम पट्ट—इसे 'शिक्षक का सखा' कहा गया है। कक्षा में इसे ऐसे स्थान पर रखा जावे जहा से प्रत्येक बालक इस पर लिखे को पढ़ सके। इसे पूर्ण स्वच्छ रखना चाहिए। कक्षा छोड़ने से पूर्व इसे साफ कर देना चाहिए। प्रत्येक शिक्षक को झाड़न अपने साथ रखनी चाहिए तथा इस तरीके से साफ करना चाहिए कि कक्षा मे गन्दगी न फैलने पावे। श्यामपाट, लेख शुद्ध, सुलिखित, सुडौल तथा सुव्यवस्थित होना चाहिये। पंक्तियां सीधी हों तथा उनमें समान अन्तर हो। श्यामपाट पर कार्य करते समय शिक्षक अंगो को विकृत रूप से संचालित न करे और न उचककर लिखे ही। श्यामपाट के सामने खड़े हो कर न लिखना चाहिए। बालकों को भी श्यामपाट पर लिखने का अभ्यास कराया जावे। इससे उनमे आत्मविश्वास का उदय होगा। खरिया से लिखते समय खरखराहट न हो। पाठन के अवसर पाठ के प्रमुख अंगों को संकेत रूप मे लिखते जाना बहुत लाभदायक होता है। श्यामपाट पर नक्शे, चित्र, ग्राफ आदि के अस्पष्ट अंश को तत्काल अंकित करके स्पष्ट किया जा सकता है। कहने का तात्पर्य है कि शिक्षण मे श्यामपाट का उपयोग सावधानी व भली-भाँति के करना चाहिये अन्यथा असफल हो जावेगा।

प्रश्न २२—बुनियादी तालीम मे पाठ्य पुस्तक का क्या स्थान हैं ?

"नई तालीम मे पुस्तक का कोई स्थान नही है। और बुनियादी शिक्षा की आलोचना है कि यह उद्योग केन्द्रित है, अतः इसमे पाठ्य पुस्तको का कोई स्थान नहीं है— वे बुनियाद, निस्सार एवं अनुचित है।" इस प्रणाली मे पाठ्य पुस्तकें साध्य के रूप मे नही, साधन के रूप मे प्रयोग की जाती है। इनका उपयोग ज्ञान को व्यापक बनाने के लिए होता है। काम की योजना बनाने और जीवनोपयोगी क्रियाकलापो की व्यवस्था करने के लिए इनका उपयोग किया जाता है। बुनियादी शिक्षा समवाय विधि से ज्ञान देती है। इस

विधि द्वारा प्राप्त ज्ञान को परिमार्जित कर उसे विकसित करने के लिए पाठ्य-पुस्तकों की जरूरत होती है। सस्वर वाचन के लिए भी पुस्तकों की आवश्यकता है। यही कारण है बाजार मे उपलब्ध होने वाली निम्न श्रेणी की पुस्तकें विद्यार्थी नही पढ़ते है और न पुस्तकें पाठ्य पुस्तक के रूप मे ही पढ़ी जाती है वरन् वे ऐसी पुस्तकें पढ़ते है जो उपयोगी होती है तथा उत्तम होती है तथा इनका पढना स्वाध्याय और पथ-प्रदर्शन के लिए आवश्यक है। अतः पुस्तक चुनी हो वे बालोपयोगी, बालकों के मनोविज्ञान के अनुकूल हों तथा रोचक शैली में लिखी हुई हों। ये अपने आकार, मुद्रण, भाव, भाषा, पाठ्य वस्तु सभी दृष्टियों से बालक के संतुलित सर्वांगीण विकास मे योग दे सकें। इसी शीर्षक के अन्तर्गत यह भी कहना प्रासंगिक है। समाचार पत्र, पत्रिकाओ का बुनियादी शिक्षा मे बड़ा महत्व है। ये उनके ज्ञान को व्यापक और राष्ट्रीय बनाने के ही साथ बालकों के भाषा-कौशल एवं रुचि को बढ़ाती है।

शिक्षा और सहायक सामग्री—वास्तविक रूप से बुनियादी शिक्षा मे अत्यधिक सहायक सामग्री की बड़ी जरूरत पड़ती है। कर्म द्वारा शिक्षा मे बिना सहायक सामग्री के शिक्षण सम्भव हो नही है। यह शिक्षा जीवनोपयोगी ज्ञान देती है। इनमे 'प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर' शिक्षण सूत्र को मान्यता दी गई है। इससे सहायक सामग्री का महत्व स्पष्ट होता है। शिक्षार्थी एवं शिक्षक इनका समुचित एवं सही ढंग से उपयोग कर पाठ को रोचक बनावें।

पाठों के प्रकार

प्रश्न २३—पाठ कितने प्रकार के होते हैं ? ज्ञानात्मक पाठों के बारे में आप क्या जानते हैं ?

उत्तर—मनोविज्ञान द्वारा हमे ज्ञात होता है कि मनुष्य का मस्तिष्क या तो कुछ ज्ञान प्राप्त करना चाहता है अथवा भावापन्न होता है अथवा कुछ कार्य करना चाहता है। इसी को अँग्रेजी मे (Knowing, Feelling, Willing) क्रमशः जानना, भावापन्न होना और कृति कहते है। मस्तिष्क की इसी सक्रियता को ध्यान मे रखकर समस्त पाठ तीन भागों मे विभाजित करने का प्रयास किया जाता है। ध्यान रहे कि मस्तिष्क की किसी भी सक्रियता का उद्घाटन शुद्ध में रूप में नहीं हो सकता है। स्पष्ट है कि कोई भी ज्ञान पाठ भाव और इच्छा से रहित हो ही नहीं सकता। इसी तरह भाव पाठो मे भी ज्ञान और

कार्य का समावेश हो ही जाता है और कला पाठ भी ज्ञान और भाव से वंचित नहीं रह सकते हैं। कहने का तात्पर्य कि जिन पाठों में ज्ञान का प्राधान्य है उन्हें ज्ञान पाठ, जिन पाठों से भाव उद्दीप्त हों वे भावोद्दीपक पाठ तथा जिन पाठोंमें प्रधानता हस्तकौशल अथवा कला का ज्ञान दिया जाय उसे कला पाठ कहते हैं।

"भाषा, गणित, सामाजिक अध्ययन और व्याकरण आदि के पाठ ज्ञान पाठ के अन्तर्गत आते है।" इनमे बालकों को नवीन ज्ञान दिया जाता है। कविता, गद्य काव्य एवं धार्मिक शिक्षा के पाठ भावोद्दीपक पाठों के अन्तर्गत आते है। शिक्षको को चाहिये कि वे ऐसे पाठ को पढ़ाते समय शब्द ज्ञान देने अथवा अर्थ बताने मे ही समय नष्ट न करदें। ऐसा करना भाव पाठ के उद्देश्य से विचलित होना होगा। चित्रकला, कताई-बुनाई, सुलेख आदि कला पाठो के अन्तर्गत आते है। इनमे हाथ की प्रधानता होती है। ज्ञान पाठ दो तरीके से पढाए जाते है एक तो ज्ञान देकर दूसरे ज्ञान निकलवाकर।

'भावोद्दीपक पाठों' मे जिस भाव को शिक्षक कक्षा मे उत्पन्न करना चाहता है उसका वातावरण प्रस्तावना मे तैयार करे। ऐसा वह चित्र दिखाकर तथा कविता का दो बार मधुर वाचन करके कर सकता है। बालको को कविता का रसास्वादन कराना है तो शिक्षक को इसे पढ़ाते समय शब्दार्थ कदापि न बताने चाहिये। हाँ ! कठिन शब्दों का उच्चारण बताया जा सकता है। यदि शब्दार्थ अथवा पंक्तियो का अर्थ बताना ही है तो एक दिवस पूर्व अथवा निबन्ध के घण्टे मे बता सकता है। उसे भाव विश्लेषण के अन्तर्गत अधिकाधिक प्रश्नो और वाद-विवाद करके काव्य की प्रत्येक विशेषता से बालको को बतावें। भाव की पुष्टि और पुनरावृत्ति के अन्तर्गत शिक्षक सम्पूर्ण पद के शब्दगत एवं अर्थ-गत् सौदर्य की चर्चा बालकों से करें। पद की विशेषताओं पर प्रश्नोत्तर करें। भाव विश्लेषण मे जहाँ कि प्रत्येक पंक्ति की विशेषता का पृथक-पृथक ज्ञान दिया गया था यहाँ पूरे पद पर प्रश्नोत्तर होगे।

कला के पाठो मे कक्षा व्यवस्था पर विशेष ध्यान देना होता है क्योंकि उसे क्रिया-सम्बन्धी सामान रखने और काम करने के लिए प्रत्येक बालक अपेक्षाकृत अधिक स्थान घेरता है। बालको के सम्मुख आदर्श प्रदर्शन करके बालकों को व्यक्तिगत मार्ग प्रदर्शन करना चाहिए।

"बुनियादी शिक्षा में तो बालक करके सीखते हैं इसमें न तो क्रिया ही गौण होती है और न ज्ञान ही।" इसमे ज्ञान पाठ अथवा भाव पाठ पृथक से दिये जाते हैं तो बुनियादी तालीम में ये ज्ञान क्रिया के आधार पर बनते हैं और बालक के हाथ, हृदय और मन का विकास होता है।

हरबर्ट के पंच सोपान

प्रश्न २४—हरबर्ट के पंच सोपान के क्रमिक विकास का वर्णन करते हुए इनकी उपयोगिता पर प्रकाश डालिये।

प्रश्न २५—हरबर्ट के पंच सोपान कौन-कौन से हैं उनमें से प्रत्येक की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

परिचय—शिक्षा के क्षेत्र मे हरबर्ट के पंच सोपानों का सर्वाधिक प्रचलन होता है। ये मनोवैज्ञानिक है फिर भी दोष मुक्त तो नही है। विभिन्न प्रकार के पाठो को तैयार करने मे हम इनका प्रयोग करते है। हरबर्ट नामक एक शिक्षा शास्त्री ने (१) स्पष्टता (२) सम्बन्ध (३) प्रणाली और (४) प्रयोग:— इन चारो पदों की रचना की थी। उसके बाद "उसके जिलर नाम के एक शिष्य" ने स्पष्टता को तैयारी एवं उपस्थापन इन दो पदो मे विभाजित कर दिया और उनके नाम भी बदल दिये। अब हरबर्ट के पदो का वर्तमान स्वरूप इस प्रकार है—"प्रस्तावना, उपस्थिति, तुलना, सिद्धान्त-निरूपण और प्रयोग।"

प्रस्तावना—प्रस्तावना का कार्य नवीन ज्ञान को ग्रहण करने के लिए बालको को प्रेरित करना है। इसके द्वारा बालक के पूर्व ज्ञान को उभाड़ कर नय ज्ञान ग्रहण करने के लिए जिज्ञासु बनाया जाता है। शिक्षक का यह प्रयास होता है कि पाठ सम्बन्धी पूर्व ज्ञान को आधार बनाकर प्रस्तावना मे बिखरे हुए ज्ञान को एकत्रित करके नये ज्ञान ग्रहण करने के लिए बालक को जागरूक करे। शिक्षक बालको समक्ष समस्या रखता है जिसका हल पूर्व ज्ञान के आधार पर नही होता। प्रस्तावना में उस समस्या को हल करने की उत्सुकता पैदा हो जाती है। बालक पाठ्य वस्तु के रूप में नवीन ज्ञान ग्रहण करने के लिए खुले मस्तिष्क से लालायित हो उठते है। शिक्षक कोई कहानी कहकर कविता का

वाचन करके अथवा पूर्व में पढ़ाये गये पाठों को दुहराकर प्रस्तावना का रूप देता है।

उपस्थिति—इसके पश्चात् आती है उपस्थिति अथवा पाठ्य विषय का प्रस्तुतीकरण इसे विषय निर्देश भी कहते है। प्रस्तावना के दो भाग होते है "पूर्व ज्ञान का उद्‌बोधन तथा उद्देश्य कथन।" हरबर्ट के राइन नाम के शिष्य ने बीच मे उद्देश्य कथन नाम का एक उप-पद और जोड़ दिया था। उद्‌देश्य दो प्रकार के होते है —सामान्य उद्‌देश्य एवं विशिष्ट उद्देश्य। पढ़ाये जाने वाले पाठ की ओर बालक का ध्यान आकर्षित करके बालक को पाठ का उद्देश्य बताया जाता है। जिससे बालक भटके नही। पाठ योजना मे 'उद्देश्य कथन' शीर्षक देकर इसका उल्लेख किया जाता है। उद्देश्य प्रकट करने के उपरान्त बालकों के समक्ष वस्तु प्रस्तुत की जाती है। उसे स्पष्ट किया जाता है। बालक इसे भलीभाँति समझकर ग्रहण करले अतः सहायक सामग्री, शिक्षण की युक्तियो यथा प्रश्नोत्तर, हाव-भाव और कथन आदि का सहारा लिया जाता है।

तुलना सिद्धान्त निरूपण एवं प्रयोग—पाठ्य विषय प्रस्तुत करने के उपरान्त विविध तरीको से तुलना करके बालको को निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए प्रेरित किया जाता है। इस निष्कर्ष के आधार पर ही बालको को किसी सिद्धान्त तक पहुँचाया जाता है। इस प्रकार प्राप्त किये ज्ञान का अभ्यास कराया जाता है। इस प्रयोग भी कहते है। प्रदत्त ज्ञान का बालको द्वारा प्रयोग कराया जाना चाहिए। प्रयोग इस बात का साक्षी है कि बालक नवीन ज्ञान कहाँ तक ग्रहण कर सकते है।

विशेषताएं इनकी रचना एवं पदो की विशेषताओ का साराश इस प्रकार है- 'मनोवैज्ञानिक आधार ग्रहण कर क्रमबद्ध रूप से व्यवस्थित की गई है। इसके प्रथम चार पद आगमन विधि के तथा आखिरी पद निगमन विधि का है। निगमन विधि द्वारा जांच हो जाने पर ज्ञान ग्रहण की क्रिया पूरी हो जाती है। तीसरे ज्ञान ग्रहण करने की यह साधारण क्रिया है। चोथे किसी भी प्रणाली का अनुगमन कर शिक्षण कार्य सम्पन्न किया जावे तथा शिक्षण कक्षा के भोतर हो अथवा प्रकृति के विस्तृत प्रागण मे, इन सोपानो का सहारा किसी न किसी रूप मे ग्रहण करना ही पड़ता है। ये बड़े हो उपयोगी है।" प्रत्येक प्रशिक्षण संस्था मे एक निश्चित संख्या मे इस विधि द्वारा पाठ-संकेत बनाने व पाठन की व्यवस्था की

जाती है। हाँ ! इतना अवश्य है कि सभी प्रकार के पाठ सूत्रों में इनका मूल रूप में प्रयोग नहीं हो सकता है। ललित कलाओ के पाठो से इन पदों का पूर्ण प्रयोग होता है और तुलना एवं सिद्धान्त निरूपण नामक दो पदो के स्थान पर सश्लेषण एवं विश्लेषण विधि का प्रयोग किया जाता है इन पदों का ज्ञान पाठों में (जैसे भाषा, गणित, सामाजिक अध्ययन आदि) मे रूप त्रिपदी हो जाता है।

पाठ-सूत्र निर्माण

प्रश्न २६—हरबर्टीय पाठ-सूत्र बनाते समय आप किन-किन सकेतों का अनुसरण करेंगे ? प्रत्येक का सक्षिप्त विवरण दीजिये।

सामान्य परिचय—प्रत्येक पाठ सूत्र के ऊपर पाठ का क्रमाङ्क, कक्षा, विषय, दिनाङ्क और जिस पाठशाला मे पाठ पढ़ाया जावे हो उसका नाम भी अङ्कित कर देना चाहिए। इससे निरीक्षण कर्त्ताओ को सुविधा होती है।

विषय और प्रकरण—विषय के सम्मुख केवल इसका नाम लिखने मात्र से काम नही चलेगा। विषय के अन्तर्गत जिस प्रमंग का पाठन आप करने जा रहे है, उसका भी उल्लेख करना चाहिए। इसे प्रकरण कहते है। उदाहरण के लिए यदि हम इतिहास मे भगवान बुद्ध के प्रारम्भिक जीवन के विषय मे पाठन करने वाले है तो पाठान्तर्गत विषय के सम्मुख 'इतिहास' तथा प्रकरण के सम्मुख भगवान बुद्ध का प्रारम्भिक जोवन अङ्कित करेंगे।

उद्देश्य—प्रत्येक विषय जिसका पाठन शालाओ मे करना होता है। कोई न कोई अर्थ अथवा प्रयोजन लिये होता है। यही सामान्य उद्देश्य कहलाते है। शिक्षक इनका अध्ययन करे। ये हमे निश्चित मार्ग अथवा लक्ष्य से विचलित होने एवं भटकने से रोकते है। एक पाठ म कई सामान्य उद्देश्य हुआ करते है। इनका उल्लेख सामान्य उद्देश्य के सम्मुख कर देना चाहिए। इसी प्रकार प्रत्येक पाठ का कोई न कोई प्रमुख अथवा विशिष्ट उद्देश्य हुआ करता है। पाठ विशेष मे कोई प्रमुख बात पढ़ानी है तो उसका उल्लेख इस शीर्षक के अन्तर्गत किया जाय। प्रत्येक पाठ योजना विशिष्ट उद्देश्य को सम्मुख कर बनाई जाती है। शिक्षकों को उचित है कि वे अपने पाठ को निर्धारित उद्देश्यो का पालन करते हुए बालकों को शिक्षा दें।

सहायक सामग्री—इसके सम्बन्ध में पृथक अध्याय दिया हुआ है इसका आवश्यतानुसार समुचित ढङ्ग से उपयोग पाठ को सजीव बना देता है।

पूर्व ज्ञान—प्रत्येक पाठदाता को बालको के पूर्व ज्ञान का स्पष्ट बोध होना चाहिए क्योकि नवीन ज्ञान बालकों के पूर्व ज्ञान के आधार ही दिया जा सकता है। पूर्व ज्ञान की अबोधता पाठ को असफल बनायेगी। पाठ या तो बालको के ज्ञान स्तर से नीचा अथवा ऊँचा हो जावेगा और बालक कुछ समय नहीं पावेंगे। पूर्व ज्ञान की दृष्टि से पाठों को रचना दो प्रकार से की जाती है। प्रथम तो वे है, जिनमे पूर्व मे पढ़ाये गये पाठों के आधार पर बालकों को नवीन ज्ञान प्रदान किया जाता है, दूसरे वे हैं जो पूर्व मे पढ़ाये गये पाठों से पूर्ण असम्बन्धित होते है। पहले प्रकार के पाठो व पूर्व में पढ़ाये गये पाठों मे किये गये ज्ञानार्जन का इस शीर्षक के सम्मुख अंकन हो तथा दूसरे मे पाठ से सम्बन्धित ज्ञान का। यह आवश्यक नही कि पूर्व ज्ञान केवल पाठ्य विषय का ही हो। बालक का निकटस्थ वातावरण, समाज के क्रिया-कलाप, पुस्तकालय आदि से सम्बन्धित बालक का ज्ञान इसमे निर्देशित किया जा सकता है।

प्रस्तावना—इसका कार्य बालकों को नवीन ज्ञान ग्रहण करने के लिए प्रेरित करना है। जिज्ञासु बनाना है। बालक के परवर्ती ज्ञान का सहारा लेकर पाठ्य वस्तु के प्रति बालक का ध्यान खीचकर बालक के सामने ऐसी समस्या खडी कर दी जाती है जिसका समाधान प्रस्तुत पाठ मे दिये नवीन ज्ञान द्वारा ही हो सकता है। "पाठ की यह भूमिका काफी सोच समझ कर ही देनी चाहिये, ऐसे प्रश्न न पूछे जावें जिनका उत्तर बालक पढ़ाये जाने वाले पाठ पढने पर दे सकते हों। बालक का जो पाठ्य विषय सम्बन्धी ज्ञान है उसे प्रस्तावना द्वारा एकत्रित कर पाठ मे रुचि उत्पन्न करना मात्र ही प्रस्तावना है।"

प्रस्तावना कहानी, प्रश्नों, कविता एवं चित्र पर आधारित प्रश्नों द्वारा एवं कार्य का पुन.अभ्यास करा कर की जा सकती है। सामान्य तौर पर शिक्षक प्रस्तावना के प्रश्न न तो तीन से कम और न सात से अधिक रखें। प्रश्न करते समय कक्षा के स्तर का भी ध्यान रखना चाहिये तभी मनचाहे उत्तर प्राप्त हो सकेंगे। प्रश्न क्रमबद्ध तथा एक दूसरे पर आधारित हो। अन्तिम प्रश्न ऐसा

हो कि बालक उत्तर न दे सके और उसका समाधान अथवा उत्तर नवीन पाठ्य वस्तु हो। अथवा इस प्रश्न का उत्तर से उद्देश्य कथन से स्वाभाविक सम्बन्ध जुड़ जावे।

उद्देश्य कथन—इसी समस्यात्मक प्रश्न के उत्तर में नये पाठ का भाव व्यक्त करते हुए उद्देश्य कथन किया जाये। यह पाठ सूत्र में प्रस्तावना के पश्चात् लिखा जाये। यदि उत्तम पुरुष में जैसे "हम पढ़ेंगे" किया जाये तो सर्वोत्तम एवं सरल है। यह सूक्ष्म, सरल, स्पष्ट, घनिष्ठ एवं कठिन शब्दों से रहित हो तथा एक वाक्य में बोला जा सके। उद्देश्य कथन में शिक्षक पाठ का सार न कहजाये अन्यथा पाठ मे बालकों की रुचि कम हो जावेगी। उद्देश्य ज्ञात हो जाने से बालक भटकते नहीं हैं। या ऐसा हो कि इसे बालक सुगमता से अपना उद्देश्य बनालें।

प्रस्तुतीकरण—यह पाठ का प्रधान अंग है। यह प्रस्तावना द्वारा उत्पन्न समस्या का समाधान होता है। इसमें पाठ्य वस्तु बालक के समक्ष प्रस्तुत की जाती है तथा सहायक सामग्री का उपयोग कर इसे रोचक एवं आकर्षक ढंग से बालकों के समक्ष रखा जाता है। आमतौर पर इसे दो अन्विंतियो मे विभक्त कर लिया जाता है, किन्ही पाठों मे एक ही अन्विति के अनुसार ही होता है। इसे स्पष्ट करने के लिए शिक्षक को युक्तियों एवं सामग्री का सहारा लिया जाता है। शिक्षक इन्हे पृथक अध्यायो मे पढ़ें तदनुसार प्रयोग करें। प्रस्तुतीकरण मे शिक्षक बालको के समक्ष सही वाचन प्रकट करने के लिए स्वयं आदर्श वाचन करते है। शिक्षक को पाठ 'सूत्र मे शिक्षक द्वारा आदर्श वाचन' अंकित कर देना चाहिये। इसके उपरान्त बालक अनुकरण वाचन करते है, ऐसा करने से बालको को शुद्ध व स्पष्ट तरीके से वाचन करना आता है। अतः पाठ सूत्र मे शिक्षक द्वारा आर्दश वाचन के नीचे ही 'बालको द्वारा अनुकरण वाचन' लिख देना चाहिये। कई अध्यापक स्वयं वाचन करके व्याख्या करते है और फिर बालकों द्वारा वाचन कराते हैं। जैसी भी स्थिति हो उसे क्रम के अनुसार पाठ योजना में लिखना चाहिये।

व्याख्या—भाषा पाठों मे इस शीर्षक के अन्तर्गत शिक्षक बालकों को शब्दार्थ मुहावरे, कठिन वाक्यों को तुलना द्वारा वाक्यों मे प्रयोग करके अथवा अन्य

विधियों से स्पष्ट करता है। इसी प्रकार कविता पाठों में भाव विश्लेषण प्रश्नों द्वारा किया जाता है। अन्य विधियाँ समयानुसार एवं प्रसंगानुसार प्रयोग की जाती है। शब्दों के अर्थ ही श्यामपाट कार्य होते हैं। श्यामपाट कार्य मे बालकों को अधिकाधिक सहयोग लिया जावे। गणित पाठो मे बालको को श्यामपाट पर बुलाकार सवाल कराये जावें।

बोध परीक्षा—प्रस्तुतीकरण के उपरान्त बालको से कुछ प्रश्न पूछे जाते हैं कि बालक पाठ्य वस्तु ग्रहण भी कर पाये हैं अथवा नहीं। सामाजिक ज्ञान एवं सामान्य विज्ञान इन प्रश्नों द्वारा प्राप्त उत्तरों को श्यामपाट पर सुधरे रूप में लिख दिया जाता है।

पुनरावृत्ति और प्रयोग—बोध परीक्षा के पश्चात् सम्पूर्ण पाठ की एक बार फिर आवृत्ति करवायी जाती है इसमें सम्पूर्ण पाठ के ऊपर कुछ प्रश्न किये जाते हैं। इसके उपरान्त बालको को अभ्यास कार्य दे दिया जाता है।

बुनियादी शिक्षा में विभिन्न विषयों की शिक्षा

गणित-शिक्षण

प्रश्न २७—गणित शिक्षण का बालकों की शिक्षा में क्या महत्त्व है ? गणित शिक्षण के उद्देश्य लिखिए।

महत्त्व—बाल विकास के लिए गणित शिक्षण का बड़ा महत्व है इससे बालकों को नियंत्रित, शीघ्र कार्यान्वयन की शक्ति, चिंतन, क्रियाशीलन, तीव्रता, निश्चयता और शुद्धता के गुणो का अभ्यास प्राप्त होता है। इसके लिए पाठक एवं बालक दोनो का गणित मे रुचि लेना अनिवार्य है। प्रश्न बाल विकास के अनुकूल व्यावहारिक, वास्तविक जीवन से सम्बन्धित तथा स्वाभाविक होने चाहिए। बालक गणित से घबड़ाते हैं। इसका प्रमुख कारण प्रचलित शिक्षा प्रणाली मे गणित का शिक्षण दूषित विधि से होना ही है। इसका कुफल यह होता है कि जिन गुणों का अभ्यास प्रदान करने के लिए इस विषय की व्यवस्था की जाती है। यहाँ यह बताना भी समुचित होगा कि गणित से तात्पर्य अंकगणित, बीजगणित, रेखागणित तीनो का पठन-पाठन से है। बुनियादी शिक्षा मे इसका शिक्षण इस तरीके दिया जाता है कि भावी जीवन में वह अधिकाधिक उपयोगी साबित हो इसलिए जीवन विषयक वास्तविक अवसरों के सहारे गणित

पढ़ाने की व्यवस्था की गई है। एक उदाहरण से स्पष्ट हो जावेगा कि इस तालीम में इस प्रकार के प्रश्नों का बहिष्कार किया जाता है, जैसे:—एक पेन्सिल की कीमत १० रुपया है तो पाँच पेन्सिलों की कीमत क्या होगी ? ऐसे ही अनेकों उदाहरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं। शिक्षक इनसे बचे।

उद्देश्य—एक प्रमुख बुनियादी शिक्षा शास्त्री ने प्राथमिक विद्यालयो में गणित शिक्षण के उद्देश्य इस प्रकार बताये हैं "दैनिक व्यावहारिक जीवन में हिसाब-किताबव लेखा-जोखा समझदारी के साथ अभ्यास रखने का अभ्यास करना, उच्च गणित की प्रक्रियाओ को समझने के लिए प्रारम्भिक अभ्यास करना, शीघ्र सोचने और समझने की आदत डालना, तर्क शक्ति का विकास करना। दैनिक कार्यों मे मन गणित व्यावहारिक गणित तथा लिखित गणित का उपयोग सिखाना। मानसिक और बौद्धिक शक्तियों का विकास करना।"

प्रश्न २८—बुनियादी शिक्षा में गणित शिक्षण के स्वाभाविक अवसर प्राप्त होते हैं इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं ?

प्रश्न २९—सोदाहरण समझाइए कि गणित के अध्ययन में आप क्रीड़ा पद्धति का उपयोग किस प्रकार करेंगे ?

बुनियादी शिक्षा ऐसे अनेक अवसर प्रदान करती है जबकि बालकों को गणित का ज्ञान सुगमता से दिया जाता है। क्रियायें करते सांस्कृतिक आयोजन आदि में ऐसे अवसर अनायास निकलते आते हैं। जागरूक शिक्षक ऐसे अवसरों पर बालकों को शिक्षण दें। बालक को गणित अरुचिकर अथवा रूखा नही लगेगा। वे खुशी-खुशी ज्ञान प्राप्त करेंगे। उदाहरण के लिए हम पूनियाँ जमा करने, पंक्तियों में पौधे रोपने से, पहाड़ो का अभ्यास, बागवानी, कताई, भोजन, एवं विभिन्न आयोजन के सिलसिले मे जोड़ना, घटाना, गुणा और भाग का ज्ञान, सिक्कों से भिन्न का प्रारम्भिक ज्ञान सुगमता से दे सकते है। शिक्षक इसी प्रकार निर्धारित पाठ्यक्रम में विषयों के सम्मुख निर्देशित उद्योगों, सामाजिक एवं प्राकृतिक प्रतिवेशों का अवलोकन का पाठ संकेत तैयार करें। इसी प्रकार शिक्षक बालकों को खेल खिला कर अर्थात् कबड्डी का खेल खिलाकर मध्य की रेखा द्वारा सरल रेखा, चारों तरफ की रेखाओं द्वारा क्षेत्रफल का ज्ञान बालकों

को दे सकते हैं। इसी प्रकार उन्हें गोलियों, कोड़ियों आदि के खेल खिलाकर जोड़-बाकी आदि का ज्ञान दिया जा सकता है।

गणित के अध्यापन की अनेक प्रणाली हैं। एक पाठ मे एक अथवा कई प्रणालियों द्वारा शिक्षण दिया जा सकता है।

प्रश्न ३०—गणित अध्यापन में किन-किन विधियों का प्रमुखत प्रचलन है ?

अथवा

विश्लेषण एवं संश्लेषण तथा आगमन तथा निगम विधियों की विस्तार से चर्चा कीजिए।

विश्लेषण एवं संश्लेषण—गणित शिक्षण में 'विश्लेषण एवं संश्लेषण' का प्रयोग सर्वाधिक प्रचलित है। विश्लेषण में बालक समस्या का स्वयं हल कर स्वयं खोजते है। शिक्षक तो रास्ता बताता जाता है। बालक शिक्षक के समुचित व सहायक प्रश्नो के आधार पर प्रश्न के रूप का विश्लेषण कर उनका हल ढूँढ लेता है। इससे बालक का बौद्धिक विकास होता है। संश्लेषण प्रणाली को विश्लेषण प्रणाली का पूरक कहना उचित होगा। इसके अनुसार शिक्षक सवाल का हल बालकों के समक्ष स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करता है और फिर बालक इस हल के आधार पर उसी प्रकार के अन्य प्रश्नो को हल करते है। यह प्रणाली सरल है और छात्र सरल ढग से सवाल करने की क्रिया जान जाते है। इस प्रणाली का उपयोग रेखागणित के शिक्षण मे अधिक उपयोगी होता है।

आगमन तथा निगमन विधियों-इसका प्रयोग भी गणित शिक्षण मे किया जाता है। आगमन विधि मे छात्रों के सामने अनेक उदाहरण रखे जाते है। इन्ही को आधार मानकर बालक एक निष्कर्ष पर पहुँचते है और इसे निकालते हुए निष्कर्ष के आधार पर नियम सीखते है। इस प्रकार की इस विधि से नवीन नियमो को जानने मे सहायता मिलती है। यह प्रणाली मनोवैज्ञानिक है और तर्क पर आधारित है। शिक्षक इसका उपयोग सावधानी से करें और बालकों को पर्याप्त मात्रा मे स्पष्ट मनोरंजन एवं बोधनीय उदाहरण प्रस्तुत करें। निगमन प्रणाली आगमन की पूरक ही कही जा सकती है इसमें पहले नियम का बोध बालकों को कराया जाता है। तदनन्तर उदाहरणों द्वारा उसे

पुष्ट किया जाता है। यह बालक की तर्क शक्ति में तीव्रता नहीं लाती है। इसका उपयोग भी करना चाहिए जबकि समय का अभाव हो; विद्यार्थियों को स्वयंप्रश्न हल करना हो एवं पाठ का सम्बन्ध बालकों के जीवन से न हो। बीज गणित में आगमन प्रणाली बड़ी उपयोगी होती है।

प्रयोग विधि—प्रयोग विधि का भी गणित शिक्षण में प्रयोग किया जाता है। इसके अनुसार गणित के पढाये जाने वाले प्रत्येक अंग का सम्बन्ध बालक के जीवन से जोड़ा जाता है। जीवन मे अधिकतम आवश्यकता से रूप मे गणित पढाया जाता है। जब बालक के जीवन मे समस्या तथा ऐसे अवसर उपस्थित होते है तो उसे हल करने के लिए क्रमानुसार प्रयोगिक कार्य कराये जाते है। जैसे:—आकृतियाँ बनाना, नापना आदि।

खोज प्रणाली—इसमें बालक स्वयं खोज करते हैं एवं नियम बनाते हैं। यह मनोवैज्ञानिक नियम का निर्धारण पूर्ण ज्ञान पर आधारित होता है। इसी अनुभव पर नये नियम की सृष्टि की जाती है। शिक्षक उन्हे उत्साहित करें और उनके कार्य को सरलतम बनायें।

बालक खेल प्रिय होते है। अत: खेल द्वारा प्रश्नो को करवाया जाये। अत: शिक्षक ऐसे खेलों की व्यवस्था करें जिनमें गणित शिक्षण की पर्याप्त सम्भावनायें होती है। बालक गोलियो, कौड़ियो आदि शिक्षण सामग्री से खेलते और जोड़-बाकी सीखते है।

पुस्तक प्रणाली—इसके अनुसार किताब मे कुछ प्रश्न हल सहित किये हुये होते है। उसके नीचे प्रश्नावली अंकित रहती रहती है। इसके प्रश्नो को किए हुए प्रश्नों की सहायता से विद्यार्थी हल करते है। यह मनोवैज्ञानिक नही है।

मुखाग्र और लेखी गणित—इसका हम जीवन मे सर्वाधिक प्रयोग करतेहै। बाजार से सौदा खरीदते समय इसकी बड़ी आवश्यकता होती है। यह लिखित गणित सीखने में, समय की बचत करने मे, नवीन नियमों का बोध कराने में बालक की स्मरण-शक्ति, चिंतन एवं एकाग्रता को शक्ति, विकसित करने और नैमित्तिक जीवन के व्यावहारिक गणित को यथाशीघ्र सुलझाने की आदत उत्पन्न करता है। मुखाग्र गणित की शिक्षा देते समय इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि बालकों ऐसे छोटे प्रश्न हल करने को दिए जावें है जिन्हें

बालक सरलता और कम समय में हल कर सके और बालक में इतनी शक्ति उत्पन्न हो जाय है कि वह आत्मविश्वास के साथ कठिन प्रश्नों को हल कर सके है। बालकों का लिखित कार्य कराने से पूर्व थोडा सा ज्ञान अवश्य देना चाहिए। उद्योग कार्य मे जोड-बाकी, का ज्ञान बालकों को सरलता से दिया जा सकता है। आजकल बालकों की शालाओं में लेखी गणित की प्रधानता है। भाव से भूलें कम होती है।

त्रुटि संशोधन— गणित के लेखी कार्य का संशोधन होना बड़ा जरूरी है। शिक्षक को ऐसा न करने से बच्चे लापरवाही करना प्रारम्भ कर देते हैं। और वे सवालों को हल नही करते हैं। संशोधन कार्य – से शिक्षक एवं बालक दोनों को लाभ होता है। शिक्षक को बालक की विशिष्ट प्रकार की गलतियों का परिचय मिलता है। साथ बालक को अपनी सही स्थिति का भान हो जाता है। जिन त्रुटियो को अधिकांशतः बालकों ने किया हो शिक्षक उन्हें सम्पूर्ण कक्षा को समझावें जिन्हें दो अथवा तीन लड़कों ने किया हो उन्हें व्यक्तिगत रूप से समझाया जा सकता है। इस प्रकार संशोधन समय की बचत में सहायक होता है।

सहायक सामग्री— गणित शिक्षण में सहायक सामग्री का प्रयोग करना चाहिए। ज्ञान प्रत्यक्ष वस्तुओं के सहारे दिया जावेगा तो बालक रुचि लेंगे। नवीनतम प्रगति शिक्षण-प्रणालियाँ भी ऐसा ही करती है बुनियादी तालीम में भी उद्योग के सामान घरेलू वस्तुओं का ज्ञान दिया जाता। है यह व्यावहारिक और अधिकतर मनोवैज्ञानिक होता हैउदाहरणार्थ कक्षा की सामग्री और फरनीचर आदि बाजार से क्रय-विक्रय करना आदि गणित शिक्षण के सुलभ साधन बन सकते है। गणित शिक्षा में केवल वही सामग्री प्रयुक्त की जाय जो बालकों वय, रुचि और स्तर के अनुसार हो। जहाँ तक हो बालकों द्वारा ही निर्मित हो। सहायक सामग्री रोचक हो। श्यामपाट चॉक एवं झाड़न आदि का प्रयोग गणित शिक्षण मे अधिकाधिक होता है।

अन्य बातें—अधिकांश बालक गणित से घबड़ाते हैं। इसका कारण दूषित विधि से शिक्षा देना है। फलतः बालक को अरुचि हो जाती है। मनोवैज्ञानिक-विधियों और बालक की रुचियों का ख्याल कर इस विषय का

शिक्षण दिया जाय तो बालक अधिकाधिक रुचि लेगें। बुनियादी तालीम में बालक की आवश्यकताओ, रुचियो एवं स्तर का पता लगाकर गणित का शिक्षण दिया जाता है, शिक्षक कमजोर बालकों पर विशेष ध्यान दें। ऐसे बालक जिन कार्यो में रुचि लें उन्ही के सहारे ज्ञान देना चाहिए। ऐसे बालको को प्रत्यक्ष वस्तु एवं सहायक उपकरणों द्वारा गणित का प्रत्यक्ष ज्ञान कराया जाय। बुनियादी शिक्षालयो मे क्रिया करने तथा अन्य कार्य करने के ऐसे अनेक अवसर प्राप्त होते हैं जिनका लाभ उठाकर सतर्क शिक्षक बालकों को उपयोगी ज्ञान दे सकता है।

इसके उपरान्त बालको की रुचि के अनुसार गणित का ज्ञान दिया जाय। व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित समस्याओ के सहारे पढाया जाय। समस्यायें घरेलू जीवन से सम्बन्धित हो तो ठीक होगा। गणित शिक्षण के स्वाभाविक अवसरों से लाभ उठाया जाय तथा ऐसे स्वाभाविक अवसरो को शालीय कार्यों में शामिल किया जावे। सहायक सामग्री का समुचित उपयोग किया जाय। गणित की शिक्षा क्रम-बद्ध हो। अभ्यास-कार्य मे गणित के नये तरीको का ज्ञान कराने पर बालको द्वारा अभ्यास कार्य शुरू होना चाहिए। बालक सवाल हल कर रहे हों तव अध्यापक को निरीक्षण करना चाहिए और बालको से कार्यों को ठीक-ठीक करवाना चाहिए। श्यामपाट कार्य बालको के सहयोग से करना चाहिये। आवश्यकतानुसार बालको से भी श्यामपाट पर सवाल करवाये जा सकते है।

मातृभाषा-शिक्षण

प्रश्न ३१—**अन्य किसी भाषा को छोड़कर मातृभाषा ही किसी बच्चे के लिए क्यों सबसे अच्छा माध्यम है उदाहरण देकर समझाइये ?**

महत्त्व एवं उपयोगिता—विचारो के आदान-प्रदान के लिए हम किसी भी भाषा का उपयोग कर सकते है। किन्तु यह कार्य "मातृभाषा के माध्यम से बड़े सरल सुन्दर औरसही ढङ्ग से किया जा सकता है। बालक मातृभाषा माँ की गोदी मे तथा भाई बहिनों के बीच सीखना है। मातृभाषा मे हृदय की भावनाएँ बड़े स्वाभाविक ढङ्ग से प्रकट की जा सकती है; प्रेमभाव, सद्भाव और सहयोगी भावना पैदा होती है।" और इसके माध्यम से अन्य विषयों का ज्ञान प्राप्त करने

मे सहायता मिलती है । जीवन मे हम मातृभाषा का सबसे अधिक उपयोग करते है । चाहे घर हो अथवा बाजार अथवा जीवन का कोई क्षेत्र, हमें मातृभाषा का सहारा लेना ही पडता है । मातृभाषा का ज्ञाता सर्वत्र सम्मान प्राप्त करता है । जीवन सफलता प्राप्त करने के लिए मातृभाषा का सही-सही ज्ञान और उसका समयोचित व सुन्दर ढंग से प्रयोग बहुत आवश्यक है । सच्ची तालीम जीवन की प्रथम साँस से अन्तिम साँस तक चलती है बालक खाते-पीते, खेलते-कूदते अनेक क्रियाएं करता है और अनायास ही परिवार के मध्य उसका मातृभाषा का शिक्षण प्रारम्भ हो जाता है । यही कारण है कि नई तालीम मे मातृभाषा के शिक्षण की इतना अधिक महत्व प्रदान किया गया है । अतः आवश्यक है कि अध्यापक, मातृभाषा के शिक्षण मे निपुणता प्राप्त करे । प्रचलित शिक्षा प्रणाली में तो पाठ्य पुस्तक पर आधारित कुछ प्रश्नो का उत्तर दे देना ही मातृभाषा शिक्षण को उद्देश्य रह गया है । इसके विपरीत नई तालीम मे तो बालक कर्म करके ज्ञान प्राप्त करते है । जीवनोपयोगी ज्ञान दिया जाता है ।

उद्देश्य -- बोलना और लिखना, दूसरो के लिखित तथा मौखिक विचारो का समझना । अध्ययन प्रवृत्ति का विकास करना, बालक मे मौखिक अथवा लिखित ढंग से अपने विचारो को प्रकट करने की शक्ति का विकास करना । क्रियाशीलनो का विवरण लिखने के योग्य बनाना, समीपस्थ वातावरण, स्थल स्थिति आदि का भावार्थ प्रस्तुत कर सकना । सहायक ग्रन्थो तथा शब्दकोष आदि के उपयोग की क्षमता उत्पन्न करना, निबन्ध, भाषण, पुस्तक आदि का सारांश लिखने तथा निबन्ध लिखने तथा ठीक ढंग से पत्र व्यवहार करने की शक्ति उत्पन्न करना । अपनी भाषा के सामान्य साहित्य एवं साहित्यकारो का ज्ञान देना ।

प्रश्न ३२—मातृभाषा के विभिन्न विषयों के उद्देश्य लिखते हुए गद्य-पद्य शिक्षण के उद्देश्यों का तुलनात्मक विवेचन कीजिए ।

कहने का सार यह है कि बालक को सही बोलने, लिखने और समझने की शक्ति और अभ्यास हो । प्राथमिक शिक्षा मे भाषा के विभिन्न विषयो के सामान्य उद्देश्य निम्नलिखित है ।

गद्य—पाठगत भावो को समझ सकने और अपनी भाषा मे प्रकट कर सकने योग्य बनाना। बालकों के शब्द भण्डार का विकास करना। शुद्ध बोलने, लिखने और पढने का अभ्यास कराना। स्वाध्याय के प्रति रुचि उत्पन्न करना, कल्पना शक्ति का विकास करना।

पद्य—कविता के प्रति रुचि उत्पन्न करना। कवितागत भावो का रसास्वादन कराना। कल्पना शक्ति का विकास करना। सस्वर साभिनय वाचन करना सिखाना। हृदयगत भावनाओ को परिष्कृत करना। काव्यगत सौन्दर्य का रस्वदन करना।

रचना—बालकों की रचनात्मक शक्ति का विकास करना। उनके भावो और विचारों को परिष्कृत करना और शुद्ध रूप मे प्रकट करना। अपने विचारों को प्रभावपूर्ण ढंग से स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त करना सिखाना। शब्द प्रयोग सिखाना। सुलेखन शैली का अभ्यास कराना।

व्याकरण—भाषा की रचना समझने की योग्यता उत्पन्न करना। भाषा का सही प्रयोग बताना। बालको को शुद्ध एवं परिमार्जित भाषा व्यवहार मे लाने योग्य बनाना।

कहानी और नाटक—बालको का मनोरंजन करना। बालको की कल्पना शक्ति के प्रयोग का अवसर प्रदान करना। संवेगों को प्रशिक्षित करना। व्यक्तिगत और सामाजिक व्यवहार के आदर्श प्रस्तुत करना। बालको मे समयानुसार आचरण करने का क्षमता उत्पन्न करना। अवसरानुकूल भाषा का प्रयोग सिखाना। मानव स्वभाव एवं चरित्र के अध्ययन का अवसर देना।

द्रुतपाठ—बालको को शीघ्रतापूर्वक समझकर चुपचाप पढ़ने का अभ्यास कराना। स्वाध्याय मे उनकी रुचि जागृत करना।

श्रुति लेख—बालकों को शुद्ध व स्वच्छ ढंग से लिखने का अभ्यास करना। कठिन शब्दो को शुद्ध ढंग से लिखने की क्षमता उत्पन्न करना। सुन्दर लेख लिखना सिखाना।

शिक्षण के अवसर और केन्द्र

प्रश्न ३३—बुनियादी विद्यालय में मातृभाषा के शिक्षण के अवसर और केन्द्रो की संक्षेप में विवेचना कीजिए ।

उत्तर—बुनियादी तालीम मातृभाषा का स्वाभाविक शिक्षण स्वाभाविक वातावरण मे ही देने का समर्थन करती है कृत्रिम में नही । बुनियादी शिक्षक वैशाख, ज्येष्ठ की कड़कती धूप मे "दादुर धुनि चहु, ओर सुहाई" नही पढ़ावेगा और न सावन भादो के हरियाले मास मे 'बरसा रहा है रवि अनल भूतल तवा सा जल रहा' ही । उसका शिक्षण देश काल और परिस्थिति के अनुसार होगा । अत. आवश्यक है कि शिक्षक जागरुक शिक्षण मे निपुण तथा दैनिक परिस्थिति के अनुसार ज्ञान देने को लालायित हो ।

विषयो की भाँति मातृभाषा शिक्षण भी समाज प्रकृति और उद्योग के माध्यम से किया जावेगा । बालक समाज मे रहते है; पर्वोत्सवो एवं सभाओ मे भाग लेते है । प्रकृति की गोद मे पलते है । दिन रात होना, वर्षा, पक्षियो का उड़ना आदि देखते है । इसी प्रकार जीवनोपयोगी वस्तुओ से उनका पाला पड़ता है । कहने का सार यह है कि विभिन्न क्रियाओ को करते, देखते अनुभव करते ऐसे अनेक अवसर प्राप्त होते है, जिनके सहारे बालको को ज्ञान दिया जा सकता है । उदाहरण के लिए यदि हमे कक्षा एक को मातृभाषा का ज्ञान देना है तो कृषि बागवानी द्वारा चीजो के नाम, अक्षरो का पहिचानना, गीत, कथाएँ कताई द्वारा इस उद्योग मे प्रयुक्त वस्तुओं का बोलना सिखाना, कार्य का मुखाग्र हाल चीजों की व्यवस्था व उन पर लिये गये नामो द्वारा अक्षरों का ज्ञान, अक्षरो से शब्द निर्माण, वस्तुओ के नाम तकली का गीत सिखावें । इसी प्रकार गत्ते के कार्य से काम का विवरण तथा प्रयुक्त वस्तुओं की चर्चा की की जा सकती है । सामाजिक प्रतिवेश से प्रहसन, नित्य-प्रति व्यवहार मे आने वाली वस्तुओं का अवलोकन, सामाजिक घटनाओ का हल एवं ऐसा ही अन्य ज्ञान दिया जा सकता है ।

विभिन्न अंगों का शिक्षण

प्रश्न ३४—बुनियादी शिक्षा मातृभाषा के विभिन्न अंगों का शिक्षण किस प्रकार करती है ?

उत्तर—वार्तालाप और ठीक उच्चारण की शिक्षा—अधिकांश बालक शब्दो को ठीक ढंग से बोल नहीं पाते; उदाहरणार्थ व को ब उच्चारित करते है। उनकी बोलचाल अशिष्ट और दूषित होती है। ऐसे बालको को अभ्यास कराकर, अशुद्ध बोलने वालो का अभ्यास छुड़ा कर धीरे-धीरे स्पष्ट बोलने का अभ्यास कराकर शब्दोच्चारण सुधारा जा सकता है। बोलचाल की समुचित शिक्षा, मौखिक रचनाओ का अभ्यास कराकर, नाटको मे अपना पार्ट अदा कर अभिनय कराकर, वार्तालाप शैली की पुस्तकें पढा कर एवं सभ्य सम्पर्क मे रखकर दी जा सकती है।

सस्वर वाचन—शिक्षा-शास्त्रियो ने वाचन की शिक्षा के लिए अनेक विधियों का निर्माण किया है किन्तु आजकल "अक्षर बोध विधि, शब्द विधि, एवं वाक्य विधि के प्रयोग सर्वाधिक प्रचलित है। हमे चाहिए कि बालकों को आनन्द देने नाले शब्दो का प्रयोग सर्वप्रथम सिखायें। बालक का नाम लिखकर सिखाया जावे। बालक प्रारम्भ अक्षरो को नही समझ पावेगा, किन्तु कई बार लिखने और मिटा देने से बालक अपने नाम के अक्षर पहिचान जायेगा। साथ ही साथ बालक को आनन्द प्राप्त होगा। शनैः शनैः परिवार के सदस्यो के मित्रों, पशुओ, पक्षियो के नाम पढ़ने का अभ्यास कराया जावे। इसके बाद छोटे-छोटे वाक्यो का अभ्यास कराया जावे। बालक दीवारो पर लिखे आदर्श वाचन को पढ़ना सीख जाते है और इस प्रकार धीरे-धीरे पुस्तक वाचन पर ले आया जावे। वाचन का शिक्षण देते समय बालको की ठीक बैठक, आवाज मे उतार-चढ़ाव 'स्वर गति' स्पष्ट उच्चारण, पुस्तक की आँखो से समुचित दूरी आदि बातो पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

लेखन—पाठन के बाद लेखन की शिक्षा दो जाय। बालको को अपना नाम, साथियो के नाम, दैनिक व्यवहार मे आने वाली वस्तुओ के नाम लिखना बहुत प्रिय लगता है। शिक्षक बालको के नाम श्यामपाट पर लिखें। बालक अपनी कापी पर नकल करें, धीरे-धीरे वे अपने साथियों का नाम, उद्योग के

सामानो के नाम फिर दो-दो तीन-तीन शब्दो के वाक्य लिखने लगेंगे। शिक्षक आवश्यकतानुसार उसमे सुधार करता जावे। इसके बाद बालक थोडे से साधारण वाक्यो में 'क्रियाशीलनो का विवरण श्यामपट पर लिख दें, बालक लिखने लगेंगे। इसके पश्चात शाला मे होने वाले पर्वोंउत्सवो का विवरण बालको को दिया जावे। बालक छोटे-छोटे वाक्यो विवरण का लिखकर लावेंगे। लेखन सुन्दर, सुडौल, स्पष्ट तथा प्रभावशील हो। अतः बालकों को लिखने के समय सही बैठक, कलम पकड़ने का ढंग, अक्षर सुडौल व सटे हुए, शब्द समान दूरी पर, सीधी लिखाबट, विरामादि चिह्नो पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

रचना का शिक्षण—"बच्चे शुद्ध सरल एवं मुहावरे दार भाषा लिख सकें। उनका शब्द-भण्डार, चिंतन शक्ति, कल्पना-शक्ति और आत्मभाव प्रकाशन शक्तियो का सम्यक विकास हो तथा उनके विचार सुसंगठित और भाषा मंजी हुई हो।" —द्वारकासिंह

रचना—शिक्षण के लिए अनेक प्रणालियाँ प्रचलित है; 'यथा देखो तथा रचो' विधि, प्रश्नोत्तर विधि, अनुकरण विधि, आदि। बुनियादी विद्यालय मे रचना शिक्षक के पर्याप्त अवसर प्राप्त होते है। उदाहरण के लिए प्रति दिन दिनचर्या लिखाई जाती है उन्हे योजना एवं क्रियाशीलन का विवरण आत्मीयजनो को "पत्र, समयानुसार आवेदन पत्र, निमन्त्रण पत्रादि, सास्कृतिक शैक्षणिक आयोजनो के अवसर पर निबंध, मन्त्रिमण्डल की रिपोर्ट तैयार करते, पत्रिकाओ में लेख लिखते और सम्पादन करते रचना का शिक्षण स्वाभाविक ढङ्ग से दिया जा सकता है। रचना शिक्षण वर्ग एवं स्तर के अनुसार किया जावे, संशोधन कार्य ओर मार्गदर्शन समुचित मात्रा मे हो।

व्याकरण का अध्यापन— रचना शिक्षण के साथ ही साथ व्याकरण का ज्ञान बालको को देना ठीक होगा व्याकरण भाषा, का शुद्ध प्रयोग सिखाता है और तर्क शक्ति का विकास कराता है। व्याकरण पढाने की अनेक प्रणालियों का प्रचलन है। "जैसे सहयोग प्रणाली, पाठ्य पुस्तक प्रणाली, प्रयोग प्रणाली, अव्याकृति प्रणाली। सहयोग प्रणाली मे व्याकरण का ज्ञान आवश्यक नियम बता कर दिया जाता है।" इसके समर्थको के अनुसार भाषा का प्रयोग कराते समय व्याकरण

की आवश्यक बातो के ज्ञान व्यौरा देना चाहिये। कहने का सार है कि रचना का ज्ञान कराते समय व्याकरण का ज्ञान भी कराते जाना चाहिए, यह मनोवैज्ञानिक प्रणाली है। पाठ्य पुस्तक प्रणाली में व्याकरण के नियम व्याकरण की पुस्तक मे से बालक को रटा दिये जाते है। यह अमनोवैज्ञानिक है। प्रयोग प्रणाली मे उदाहरणों द्वारा व्याकरण की शिक्षा दी जाती है। अनेक उदाहरण प्रस्तुत कर एक नियम निकलवा लिया जाता है। इसमे से विद्यार्थियों से नियम निकलवा लिया जाता है। विद्यार्थी पाठ में ध्यान देता है। शिक्षार्थियो ने इसका प्रयोग अच्छा बताया है। अव्याकृति प्रणाली मे बालक को उन लेखको की कृतियाँ पढाई जाती है जिनकी भाषा मे व्याकरण सम्बन्धी दोष न हो। इनके पठन मे बालकों को शुद्ध भाषा का ज्ञान हो जाता है यह मनोवैज्ञानिक है तथा सर्वाधिक उपयोगी है। प्राथमिक विद्यालयो मे व्याकरण का प्रथक से ज्ञान न जोड़ कर रचना के साथ ही व्याकरण का ज्ञान देना चाहिए। बालक को ठीक ढंग से वाक्य बनाने का अभ्यास कराना उचित एवं उपयोगी होता है।

गद्य – हम अपने जीवन मे गद्य का सर्वाधिक प्रयोग करते है। इसकी समुचित शिक्षा बड़ी जरूरी है। बुनियादी शिक्षा मे गद्य-शिक्षण के उद्देश्यो की पूर्ति के पालनार्थ समाचार पत्रो; मेगजीनो, विभिन्न विषयो की पुस्तकें एवं विभिन्न क्रियाशीलनो से सम्बन्धित पुस्तको का प्रयोग किया जाता है। इसके अन्तर्गत निबन्ध वर्णन, नाटक, कहानी घटनाओ का वर्णन पत्र आदि होते है।

पद्य—बालक पद्य, प्रिय होते है उन्हे लयदार तुकबन्दियां बहुत भाती है। बेसिक शाला में उद्योग कार्य करते, गीत गाते उद्योग सम्बन्धी अभिनय भी साथ करते चलते है। यह तरीका बालको को बहुत पसन्द है। अतः शिक्षक यह प्रयास करें कि बालक सामूहिक रूप से सभिनय-गीत गावें। व्यक्तिगत रूप में बालकों को इस ओर प्रोत्साहित किया जा सकता है; आवश्यकतानुसार कविता मे आये कठिन प्रसंगो की व्याख्या की जा सकती है, परन्तु इस पर अधिक बल न दें तो ठीक ही होगा। काव्यमय वातावरण निर्माण हेतु शिक्षक पद्य के प्रमुख विषय पर विचार प्रकट करे और स्वयं कविता का

सस्वर वाचन कर बालकों से करायें, ध्यान रहे कि वाचन मार्मिक एवं स्पष्ट हो ।

अभिनय, कथा एवं नाटक—बालक ऐसा ज्ञान जो उन्हें खेलते मे दे दिया जाता है, बड़ी सुगमता से ग्रहण करते हैं । ऐसा ज्ञान बालकों की रुचि के अनुकूल, सरल, सरस, टिकाऊ और जानदार होता है । अभिनय में भी बालक को सांस्कृतिक कार्यक्रम की व्यवस्था करा कर उन्हे बडे-बड़े सम्वाद याद कराये जा सकते है । कक्षा मे कहानियो का अभिनय कराया जा सकता है शिक्षक कक्षा मे विभिन्न पात्रों के अभिनय का प्रदर्शन कर पढ़ा सकता है । महापुरुषों की नकल समाचार-पत्रो के आधार पर बालको से कराई जा सकती है । चुटकुलो, एकाको, सम्वाद, प्रहसन, कविता, कहानियों, सास्कृतिक आयोजनों मे अभिनय बालको द्वारा प्रस्तुत कराया का सकता है । प्राथमिक कक्षाओ मे नाटक, कहानी आदि का शिक्षण इसी ढग से दिया जाना उचित होगा ।

बुनियादी शिक्षक अन्य विषयो को पढ़ाते समय भाषा का उपयोग तो करते ही है । यदि अन्य विषयो को पढ़ाते समय शिक्षक बालको की भाषा सम्बन्धी दोषो की ओर ध्यान देता चले और उन्हे शुद्ध बोलने और लिखने का अभ्यास कराता चले तो मातृभाषा शिक्षण के उद्देश्य की बहुत कुछ पूर्ति कर सकता है । शिक्षक इस ओर ध्यान दें । अतः शिक्षक को साहित्यिक रुचि रखनी चाहिए । उसका स्वयं का उच्चारण शुद्ध, स्पष्ट हो, और तदनुसार वालको को भी ऐसा करने को कहे । साथ ही साथ बालको की भाषा सम्बन्धी त्रुटियो को उनके सामने जाँचें । उनके दोष उनको बतावें । सुलेख पर ध्यान दें और उनकी भाषा शैली परिमार्जित करें ।

सामान्य विज्ञान का शिक्षण

प्रश्न ३५ - सामान्य विज्ञान की उपयोगिता बताते हुये इसके उद्देश्य बताइये ?

उपयोगित--आज मानव जीवन मे विज्ञान का महत्त्व किस से छिपा है । आज के विज्ञान प्रधान युग में यदि बालक के व्यावहारिक जीवन को सम्पूर्ण बनाना है तो उसे विज्ञान का शिक्षण अवश्य प्रदान किया जाय । ऐसा करने से बालक का जीवन सरल बनेगा और उसकी प्रवृत्ति खोजशील होगी । एक

विद्वान का कथन है कि विज्ञान और मनुष्य समाज के भीतर सन्तुलन स्थापित करने का साधन है। विज्ञान विधि पूर्वक प्राकृतिक घटनाओ के समझने का माध्यम बन जाता है। विज्ञान मनुष्य की प्रकृति के समझने में कुशल और जागरूक रहता है। विज्ञान के द्वारा प्राकृतिक साधनों का उपयोग सहज और सरल बन जाता जाता है। विज्ञान मनुष्य की दृष्टि पैनी और सूक्ष्म बनाता है। यही कारण है कि "बुनियादी शिक्षा में बालकों में सूझ-बूझ से कार्य सम्पादित करने, कारण एवं फल के परस्पर सम्बन्धो को जानने, अन्धविश्वासी न बनकर प्रयोग परीक्षण एवं निरीक्षण के उपरान्त सही निष्कर्ष पर पहुँचने की खातिर ही विज्ञान सामान्य शिक्षण की व्यवस्था की गई है।" इसका ऐसा स्वरूप निश्चित किया है कि बालक दैनिक जीवन मे विज्ञान का अधिकाधिक उपयोग कर लाभान्वित हो। इसमे भौतिक, रसायन, उद्मिज, खाद्य, प्राणि, शरीर आदि विज्ञानो एवं प्राथमिक चिकित्सा का समावेश किया गया है। यह समस्त ज्ञान समवायी विधि द्वारा बालको को दिया जावेगा। इसका अध्ययन, कृषि उद्योग एवं सामाजिक जीवन को प्रगतिशील बनायेगा।

उद्देश्य—बालको की निरीक्षण शक्ति का विकास करना, पशु एवं प्रकृति के अभिन्न सम्बन्धो का ज्ञान देना, बालको को अनुसन्धान की ओर प्रवृत्त करना, अन्धविश्वास को दूर कर परीक्षण एवं निरीक्षण द्वारा निश्चित एवं सही निष्कर्ष पर आने की आदत डालना, प्राकृतिक परिवर्त्तनो का ज्ञान देना, प्रकृति के नियमों का बोध कराना, अपने वातावरण को समझने की क्षमता उत्पन्न करना, प्रकृति और मानव के संबंधो का ज्ञान देना, मानव हित मे प्रकृति का उपयोग सिखाना, औद्योगिक क्रियाओ का वैज्ञानिक समाधान देना, वैज्ञानिको के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करना सामान्य विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य है।

प्रश्न ३६—प्रकृति के माध्यम द्वारा सामान्य विज्ञान की शिक्षा किस प्रकार दी जा सकती है ?

उत्तर—मानव का प्रकृति की गोद मे उद्गम और अवसान होता है। प्रकृति की विश्रामदायिनी गोद मे वह अपने जीवन को सुखमय बनाता है। प्रकृति ही कच्चा माल देती है जिनसे वह उद्योग मे रत हो जाता है। बुनियादी तालीम बालक को प्रकृति के उपयोग करने के अनेकानेक अवसर प्रदान करती

है। बालक खोज करता है और ज्ञान अर्जित करता है। वह प्रकृति और समाज के बीच सन्तुलन स्थापित करने का प्रयास करता है। ऐसी दशा मे इस प्रणाली को ऐसे निपुण एवं जागरूक शिक्षको की आवश्यकता होती है जो खोजशील हो। "वे सम्पूर्ण कार्य को दिवसों, सप्ताहों, मासों मे विभाजित कर वर्ष भर की योजना बनाकर अवसर के अनुसार समवायी ढङ्ग से बालको को शिक्षा दें।" उदाहरण के लिए कक्षा २ मे कताई व खेती के कार्य से क्रमशः कपास का निरीक्षण उसके विभिन्न भागों का विस्तृत ज्ञान खेती से विभिन्न फसलो, सब्जियो एवं पौधो का ज्ञान दे। पौधो को हानि पहुँचाने वाले कीड़े-मकोडे धूप, जल, हवा, ठण्ड आदि का फसल पर प्रभाव आदि का ज्ञान दिया जा सकता है। सामाजिक कार्यो से पानी को छान कर उपयोग मे लाना, सामूहिक स्वच्छता, सफाई के साधन, तरकारी को स्वच्छ करके काटना, ग्राम की स्वच्छता आदि बताये जा सकते है। प्रकृति के प्रतिवेश से विभिन्न प्रकार के पत्थर और लकडियो का ज्ञान, नक्षत्रो से दिशा ज्ञान बताया जा सकता है। अन्य लघु उद्योगो से भी पाठ्यक्रम मे वर्णित ज्ञान भी दिया जा सकता है। जैसे दन्त मंजन से सफाई का ज्ञान।

सामान्य विज्ञान पढ़ाने की अनेक विधियाँ प्रचलित है समस्या विधि, अनुसन्धान विधि एवं निरीक्षण व परीक्षण विधि। बुनियादी प्राथमिक शालाओ मे निरीक्षण एवं परीक्षण विधि को ही सर्वाधिक प्रयुक्त किया जाता है, फिर भी समस्या विधि एवं अनुसन्धान विधि का विवरण संक्षेप मे दिया जा रहा है ताकि छात्राध्यापक आवश्यकतानुसार उसका उपयोग कर सकें।

समस्या-विधि—इस प्रणाली मे बालको के समक्ष समस्या प्रस्तुत कर उन्हे उसका हल ढूँढने को ओर अग्रसर किया जाता है। शिक्षकों को वाछनीय है कि वे बालको के सम्मुख अवसरानुकूल एव वयानुकूल समस्या रखें। समस्या वैज्ञानिक हो। बालको को विचारार्थ पर्याप्त समय दिया जावे। बालकों को यदि हल प्राप्त करने मे कठिनाई प्रतीत हो तो शिक्षक सरल प्रश्नो द्वारा बालको को वाछित मार्ग सुझावें।

अनुसन्धान अथवा ह्यूरिस्टक विधि—आर्म स्ट्राग इस प्रणाली के प्रवर्तक है। यह प्रणाली बालक की स्थिति अन्वेषक के रूप में रखती है और बालक

प्रत्येक वस्तु की खोज के लिए प्रयत्नशील रहता है। इसमें बालक को किसी वैज्ञानिक प्रयोग के विषय में आवश्यक हिदायतें लिखित रूप में दे दी जाती हैं उनके आधार पर बालक प्रयोग करता जाता है। जैसे-जैसे प्रयोग करता जाता है उसका लेखा-जोखा कापी पर नोट करता जाता है और निकले हुए विशेष निष्कर्ष के आधार पर वह सामान्य परिणाम निकालता है और इस प्रकार वह विज्ञान के एक सिद्धान्त अथवा नियम का अन्वेषण करता है। इस प्रणाली में बालक अधिक और शिक्षक कम कार्य करते हैं।

इस प्रणाली की विशेषता है यह कि बालकों का स्वाभाविक विकास करती है। बालक किसी प्रकार का बाहरी बन्धन अनुभव नही करता है। उसके सम्मुख एक निश्चित उद्देश्य होता है। बालक अपने कार्य मे रुचि लेते हैं। इसमें खेल की भाँति ही विज्ञान की शिक्षा दी जाती है। शिक्षको को चाहिये कि वह बालकों को स्वतन्त्र रूप से विचार करना सिखावें। इस प्रकार बालकों को अन्धविश्वास के अनुसरण से बचा अनुसन्धान की ओर प्रवृत्त करें।

विवेचन—कुछ लोग इसमें बालक की अन्वेषक की स्थिति की आलोचना करते हैं। उनका कथन है कि प्रत्येक बालक की मनोदशा आविष्कार की भाँति करने की नहीं होती है। दूसरे इसके द्वारा विज्ञान की शिक्षा एक निश्चित रूप रेखा के अनुसार नहीं दी जा सकती क्योकि यह वैज्ञानिक प्रणाली पर जोर देती है, तीसरे, इसमे विज्ञान के शिक्षक को अन्य श्रेणी का स्वीकार किया जाता है और बालको की संख्या कम होती है तिस पर उत्तम शिक्षकों का मिलना और शिक्षार्थियो की संख्या कम हो जानी असम्भव ही है फिर भी यह एक अच्छी प्रणाली सिद्ध हुई है।

प्रश्न ३७—सामनय विज्ञान शिक्षण की कौनसी विधियाँ सर्वाधिक प्रचलित हैं ?

ह्यूरिस्टिक विधि किसे कहते है ? और यह सामान्य विज्ञान पढ़ाने में कहाँ तक प्रयोग में लाई जा सकती है ?

निरीक्षण एवं परीक्षण विधि—बुनियादी शिक्षा शास्त्री श्री द्वारकासिंह के मतानुसार यह मनोवैज्ञानिक और शिक्षण-शास्त्र के अनुकूल है। इसके

द्वारा ज्ञान सूक्ष्म से स्थूल, कल्पना से मूर्तिमान, अपरिचित से परिचित, वर्तमान से भूत की ओर जाता है और बुद्धिगम्य से बोधगम्य होता है। प्रचलित शिक्षा प्रणाली में शिक्षक सम्पूर्ण ज्ञान बालकों को यों ही देना चाहते हैं। प्रयोग और परीक्षण की तो बात दूर है, वे साधारण उपकरणो का उपयोग भी नही करते है। इसमें बालक प्रकृति का अवलोकन करके; पदार्थों का प्रयोग करके, पशुओं एवं पौधो का प्रत्यक्ष निरीक्षण एवं परीक्षण करा कर ज्ञान दिया जाता है। बालक वस्तु के कार्य एवं गति से परिचय प्राप्त करते है, स्वानुभव से लिखते हैं।

ऊपर लिखी विधियो मे कुछ न कुछ उत्तम गुण है परन्तु कोई विशेष शिक्षण विधि सामान्य विज्ञान का शिक्षण सफलता से कर सकें। अतः ऐसी शिक्षण विधि को प्रयुक्त करना चाहिये जिसमे समस्या प्रस्तुतीकरण बालकों को पाठ में रुचि लेने हेतु प्रेरणा दे। विद्यार्थी पाठ का उद्देश्य भली भाँति समझ जावें। शिक्षक कम से कम और बालक अधिकाधिक काम करें। प्रयोग बालक ही करें। शिक्षक तो आवश्यकता के अनुसार सहायता करें और पाठ्य सामग्री का यथा-स्थान समुचित प्रयोग किया जाय।

सहायक सामग्री—सामान्य विज्ञान मे सहायक सामग्री का अन्य विषयो की अपेक्षा अधिक प्रयोग होता है। शिक्षण तब ही व्यावहारिक बन पाता है। उपकरणो का ठीक तरीके से उपयोग हो तथा ठीक व्यवस्था रखी जाय। शाला मे बालको की जरूरतो के मुताबिक उपकरणों की व्यवस्था की जानी चाहिये। इसमे प्रयोग एवं परीक्षण को प्रमुख स्थान प्राप्त है अतः इनका संग्रह, सुरक्षा, एवं समुचित उपयोग अनिवार्य है। बुनियादी शिक्षा मे स्थानीय सामग्री से बने उपकरणो अथवा साधनो को विशेष महत्व दिया जाता है। उदाहरणार्थ फ्लास्क के स्थान पर हम काँच के ग्लास का उपयोग कर सकते हैं।शिक्षक केवल वे ही उपकरण खरीदें जो उपयोगी तथा व्यवहार मे आने वाले हों। सुविधा की दृष्टि से इनकी वर्गानुसार एवं योजनानुसार सूची बनानी चाहिये। सूची में प्रयुक्त होने वाली सम्पूर्ण वस्तुएँ हों तथा उनका उपयोग किया जावे। प्रारम्भ मे तथा अन्त मे पात्र स्वच्छ करके व्यवस्थित रूप से रखे जावें। प्रयोग स्वाभाविक एवं वातावरण में तथा अवसर पर किये जावें। इससे बालक ही नहीं वरन्

सम्पूर्ण समाज को लाभ पहुँचे। प्राथमिक बुनियादी शालाओं में मुखाग्र कार्य को प्रधानता प्रदान कर प्रयोग करने की विधि और उसका निष्कर्ष आदि बालको से लिखाये जा सकते है किन्तु कक्षा १, २, व ३ को लिखित कार्य मे न घसीटा जावे तो उचित होगा।

सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

प्रश्न ३८—आप सामाजिक ज्ञान से क्या अर्थ समझते हैं? यह इतिहास भूगोल और नागरिकता को अलग-अलग पढ़ाने से किस प्रकार भिन्न है?

उत्तर—मनुष्य और समाज के सम्बन्ध अटूट है। वह समाज मे पैदा होता, बढता और मृत्यु को प्राप्त होता है। यदि उसे समाज मे जीवनयापन करना है, अपने सामाजिक जीवन को सुखी बनाना है तो उसे सामाजिक बनना होगा। अपने मे सामाजिक गुणो का विकास करना होगा, व्यवहार मे कुशलता लानी होगी। यही कारण है कि पाठ्यक्रम में इसको इतना महत्व प्राप्त है। सामाजिक अध्ययन बालक मे सामाजिकता का विकास कर उसे समाज के कल्याणकारी सदस्य के रूप मे विकसित करता है। प्रचलित शालाओ मे सामाजिक विषय जैसे इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र पुथक पृथक रीति से पढाये जाते है परन्तु सामाजिक अध्ययन से तात्पर्य इन तीनो विषय से ही होता है। बुनियादी शालाओ मे सामाजिक अध्ययन का पाठन "घटना वर्णन प्रधान" न होकर "मनुष्य विकास वर्णन प्रधान" होता है। वैसे भी यदि किसी किसी समाज के विकास का ज्ञान समय के क्रम से करा जावे तो इतिहास, उनकी आवास व्यवस्था, जलवायु और सीमा आदि का ज्ञान भूगोल और उसके सदस्यो का परस्पर व्यवहार, संस्थाऐं व्वस्था आदि का ज्ञान नागरिक शास्त्र के अन्तर्गत आते है। बुनियादी तालीम यह सतत् प्रयास करती है कि सामाजिक अध्ययन का शिक्षण समवायी प्रणाली से हो और विषय परस्पर अनुबन्धित होकर चलें।

उद्देश्य—बालको को अधिकार एवं कर्त्तव्यो से परिचित कराना। मानव प्रगति और देश की प्रगति का ज्ञान देना। स्वधर्म और दूसरो के प्रति आदर करना सिखाना। देश-प्रेमी बनाना। बालकों मे व्यक्तिगत एवं सामाजिक गुणो का विकास करना। अच्छा विद्यार्थी बनाना।

यह तो रहे सामाजिक अध्ययन के समवायी प्रणाली द्वारा शिक्षण के उद्देश्य। कभी-कभी ऐसे भी अवसर आते है जबकि इस विधि द्वारा अध्यापन कठिन प्रतीत होता है तो पृथक-पृथक रूप से विषय पढाने पड़ते है। अतः नीचे इसमे सम्मिलित विभिन्न विषयो के उद्देश्य पृथक पृथक लिखे जाते है—

इतिहास—गौरवशाली अतीत के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करना। अतीत का ऐसा ज्ञान देना जिससे वर्तमान को समझने में सहायता मिले। छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे सामाजिक समस्याओ पर भेदभाव रहित एवं रचनात्मक मत दे सकें। देश-विदेश का परिचय देना। देश-प्रेम एव सद्गुणों का विकास करना। बालक मे अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना जागृत करना। बालकों का दृष्टि-कोण ऐतिहासिक और वैज्ञानिक बनाना। उन्नति एवं विकास का ज्ञान देना। मानव और समाज के परस्पर सम्बन्धों का ज्ञान कराना। महान विभूतियों के प्रति श्रद्धा के भाव जागृत करना।

भूगोल—प्राकृतिक वातावरण का बोध कराना। उसका मानव जीवन के रहन सहन, बोलचाल आदि पर प्रभाव का ज्ञान देना। देश-विदेश के रहने वालों को समझना तथा उनके (मानव और भूगोल) एक दूसरे पर प्रभाव का ज्ञान देना।

नागरिक शास्त्र—सरकार, संगठन तथा सामाजिक संस्थाओं का ज्ञान देना। अधिकार और कर्त्तव्य का परिचय देना। नागरिकता का अभ्यास देकर सुनागरिक बनाना। व्यक्ति और समाज के परस्पर सम्बन्धों का ज्ञान देना।

शिक्षण विधि—

अब प्रश्न उठता है कि सामाजिक अध्ययन का पाठन किस विधि से किया जाय ? इस विषय का पढाने की अनेक विधियाँ हैं; जैसे पाठ्य पुस्तक विधि, भाषण विधि, समस्या विधि, योजना विधि, डाल्टन विधि, अनुसंधान विधि आदि प्रचलित है। किन्तु बुनियादी प्राथमिक शालाओं में कहानी के रूप में इस विषय को प्रस्तुत कर बालको का ज्ञानवर्धन किया जावे परन्तु ये कहानियाँ सरल, सरस, स्पष्ट तथा बालकों को चरित्रवान बनाने वाली हों। कहानी कहने

का ढङ्ग ठीक हो। शिक्षक की आवाज स्पष्ट, मीठीऔर उतार चढाव से पूर्ण हो। शिक्षक प्रसन्न मुद्रा मे हो। सहायक सामग्री का सामयिक उपयोग एवं शिक्षक द्वारा हाव-भाव का सामयिक उपयोग बालकों को पाठ में रुचि लेने को प्रेरित करता।

इतिहास का महत्व और लाभ—इतिहास तो मानव विकास की गाथा है। इससे हमें ज्ञात होता है पहले हमारी स्थिति क्या थी ? और अब क्या है ? वर्तमान का मूल अतीत में है। वह अतीत को हमारे सामने रखता है। इसका अवलोकन कर मानव को वर्तमान के कारणो का बोध होता है और इसी को आधार मान-कर भावी जीवन के विकास की सम्भावनाओं से परिचय प्राप्त कर सकता है। इतिहास हमें अनुभव प्रदान करता है। एक विद्वान का विचार है कि इतिहास का पाठन इसलिए किया जाता है कि मनुष्य मे अपनी जाति की प्रगति और प्राचीन इतिहास जानने की जो स्वाभाविक उत्सुकता है उसकी पूर्ति हो सके। इसके अतिरिक्त शिक्षा के साधारण उद्देश्यो की पूर्ति इतिहास के अध्ययन द्वारा होती है। इसका अध्ययन कई कारणो से लाभप्रद है। प्रथम, यह अन्तर्रा-ष्ट्रीय भावना का विकास करता है। दूसरे, निर्णय शक्ति को विकसित करता है। तीसरे समाज सुधार के कार्य को सरल बनाता है क्योकि इतिहास बताता है कि हमारी, वर्तमान स्थिति का क्या कारण है तदनुसार हम सुधार कर सकते हैं। यह बताता है कि निरंकुश शासन चाहे वह जनहित मे ही क्यो न हो लोक-तन्त्र के समान सुखदायी नही होता। धर्म की शासन मे प्रमुखता न हो, सबको समान अधिकार हों तथा जीवन सादा एवं उच्च विचारों से परिपूर्ण हो। इन सब बातो की पूर्ति के लिए शिक्षक को बडा सतर्क होना चाहिये। वह राष्ट्रीय विचारों वाला हो। वर्तमान समस्याओ में उसका ज्ञान व्यापक हो, समस्याओ पर निष्पक्ष होकर ज्ञान तथा बालको के स्तर, आयु और योग्यता के अनुसार पढावे।

अवसर—बुनियादी शालाओं में इसका शिक्षण पर्वों, उत्सवों, ऐतिहासिक स्थलों का निरीक्षण करते समय, समीपस्थ ऐतिहासिक स्थानों का पर्यटन कराते समय; ग्रामों, मार्गों एवं स्थानों के नाम से, प्रचलित रीति रिवाजों, लोक गीतों, और लोक नृत्यों से, वीरों, महापुरुषों के हथियारों, चित्रों, सिक्को द्वारा

दिया जा सकता है। बालकों का मनोरंजन करने के लिए विशेष अवसरों पर उत्साह, स्वाभिमान, पौरुष आदि की ऐतिहासिक कहानियाँ सुनाकर भी इतिहास का ज्ञान दिया जा सकता है। शिक्षालय के सास्कृतिक आयोजन, संग्रहालय एवं मातृभाषा शिक्षण के अन्तर्गत विवरण इतिहास शिक्षण के अमूल्य मौके प्रदान करते है। शिक्षक इसका लाभ उठाकर बालको को शिक्षित करे।

भूगोल—भूगोल एक ऐसा विषय है जिसका सम्बन्ध प्रायः सभी विषयों से है "भूगोल का महत्व जीवन के क्षेत्र मे विज्ञान और कला को लेते हुए प्रकृत्ति के साथ मनुष्य ने जो समन्वय किया है उसी को स्पष्ट करने में है।" आज भूगोल मे मानवीय दृष्टिकोण को प्रमुखता प्रदान की गई है। यही कारण है कि आज बालक को किसी स्थान का नाम एवं जलवायु आदि का ज्ञान देना ही पर्याप्त नही समझा जाता वरन् यह भी बताया जाता है कि मानव जीवन इनसे किस प्रकार प्रभावित होता है। बालक के क्या और क्यो का समाधान करना पडता है जैसे अमुक स्थान नदी के किनारे ही क्यों बसा है ? आदि।

इसीलिए बुनियादी शालाओं मे गॉव, परगना, जिला व प्रान्त का ज्ञान घर के आधार पर दिया जा सकता है। पहाडों, नदियों, नहरो का नाम, उनका निर्माण व उपयोग मानव की उन पर विजय, समीपस्थ लोगों का रहन-सहन, खान-पान, स्वभाव उद्योग-धन्धे, आयात-निर्यात का ज्ञान बडे रोचक ढंग से दिया जा सकता है। साहसी यात्रियों, बडी बडी नदी पार करने वालों, विजयी पर्वतारोहियों जैसे तेनसिंह नोरके आदि की कहानियाँ बालकों को बड़े रोचक ढंग से बताई जा सकती हैं।

नागरिक शास्त्र—नागरिक शास्त्र बालक को सामाजिक जीवन में व्यवहार कुशल बनाता है। शिक्षालय का जनतान्त्रिक बाल सभाएँ, सामाजिक आयोजन, संगठन करके पंचायत अथवा नगरपालिका का निरीक्षण करा कर अथवा कक्षा नायक का निर्वाचन कराकर तथा भ्रमण आदि से बालको को नागरिक शास्त्र का प्रत्यक्ष ज्ञान दिया जाता है। शिक्षालय, ठीक समय आना जाना, शिष्टाचार के नियम, बड़ों का सत्कार, छोटों से प्रेम, श्रमदान, सफाई समाज सेवा आदि नागरिक शास्त्र की प्रारम्भिक जानकारी के अन्तर्गत बालकों को सिखाये जा सकते है।

सहायक उपकरण—सामाजिक अध्ययन मे इनका उपयोग पाठ को जीवन-मय बना देता है। बालक रुचि लेने लगते है और ज्ञान हृदयग्राही होता है। इसके शिक्षण में मानचित्र, चार्ट्स, ग्लोब-चित्र, छायाचित्र, ग्राफ, रेडियो, टेलीविजन बडे उपयोगी सिद्ध होते है। प्राथमिक कक्षाओं के शिक्षक तो चित्र, नये और चार्ट्स का ही सर्वाधिक उपयोग करते हैं क्योकि ये सरल और सुलभ है।

जनतन्त्र की इस पावन बेला मे सामाजिक अध्ययन के शिक्षक का भी विशेष दायित्व हो गया है। उसे बालको को इस योग्य बनाना है कि वे स्वपरिवार से लेकर समस्त विश्व की समस्याओ को खोजने के लिए प्रयत्न-शील हो।

बुनियादी शिक्षा में मूलोद्योग शिक्षण विधि

प्रश्न ३९—मूलोद्योग द्वारा शिक्षा का महत्व प्रतिपादित कीजिये।

उत्तर बालक एक क्रियाशील प्राणी है। वह क्रिया करके स्वानुभव द्वारा ही कुछ सीखना चाहता है। बालक की इसी क्रियाशीलता का उपयोग करके शिक्षा दी जावे तो बालक का ज्ञान स्थाई होगा, व्यावहारिक होगा और जीवनोप-योगी होगा। बुनियादी शिक्षा मे क्रिया को ज्ञान का वाहन माना गया है। इसमे बालक कार्य करके जीवनोपयोगी ज्ञान प्राप्त करते है। तात्पर्य यह है कि क्रिया द्वारा ज्ञान प्राप्त करने मे बालक के हाथ, हृदय और मस्तिष्क संतुलित रूप मे विकसित होते है। क्रिया बालको मे सामाजिक गुणो का विकास करती है। क्रिया द्वारा ज्ञान देना कोई आकस्मिक बात नही है वरन् अतीत काल मे भी इसका प्रचार था। आज भी विश्व की प्रगतिशील आधुनिक शिक्षा प्रणालियां जैसे; मान्तोसरी, किंडरगार्टन, प्रोजेक्ट आदि इसी सिद्धान्त पर आधारित है, और कार्य द्वारा शिक्षा प्रदान करती है। इन पद्धतियो की अपेक्षा बुनियादी शिक्षा केवल उन्ही क्रियाओ द्वारा ज्ञान देना चाहती है जिनका भावी जीवन मे उपयोग हो। कहने का तात्पर्य यह है कि इस प्रणाली मे जीवन की व्यावहा रिक परिस्थितियों से सम्बन्ध रखने वाले क्रिया-कलापों एवं उद्योगो को मान्यत प्रदान की जाती है। स्पष्ट है कि बुनियादी तालीम में जीवन के व्यावहारिक

काम तथा ऐसे उद्योग जिनमे उत्पादकता हो ज्ञान के वाहन अथवा साधन या माध्यम होते हैं।

उद्योग मे बालक की स्वाभाविक रुचि होती है। बालक के मन मे विचार होते हैं। किसी वस्तु की आकृति की कल्पना उसके मस्तिष्क में होती है। जब वह इस विचारित अथवा कल्पित वस्तु को हाथो से बनाता है तो वस्तु से सम्बन्ध रखने वाले विचार स्पष्ट हो जाते है। इसीलिए बुनियादी शिक्षा में समवाय प्रणाली को मान्यता प्रदान की गई है। कठिन प्रसंगों को बालक हाथ द्वारा मूर्तिरूप प्रदान कर शिक्षा ग्रहण करता है। ज्ञान साकार और प्राणवान बनता है। इसीलिए बुनियादी शिक्षा मे उद्योग शिक्षण को इतना महत्व प्रदान किया गया है।

मूलोद्योग शिक्षण के उद्देश्य—गाधी जी शिक्षा का आरम्भ कार्य से करना चाहते थे। उद्योग द्वारा शिक्षण का तरीका रोचक, आकर्षक, उल्लास प्रदान करने वाला तथा स्वाभाविक होता है। यही कारण है कि बुनियादी तालीम उद्योग केन्द्रित अर्थात जीवन केन्द्रित शिक्षा प्रदान करती है। उद्योग शिक्षण के उद्देश्य ये है—शारीरिक श्रम के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करना। स्वावलम्बी बनाना। बालक का बौद्धिक एवं शारीरिक विकास करना। बालको को स्थानीय उद्योगो एवं गृहोद्योगों के निकट लाना। बालको की रुचि को कलात्मक बनाना। हस्तश्रम के प्रति रुचि जागृत करना। वर्ग भेद को मिटाना तथा केवल शारीरिक श्रम करने वालो एवं केवल मानसिक श्रम करने वालों के अन्तर को पाटना। बालको का दृष्टिकोण वैज्ञानिक बनाना तथा उन्हे विधिवत कार्य करने का ज्ञान देना। बालको को स्वच्छ रहने की आदत का विकास करना। बालको मे सद्गुण जैसे सत्य, निष्ठा, एकाग्रता, आत्मविश्वास आदि को विकसित करना।

उद्योग शिक्षण के आधार मनोवैज्ञानिक यह पूर्णत: मनोवैज्ञानिक है जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि बालक करके सीखते है। कार्य बालक के मस्तिष्क को जागरूक बनाता है। कार्य बालक के दिमाग को प्रखर बनाता है और उसे संतुलित रखता है। मनोवैज्ञानिक कहते है कि बालक क्रियाशील रहकर अपनी अधिक क्षमता अथवा शक्ति को व्यय करता है। उद्योग शिक्षण द्वारा बालक

की इस शक्ति का सदुपयोग किया जाना चाहिए। मूलोद्योग शिक्षण मे बालक की रचनात्मक जिज्ञासा, संग्रह आदि प्रवृत्तियो का उपयोग होता है। बालक कार्य करने मे एक दूसरे का अनुकरण करते है, सहयोग देते है और सामूहिक रूप से कार्य करते है। बालक को कर्म द्वारा शिक्षा प्रदान कर आगामी जीवन के स्वाभाविक तरीके से तैयार किया जाता है। मनोविज्ञान के ज्ञान के अनुसार बालक समूह बनाकर रहते है। कार्य द्वारा शिक्षा की इस प्रणाली मे भी बालक समूह बनाकर कार्यान्वित रहते है आपस मे सहानुभूति बरतते और एक दूसरे का अनुकरण करते है।

आर्थिक—बापू का कहना था कि स्वावलम्बन बुनियादी शिक्षा की तेजाबी जाँचहै। पूर्ण रूप से तो नही परन्तु आंशिक रूप मे बालक उद्योग द्वारा शिक्षा से स्वावलम्बी बनता है। यह भारत जैसे निर्धन देश की आवश्यकताओ के अनुकूल भी है। "यदि कर्म समुचित ढंग से तथा एकाग्रता और निष्ठा से दिया जावे तो बालकों की सूझ-बूझ बढ़ेगी वे कौशलपूर्ण बनेंगे तथा उनकी आर्थिक दशा ठीक होगी तथा आगामी जीवन मे पेट पालने लायक धन्धे सीख जावेंगे। यह शिक्षा स्थानीय लघु उद्योगो को परिष्कृत करती है। ग्राम नव निर्माण, श्रम मे गौरव उत्पन्न करने, आलस को दूर भगाने, आर्थिक रूप मे स्वावलम्बी बनाने के बीज कार्य द्वारा शिक्षा मे ही निहित है।"

सामाजिक–मूलोद्योग शिक्षण का सामाजिक महत्व भी कम नही है। "मूलोद्योग शिक्षण द्वारा समाज मे वर्ग भेद की नीव हिलती है।" समाज वर्ग विहीन होने की ओर अग्रसर होता है तथा हाथ द्वारा कार्य करने को समाज मे नीची दृष्टिसे नही देखा जाता है। बालक को जनतान्त्रिक सुनागरिक बनाने एवं सामाजिक प्राणो के रूप मे विकसित करने के लिये कार्य द्वारा शिक्षा का विधान बहुत ही आवश्यक है। यही कारण है कि बुनियादी शाला को अधिकाधिक प्रजातान्त्रिक बनाया जाता है। बालक अपने मंत्री चुनते है एवं शाला समाज को संचालित करते है। ये सब कर्म ही सांस्कृतिक आयोजन, शैक्षिक आयोजन पर्वोत्सव मनाना आदि बालको को व्यावहारिक ठोस ज्ञान प्रदान कर एक सुव्यवस्थित समाज रचना की ओर प्रेरित करते है। श्रमदान, सामूहिक एवं व्यक्तिगत सफाई, आदि कार्यक्रम बालको को समाज सेवी भावना की

ओर अग्रसर करते हैं। "हाथ हमारे विचारो के अनुसार समाज की सुमधुर कल्पना को साकार करने का अस्त्र है।"

इतना ही नही कार्य द्वारा शिक्षा बालक का शारीरिक एवं मानसिक विकास करती है। उन्हें कौशल पूर्ण बनाती है। क्रियायें करके उनकी मांस पेशियो को अभ्यास मिलता है। कार्य की योजना बनाने, ठीक सामग्री का चयन करने एवं सरल व कठिन क्रियाओं को करने मे बालक सोचते विचारते है। इससे मानसिक विकास होता है। ध्यान रहे कि उद्योग शिक्षण का उद्देश्य बुनियादी शिक्षा मे इसे ज्ञान का वाहन बनाना ही मुख्य है। अतः ऐसे उद्योग का इसमे कोई महत्व नही है जो बालको के ज्ञानोपार्जन मे सहायक न होता हो। इन क्रियाओ को ठीक ढंग से करने, सामग्री को सजाने, मोड़ने, पिचकाने, रंगने आदि मे बालक अनेक बातें सीखते हैं।

प्रश्न ४०—**मूलोद्योग चयन करते समय किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए।**

उत्तर—मूलोद्योग चयन—उद्योग द्वारा शिक्षण बड़ा उपयोगी है। इसके चुनाव मे बड़ी सावधानी बरतनी चाहिए हमे ऐसा मूलोद्योग चयन करना चाहिये जिसके शुरू करने मे थोड़ी पूँजी से काम चल जावे, कच्चा माल आसानी से सुलभ हो सके और साल भर तक मिलता रहे। स्थानीय समाज की आवश्यकताओ की पूर्ति कर सके तथा निकटस्थ स्थानो मे ही लोग उसे ले लें। इसमे बड़े-बडे औजारो की आवश्यकता न पड़े तथा सामान्य बुद्धि के बालक इसे सरलता से समझ ले। यह देश काल एवं परिस्थिति के अनुकूल हो। ऐसा हो कि बालको को कम से कम श्रम करना पड़े एवं उनकी क्षमता, वय, रुचि, स्तर के अनुकूल हो। मूलोद्योग में पर्याप्त शैक्षणिक सम्भावनाएँ हो। यह बालको का शारीरिक एवं मानसिक विकास करते हुए सद्गुणो की ओर प्रवृत्त करे। बालक खोजपूर्ण बनें।

बुनियादी तालीम उद्योग केन्द्रित क्यों ?—मनुष्य को अपना जीवन-यापन करने के लिए भोजन, आश्रय और वस्त्रो की जरूरत होती है। भोजन उसे कृषि कार्य से प्राप्त होता है। वैसे भी हमारा देश खेतिहर है अतः कृषि उद्यम को बुनियादी शिक्षा मे प्रमुख स्थान प्राप्त है। भोजन के बाद दूसरी

आवश्यकता है—शरीर को ढकना और शरीर की सुरक्षा और रहने के लिये मकान इस प्रकार इस शिक्षा मे वस्त्र को दूसरा तथा घर को तृतीय स्थान दिया गया है। स्पष्ट है कि जीवनोपयोगी शिक्षा इन तीनो आवश्यकताओ की पूर्ति करने वाली हो तथा उद्योग केन्द्रित हो। इसलिये बुनियादी शिक्षा मे कृषि, कताई बुनाई लोहे, लकड़ी एवं मिट्टी के कामो को प्रधानता दी गई है।

कृषि मे मिट्टी तैयार करने से लेकर फसल की कटाई तक खुदाई, सिंचाई आदि अनेक क्रियायें करने के पर्याप्त शैक्षणिक अवसर प्राप्त होते है। कताई-बुनाई दूसरी आवश्यकताओ की पूर्ति करती है। तकली को बालक खिलौना समझते है और सुगमता से कातते है एव ज्ञानार्जन का लाभ प्राप्त करते है। बापू कहते थे, "कताई मे मनुष्य की सारी शिक्षा समाई हुई, जो किसी दूसरी दस्तकारी मे नही मिलेगी।" यह ठीक भी है। शालाओ मे भी इसकी व्यवस्था सुगमता से हो सकती है। यह ज्ञान का भण्डार है। इसी प्रकार लोहे लकड़ी, बॉस, कागज आदि के उद्योग भी सिखाये जा सकते है। बुनियादी शिक्षा बालको को यान्त्रिक बनाकर उनमे कार्यो के सामाजिक महत्व को जानने का अवसर प्रदान करती है। बालक दैनिक समस्याओ को समझने के योग्य होते है। वे इन्हे हल करते हैं। उद्योग द्वारा शिक्षा से सहयोग, प्रेम आदि सद्गुणो का विकास होता है। बालक अधिकाधिक समाज का उपयोगी घटक के रूप मे विकसित होता है।

मृदु उद्योग—बुनियादी तालीम मे इन प्रमुख उद्योगो जैसे कृषि, कताई-बुनाई, और मिट्टी के अतिरिक्त आवश्यकतानुसार अन्य मृदु उद्योगो, को भी शिक्षा का आधार बनाना चाहिये। ये क्रियाएँ सरल, स्थानीय परिस्थिति के अनुसार होती है और बालक इनमे रुचि लेते है। विशेषकर छोटे बालक इन्हे पसन्द करते है। नवीनता इनका गुण है। झाड़ू बनाना, पत्तल बनाना, नाड़ा बनाना, फूल बनाना, दन्त मंजन बनाना तथा पालिश बनाकर पालिश करना आदि ऐसी ही क्रियाये है। अधिकांश प्रशिक्षण विद्यालयो मे इनका प्रचलन होता है।

उद्योग शिक्षण के लिए निर्देश-कक्षा मे जो भी उद्योग कार्य-सम्पन्न करना

हो उसकी पूर्व योजना बना लेनी चाहिये। और सहायक सामग्री आवश्यकतानुसार पहले ही इकट्ठी कर लेनी चाहिये। बालकों के समक्ष शिक्षक को ठीक ढंग से क्रिया का आदर्श प्रदर्शन करना चाहिये ताकि प्रत्येक बालक क्रिया की प्रक्रियाओं से परिचित हो जावें। इसके अनन्तर बालकों से सामग्री वितरण करवा देना चाहिए। ध्यान रहे कि सामग्री वितरण करने मे व बालकों द्वारा उसे ग्रहण करने में कक्षा मे शोर गुल न होजावे और प्रत्येक बालक के पास पर्याप्त स्थान कार्य करने के लिये हो। बालक जब कार्यान्वित हो तो शिक्षक को उनका मार्ग दर्शन संकेत एवं भूलसुधार व्यक्तिगत रूप से बालको के पास जाकर करना चाहिये परन्तु सम्पूर्ण कक्षा की उपेक्षा नही कर देनी चाहिये। प्रत्येक बालक से कार्य कराना चाहिए यदि कोई बालक अपना कार्य शीघ्र ठीक ढंग से कर लेता है तो उसे दुबारा उसी कार्य मे लगाया जावे अथवा अन्य बालको के सहायतार्थ उस लड़के को छाँटा जावे।

सहायक सामग्री—उद्योग शिक्षण के मध्य यदि चार्टस व नक्शे की आवश्यकता हो तो इनका प्रबंध करना चाहिये तथा ठीक ढंग से उपयोग करना चाहिये। कमजोर छात्रो पर विशेष ध्यान देना चाहिये और उन्हे उनकी रुचि के अनुसार उद्योग कार्य मे लगाना चाहिये। और ऐसी सामग्री का प्रयोग करना चाहिये जिससे उन्हे ज्ञान प्राप्त हो।

बुनियादी शिक्षा मे उद्योग ज्ञान का वाहन या माधम माना गया है। साथ ही साथ क्रिया विधिपूर्वक क्रमबद्ध तरीके से करने पर भी जोर दिया गया है। इस उद्योग शिक्षण की प्रमुख विधियाँ ये है--

मुखाग्र विधि - इसमे बालक को कार्य का मुखाग्र विवरण सुनाकर कार्य करने के लिए कहा जाता है।

लिखित विधि -- इसमे कार्य करने की विधि लिखा दी जाती है और तदनुसार बालक उद्योग कार्य करते है।

विचार-विनिमय विधि—इसमे बालक, शिक्षक से कार्य-विषयक उठी शंकाओं, समस्याओ, बारीकियों आदि के बारे मे वार्तालाप करके सुलझाते है और कार्य करते है।

खोज विधि—इसमे बालक को पहले उद्योग कार्य करने को दे दिया जाता है। बालक स्वयं सोच-विचार कर सही रास्ता खोजता है और आवश्यकतानुसार शिक्षक से मदद माँगता है।

संगीत की शिक्षा

प्रश्न ४१—बुनियादी शाला में संगीत की शिक्षा बालकों को किस प्रकार दी जानी चाहिए।

उत्तर—बालक संगीत प्रिय होते है। उन्हें ऐसे वाक्य जिनमें तुकबन्दी होती है, बहुत भाते है। हमारे चारो ओर के वातावरण मे व्याप्त सगीत बालको की समझ से बाहर ही होता है। वयस्क ही इससे विशेषतया लाभान्वित होते है क्योकि बालक का इसमे ध्यान नही रखा जाता। फिर भी बालक की संगीत मे स्वाभाविक रुचि होती है। समझ मे न आते हुए भी वह इसे समझना चाहता है, उल्लसित होता है और टूटी फूटी तुकबंदी करने का प्रयास करता है चाहे यह अर्थहीन ही क्यो न हो। बालक स्वर का उतार चढ़ाव शीघ्रता से समझ लेते है खेद इस बात का है कि हमारे स्कूलो मे संगीत की शिक्षा की कोई समुचित व्यवस्था नही है। शिक्षको को संगीत पढाने का ठीक ढंग नही बताया जाता और शिक्षक इस विषय मे विशेष रुचि नही लेते है। ध्यान रहे कि बालको की शिक्षा मे इस विषय का बडो उपयोगिता है। यह बालक मे स्वयं कार्य करने की भावना का विकास करता है। जो शिक्षक इस विषय से अनभिज्ञ है, वे बालको को संगीत की शिक्षा प्रदान कर स्वयं भी इस विषय से परिचय प्राप्त करें।

भारतीय सभ्यता का अतीत संगीत का पूजक था। हमारे पूर्वजो ने दिन और रात्रि के विभिन्न कालों के लिए विभिन्न स्वर ताल और राग आदि के गीतों की रचना की थी। इसी प्रकार विभिन्न मासो के लिए रागो एवं गीतों की व्यवस्था की गई है इसी प्रकार विभिन्न स्थितियो शोक; प्रसन्नता आदि के लिए संगीत की रचना की गई। प्रत्येक शाला का पठन-पाठन संगीत से ही शुरू होता था। वर्तमान प्राथमिक बुनियादी शिक्षण सस्थाओं और प्रचलित शालाओ मे दैनिक कार्यारम्भ ईश विनय से प्रारम्भ होता है परन्तु प्रार्थना का जो विकृत रूप एवं अशुद्ध उच्चारण देखने और सुनने को मिलता है उससे बड़ा

ही खेद होता है। ऐसे उत्तम विषय को अभिभावक भी उपेक्षा की दृष्टि से देखते है।

उद्देश्य—बालकों में मीठे स्वर से गाने की शक्ति विकसित करना। उन्हें लय से पूर्ण रागो को पढने के योग्य बनाना। उनमें ऐसी आदतो का विकास करना कि वे स्मरण रखने के योग्य बनें। उनमे ऐसी क्षमता विकसित करना कि दूसरे के संगीत का श्रवण कर गा सकें।

बुनियादी शिक्षा मे संगीत शिक्षण—बुनियादी शाला गाँव का नवनिर्माण करेगी। बालक का संतुलित सर्वतोन्मुखी विकास कर स्थानीय संस्कृति को परिष्कृत एवं परिमार्जित करेगी। इसीलिए शाला मे सास्कृतिक आयोजन किये जाते है, राष्ट्रीय एवं धार्मिक पर्व तथा त्यौहार मनाये जाते है। इनमे बालक, पालक, ग्रामीणजन एवं शिक्षक सोत्साह भाग लेते हैं। इन कार्यक्रमो मे लोक नृत्य, प्रहसन, लोक गीत, लोक नाट्य, कविता, भाषण आदि को स्थान दिया जाता है। शिक्षको को उचित है कि वे इन लोक गीतों को ठीक ढग से गाने के लिये प्रेरित करें। गीत व्यक्तिगत रूप से गवाये जावें परन्तु प्राथमिक कक्षाओ मे सामूहिक ज्ञान को विशेष प्रोत्साहन दिया जावे। इन्हे ठीक ढंग से प्रार्थना कहना, तकली आदि के गीत गाना सिखाना चाहिए। ध्यान रहे कि सब भाषा शिक्षण के अनुपम साधन बन सकते है; हृदय को आनन्द प्रदान कर समाज को सुसंस्कृत बनाने मे योग दे सकते है जहाँ तक सम्भव हो बालको एवं स्थानीय समाज को आकर्षित करने वाले शिष्ट गीत ही उन्हे सिखाए जावें। बुनियादी शाला म ऐसे कार्यक्रमो को बड़ा महत्व प्राप्त है। ऐसे आयोजनो को अधिकाधिक सुसंस्कृत बनाया जावे ताकि ये उच्च दृष्टिकोण के प्रसार मे योग दें।

उपयोगिता—वास्तव मे ये सौदर्य भावना को विकसित करते है। ये सभ्यता ओर संस्कृति को विकसित करने वाले होने चाहिए। ये समाज को प्रतिबिम्बित करते है। उल्लास का स्निग्ध वातावरण का सृजन कर सहयोग की भावना उत्पन्न करते है। समय का सदुपयोग होता है और अनुशासन की समस्या हल होती है।

विशेष बात—संगीत-शिक्षण मे रेडियो, ग्रामोफोन, हारमोनियम, तबला,

ढोलक, मजीरे आदि उपलब्ध साधनो की सहायता ली जावे। बालकों को शिष्ट एवं सरल गीतात्मक पदों को संग्रहीत करने की ओर प्रवृत्त करना चाहिए। सामूहिक गान एवं नृत्य विशेष पर्वों एवं त्यौहारों पर आयोजित किये जावें। शिक्षक स्वयं रुचि ले और गावे। खेल एवं संगीत बालकों को प्राथमिक कक्षाओं में एक साथ कराये जावें।

कला शिक्षण

प्रश्न ८२ बुनियादी शिक्षा में कला का स्थान निर्धारित कीजिये ?

उत्तर—कला का मनुष्य के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। कला जीवन को पूर्ण बनाती है। कला मनुष्य के समय का सदुपयोग करती है। लेखन कला का उद्‌गम चित्रकला ही है। कला जीवन को कलात्मक बनाती है। कला से बालको का स्वाभाविक लगाव होता है। बालक अपने निकटस्थ वातावरण जैसे पेड, पौधे, पक्षी और जीवो को चित्रित करना चाहता है। चाहे ये भौंडे ही क्यों न हों। कला का प्रत्येक विषय पर प्रभाव पड़ता है।

चित्रकला शिक्षण के उद्देश्य—अब तक चित्रकला मे बालक यन्त्रवत् कार्य करते थे। शिक्षक के निर्देशो का अक्षरशः पालन कर परीक्षा मे उत्तीर्ण होना उनका उद्देश्य होता था। अब स्थिति ने पलटा खाया है चित्रकला के माध्यम से बालको को आत्मप्रकाशन का शुभ अवसर प्राप्त होता है इसके द्वारा बालक की रचनात्मक एवं कल्पना सम्बन्धी क्षमताओ को विकसित होने के स्वाभाविक अवसर प्राप्त होते है। बालक सौदर्य प्रिय बनते है। यह जीवन को व्यवस्थित बनाता है। लेखन शैली सुधरती है। बालक आवश्यकतानुसार समीपस्थ वातावरण के चित्र बना सकता है। अपनी कक्षा को सजा सकता है आदि।

बालकों को चित्र बनाना प्रिय है। वे अपने चारो ओर फैली प्रकृति के चित्र खीचना चाहते है। इससे उनकी ज्ञानेन्द्रियाँ शिक्षित होती है। बालक चटकीले रंग भरने मे बड़ा आनन्द लेते है। इसमे उन्हे चित्र का आकार बनाने की अपेक्षा अधिक आनन्द मिलता है। उनकी दृष्टि में रेखा खीचने का महत्त्व केवल रंग भरने हेतु ही होता है। शिक्षक पहले आकार बनाते हैं फिर

भरवाते है । बालको को रंगो का ज्ञान होता है । अतः शिक्षक को चाहिये वह बालकों आकार बनाने से पहले रंग भरना सिखादे ।

छोटे बालको को शुरू से ही चित्र बनाना सिखाया जाय । शनैः शनैः र से वह ठीक चित्र बनावेंगे । प्रारम्भिक अवस्था में भौड़े चित्रों पर ध्यान न र उनकी मानसिक शक्तियो के विकास की ओर अधिक ध्यान देना चाहिये नक उँगलियों पर पहले अधिकार करता है और फिर आकृति का ज्ञान त करने की ओर अग्रसर होता है । शिक्षक बालक को समुचित मार्ग ावे । बालक निकटतम प्राकृतिक वातावरण, आकारो, पशुओ और पक्षियो चित्र बनाने जाता है । वह इनका भली-भाँति निरीक्षण करता है । यथार्थ निकट आता है । वह वस्तुओ के गुण और धर्म से परिचित होता है । और त्र बनाकर उन्हे प्रकट करता है ।

बालको को चित्रकला द्वारा आत्माभिव्यक्ति का अवसर प्रदान करना हिये । अर्थात् बालक अपनी इच्छानुसार चित्र बनाकर उनमे रंग भरे इसके न्तर उन्हे आकृति बनाना बताया जावे । इससे उनमे रचनात्मक शक्ति का काम होगा । बच्चो को छोटी-छोटी कहानियाँ चित्रो द्वारा समझाई जावें ।

बालको को खर्चीले साधनो द्वारा कला शिक्षण की आवश्यकता नही है नेयादी शिक्षा के अनुसार बालक को रबड का उपयोग करने ही नही देना ाहिये । इससे उसमे गलतियाँ करने की आदत पडती है । हमे न्यूनतम कीमत साधन इसके शिक्षण मे प्रयुक्त करने चाहिये उदाहरणार्थ बाँस अथवा खजूर ा कूचियों से ब्रुश का काम ले सकते हैं । सस्ते देशी रंगो को विदेशी मँहगे ाो के स्थान पर प्रयुक्त कर सकते है । मिट्टी के बर्तनो को चीनी के प्यालो स्थान पर काम मे ला सकते है ।

वातावरण और प्रकृति बालक के कला के गुरण है । ये उसे प्रेरणा प्रदान रते है । ऐसे अवसर से लाभ उठाना चाहिए और बालको को ऐसे पर्याप्त अव- र प्रदान करने चाहिए कि जब बालक ऐसी वस्तुओं से प्रभावित हो तो अपने ावो को प्रकट कर सकें, आवश्यकतानुसार उन्हें कुशल चित्रकारों की कृतियों ा अवलोकन कराया जावे । ऐसा करने से बालक अपनी त्रुटियो मे संशोधन र उसे स्वतः ही कर लेंगे ।

कला का व्यावहारिक प्रदर्शन हम बुनियादी शिक्षालयों मे पर्वोत्सवों, शाला प्रदर्शिनी, संग्रहाय, गृह सजावट मे देख सकते हैं। बुनियादी शिक्षा का आधार मूलोद्योग है स्वच्छता और सौन्दर्य को आश्रय देती है यह भी कलात्मक होनी चाहिए। कला, उद्योग की सहायक होकर चलती है। इस प्रकार की कला मूलोद्योग के साथ चलेगी, उपयोगी होगी, उसमे नित-नूतनता रहेगी नित नई कल्पनाओं का अविर्भाव होगा।

अच्छे पाठ के गुण

प्रश्न ४३—अच्छे पाठ के क्या गुण हैं ?

उत्तर—संक्षेप में अच्छे पाठ के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं :

सामान्य परिचय—"आदर्श पाठ की योजना समुचित, क्रमबद्ध, व्यवस्थित तथा स्वच्छ ढङ्ग मे लिखी होती है। अक्षर सटे हुए व शब्द दूर-दूर होते है।" पाठ के प्रारम्भ मे ठीक आवश्यक जानकारी अर्थात क्रमांक, कक्षा, समय, विषय व प्रकरण यथास्थान ठीक ढंग से लिखे होते है। प्रकरण भ्रमात्मक नही होता है। पाठ का आधार ठीक चुना जाता।

उद्देश्य कथन—पाठ के "उद्देश्य केवल" वे ही होते है जिनका पालन पढ़ाते समय किया जा सके। केवल अङ्कित मात्र कर देने से कोई लाभ नही। उद्देश्यहीन पाठ असफल हो जाता है। पाठ मे सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्य अङ्कित होते है।

सहायक सामग्री—"सहायक सामग्री" पाठ को स्पष्ट करने मे सहायक होती है। प्रचलित पाठों की अपेक्षा समवायी पाठो मे अधिक सहायक सामग्री की आवश्यकता होती है। अतः अच्छे पाठ में समुचित सहायक सामग्री की व्यवस्था होनी चाहिए। सामाजिक एवं प्राकृतिक प्रतिवेश तथा प्रयत्न, पाठ में सामग्री-वितरण की व्यवस्था, शिक्षक द्वारा क्रिया का आदर्श प्रदर्शन आदि बातें लिखी हो और तदनुसार कार्य की व्यवस्था हो अर्थात पाठ योजना प्रारूप के अनुसार समुचित एवं व्यवस्थित ढंग से बनी हो।

पूर्वज्ञान-अच्छा पाठ बालक के "पूर्वज्ञान पर आधारित" होता है। प्रस्तावना स्वाभाविक हो तथा इसमे उद्देश्य कथन स्वाभाविक ढंग से निकलना चाहिए। उद्देश्य कथन ऐसा हो जो बालको को निश्चित दिशा दिखावे तथा उन्हे भटकने

से रोके। पाठ निश्चित प्रारूप के अनुसार बनाना चाहिए। बालकों को कार्य की उत्प्रेरणा देने के हेतु समुचित प्रश्न क्रमबद्ध रूप से रखे हो।

क्रियाशीलन—जो भी "क्रियाशीलन किया जावे" वह बालको द्वारा हो मुख्यतया किया जावे। शिक्षक तो आदर्श प्रदर्शन के पश्चात् आवश्यक मार्ग दर्शन, सुधार एवं संकेत प्रदान करे। बालक अधिक काम करें और शिक्षक कम। पाठ में ऐसी ही व्यवस्था हो।

त्रुटि हीनता—"पाठ्य वस्तु मे भाषा सम्बन्धी दोष न हो" और शिक्षक के उच्चारण भी अशुद्ध न हो। वस्तु-सार को स्पष्ट करने के लिए शिक्षण ही की युक्तियाँ और अनुकूल पाठन पद्धति का अनुसरण किया गया हो।

बाल स्वभाव के अनुकूल—पाठ मे बालक की "क्रियाशीलता का अधिकाधिक उपयोग" किये जाने की व्यवस्था हो तथा उनकी शक्ति एवं मानसिक विकास को दृष्टिगत कर अभ्यास कार्य दिया गया हो पाठ मे उनकी रचनात्मक, संग्रह, खेल आदि प्रवृत्तियो का अधिकाधिक उपयोग किया गया हो। बालक स्वानुभव से ज्ञानार्जन करते हों।

समवायी पाठो मे ऐसी क्रियाओ से शिक्षण की व्यवस्था की गई हो जिसमे ज्ञान देने की पर्याप्त सम्भावनायें हो। बालको के अनुकूल एवं स्थानीय परिस्थिति के अनुसार शिक्षण हो।

पाठ मे "बालको की रुचि" को बनाये रखने के लिए विचार-परिवर्तन वस्तुओ की नवीनता, उत्सुकता एवं कौतूहल उत्पन्न करने की शक्ति हो।

अच्छा शिक्षक-अच्छे पाठ की विशेषताएँ बताने के पश्चात् यह भी आवश्यक है कि पाठ रुचिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया जाय इस दृष्टि से "शिक्षक का महत्व" सर्वोपरि है। अच्छा पाठ अच्छे ढंग से अच्छा शिक्षक ही पढ़ा सकता है, क्योकि वह ही मूल रूप मे इस समस्त शिक्षण क्रियाओं और प्रक्रियाओं मे तत्व रूप में विराजमान रहता है। उसका आचरण, छात्रो के प्रति बालकों को अपनी ओर आकर्षित करना, विचारों को प्रश्न एवं अन्य क्रिया कलापो द्वारा जागृत करने की योग्यता, पाठ की पूर्व तैयारी, विषय का पूर्ण ज्ञान आदि उसके पाठ को सफल बनाते है।

"शिक्षकों को चाहिए कि वे परिश्रम से पाठ एवं पाठ विधि को रुचिपूर्ण बनाये तभी उनका शिक्षण सफल हो सकेगा।"

पाठ की समालोचना

प्रश्न ४४—पाठ की आलोचना का क्या उद्देश्य है ? पाठ की आलोचना करते समय किन किन बातों पर ध्यान रखना चाहिये ?

उत्तर—इसे पाठ का निरीक्षण भी कहते है। अध्यापकगण छात्राध्यापकों के शिक्षण का अवलोकन कर गुण-दोष आलोचना-पुस्तिका मे अंकित कर देते है। छात्राध्यापको को चाहिए कि विपरीत आलोचना से घबरायें नही वरन् वाँक्षित सुधार करें। निरीक्षण करते समय दोषो के साथ-साथ गुणो एवं विशेषताओ को भी अंकित करना चाहिये। दोषों के निवारण के लिये समुचित सुझाव भी देने चाहिये आलोचना शत्रुवत् न होकर मित्रवत् न होकर मित्रवत् होनी चाहिये। निरीक्षण करते समय अध्यापक, छात्र, कक्षा, पाठ्यवस्तु एवं अध्यापन का विशेष ध्यान रखना चाहिये।

इसी प्रकार सत्रान्त में एक वार्षिक परीक्षापाठ प्रशिक्षार्थियो को पढाना होता परन्तु बुनियादी प्रशिक्षण केन्द्रो मे सामान्यत: दो परीक्षा पाठ पढाये जाते है एक परम्परागत पाठ दूसरा समवायी पाठ। इसमे प्रशिक्षण विद्यालय के आचार्य और बाह्य परीक्षक पाठो का देखकर मूल्याङ्कन करते है। इसलिए छात्राध्यापको को चाहिए कि अपनी पूरी तैयारी से पाठ तैयार करें, अपने प्रशिक्षण दाताओ एवं साथियो से आवश्यकतानुसार सहायता ले और संकोच होकर पूर्व आत्मविश्वास से पढावे, घबडायें नही।

छात्राध्यापको को पाठालोचना पर थोड़ा बताने के बाद यह भी आवश्यक है कि इसके उद्देश्य क्या है।

(१) यह पता लगाना कि शिक्षा क्रम को कार्यान्वित करने मे कौनसी कठिनाइयाँ आती है ?

(२) शिक्षण-पद्धति व शिक्षा क्रम का उपयोग छात्रो के स्तर के अनुकूल है अथवा नहीं।

(३) छात्रों और अध्यापको की क्या समस्यायें हैं ?

(४) समवाय की पर्याप्त सम्भावनायें हैं अथवा नही।

(५) मनोवैज्ञानिक रीति से बालक की प्रवृत्तियो और शिक्षक तथा उसने अध्यापन करने की विशेषताओ की जानकारी प्राप्त करना।

(६) साहित्य सृजन के लिए सामग्री उपलब्ध करना।

(७) किन सुझावों और सुधारों का एक और समावेश किया जा सकता है, पता लगाना।

(८) अध्यापन कला और शिक्षण-प्रणाली के विकास में सहयोग प्रदान करना।

वैसे तो प्रत्येक शिक्षक पाठ का निरीक्षण करते है परन्तु आलोचना व्यवस्थित विधि से हो तथा पाठ का कोई महत्वपूर्ण अंग इससे वंचित न रहने पावे इसी उद्देश्य को सम्मुख रख नीचे एक प्रमुख प्रश्नो की एक सूची दी जा रही है। इसको ध्यान मे रखकर यदि पाठसूत्र का निर्माण एवं पाठन किया जाये तो, लेखक का विश्वास है कि उनका पाठ अवश्य सफल होगा। ध्यान रहे कि यह प्रश्नावली परम्परागत एवं समवायी दोनो प्रकार के पाठों के लिए उपयुक्त होगी।

पाठ निरीक्षण के सिद्धान्त अथवा सामान्य नियम—

(१) पाठ की आलोचना करते समय गुण और दोष दोनों का ही अंकन किया जावे। दोषों को दूर करने के लिए सुझाव बताये जावें। सुझाव रचनात्मक हो। सुझाव रहित आलोचना का कोई महत्व नहीं होता है।

(२) आलोचना ऐसी हो कि वातावरण मे कटुता उत्पन्न न होने पावे वरन् वातावरण स्वाभाविक रहे।

(३) आलोचना करते समय पाठक, छात्र-वर्ग, पाठ्य सामग्री, शिक्षण विधि सभी का निरीक्षण करना चाहिये।

(४) आलोचना के उपरान्त प्राध्यापक एवं छात्राध्यापकों की गोष्ठी हो जिसमे आलोचना के प्रत्येक अंग पर चर्चा की जावे और जिन मुद्दों पर मतभेद हो एक सामान्य नियम बना लिया जावे।

पाठ निरीक्षण-प्रश्नावली

प्रवेश; पाठ योजना एव उद्देश्य कथन—क्या शिक्षक कक्षा मे ठीक समय पर तथा ठीक ढंग से प्रविष्ट हुआ ? क्या उसकी मुद्रा प्रसन्न थी ? क्या उसने बालको से ठीक ढंग से परिचय अथवा सम्पर्क स्थापित किया ? क्या पाठ-योजना समुचित, क्रमबद्ध, व्यवस्थित तथा स्वच्छ ढंग से लिखी गई है ? क्या उसमे आवश्यक चित्र आदि चित्रित अथवा नत्थी है ? क्या पाठ का उद्देश्य समुचित है ? उद्देश्य कथन स्वाभाविक है ? तथा उद्देश्य की पूर्ति कहाँ तक हो सकी है।

बालकों की रुचि तथा कार्य की योजना—बालकों ने पाठ में कहाँ तक रुचि ली तथा पाठ को समझा ? कार्य योजना में बालकों का सहयोग कहाँ तक लिया गया ? कार्य बालकों के अनुकूल था या नहीं ? क्या बालक कार्य में तन्मय थे ? क्या कार्य-प्रणाली—कार्य-वितरण, भूल, सुधार, समय-विभाजन, निर्देशन तथा संकेत ठीक व समुचित थे ? क्या सिंहावलोकन प्रश्न किये गये ? क्या कार्य समयानुसार एवं योजनानुसार प्राप्त हुआ ?

समवाय—क्या कर्म (कार्य) तथा ज्ञान का सम्बन्ध स्वाभाविक ढंग से जोडा गया ? क्या विषयानुकूल पाठन-विधि प्रयुक्त की गई ? ज्ञान श्रृंखलाबद्ध, क्रम से मनोवैज्ञानिक या शास्त्रीय था ? क्या बालक की विचार, कल्पना, तर्क-शक्ति एवं रसानुभूति जागृति की जा सकी अथवा नहीं ? क्या पाठ का प्रत्येक अंग अपने स्थान पर समुचित था ? क्या पाठ सोपानों मे विभक्त था ? क्या पाठ्यवस्तु बालकों के अनुकूल, सुव्यवस्थित, पर्याप्त तथा शिक्षा क्रमानुसार थी ? क्या किसी आवश्यक अंग को छोड़ा तथा अनावश्यक अंग को जोड़ा तो नही गया ?

अभ्यास—क्या अभ्यास दिया गया ? कार्य यन्त्रवत् तो नही था ? क्या ज्ञान की पर्याप्त सम्भावनायें रखता है ? मोलिकता मे वृद्धि करता है अथवा नहीं ? क्या समय मे पूरा हो सका अथवा नही ?

श्यामपट्ट कार्य—क्या श्यामपट्ट ठीक स्थान तथा पर्याप्त दूरी पर रखा था ? क्या इसका उपयोग समुचित था ? श्यामपट्ट कार्य स्वच्छ, व्यवस्थित स्पष्ट, पढने योग्य तथा ठीक ढंग से लिखा था ? अक्षर सुडौल थे अथवा नही ? श्यामपट्ट कार्य मे बालको ने कहाँ तक सहयोग दिया ? बालक श्यामपट्ट कार्य मे रुचि ले रहे थे या नही ? शिक्षक ने सुपरजीवन किया या नही ?

प्रश्नोत्तर—क्या प्रश्न सीधे, नुकीले, स्पष्ट, संक्षिप्त, व्यवस्थित, विचारोत्पादक, तर्कोत्पादक तथा बालकों के स्तर के अनुकूल थे अथवा नहीं ? क्या प्रश्न पूछने का ढंग ठीक था ? प्रश्न अवांछनीय तो नही थे ? क्या प्रश्न सम्पूर्ण कक्षा को सम्बोधित करके पूछे गये थे ? प्रश्न पर्याप्त थे अथवा अपर्याप्त ? उनका क्रम सुसंगत था या नहीं ? क्या वे समवित्तीर्ण थे ? उनकी भरमार तो

नहीं थी ? क्या बालकों ने प्रश्न किये ? यदि किये तो शिक्षक ने उनका निराकरण कैसे किया तथा पाठ के विकास मे कहाँ तक उपयोग किया ? क्या बालको के उत्तर सन्तोषप्रद थे ? अपूर्ण वाक्य मे तो न थे ? शिक्षकों ने उत्तरों का उपयोग तत्परता से किया अथवा नहीं ?

शिक्षक की प्रतिभा और तैयारी–शिक्षक का पहनावा, व्यक्तित्व, उच्चारण, आवाज, व्यवहार, विशेष आदत, अनुशासन, खडे होने और बैठने का ढंग मौलिकता, सूझ-बूझ आदि कैसे थे ? वह कक्षा मे आवश्यक सामग्री लाया या नही ? क्या यह सामग्री यथास्थान व्यवस्थित ढँग से रखी थी ? क्या पाठन सामग्री स्वनिर्मित थी ? शिक्षक ने कक्षा व्यवस्था तथा बालकों को बैठक पर ध्यान दिया या नही ?

पाठ का अन्त और सुझाव—क्या पाठ निश्चित समय पर समाप्त हुआ ? क्या बालकों ने नवीन ज्ञान उल्लासपूर्ण ढंग से ग्रहण किया ? क्या पाठ के आरम्भ होने से समाप्त होने तक व्यवस्था का ध्यान रखा गया । पाठ कहाँ तक सफल रहा ? पाठ मे क्या क्या कठिनाइयाँ उत्पन्न हुई तथा उनको शिक्षक ने कैसे दूर किया ? पाठ को और अधिक सफल बनाने के लिए आपके क्या सुझाव है ?

शारीरिक शिक्षण

प्रश्न ४५—बुनियादी शिक्षा में शारीरिक शिक्षण का महत्त्व बताते हुए इसके उद्देश्यों पर संक्षेप में प्रकाश डालिये ।

उत्तर—तन्दुरुस्त बच्चे सबको अच्छे लगते है । ऐसे बच्चे पढ़ने मे मन लगाते है । जब शरीर ही अस्वस्थ है तो बौद्धिक विकास से क्या लाभ । इसी उद्देश्य को सामने रख शिक्षालयो मे शारीरिक शिक्षा की व्यवस्था की जाती है । बुनियादी विद्यालयो मे प्रचलित शालाओ की अपेक्षा शारीरिक शिक्षा के लिए कम सम समय दिया जाता है । ३० मिनट शारीरिक शिक्षा हेतु निर्धारित किये गये है । वह भी इसलिए कि जो साधारण रूप से स्वस्थ हैं वे इसे कायम रख सके, कमजोर बालक स्वस्थ हों तथा कुडौल शरीर वाले बालकों को शरीर सुडोल हो । बुनियादी शिक्षा में शारीरिक शिक्षा को कम समय देने

का कारण बालकों का क्रिया करते अंग का स्वाभाविक रूप से संचालन होना ही है।

उद्देश्य-बालकों को अनुशासित बनाना, ईमानदारी से कार्य करना सिखाना, बालको मे नेतृत्व शक्ति उत्पन्न करना, उन्हें आज्ञाकारी बनाना, शरीर सुडौल और फुर्तीला बनाना, शरीर के विभिन्न अंग प्रत्यंगो के कार्यों का ज्ञान देना, स्वास्थ्य के नियमों से परिचित कराना, अधिक योग्यता से कार्य करने की क्षमता का विकास करना, बालको को चरित्रवान बनाना, उत्तम नागरिक बनाना, अपने परिवार का अच्छा सदस्य बनाना, बालक मे सच्चाई की आदत डालना, दूसरे की कमजोरी से फायदा न उठाने का दृष्टिकोण उत्पन्न करना आदि हैं।

इन उद्देश्यो की पूर्ति के हेतु शाला मे अनेक कार्यक्रम आयोजित किये जाते है। जिन कार्यक्रमों मे शारीरिक विकास की प्रधानता होती है वे व्यायाम के अन्तर्गत आते हैं तथा जिनमे मनोरंजन की प्रधानता होती है, वे खेल के अन्तर्गत हैं। खेलो के सम्बन्ध मे पहले ही पर्याप्त प्रकाश डाला जा चुका है। यहाँ खेलों के प्रकार एवं शिक्षालय मे उनकी व्यवस्था पर संक्षेप में प्रकाश डाला जावेगा।

खेल बालक को प्रिय लगता है। सभी खेल, सभी बालकों को प्रिय नही होते। एक खेल एक बालक को प्रिय है तो दूसरे को अप्रिय हो सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि बालक अपनी रुचि, शारीरिक गठन, लिंग अथवा वय के अनुसार खेलते हैं। आम तौर पर यह देखा जाता है कि कुछ खेल बालकों के निमित्त ही होते है तो कुछ बालिकाओ के लिए ही। इसीलिए खेलों के अनेक भेद हो गये है। खेलो के विभिन्न प्रकार ये है। जिन खेलो मे बालक कूदा फाँदी करते और दौड़ते हैं उन्हें दौडने सम्बन्धी खेल कहते है। ये सामूहिक रूप से खेले जाते है। इनसे शरीर गठता है। जिन खेलों मे बालक वस्तुओ को स्पर्श कर, उठाकर और पटककर परिचय प्राप्त करता है उन्हे परीक्षात्मक खेल कहते है। ऐसे खेलों से बालक की इन्द्रियाँ विकसित होती है। जिन खेलों मे बालक अपने हाथों को सक्रिय रखता है; उन्हे रचनात्मक खेल कहते है।

उदाहरणार्थ मिट्टी का भाड़ बनाना, चित्र बनाना। स्काउट सम्बन्धी खेल इसी श्रेणी मे आते है। इनसे बालको की कल्पना शक्ति विकसित होती है। जिन खेलो मे बुद्धि का सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है। उन्हे मानसिक खेल कहते है। जैसे ताश, नाटक आदि। एक और प्रकार के खेल है जो बालक मे संगठन और समूह का भाव उत्पन्न करते है; जैसे क्रिकेट, कबड्डो आदि। इनसे बालक मे बड़ाई तथा प्रतिद्वन्दिता की भावना विकसित होती है।

ये सभी खेल बालक का किसी न किसी रूप मे हितवर्धन करने मे सहायक होते है। अतः प्रत्येक शाला मे इनकी व्यवस्था होना अनिवार्य है। अतः प्रतिदिन कुछ समय ऐसे खेलो के निमित्त अवश्य निर्धारित किया जाय। बुनियादी शक्षक को अपनी शाला मे विभिन्न प्रकार के खेल खिलाने चाहिये। और क्रोड़ा सम्बन्धी नियमो से बालको को अवगत करा देना चाहिये। बालको की रुचि का ध्यान खेलो मे रखा जावे। प्रत्येक खेल के नायक का चयन करा देना उपयोगी होगा। खेल सामूहिक हो। खेलो मे स्वतन्त्रता हो। शिक्षक भी खेलो मे सक्रिय भाग ले। खेल सद्गुणो जैसे अनुशासन, त्याग, सेवा आदि की भावना का विकास बालको म करें। विशेष अवसरो पर क्रीड़ा प्रतियोगिता आयोजित की जावे।

बुनियादो पाठशालाओ मे विभिन्न क्रियाएँ करने, पर्यटन करने तथा सामुदायिक जीवन व्यतीत करते हुए अगो को संचालन करने के अवसर बहुतायत से मिलते है। ऐसा करते हुए बालक ज्ञानार्जन करते है, उल्लसित होते है तथा स्वावलम्बन की ओर बढ़ते है फलतः पृथक से शाला मे शारीरिक शिक्षण प्रदान करने की आवश्यकता नही पड़ती। इसका तात्पर्य यह नही कि शारीरिक शक्षण अथवा खेल की व्यवस्था का बुनियादी शालाओ से पूर्ण बहिष्कार कर दिया जावे। शिक्षको को चाहिये कि वे शालाओ मे आवश्यकतानुकूल फुटबाल, हाकी आदि खेल बालको को खिलावे।

व्यायाम—शालाओ मे सामूहिक रूप से व्यायाम कराने की प्रथा सर्वाधिक प्रचलित है। इसका परिणाम यह होता है कि दुर्बल बालको को स्वस्थ बालको के समान ही अंगों का संचालन करना हाता है। आम तौर पर पहले शिक्षक अथवा विद्यार्थी जो व्यायाम मे दक्ष हो आदर्श प्रदर्शन करता है। समस्त बालक देखते है। इसके उपरान्त सम्पूर्ण बालक एक साथ व्यायाम करते है।

शिक्षको को दुर्बल बालको पर विशेष ध्यान देना चाहिये और व्यायाम कराते समय उनकी क्षमता का अवश्य ध्यान रखना चाहिये। शाला मे आम तौर पर व्यायाम दो प्रकार के कराये जाते है। प्रथम वे है। जिन्हे प्राकृतिक कहा जाता है। इसमे बालको को धावन, कूदना, चढ़ने सम्बन्धी अभ्यास कराये जाते है। द्वितीय वे है, जो शरीर को गठित करते है, मजबूत बनाते हे। ऐसे अभ्यास जिनमे टाँग, हाथ, गरदन कमर आदि का अभ्यास कराया जाता है। शिक्षक ऐसे अभ्यास करावें जिनमे विभिन्न अंग संचालित किये गये हो।

समवाय

प्रश्न ४६—समवाय क्या है ? इसके क्रमिक विकास पर एक निबन्ध लिखिये।

उत्तर—"कर्म के द्वारा ज्ञान की स्वाभाविक प्राप्ति ही समवाय है ?"

बुनियादी शिक्षा उद्योग केन्द्रित शिक्षा है इसमे उद्योग ज्ञान का वाहन अथवा साधन माना गया है। इसमे बालको का ज्ञान परस्पर असम्बद्ध विषयों मे विभाजित करके न क्रिया पर से दिया जाकर एक ज्ञान। अभिन्न एवं अखण्ड समष्टि के रूप मे दिया जाता है। क्रिया से सम्बन्ध जोड़ना ही समवाय है। सम=बराबर और वाय, माने बुनने वाला अर्थात् समवाय माने समता का बुनने वाला। इसका तात्पर्य है ज्ञान और कर्म की समता का बुनने वाला। आज शालाओ मे जो ज्ञान बालको मे ठूँसा जाता है वह अउपयोगी अव्यावहारिक होता है। बालक जब बड़ा होता है तो ऐसा ज्ञान उसे धोखा प्रतीत होता है वह अपने को असहाय पाता है। ऐसा क्यो ? स्पष्ट है उसने अनुभव अर्थात् कर्म करके ज्ञान प्राप्त नही किया अन्यथा ऐसी स्थिति उत्पन्न ही नही होती। बुद्धि भी कर्म का अनुमगन करती है।

कर्म ज्ञान की पुष्टि करता है। कर्म द्वारा प्राप्त ज्ञान हृदय को उल्लास प्रदान करता है। जीवनपयोगी क्रिया शीलनो के सहारे बालक ज्ञानार्जन करते है। बालक कर्म केन्द्रित ज्ञान प्राप्त कर समाजोपयोगी सदस्य बनते है। ऐसा ज्ञान स्थाई होता है, और सरलता से समझ मे आ जाता है तथा शीघ्रता से भुलाया नही जा सकता है। ज्ञान एक समझा जाता है यही कारण है कि बुनियादी शिक्षा मे समवायी विधि को मान्यता प्रदान की गई है।

इसकी आवश्यकता इसलिये और भी अधिक है कि ज्ञान को विषयों मे असम्बद्ध तरीके से विभाजित करके न पढ़ाया जाय वरन् ज्ञान एक अभिन्न अखण्ड समष्टि के रूप मे बालक को दिया जाय। ऐसा करने से शालाओ मे विषय के विशेषज्ञो को रखने की आवश्यकता न होगी। शिक्षक सब विषयों का ज्ञाता होता है। विषय विशेष उपेक्षा की दृष्टि से नही देखे जावेंगे। शिक्षण मे से नीरसता भागेगी और शिक्षण व्यावहारिक बनेगा। बालको का ज्ञान अव्यावहारिक न हो सकेगा। वह सैद्धान्तिक ज्ञान के पुतले बनकर न रह जावेंगे। गांधीजी का विचार था कि विषयो का पाठन वर्गों मे विभाजित करके नहीं किया जावे। ऐसा करने से शिक्षा का जीवन से नाता टूट जाता है क्योकि वास्तविक ज्ञान तो सम्पूर्णता मे है विभेद मे नही। जब ज्ञान विषयो मे विभाजित कर दिया जाता है तो हमारा ध्यान बालक से हट जाता है और हम विषय के पीछे पड़ जाते है जैसा कि ऊपर स्पष्ट दिया जा चुका है कि किसी कर्म से ज्ञान अथवा विषय को सम्बन्ध स्थापित करके पढ़ाना समवाय है इसमे ज्ञान शृङ्खला बद्ध दिया जाता है इसके दो आधार है समवायी ज्ञान और समवायी केन्द्र। समवायी विषय से तात्पर्य उस ज्ञान अथवा विषय से है, जिसे कार्य से सम्बन्धित करना होता है। समवाय केन्द्र वह है जिससे सम्बन्ध स्थापित किया जाता है।

अब प्रश्न उठता है कि समवाय के सिद्धान्त की पृष्ठ भूमि क्या है? बुनियादी शिक्षा के जन्म से काफी पहले कुछ पाश्चात्य शिक्षा शास्त्रियो ने विभिन्न विषयो मे पारस्परिक सम्बन्ध तथा उनमे समन्वय स्थापित करने पर जोर डाला। "हर्बर्ट ने सर्वप्रथम एक विषय के पाठन से अन्य विषयो के ज्ञान दिये जाने की व्यवस्था पर बल दिया। आचार्य ड्यूई और पार्कर ने सर्व प्रथम, अपनी योजना पद्धति मे, समन्वय के सिद्धान्त को अपनाया। समन्वय मे एक विषय का सम्बन्ध दूसरे से जोड़कर पढ़ाया जाता है। इसमे एक विषय प्रमुख है तथा दूसरा विषय गौण होता है। बुनियादो तालीम की समवायी पद्धति मे समवाय प्रतिवेश ही केन्द्र बिन्दु होता है जिसको परिधि पर अन्य विषय समन्वित होकर घूमा करते हे। इसमे न तो कोई विषय मुख्य होता है और न कोई विषय गौण ही।"

आचार्य ड्यूई से पूर्व एक महाशय ने केन्द्रोयकरण नामक एक नवीन सिद्धान्त प्रतिपादित किया। उनके अनुसार एक विषय को (इतिहास) को केन्द्र मानकर अन्य विषयो का शिक्षण देने पर जोर दिया गया। आधुनिक प्रगतिशील पद्धतियाँ भी जिनमे प्रोजेक्ट, डाल्टन और मॉन्टेसरी कम्पलेक्स मुख्य है, क्रिया द्वारा शिक्षा देने पर बल देती है तथा इनमे किसी न किसी रूप मे समवाय, सहसम्बन्ध, और समन्वय पर जोर डाला जाता है।

बुनियादी तालीम का आधार समग्र जीवन है। समग्र जीवन इन तीनो केन्द्रो में समाया हुआ है।

१. उद्योग, २. प्रकृति, ३. समाज।

बालक मे कुछ प्रकृति प्रदत्त भावनाएँ होती है। इनका विकास वह समाज मे रहकर ही कर सकता है। अतः बालक का सामाजिक एवं प्राकृतिक वातावरण मूलोद्योग पर ही निर्धारित किया जा सकता है। सामाजिक ज्ञान से सामाजिक वातावरण का नाता है। सामान्य विज्ञान का चहुं दिशाओ मे बिखरी प्रकृति से सम्बन्ध है। इन दोनो के मिलन का साधन है-मूलोद्योग। स्पष्ट है कि मूलोद्योग की सार्थकता तब ही सिद्ध होगी जबकि वह प्रकृति से सामग्री लेकर उसे समाज के उपयोग के लायक बना दे। उद्योग करके मनुष्य अपनी रोजी-रोटी की समस्या हल कर सकता है। सामाजिक जीवन भी इस प्रकार निर्मित वस्तुओ को प्राप्त कर खुशहाल हो सकता है।

यदि हमे बालक के जीवन को सफल बनाना है तो हम उसे ऐसा ज्ञान देना होगा जो बालक का कार्य मूलक, ज्ञान मूलक और भाव मूलक विकास करे। समवाय शिक्षण मे उद्योग द्वारा कर्म मूलक, इस पर से ज्ञान प्रदान कर ज्ञान मूलक तथा भाषा एवं समुदायिक जीवन से बालक का भाव मूलक विकास किया जाता है। इस प्रकार समवाय विधि बालक के हाथ हृदय और मस्तिष्क का सन्तुलित विकास करती है।

प्रश्न ४७—समवाय का मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक आधार क्या है ?

मनोवैज्ञानिक आधार—यह विधि पूर्णतः मनोवैज्ञानिक है। बालक कुछ करके सीखना चाहता है। समवाय विधि भी बालक की इसी क्रियाशीलता

का लाभ उठाकर उसे ज्ञान देना चाहती है। ऐसा करने से बालक आत्म-विश्वासी बनता है। उसे आत्मसन्तोष होता है। दूसरे ज्ञान एक है। वह एक ऐसी इकाई है जो अभिन्न है और उसके खण्ड नही किये जा सकते। जैसा कि पहले कहा जा चुका है विषयो मे विभाजित ज्ञान बालक मे नैराश्य की भावना का विकास करता है। समवायी विधि बालक को समवेत ज्ञान प्राप्त कर जीवन की समस्याओं का हल करके की शक्ति प्रदान करती है। समवेत ज्ञान बालक सरलता से ग्रहण करता है तथा इसका उपयोग करने मे उसे कठिनाई नही होती।

समवाय विधि समाज मे फैले वर्ग भेद को मिटा देगी। यह ग्रामो का पुनर्निर्माण करेगी और बालक श्रम करने मे गौरव अनुभव करेंगे। समाज में श्रम की प्रतिष्ठा बढ़ेगी। वे बालक ही समाज सेवी बनेंगे और छूत-छात का अन्त होगा। वे एक दूसरे को सहयोग देंगे। स्वतन्त्रता का महत्व समझेंगे और प्रजातान्त्रिक सुनागरिक के रूप मे विकसित होगे।

आज शिक्षक को बालक के हितो की चिन्ता नही, पालको को शाला से सहानुभूति नही। समवायी विधि अपनाने पर पर्वोत्सवो और राष्ट्रीय त्यौहारो के मौको पर पालक और शिक्षक निकट सम्पर्क मे आवेंगे। शाला सामुदायिक जीवन के सास्कृतिक कार्यक्रम मिलन के अपूर्व और अनुपम साधन है, ये शैक्षणिक अवसर प्रदान करते है। तथा शाला एवम् समाज के मध्य बनी खाई को पाट देंगे और एक ऐसी स्थिति आ जावेगी, जबकि शिक्षक, पालक और बालक अपने को भिन्न-भिन्न न समझ कर एक ही परिवार का सहयोगी सदस्य मानेंगे।

प्रन ४८—समवाय के प्रकारों का सक्षेप में विवेचन कीजिए।

उत्तर—समवाय के भेद—समवायी विधि कई प्रकार से प्रयोग की जाती है। इसके चार भेद है—एक विषयी समवाय, दो विषयी समवाय, बहु विषयी समवाय और सक्रिय समवाय।

एक विषयी समवाय—इसमे क्रिया का सम्धन्ध केवल एक विषय से ही स्थापित किया जाता है। जैसे सूत कातने, अटेरने और धागो को नापने से गणित मे गिनती जोड़ना, घटाना, कीमत निकालना, ऐकिक नियम आदि का बोध कराना। वैसे तो यह सरल है और अधिकांश प्रशिक्षण विद्यालयों मे इसका

उपयोग होता है परन्तु बहुत से शिक्षा शास्त्रियो का कथन है कि इसमे क्रिया से अधिकाधिक लाभ उठाने की चेष्टा नही की जाती है और बुनियादी सिद्धान्तो के अनुकूल नही है । ज्ञान भी पूरा नही दिया जाता । कुछ भी हो यह छात्राध्यापको को अपने प्रशिक्षण काल मे अति सरल पड़ता है तथा जहाँ समय का बन्धन होता है, (३५ या ४५ मिनट) इसका प्रयोग किया जाता है । परन्तु बुनियादी शालाओं मे जहाँ शिक्षक स्थायी रूप से प्रशिक्षण के उपरान्त पढावें इसका कम ही प्रयोग करें और क्रिया से अधिकाधिक समवायी ज्ञान देने की चेष्टा करें ।

दो विषयी समवाय—इसमे एक क्रियाशीलन पर से दो विषयो का ज्ञान देने की योजना होती है । जैसे सूत के कातने, अटेरने, धागो के नापने आदि से गणित के ज्ञान के साथ भूगोल कपास की पैदावार, वायु, मिट्टी आदि का ज्ञान दिया जा सकता है । इसका प्रचलन भी बेसिक प्रशिक्षण विद्यालयो मे बहुतायत से होता है । यह किसी हद तक संतोजजनक कहा जा सकता है, परन्तु इसकी आलोचना भी कम नही होती । आलोचको का कथन है कि यह अपूर्ण है । इससे वाच्छित उद्देश्यो की पूर्ति नही होती है उनका कहना है कि यह आवश्यक नही कि एक क्रियाशीलन से दो ही विषय समवेत होकर चलें । क्रिया की शैक्षणिक सम्भावनाओ से पूरा पूरा लाभ उठाना चाहिए । व्यावहारिक दृष्टि से इस प्रकार का समवाय उपयोगी सिद्ध हुआ है । शिक्षको को इसका सफलतापूर्वक उपयोग करना सीखना चाहिए । इसमे बनावटीपन नही आने देना चाहिए ।

बहु विषयी समवाय—बुनियादी शिक्षा जगत में यह विवाद का विषय बना हुआ है । जितने इसके समर्थक है उतने ही इसके विरोधी है । इसके अनुसार क्रिया पर से अनेक विषयों का समवायी ज्ञान दिया जाता है जैसे; कताई बुनाई से गणित, भूगोल सामाजिक अध्ययन, सामान्य विज्ञान और भाषा आदि । इसके समर्थक कहते है कि इससे विभिन्न विषयो का पूर्ण ज्ञान बालको को दिया जा सकता है । यह ही, सही समवाय है । बालको के ज्ञान को पूर्ण एवं व्यापक बनाता है । यह बुनियादी शिक्षा के उद्देश्यो के अनुकूल है । इसके विपरीत इसके आलोचको का कथन है कि इस प्रकार का समवाय बनावटी हो जाता है और

बालको पर जबरदस्ती थोपा जाता है। बालक ऐसे ज्ञान में रुचि लेना कम कर देते है। वे उलझन में पड़ जाते है। इस बहु विषयी समवाय का प्रयोग करते समय हमें विशेष समाधान होना चाहिए। योजना पर अपेक्षाकृत अधिक सोच विचार करना चाहिए और प्रयास यह होना चाहिये कि इस प्रकार का ज्ञान अस्वाभाविक न हो जावे।

सक्रिय समवाय—इस प्रकार के समवाय में बालकों को क्रिया करते ही ज्ञान दे दिया जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि क्रिया संचालन का तथा उससे निकलने वाला ज्ञान साथ दिया जाता है।

सामान्यतः यह भ्रम हो जाता है कि केवल उद्योग द्वारा ही ज्ञान बालकों को दिया जावे अथवा मृदु उद्योग कक्षा मे कराकर ज्ञान दे दिया जावे। उदाहरणार्थ—शिक्षक शाला की अहाते के सफाई कराते समय सफाई संबंधी ज्ञान, कातते समय, चरखा तकली के अगो एवं सूत विषयक जानकारी एव ग्राम की जानकारी लेते समय ग्राम का ज्ञान बालको को कराया जा सकता है और शाला में आकर विभिन्न प्रतिवेशो सम्बन्धी ज्ञान पर विस्तृत चर्चा की जा सकती है। इसी प्रकार विभिन्न अनेक उदाहरण दिये जा सकते है।

प्रश्न ४ —स्वाभाविक एवं अस्वाभाविक समवाय पर प्रकाश डालते हुए अपने कथन की पुष्टि में कम स कम दो उदाहरण अवश्य दीजिए।

उत्तर—समवाय का स्वाभाविक रूप—स्वाभाविक समवाय मे कर्म और ज्ञान का सम्बन्ध अटूट होता है। इसका एक मात्र उद्देश्य बालको को क्रिया द्वारा ज्ञान देना है। स्वाभाविक समवाय वही है जिसमे बालको की वय, विकास और व्यक्तिगत जरूरतो का पूरा पूरा ध्यान रखा गया हो। स्वाभाविक समवाय मे शैक्षणिक परिस्थितियाँ मनोवैज्ञानिक होती है। कार्य द्वारा प्रश्न अपने आप उठते आते है। सफल समवायी अध्यापन शिक्षक पर सर्वाधिक निर्भर करता है। अतः शिक्षक मे सफल शिक्षक के गुण विद्यमान हों तथा वह बालको का मार्ग प्रशस्त करने मे दक्ष हो। दूसरे पाठ की योजना पहले ही सोच समझ कर ठीक ढंग से निर्धारित करली गई हो या साथ ही योजना ऐसी हो कि परिस्थिति के अनुसार उसमे वाछित अदल-बदल की जा सके। साथ ही शिक्षक

बालक के व्यक्तिगत विकास मे रुचि लेता हो तथा शालीय वातावरण बुनियादी शिक्षा-सिद्धान्त के अनुकूल हो। आवश्यक सहायक सामग्री की कमी न हो।

अच्छे समवाय के गुण—

(१) ज्ञान एवं कर्म स्वाभाविक रूप से सम्बन्धित हो।
(२) ज्ञान और कर्म का सम्बन्ध स्पष्ट व सीधा हो।
(३) पाठ्य-विषय के प्रति रुचि उत्पन्न करता हो।
(४) कठिन विषय को सरल और स्पष्ट करता हो।
(५) बालक के जीवन से सम्बन्ध रखता हो।
(६) शिक्षा शास्त्र सम्मत हो।
(७) बालक को क्रियाशील रखता हो।
(८) समवाय का पूरा पूरा उपयोग करता हो।
(९) ज्ञान व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध तरीके से देता हो।

दूषित समवाय—दूषित समवाय ने बुनियादी शिक्षा का जितना अहित किया है उतना शायद ही किसी अन्य बात ने किया हो। प्रशिक्षण महाविद्यालयो में यह रोग बुरी तरह देखने को मिलता है जहां छात्राध्यापक विषय का सम्बन्ध क्रिया से स्थापित करने की धुन मे लगे रहते है। इसका कुफल यह होता है कि क्रिया और विषय का सम्बन्ध कृत्रिम हो जाता है। समवाय कोई ऐसी वस्तु तो नही है जो शिक्षको को समझ से परे की वस्तु हो।

एक लेखक ने मतानुसार "समवाय का सीधा साधा लक्ष्य यह है कि क्रिया के द्वारा बालक के अन्दर पाठ के प्रति रुचि एवं जिज्ञासा उत्पन्न हो। वे प्रत्यक्ष कार्य द्वारा स्वाभाविक रीति से ज्ञान को खण्डित रूप मे नही वरन् समष्टि रूप में जीवन से सम्बद्ध करके ग्रहण करें। यह समवाय किसी भी साधारण क्रिया द्वारा सम्पन्न हो सकता है।" अल्पाहार करते, ईश विनय करते, सफाई करत, पर्यटन करते विवाहादि मे भाग लेते ऐसे अनेक अवसर बहुतायत से सहज ही प्राप्त हो जाते है जिनका लाभ उठाकर, शिक्षक बालको को स्वाभाविक ढंग से समवायी ज्ञान दे सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षक परिश्रमी हो और बालको को ज्ञान देने के अवसरो का लाभ उठाने के लिए लालायित हो।

खेद है कि ऐसा अधिकांशतः नही होता। अधिकांश शिक्षक ऐसे अवसरों को उपेक्षा की दृष्टि से देखते और कोई लाभ उठाने की चेष्टा नही करते और अस्वाभाविक समवाय प्रस्तुत करते है। आखिर इसका कारण क्या है ? स्पष्ट है, छात्राध्यापकों को समवायी विधि का ठीक ढंग से ज्ञान नहीं है अथवा उनकी शंकाओ का ठीक ढंग से समाधान नही किया गया है। शिक्षा शास्त्रियों एवं शासन विशेषकर प्रान्तीय सरकारो* को चाहिए कि वे अपने प्रान्त के प्रशिक्षण विद्यालयो मे समवाय सम्बन्धो एक नीति का पालन करवायें। किसी संस्था में पुस्तक के अनुसार क्रिया ढूँढ़ी जाती है। किसी क्रिया मे से अस्वाभाविक ज्ञान दिया जाता है। ऐसी व्यवस्था हो जाने पर विषम स्थिति उत्पन्न न होगी और बुनियादी शिक्षा का बड़ा अहित होने से बच जावेगा। ऐसा किया जाना संभव है।

उदाहरण—एक शिक्षिका को १५ अगस्त का पाठ पढाना था क्योंकि यह यह पाठ बालिकाओ की पाठ्य पुस्तक मे था। उसने कक्षा मे जाकर तिरंगा ध्वज बनवाया और बालिकाओं से प्रश्नो द्वारा यह निकलवाकर कि तिरंगा झण्डा १५ अगस्त को लहराया जाता है, उद्देश्य कथन किया कि आज हम १५ अगस्त का पाठ पढेंगे, अतः अमुक पृष्ठ पर १५ अगस्त वाला पाठ निकाल लो।

इसी प्रकार पाठ्य पुस्तक मे एक पाठ है—'चतुराई का पुरस्कार'। शिक्षाक ने कक्षा मे बालको से लकडी की वस्तुओं पर पालिश करने के लिए पालिश बनवाई फिर लड़को से प्रश्न किये। बालको ! आज तुमने क्या कार्य किया ? 'पालिश की' यह पालिश क्यों की ? 'अच्छा लगने के लिए'। अच्छा काम करने वालो को तुम क्या कहोगे ? 'होशियार, चतुर' अच्छे काम की चतुराई के बदले में क्या दिया जाता है ? 'इनाम, पुरस्कार'। शिक्षाक ने उद्देश्य कथन कर दिया "आज हम 'चतुराई का पुरस्कार' नामक पाठ के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करेंगे और पाठसूत्र में लिख दिया, "शिक्षाक बालको से पाठ्य पुस्तक मे से 'चतुराई का पुरस्कार' पाठ निकालने को कहेगा।"

*** म० प्र० शिक्षा विभाग ने इस ओर ध्यान देकर सम्पूर्ण प्रशिक्षण संस्थाओं के लिए एक ढंग का सर्वमान्य समवाय पाठ सूत्र का प्रारूप निर्धारित किया है। पाठक इस पुस्तक में तद्नुरूप पाठ सूत्र देखें और आचरण करें।**

एक अन्य और उदाहरण इस प्रकार है—शिक्षक ने बालकों से कागज के फूल बनवाकर पूछा आज हमने क्या कार्य किया ? (फूल बनाये) फूल किस चीज के बनाये जाते है ? (कागज के) कागज हमे कहाँ मिलता है ? (बाजार मे कागज की दूकान पर) बाजार में और कौन-कौन सी दूकानें होती हैं ? (कपड़े की, अनाज की, हलवाई की, आदि) तो आज हम हलवाई के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे ।

स्पष्ट है कि स्थिति कितनी दयनीय है । लेखक का विज्ञ पाठकों एवं छात्राध्यापको से नम्र निवेदन है जो पाठ समवायी विधि से नही पढ़ा जा सकता हो उसे उन्हे स्वतन्त्र रूप से पढाया जावे । यही बापू कहते थे ।

समवायी पाठ सूत्र तैयार करना

प्रश्न ५०—आप समवायी पाठ सूत्र तैयार करने में किन-किन पाठ-सकेतों का अनुसरण करेंगे ।

उत्तर—शिक्षण एक कला है और पाठ सूत्र है उसका एक आवश्यक अंग । बुनियादी शिक्षा में समवायी विधि द्वारा शिक्षण होता है । बालक क्रिया करते स्वाभाविक रूप से ज्ञानार्जन करते है । इस विधि में क्रिया और ज्ञान ठीक उसी प्रकार चलते हे जैसे मनुष्य और उसकी छाया ।

समवायी पाठ योजना चार भागो मे विभक्त की जा सकती है—उद्देश्य योजना, कार्य और समवायी ज्ञान । प्रत्येक पद का अथवा खण्ड का विवेचन इस प्रकार है :—

उद्देश्य—इन पाठों मे उद्देश्य दो भागो मे विभक्त कर दिये जाते है—मुख्य उद्देश्य और सामान्य उद्देश्य । इन दोनो ही उद्देश्यो को पुनः दो भागो मे विभक्त कर दिया जाता है—प्रथम कार्य सम्बन्धी द्वितीय ज्ञान सम्बन्धी । मुख्य उद्देश्य मे जो क्रिया बालको के ज्ञान वर्धन के लिए दी गई है उसके क्या उद्देश्य है तथा इस क्रिया से जो ज्ञान समवेत किया उसके क्या उद्देश्य है—अंकित कर दिये जाते है ।

सामान्य उद्देश्य मे भी मुख्य उद्देश्य की भाँति उद्देश्यो को दो भागों—कार्य सम्बन्धी और ज्ञान सम्बन्धी मे विभक्त कर दिया जाता है । प्रत्येक क्रिया के कुछ सामान्य उद्देश्य होते है इसी प्रकार इससे समवेत ज्ञान के भी सामान्य

उद्देश्य होते है। शिक्षक इन्ही उद्देश्यो को पाठ पढ़ाते समय पालन करता चलता है।

योजना—योजना पाँच भागों मे विभक्त की जाती है।

(अ) समवाय केन्द्र—(उद्योग, प्रकृति एवं समाज में कोई एक)

(ब) कार्य की इकाई—(जो क्रिया बालकों के ज्ञान वर्धन के लिए चयन की गई है, उसका नाम)

(स) सहायक सामग्री—इसके भी दो भेद है प्रथम क्रिया मे प्रयुक्त होने वाली द्वितीय ज्ञान वर्धन मे प्रयुक्त होने वाली। इन्हे भो क्रमशः कार्य सम्बन्धी एवं ज्ञान सम्बन्धी कहते हैं।

(द) समय विभाजन—इसे भी दो भागों मे बाँटा जाता है—कार्य सम्बन्धी क्रिया मे लगने वाला समय तथा ज्ञान सम्बन्धी मे जितने समय ज्ञान दिया जाने वाला है का उल्लेख किया जाता है।

(ह) पूर्व ज्ञान—यह भी दो प्रकार का होता है। कार्य सम्बन्धी—इसमे बालक क्रिया सम्बन्धी प्रारम्भिक ज्ञान रखते है। ज्ञान सम्बन्धी—क्रिया को वाहन बनाकर जिन विषयो का शिक्षक ज्ञान देने जा रहा है, उसका प्रारम्भिक ज्ञान बालको को कितना है जिसके आधार पर बालको को नवीन ज्ञान दिया जावेगा। इसके अन्तर्गत अंकित किया जाता है।

कार्य—कार्य को छै भागो मे विभाजित किया जाता है। **उत्प्रेरणा** सर्वप्रथम बालको को क्रिया करने के लिए प्रेरित किया जाता है। यह कार्य प्रश्न करके अथवा कहानी कह कर अथवा अन्य विधि से किया जा सकता है। इसे उत्प्रेरण अथवा उत्प्रेरणा कहते है। दूसरे **छात्रों के सहयोग से कार्य की रूपरेखा** बनाई जाती है। तीसरे शिक्षक कार्य का आदर्श प्रदर्शन करता है। बालक आदर्श क्रिया का अवलोकन करते है। इसके उपरान्त शिक्षक कक्षा के चुने हुए बालको से समुचित तरीके से **सामग्री वितरण** करवा देता है। सामग्री वितरण हो जाने के पश्चात बालको द्वारा **कार्य की कार्यान्विति** होती है। इसके उपरान्त किये गये कार्य का **मूल्यांकन और निष्कर्ष** निकाला जाता है। क्रिया का निष्कर्ष प्रश्नो द्वारा निकाला जाता है और उसी के आधार पर समवायी ज्ञान के प्रश्न बनते है। क्रिया और ज्ञान का समन्वय किया जाता है।

समवायी ज्ञान—यहाँ पर हरबर्ट के पाँच पदों का आवश्यकतानुसार पालन किया जाता है।

विषयों की प्रस्तावना—क्रिया का जो निष्कर्ष निकलता है उसी के आधार पर प्रश्न बनते है। इसके पश्चात् प्रस्तुतीकरण, सामान्यीकरण एवं प्रयोग आदि पाठ में स्थान पाते है सामान्यीकरण के प्रश्न श्यायपट्ट कार्य बनाये जाते है। इसी के कुछ नमूने समवायी पाठसूत्र नीचे दिये जा रहे है। छात्राध्यापक उनसे लाभ उठावें।

समवायी पाठ सकेत का प्रारूप

नाम शिक्षक··· ·· कक्षा·····

नाम शाला ··· ·· दिनांक·····

क्रियाशीलन·· ··· समय·····

समवायी ज्ञान·····

मुख्य उद्देश्य—

(अ) कार्य सम्बन्धी (ब) ज्ञान सम्बन्धी

सामान्य उद्देश्य—

(अ) कार्य सम्बन्धी (ब) ज्ञान सम्बन्धी

योजना—

समवाय केन्द्र—

कार्य की इकाई—

सहायक सामग्री—

(अ) कार्य सम्बन्धी (ब) ज्ञान सम्बन्धी

समय विभाजन—

(अ) कार्य सम्बन्धी (ब) ज्ञान सम्बन्धी

पूर्व ज्ञान—

(अ) कार्य सम्बन्धी (ब) ज्ञान सम्बन्धी

उत्प्रेरणा—

छात्रों के सहयोग से कार्य की रूपरेखा—

(अ) शिक्षण द्वारा कार्य (ब) कक्षा द्वारा कार्य

कार्य का मूल्यांकन एवं निष्कर्ष—

समवायी ज्ञान—

प्रस्तुतीकरण

वस्तु विधि

सामान्यीकरण

प्रयोग

समवाय पाठ सूत्र

क्रमांक (१)

कक्षा—५ दिनांक.....

क्रियाशीलन—दतौन कराना। समय ३५ मिनट

समवायी ज्ञान—सामान्य ज्ञान।

मुख्य उद्देश्य—

(अ) **कार्य सम्बन्धी**—बबूल की दतौन कराना।

(ब) **ज्ञान सम्बन्धी**—दाँतों की सफाई के सम्बन्ध में जानकारी देना।

सामान्य उद्देश्य—

(अ) **क्रिया सम्बन्धी**–१—कार्य के प्रति रुचि पैदा करना।

२—जीवन के लिए उपयोगी कार्य करने का अभ्यास करना।

३—नियम पूर्वक कार्य करने की आदत डालना।

(ब) **ज्ञान सम्बन्धी**--१—प्रकृति के उपकरणों से आनन्द एवं सुख प्राप्त करना सिखाना।

२—जीवन को रोग मुक्त कर स्वस्थ बनाने का अभ्यास कराना।

३—मितव्ययता का अभ्यास कराना।

योजना—

१—**समवाय केन्द्र**—समाज (स्वास्थ्य रक्षा)

२—**कार्य की इकाई**—बबूल की दतौन कराना।

सहायक सामग्री—

१—**कार्य सम्बन्धी**—विभिन्न प्रकार की दतौन, पानी, तौलिया, काँच (शीशा)

२—**ज्ञान सम्बन्धी**—श्याम पट्ट, चाक, झाडन।

समय विभाजन—

१—**कार्य सम्बन्धी**—दतौन करना समय लगभग २० मिनट

२—**ज्ञान सम्बन्धी**—दाँत सफाई के सम्बन्ध में जानकारी देना।

समय लगभग १५ मिनट

पूर्व ज्ञान—

१—**कार्य सम्बन्धी**—बालक साधारणतः दाँत सफाई करना जानते है।

२—**ज्ञान सम्बन्धी**—दाँत सफाई के मामूली लाभो से परिचित है।

उत्प्रेरणा—

हमने देखा कि एक दिन बाजार मे गाँव का आदमी एक दूकानदार के पास आया। उसने दूकानदार मे एक किताब माँगी। दूकानदार अन्य ग्राहको से बात-चीत कर रहा था। किसान ने दूकानदार के और नजदीक जाकर कहा—"भई! तुमने सुना नही। मैं किताब माँग रहा हूँ।" दूकानदार बोला—"भले आदमी ऊपर ही चढे चले आते हो। तुम्हारे मुँह से तो बदबू आ रही है।"

इस बात को सुनकर किसान ने बिगड कर कहा—"बदबू तुम्हारे मुँह से आती होगी, मेरे मुँह से क्यों आने लगी।" तब दूकानदार ने कहा "अरे भई तुम तो बुरा मान गये लो, काँच में देखो तो सही तुम्हारे दाँत कितने पीले है।" वह आदमी काँच में अपने पीले दाँत देखकर बडा शर्मिन्दा हुआ। उसने सोचा वास्तव में मेरे मुँह से बदबू आती होगी?

बालको बताओ मुँह से बदबू कब आती है?

देखें तो सही, तुम्हारे दाँत कैसे हैं?

तुममे से बहुतों के दाँत अधिक गंदे हैं; इसलिए अपन दातुन करेंगे।

छात्रों के सहयोग से कार्य की रूपरेखा—छात्रों मे दतौन करने की उत्सुकता जाग्रत करके, उनके सहयोग से दतौन बनाई जावेगी। फिर बालको को दतौन करने के लिये कक्षा से बाहर ले जाया जावेगा।

शिक्षक द्वारा कार्य—पहिले शिक्षक दतौन करने की आदर्श क्रिया करेगा। साथ ही दतौन की कूची वगैरह बनाने के सम्बन्ध मे जानकारी देगा।

कक्षा द्वारा कार्य—कक्षा नायक द्वारा सब बालकों को दतौन वितरण कराई जावेगी फिर उनसे दतौन करने को कहा जावेगा। शिक्षक बीच बीच में क्रिया का निरीक्षण करेगा। गलत तरीके से क्रिया करने वाले बालक के कार्य मे सुधार किया जावेगा।

कार्य का मूल्यांकन एव निष्कर्ष—

१—बालको ! दाँतो की सफाई किस चीज से की गई ?

२—दतौन कैसी होनी चाहिए ?

३—किस वृक्ष की दतौन उत्तम होती है ?

४—दतौन किस समय करना चाहिये ?

समवायी ज्ञान

प्रस्तुतीकरण -

वस्तु	विधि
१—दाँत साफ करने का समय—प्रातः जागने के बाद हाथ मुँह धोते समय दाँतों की सफाई करना चाहिये। क्योकि रात के समय दाँतो व जीभ पर मैला जमा हो जाता है। मसूडों मे अन्न के रेशे जमा रहकर सडने न पावें, इसलिये दाँत साफ करने के लिये नीम बबूल, अरहर, मौलश्री आदि ऐसे पेड़ की दतौन करना चाहिये, जिसकी कूँची अच्छी बन सके। बारीक रेशेदार, कूँची बनाकर धीरे धीरे दाँतों पर रगड़ना चाहिए। जिससे दाँतों की चमक भी न जा सके और मसूड़ों के लिए भी कोई नुकसान न पहुँचे	दाँत सफाई कब करना चाहिये ?
दाँत सफाई के बाद दतौन को बीच में से चीर कर	दतौन से दाँत साफ करने से क्या लाभ

जीभ साफ करना चाहिये। जहाँ दतौन न मिल सके वहाँ बारीक नमक और सरसों का तेल दोनों का मिलाकर दाँतों पर मलने से दाँत चमकीले और मजबूत बनते हैं।

होता है ?

२—**दाँत सफाई न करने से हानियाँ**—जो लोग दाँतों की सफाई नहीं करते उनके दाँतों पर मैल जमा हो जाता है। मसूडों में अन्न के रेशे जमा होकर सड़ने लगते हैं। मुँह से बदबू आने लगती है। मसूडों से खून और मवाद निकलने लगता है। इसी को पायरिया कहते हैं। दाँतो का मवाद भोजन के साथ पेट मे चला जाता है, जिससे पाचन शक्ति खराब हो जाती है। पाचन शक्ति खराब होने से अच्छा खून नही बनता, आदमी कमजोर हो जाता है। मैले से दाँतों में कीड़ा लग जाता है जिससे दाँत खोखले होकर जल्दी गिर जाते है।

(२) मैले दाँत रखने से क्या नुकसान होता है ?

३—**साफ दाँत रखने से लाभ**—जिनके दाँत साफ रहते हैं, उनके मुँह से बदबू नही आती है। उन्हें दाँतों की कोई बीमारी नही हो सकती है। स्वास्थ्य अच्छा रहता है। स्वच्छ दाँत मजबूती तथा सुन्दरता बढ़ाने में सहायक होते है। कहावत मशहूर है "जिनके दाँत अधिक साफ रहेंगे, उनकी तन्दुरुस्ती भी उतनी ही अच्छी रहेगी।" इसीलिये स्वच्छ दाँत निरोगिता और सुन्दरता दोनों के लिये जरूरी है।

(३) इन बातों से बचने के लिये क्या करना चाहिये ?

सामान्यीकरण—१—दतौन किस समय करना चाहिये ?

२—साफ दाँत रखने के लाभ बताओ।

प्रयोग—जहाँ दतौन न मिले वहाँ किस चीज का प्रयोग करना चाहिये ?

नोट—उपर्युक्त प्रातःकाल ही बालकों को पढ़ावें, अपरान्ह नहीं।

पाठ सूत्र

क्रमांक (२)

कक्षा २ **समय** ४० मिनट

क्रियाशीलन—कागज की झालर बनाना

समवायी ज्ञान—सामान्य ज्ञान (कागज के प्रकार और उपयोग)।

मुख्य उद्देश्य—

कार्य सम्बन्धी—रंगीन कागजो की झालर बनाना।

ज्ञान सम्बन्धी—कागजो के प्रकार और उपयोग बताना।

सामान्य उद्देश्य—

कार्य सम्बन्धी—(१) बालको मे उद्योग के प्रति रुचि उत्पन्न करना।
(२) उनकी रचनात्मक शक्ति का विकास करना।

ज्ञान सम्बन्धी—(१) विभिन्न प्रकार के कागजो का नाम देना।
(२) कागजों की उपयोगिता से परिचय कराना।

योजना—

समवाय केन्द्र—उद्योग (कागज का काम)

कार्य की इकाई—झालर बनाना।

सहायक सामग्री—

कार्य सम्बन्धी—रंगीन कागज, लेई, चाकू, अखबार के टुकडे।

ज्ञान सम्बन्धी—चाकू, माडल।

समय विभाजन—

	विषय	समय
कार्य सम्बन्धी—	झालर बनाना	२५ मिनिट
ज्ञान सम्बन्धी—	सामान्य विज्ञान	१५ मिनिट

पूर्व ज्ञान—

कार्य सम्बन्धी—बालक रंगीन कागज से झन्डी आदि बना चुके हैं।

ज्ञान सम्बन्धी—बालक कागज के कुछ प्रकारो से परिचित है।

उत्प्रेरणा—

(१) बालको पिछले दिनो हमने स्कूल में कौनसा उत्सव मनाया था?

(२) २६ जनवरी को हमने अपनी शाला को किस भाँति सजाया था ?

(३) झन्डी हमने कौन से कागज से बनाई थी।

(४) पतङ्गी कागज से हम सजावट की और कौनसी वस्तु तैयार कर सकते है ?

(५) (झालर दिखाकर) इसको हम कैसे तैयार कर सकते हैं ?

(६) इसको तैयार करने में कौनसी सामग्री लगेगी ?

छात्रों के सहयोग से रूपरेखा तैयार करना—शिक्षक छात्रो के सहयोग से आवश्यक सामग्री के नाम निकलवायेगा फिर आदर्श क्रिया कर छात्रो का ध्यान लाकर झालर बनाने की ओर आकर्षित करेगा। तत्पश्चात छात्रो से झालर बनवायेगा। झालर बनाने मे बालकों को पूर्ण सहयोग एवं मार्ग प्रदर्शन किया जावेगा।

सामग्री वितरण—शिक्षक चार बालको से वितरण करावेगा।

प्रथम बालक एक रंग के कागज की दो-दो पट्टियाँ प्रत्येक बालक को देगा।

द्वितीय बालक दूसरे रंग के कागज की दो-दो पट्टियाँ प्रत्येक बालक को देगा।

तीसरा बालक तीसरे रंग की दो-दो पट्टियाँ प्रत्येक बालक को देगा।

चौथा बालक लेई प्रत्येक बालक को देगा।

कक्षा व्यवस्था—शिक्षक छात्रों को सुखासन से एक दूसरे से बराबर की दूरी पर बैठायेगा।

शिक्षक द्वारा प्रदर्शन—शिक्षक छात्रो को व्यवस्थित एवं अव्यवस्थित कागज की मोड़ मे अन्तर, कागज का मोड़ना, कागज बराबर चौड़ाई व लम्बाई का लेना आदि बात, बतावेगा। इसके बाद शिक्षक आदर्श क्रिया करेगा।

कक्षा द्वारा कर्यान्विति—आदर्श क्रिया के बाद बालक शान्ति पूर्वक कार्य करना आरम्भ करेंगे।

कार्य का मूल्यांकन एवं निष्कर्ष—

(१) हमने सजावट करने की कौनसी वस्तु तैयार की ?

(२) झालर बनाने मे किन किन रंगों के कागज काम मे आये ?
(३) झालर बनाने मे किन वस्तुओं की आवश्यकता पड़ी ?
(४) झालर बनाने वाले कागज का क्या नाम है ?

प्रस्तुतीकरण (समवायी ज्ञान)

वस्तु	विधि
	झालर बनाने वाले कागज का क्या नाम है ?
(१) यह कागज अलमारियो मे बिछाने, दीवारो पर कपडे टाँगने के थान पर लगाने व लिफाफे बनाने के काम आता है। इसको भी झालर बनाई जा सकती है।	(१) (बाँसी कागज दिखाकर) यह किस काम आता है ?
(२) लिखने का सफेद कागज।	(२) (लिखने का सफेद कागज दिखाकर) इस कागज का क्या नाम है ?
(३) इस पर लिखा जाता है।	(३) इसका क्या उपयोग है ?
(४) यह लाइनदार सफेद कागज है। इसकी कापियाँ बनाई जाती है वाह और रजिस्टर भी बनते है।	(४) (रूलदार कागज दिखाकर) किस काम आता है ?
(५) क्रेप कागज।	(५) (क्रेप कागज दिखाकर) इस कागज का क्या नाम है ?
(६) इसमें सिकुड़न अधिक होती है। यह हार, फूल एवं गुलदस्ते बनाने के काम में आता है।	(६) यह किस काम आता है ?
(७) घोटा कागज।	(७) (घोटा कागज दिखाकर) इस कागज का क्या नाम है ?

(८) यह कागज चमकना होता है। यह जिल्दसाजी तथा गत्ते के अन्य कामों मे सुन्दरता लाने के लिए चिपकाया ज्ञाता है।

(८) यह किस काम आता है ?

(९) पतंगी कागज।

(९) (पतंगी कागज दिखाकर) इस कागज का क्या नाम है ?

(१०) यह कागज सबसे पतला होता है। यह झण्डियाँ, पतंग व झालर बनाने के काम आता है।

(१०) इसका क्या उपयोग है ?

(११) स्याही सोख कागज

(११) (स्याही सोख कागज दिखा कर) इस कागज का क्या नाम है ?

(१२) यह कागज कुछ मोटा होता हैं तथा स्याही सुखाने के आता है।

(१२) यह किस काम आता है ?

(१३) कार्बन कागज।

(१३) (कार्बन कागज दिखाकर) इस कागज का क्या नाम है ?

(१४) टाइप करते समय अथवा लिखते समय जब एक ही प्रकार की कई नकलें करना होती है; तब लगा लेते हैं।

(१४) यह किस काम आता है ?

(१५) ड्राइंग कागज।

(१५) (ड्राइंग कागज दिखाकर) इस कागज का क्या नाम है ?

(१६) इस कागज पर चित्र आदि बनाये जाते है।

(१६) इसका क्या उपयोग है ?

सामन्यीकरण—(१) विभिन्न प्रकार के कागजो के नाम वताओ ?
(२) पतंगी कागज किस काम आता है ?

पाठ सूत्र

क्रमांक (३)

कक्षा ५ समय १ घण्टा

क्रियाशीलन—क्यारी नापकर बनाना

समवायी ज्ञान—गणित

योजना—समवाय केन्द्र—प्रकृति ।

मुख्य उद्देश्य—(अ) कार्य सम्बन्धी—क्यारी नापकर बनाना ।

(ब) ज्ञान सम्बन्धी—क्यारी बनाने के आधार पर गणित मे क्षेत्रफल का ज्ञान देना ।

सामान्य उद्देश्य—(अ) कार्य सम्बन्धी—पृथक दिये गये हैं ।

(ब) ज्ञान सम्बन्धी—पृथक दिये गये है ।

सहायक सामग्री—(अ) कार्य सम्बन्धी —फीता, डोरा, खुरपी ।

(ब) ज्ञान सम्बन्धी —श्यामपट्ट, चाक, झाड़न आदि ।

समय विभाजन—(अ) कार्य सम्बन्धी—क्यारी बनाना लगभग २५ मिनट ।

(ब) ज्ञान सम्बन्धी—क्षेत्रफल का ज्ञान देना-लगभग ३५ मिनट ।

पूर्व ज्ञान—(अ) कार्य सम्बन्धी—बालको ने क्यारी देखी है । खुरपी चलाना जानते हैं ।

उत्प्रेरणा—१ बालको तुमने कौन कौन से साग देखे है ?

२. बैगन की फसल किस प्रकार तैयार करेंगे ?

३. हमे क्यारी बनाते समय किन किन चीजो की जरूरत पड़ती है ?

४. क्यारी कितनी लम्बी और चौड़ी बनती है ?

५. लम्बाई चौड़ाई किस चीज से नापेंगे ?

तो आज हम क्यारी बनायेंगे ।

छात्रों के सहयोग से कार्य की रूपरेखा—बालकों को मानसिक एवं शारीरिक रूप से तैयारी कराने के पश्चात एक लाइन से कृषिक्षेत्र मे ले जाया जावेगा ।

शिक्षक द्वारा कार्य—शिक्षक बालको को क्यारी नापने की विधि बतायेगा, खुरपी ठीक से चलाना सिखायेगा । बालको मे सामग्री वितरण करायेगा ।

कक्षा द्वारा कार्य—खुरपी वितरण के पश्चात कृषिक्षेत्र मे बालक क्यारी

बनाने को जमीन नापेंगे और डोरी बाँधकर क्यारी बनायेंगे। शिक्षक क्यारी बनाते समय बालकों की कठिनाइयो को दूर करेगा व क्यारी बनाने का ज्ञान देगा। योजनानुसार समयावधि के अन्तर्गत कार्य समाप्त कर दिया जावेगा। सामग्री यथा स्थान रखवा दी जावेगी। इसके पश्चात एक एक लाइन से बालक कक्षा मे आकर बैठ जावेंगे। शिक्षक कार्य पर चर्चा करते हुये गणित मे क्षेत्रफल का ज्ञान देगा।

कार्य का मूल्यांकन एवं निष्कर्ष—

(१) क्यारी की लम्बाई ८ फुट और चौड़ाई ६ फुट है।	(१) बालको ! हमने जो क्यारी बनाई है, उसकी लम्बाई चौड़ाई कितनी है ?
(२) क्यारी का क्षेत्रफल ४८ वर्गफुट हुआ।	(२) क्यारी का क्षेत्रफल क्या होगा ?
(३) ८ और ६ का गुणा करके क्षेत्रफल निकाला है।	(३) क्षेत्रफल कैसे निकाला है ?
(४) लम्बाई और चौड़ाई है।	(४) ८ और ६ क्या है ?
(५) ?	(५) लम्बाई और चौड़ाई का गुणा क्यो किया ?

तो आज हम यही सीखेंगे कि लम्बाई और चौड़ाई का गुणा क्यो करते है ?

समवायी ज्ञान—	**प्रस्तुतीकरण**
वस्तु	**विधि**
(१) क्यारी की लम्बाई ८ फुट चौड़ाई ६ फुट है।	(१) बालको हमारी क्यारी की लम्बाई चौड़ाई कितनी है ?
(२) बालक १ इन्च को १ फुट मानकर बनायेगा।	(२) अशोक अपनी क्यारी श्याम-पट्ट पर बनाओ।
(३) उत्तर न मिलने पर	(३) जो हमारे सामने क्षेत्र है उसके बराबर २ एक वर्ग फुट के हिसाब से हिस्से बनाओ।
(४) बालक क्षेत्र को नाप कर	(४) इस क्षेत्र के बराबर बराबर

दो हिस्सों मे बाँटेंगे ।

(५) बालक नापकर चार हिस्सो मे बाँटेंगे ।

(६) क्यारी के ४ हिस्से हो गये ।

(७) बालक हिस्से नापकर बाँटेंगे

(८) क्यारी के ८ हिस्से हो गये ।

(९) क्यारी की लम्बाई ८ फुट है ।

(१०) एक हिस्सा १ फुट लंबा होगा ।

(११) बालक हिस्सा नापेंगे ।

(१२) बालक बनाने की कोशिश करेंगे ।

(१३) बालक १ फुट हिस्सा नाप कर १ वर्ग फुट बनायेगे ।

(१४) बालक क्यारी को नाप कर हिस्सो मे बाँटेंगे ।

(१५) बालको का उत्तर न आने पर ।

(१६) एक पट्टी मे ८ हिस्से है ।

(१७) ऐसी ६ पट्टी है ।

(१८) कुल ४८ हिस्से हुए ।

(१९) लंबाई-चौड़ाई का गुणा करके ।

हिस्से बनाओ ?

(५) दोनों हिस्सों को फिर बराबर बराबर हिस्सों में बाँटो ?

(६) क्यारी के कितने हिस्से हो गये ?

(७) प्रत्येक भाग को नाप पर बराबर बराबर हिस्सो में बाँटो ?

(८) क्यारी के कितने हिस्से हो गये ?

(९) क्यारी की लंबाई कितनी है ?

(१०) एक हिस्सा कितना लम्बा होगा ?

(११) इसी प्रकार चौड़ाई का १ फुट हिस्सा नापो ।

(१२) अब किस प्रकार इस क्यारी के १-१ वर्ग फुट के हिस्से बनायेंगे ?

(१३) ऊपर १ फुट लम्बा है और नीचे १ फुट चौड़ा है इसको एक वर्ग फुट मे बनाओ ?

(१४) अब तुम इसे ४८ वर्ग फुट मे बाँटो ?

(१५) बिना गिने तुम किस प्रकार मालूम करोग कि कितने हिस्से हुए ?

(१६) एक पट्टी मे कितने हिस्से है ?

(१७) ऐसी कितनी पट्टी है ?

(१८) कुल कितने हिस्से हुए ?

(१९) किस प्रकार आये ?

(२०) ७ फुट लंबाई × ४ फुट चौड़ाई = २८ वर्ग फुट हिस्से हुए।

(२०) एक क्यारी ७ फुट लवी ४ फुट चौड़ी है तो बताओ १-१ वर्ग फुट के कितने हिस्से होगें ?

(२१) लम्बाई × चौड़ाई = ८४ वर्ग १२ × ७ हिस्से

(२१) एक खेत १२ फुट लम्वा है और ७ फुट चौड़ा है, तो बताओ उस खेत मे कितने वर्ग फुट हिस्से होंगे ?

नियमीकरण—बालको ! आयताकार का क्षेत्रफल निकालने के लिए हम उस जगह को बराबर बराबर हिस्सो मे बाँटते है। वह हिस्से लम्वाई चौड़ाई का गुणा करने से वन जाते है। जो गुणनफल आता है, वही क्षेत्रफल कहलाता है।

प्रयोग—एक कमरा १७ फुट ८ इंच लम्वा तथा ८ फुट ५ इंच चौड़ा है तो उस कमरे का क्षेत्रफल क्या होगा ?

पाठ सूत्र

क्रमाँक (४)

मुख्य उद्देश्य—

(अ) कार्य सम्बन्धी—पुट्ठे के पंखे बनाना।

(ब) ज्ञान सम्बन्धी—वास्तविक एवं कृत्रिम हवा का ज्ञान देना।

सामान्य उद्देश—

(अ) कार्य सम्बन्धी—(१) बालको को स्वावलम्बी बनाना।

(२) बालको की कार्य के प्रति रुचि उत्पन्न करना।

(३) उन्हे उपयोगी वस्तु तैयार करने का अभ्यास कराना।

(ब) ज्ञान सम्बन्धी—(१) मानसिक शक्ति का विकास करना।

(२) हवा का ज्ञान कराना।

(३) विभिन्न प्रकार के पंखो का ज्ञान देना।

योजना—

समवाय केन्द्र—उद्योग।

कार्य की इकाई—पुट्ठे के पंखे बनाना।

सहायक सामग्री—

(अ) कार्य सम्बन्धी—पुट्ठे, लेई, कागज, सुई, धागा, बाँस को डंडो।

(ब) **ज्ञान सम्बन्धी**—शैक्षणिक वस्तुएँ ।

समय विभाजन—

	नाम	समय
कार्य हेतु	पुट्ठे के पंखे बनाना	२५ मिनिट
	विषय	समय
ज्ञानार्जन हेतु	सामान्य विज्ञान	१५ मिनिट

पूर्वज्ञान—

(अ) **कार्य सम्बन्धी**—बालक पंखे से परिचित हैं । किन्तु पंखे बनाना नहीं जानते ।

(ब) ज्ञान सम्बन्धी—बालक हवा से परिचित है ।

उत्प्रेरणा—

(१) बालको हम गर्मी लगने पर क्या करते है ?

(२) हवा किस चीज से करते है ?

(३) पंखे कितने प्रकार के होते हैं ?

(४) सस्ता पंखा किस चीज से बनता है ?

(५) बना हुआ पंखा दिखाकर यह किस चीज का बना है ?

(६) इसके बनाने मे क्या क्या सामग्री लगेगी ?

छात्रों के सहयोग से रूपरेखा तैयार करना

कक्षा व्यवस्था—शिक्षक सर्वप्रथम बालको को दो पंक्तियो मे व्यवस्थित रूप से कार्य हेतु बैठा लेगा प्रत्येक बालक के पास क्रिया करने लायक स्थान छोडा जाएगा ।

शिक्षक द्वारा कार्य का प्रदर्शन—सर्वप्रथम शिक्षक पंखा बनावेगा तथा बालक प्रत्येक क्रिया का अवलोकन करेंगे ।

सामग्री वितरण—दो बालक सामग्री वितरण करेंगे ।

कक्षा द्वारा कार्य—आदर्श क्रिया प्रस्तुत की जाने के अनुसार बालक कार्य प्रारम्भ करेंगे ।

सुधार—बालक क्रिया करेंगे, उनके कार्य की भूलों का सुधार किया जावेगा तथा आवश्यकतानुसार पथ-प्रदर्शन किया जावेगा।

कार्य का मूल्यांकन एवं निष्कर्ष—

(१) बालकों अभी हमने कौनसा कार्य किया था ?

(२) पंखे बनाने के लिए किन-किन चीजों की जरूरत पड़ी ?

(३) यह पंखा हमारे किस काम आता है ?

प्रस्तावना—यह ट्यूब क्यो फूल गया है ?

समवाय ज्ञान

वस्तु	विधि
हमारे शरीर मे साँस के द्वारा हवा अन्दर आती और खराब हवा बाहर निकलती है। अगर हमें हवा न मिले तो जीना कठिन हो जाता है।	(१) (प्रयोग द्वारा-ट्यूब में हवा भर कर यह ट्यूब क्यों फूल गया?
यह बादल मानसून हवाओ से बनते है, जिनसे पानी बरसता है। ये हवायें हमेशा समुद्र से उठती है, ठन्डी होने पर दूसरे स्थान पर बरस जाती है।	(२) आसमान मे काले काले बादल किस मौसम मे छाये रहते है ?
हवा धीमी होने पर भी प्रतिघन्टा ४ या ५ मील की रफ्तार से चलती है; जिस हवा की चाल प्रति घन्टा ८० से १५० मील तक हो जाती है, उसे तूफान (आँधी) कहते है। इस प्रकार की हवा से पेड़ पौधे टूट कर गिर जाते है, कहीं-कहीं ४ या ५ मंजिल के मकान होते है, वे हवा के जोर से गिर जाते है।	(३) तूफान किसे कहते है ?
गरमी लगने पर पत्थर गरम होता है उसी प्रकार हवा गरम हो जाती है। तेज हवा जो गर्म होकर चलती है, उसे लू (लपट) कहते हैं। इस प्रकार की हवा से छोटे २ पेड पौधे सूख जाते हैं। यही गर्म हवा मनुष्य को लू के रूप लग जाती है, तो उसे बुखार आने लगता है।	(४) गर्मी के दिनो मे पत्थर छूने से कैसा मालूम पडता है ?

इस लू से बचने के लिए अपने पास प्याज रखते है। बुखार आने पर प्याज का अर्क निकाल कर उसमें मिश्री मिलाकर पिलाना चाहिए या कच्चे आम को भून कर उसका शरबत बनाकर पिलाना चाहिए।

(५) बुखार आने पर क्या करते हैं ?

जो हवा पंखे द्वारा की जाती है। इस प्रकार की हवा को बनावटी हवा कहते हैं। यह हवा हाथ के बनाये हुए पंखे और बिजली के द्वारा चलाये हुए पंखों से की जाती है।

(६) बनावटी हवा किसे कहते हैं ?

सामान्यीकरण—

(१) हवा हमारे लिए क्यों जरूरी है ?

(२) हमे सबसे अधिक हवा कब अच्छी लगती है ?

(३) लू से बुखार आने पर क्या दवा करते हैं ?

प्रयोग—(१) हवा किन २ साधनों से प्राप्त हो सकती है ?

(२) लू से बचाव करने के लिए क्या करना चाहिए ?

पाठ सूत्र

क्रमांक (५)

दो विषयी पाठ

कक्षा ४ समय ४० मिनट

मुख्य उद्देश्य—

(अ) **कार्य सम्बन्धी** पत्तल बनाना।

(ब) **ज्ञान सम्बन्धी**—पत्तल बनाने वाले पेडो से लाभ बताना, जंगलों से लाभ बताना।

सामान्य उद्देश्य—

(अ) **कार्य सम्बन्धी**—पत्तल बनाने की क्रिया से परिचित कराना।

(ब) **ज्ञान सम्बन्धी**—प्राकृतिक वातावरण से परिचित कराना।

योजना—

समवाय केन्द्र—उद्योग।

कार्य की इकाई—पत्तल बनाना।

सहायक सामग्री—

(अ) **कार्य हेतु** - पत्ते, सीकें, केंची।

(ब) **ज्ञान हेतु**—चाक, डस्टर आदि।

समय विभाजन—

(अ) **कार्य सम्बन्धी**—पत्तल बनवाना। २० मिनट

(ब) **ज्ञान सम्बन्धी**—सामान्य विज्ञान और भूगोल। २० मिनट

पूर्वज्ञान—

(अ) **कार्य सम्बन्धी**—बालकों ने पत्तलें देखी हैं तथा उनका उपयोग जानते है।

(ब) **ज्ञान सम्बन्धी**—छात्र नीम बबूल आदि पेड़ो के लाभ से परिचित है।

कार्य—

उत्प्रेरणा—(१) बालको ! तुम भोजन किस बरतन मे करते हो ?

(२) विवाह आदि की पंगतों में भोजन किस पर परोसा जाता है?

(३) पत्तल हमे कहाँ से प्राप्त होती हैं ?

(४) मंगलवार के दिन बाजार बन्द रहे उसे दिन पत्तल की आवश्यकता पड़े तो हमे क्या करना चाहिये ?

आज हम पत्तल बनाना सीखेंगे।

छात्रों के सहयोग से कार्य की रूपरेखा—

कक्षा व्यवस्था—शिक्षक कक्षा व्यवस्था पर ध्यान देगा। बालको को क्रिया करने के हेतु अनुकूल स्थिति मे बैठा देगा तथा ऐसा करते समय इस बात का ध्यान रखेगा कि क्रिया करने हेतु प्रत्येक बालक के पास पर्याप्त स्थान हो ताकि उसे कार्य करने में आसानी हो।

शिक्षक द्वारा कार्य प्रदर्शन—शिक्षक प्रश्नोत्तर विधि से सामग्री का नाम निकलवायेगा। शिक्षक बालको के समक्ष सीक से पत्तों को जोडकर पत्तल तैयार करेगा प्रत्येक बालक को क्रिया का ठीक प्रकार से अवलोकन कराया जावेगा। पत्तल की टेढ़ी मेढ़ी किनारी को कैंची से काट कर गोलाकार बनाया जावेगा।

सामग्री वितरण—शिक्षक द्वारा क्रिया के प्रदर्शन के उपरान्त चुने हुए

बालकों से पत्ते और सीकें कक्षा में वितरित करवा दी जावेगी । इनके जोड़ लेने के बाद कैंची वितरित करवा दी जावेगी ।

कक्षा द्वारा कार्य—बालक शिक्षक द्वारा बनाई गई पत्तल के अनुरूप पत्तल बनायेंगे । शिक्षक बालकों को पत्ते जोडने एवं कैंची द्वारा पत्तल गोलाकार बनाने के लिए आवश्यक मार्ग दर्शन एवं सुधार प्रदान करेगा ।

सामग्री एकत्रित करना—पत्तलें बन जाने के पश्चात चुने बालकों द्वारा पत्तलें कैंची आदि सामग्री एकत्र कर एक स्थान पर रखवा दी जावेगी । कक्षा में तनिक भी कचरा न रहने दिया जावेगा ।

कार्य का मूल्यांकन एवं निष्कर्ष—१. पत्तल किन किन चीजों से बनाई जाती हैं ?

२. पत्तल किन किन पेडों के पत्तों से बनाई जाती है ?

३. छौला और बड़ (बट) के अलावा और कौन कौन से पेड़ों के पत्तों से पत्तलें बनाई जाती है ?

४. छौला बड़ और महुआ के पेडो से हमें क्या लाभ है ?

प्रस्तुतीकरण—(समवायी ज्ञान)

वस्तु	विधि
(सामान्य ज्ञान)— **छौला**:—छौले के पत्तो से पत्तलें बनाई जाती है । इसके फूलों से रंग बनता है । इसकी लकड़ी हवन के काम आती हैतथा इसकी जडों को कूटकर रस्सी बनाते है ।	(१) छौला हमारे लिए क्यों उपयोगी है ?
(२) **बड़**—इसके पत्तों से पत्तलें बनाई जाती हैं । फल पकने पर खाने के काम आते हैं । हिन्दू धर्म के मानने वाले इसकी पूजा करते है । इसका दूध और जडें दवा के काम आती हैं ।	(२) बड़ का पेड़ हमारे किस काम आता है ?
(३) **महुआ**:—इसके पत्तों की पत्तलें बनाई जाती है । फूलों से शराब बनाती है । इसमे दो प्रकार के फल आते हैं, जो पकने पर खाने के	(३) महुआ के पेड़ से हमें क्या लाभ है ?

काम आते हैं। इसके फलों की गुठली से तेल निकलता है, जो साबुन बनाने के काम आता है। इसकी खली पशुओं को खिलाते हैं तथा लकड़ी से कुर्सी, मेंज, पलंग और कृषि से काम आने वाले औजार, हल व बखर बनाये जाते हैं।

भूगोल—(४) जंगलों से लाभः—यह पेड हमें जंगलों से प्राप्त होते हैं।

(४) यह पेड हमें कहाँ से मिलते हैं?

(५) इसके अलावा जंगलों से हमें बाँस, सागौन, बबूल व साल आदि के उपयोगी पेड़ मिलते है। बहुत से जंगलो में आम, जामुन, इमली आदि के फलदार वृक्ष भी मिलते है।

(५) जंगलों में हमें और कौन से पेड मिलते हैं?

(६) हमे जंगलो से फल, कत्था, गोंद, लाख और जडीबूटियाँ भी मिलती है। जानवरो के लिए चारा मिलता है तथा इमारती लकडी भी प्राप्त होती है।

(६) जंगलों से हमे और क्या मिलता है?

सामान्यीकरण—(१) जंगल हमें कौन कौन सी वस्तुएँ देते है?

(२) जंगल न हो तो हमे क्या परेशानी उठानी पडेगी?

प्रयोग—जंगलो से क्या लाभ हैं?

पाठ सूत्र

क्रमाङ्क (६)

दो कि यी पाठ

कक्षा ५ समय १ घण्टा

क्रिया शीलन—अगरबत्ती बनाना।

मुख्य उद्देश्य—

कार्य सम्बन्धीः—अगरबत्ती बनाना।

ज्ञान सम्बन्धीः—सामान्य विज्ञान के आधार पर अगरबत्ती जलाने से लाभ तथा उपयोगिता बताना।

सामान्य उद्देश्य—

कार्य सम्बन्धीः—(१) हाथ से कार्य करने में रुचि उत्पन्न करना।

(२) स्वावलम्बी बनाना।

ज्ञान सम्बन्धी:—[सामान्य विज्ञान] (१) विज्ञान के ज्ञान से बालकों के जीवन को व्यावहारिक बना कर उनके व्यक्तित्व का विकास करना।

(२) बालकों का शारीरिक विकास कर उन्हें रोगों से बचना सिखाना।

(३) मानसिक शक्तियों का विकास करना।

योजना—

समवाय केन्द्र:—उद्योग

कार्य की इकाई:—अगरबत्ती बनाना।

सहायक सामग्री—

कार्य सम्बन्धी:—(१) अगर, (२) तगर, (३) नागर मोथा (४) लोभान, [प्रत्येक ५-५ तोला], (५) रूमी मस्तंगी तीन तोला, (६) चन्दन चूरा, (७) शहद प्रत्येक २-२ तोला, (८) कोयला एक तोला, (९) बाँस की काड़ियाँ, (१०) कागज, (११) खरल [केवल बालकों को दिखाने के लिये] में सभी वस्तुएँ कुटी हुई होगी, बालकों को वस्तुओं का वास्तविक रूप दिखाने के लिये सभी सामग्री का थोड़ा २ नमूना भी होगा।

ज्ञान सम्बन्धी:—कागजों पर लिखी हुई कविताएँ, जो अगरबत्ती बनाने से सम्बन्धित होगी।

समय विभाजन—

कार्य सम्बन्धी [**क्रिया का नाम**] अगरबत्ती बनाना	२० मिनट
ज्ञान सम्बन्धी [**विषय का नाम**] सामान्य विज्ञान	४० मिनट

पूर्व ज्ञान—

क्रिया सम्बन्धी:—बालक अगरबत्ती से परिचित है लेकिन बनाना नहीं जानते।

ज्ञान सम्बन्धी:—बालक अगरबत्ती की सुगन्ध से परिचित हैं। वे जानते है कि इसका उपयोग पर्वोत्सवों पर साधारणतया किया जाता है।

उत्प्रेरणा—(शिक्षक बालकों को अगरबत्ती दिखाते हुए निम्नलिखित प्रश्न करेगा)।

(१) ये क्या है ?

(२) ये किस काम आती हैं ?

(३) इसको पूजा के काम में क्यों लाया जाता है ?

(४) ये किस प्रकार बनाई जाती है ?

(५) इसको बनाने में कौन-कौन सी वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है ?

छात्रों के सहयोग से कार्य की रूपरेखा—

शिक्षक द्वारा कार्य प्रदर्शन—अध्यापक निम्नलिखित वस्तुएँ बालकों को दिखायेगा और छोटे बालकों को सम्बन्धित चीजों से परिचित करायेगा तथा श्यामपट्ट पर वस्तुओं के नाम अंकित करता जायेगा।

वस्तुओं के नामः—(१) अगर (२) तगर (३) नागर मौंथा (४) लोभान (५) रूमी मस्तंगी (६) चन्दन चूरा (७) शहद (८) कोयला (९) बाँस की काड़ियाँ (१०) कागज के टुकड़े।

अगरबत्ती बनाने के काम आने वाली वस्तुओं के नाम शीघ्र और सरलता पूर्वक याद कराने के लिए अध्यापक कागज के टुकडों पर लिखी कविता बालकों को बाँट देगा।

कविताः—अगर, तगर औ नागर मौथा, रूमी मस्तंगी लोभान।
चन्दन चूरा शहद कोयला, रहे बाँस काड़ी का काम॥
इसमें कागज और लगेगा, इतना सब रख लेना ध्यान।
इन्हें मिलाकर करो इकट्ठा, सब पूरन हो जाये काम॥

उपर्युक्त वस्तुओं के मिलाने का परिमाण—

अगर, तगर, नागरमौथा प्रत्येक को पाँच पाँच तोला लेना चाहिये, रूमी मस्तंगी ३ तोला, चन्दन चूरा और शहद प्रत्येक दो दो तोला और कोयला एक तोला लेकर मिलाया जायगा। वस्तुओं के परिमाण को बता चुकने पर इस नीचे परिमाण को याद रखने के लिये लिखी कविता बालकों को देना।

कविताः—अगर तगर औ नागरमौथा पाँच-पाँच तोला ले लो।
लोभान शहद औ चन्दन चूरा दो दो तोला रख लो॥
कोयला तोला एक रहेगा, मस्तंगी तोला हो तीन।
बाँस काड़ियाँ शहद में लेके, बजने दो बत्ती की बीन॥

नमूना—अगरवत्ती बनाने का नमूना बताना—

(१) उपर्युक्त परिमाण मे सब चीजों को मिलाकर लोहे के खरल में कूटी

ती है (२) कूटे हुये बारीक चूरे को कपड़े में छाना जाता है (शिक्षक सभी मग्री को कूटकर तथा छानकर ले जायेगा) (३) बाँस की बारीक काड़ियों पर द लगाना (४) शहद लगी काड़ियों को मसाले के ढेर पर गोल घुमाना (५) ाला काड़ी से चिपक जाने पर काड़ी को कागज पर रख कर धूप मे सुखाना।

बालक शिक्षक द्वारा किये जाने वाले कार्य को ध्यान पूर्वक देखेंगे, इसके द अगरबत्ती बनाने की विधि को ध्यान मे बनाये रखने तथा उपयोग में आने ती चीजो को किस प्रकार काम मे लिया जायगा, शिक्षक इस सम्पूर्ण विधि कविता रूप में लिखकर कागज के टुकड़ो को बालको मे बाँट देगा, तथा उस वता का उनसे पाठ करायेगा।

वता—अगरबत्तियाँ जभी बनाओ दस चीजो का रखलो ध्यान।

इन्हे तोल कर तुरन्त कूट लो सब पूरन हो जावे काम ।।
इसके बाद रखो कागज पर सब का बना बुरादा।
काड़ी मे फिर लगा शहद, चूरे का गोल घुमाना ।।
चूरा जब चिपके लकड़ी से, वत्ती बन जायेगो ।
कागज पर रख धूप दिखाना, तुरत सूख जावेगी ।।

सामग्री वितरण—अगरबत्ती बनाने की सम्पूर्ण सामग्री, आदर्श क्रिया करते ाय मिला दी जायगी क्योकि सभी वस्तुओ को अलग-अलग बाँटने से वस्तुओ का रमाण उचित रीति से नही मिलाया जा सकता। इसलिये सब कुटी हुई मग्री को एक वालक द्वारा तथा दो और बालको द्वारा, काड़ियाँ व कागज तरित कराये जायँगे। शहद बाँटने से सब जगह मक्खियाँ भिनभिनायगी ालिये शहद को केवल एक जगह रखा जायगा।

क्रिया हेतु कक्षा व्यवस्था—बालक अगरबत्ती बनाने का मसाला और बनी ई अगरबत्तियाँ विपरीत दशा मे रख सकते है, शिक्षक उनको उचित हाथ की ार सामग्री व बनी हुई अगरबत्तियाँ रखना बतायेगा, बालक शहद से हाथ गंदे ए सकते है इसलिये उन्हें ठीक ढङ्ग से शहद लगी काड़ी पकड़ना बतायेगा।

कक्षा द्वारा क्रियान्विति बालकों से क्रमशःबाँस की काड़ियों से शहद लग-ना फिर रखे हुए चूर्ण पर गोले मे घुमाना अगरबत्ती बनने पर सूखने के बाद गज पर रखवाना आदि।

सामग्री एकत्रीकरण—अगरबत्तियाँ बन जाने पर तीन बालकों द्वारा क्रमशः बनी हुई अगरबत्तियाँ, अगरबत्ती बनाने की बची हुई सामग्री तथा अगरबत्ती के रखे जाने वाले कागज इकट्ठे किये जाँयगे।

कार्य का मूल्यांकन तथा निष्कर्ष—

(१) अगरबत्ती बनाने मे कौन कौन सी चीजों की आवश्यकता होती है ?

(२) इन चीजो को किस परिमाण मे मिलाना चाहिये ?

(३) अगरबत्ती बनाने की विधि बताओ ?

(४) अगरबत्ती किस काम मे आती है ?

प्रस्तुतीकरण—

वस्तु	विधि
(१) चावल, रोली, फूल और अगरबत्तियाँ पूजा के काम मे लाया जाती है।	(१) पूजा के काम मे कौन कौन सामग्री काम मे लायी जाती है ?
(२) अगरबत्तिया पूजन मे और उत्सवो मे अधिक जलाई जाती है।	(२) अगरबत्तियाँ कौन कौन से स्थानों पर अधिक जलाई जाती है ?
(३) उत्सवो मे काफी लोग इकट्ठे होते है, इसलिए उनकी गन्दी वायु से उस स्थान की वायु दुर्गन्ध पूर्ण हो जाती है। इसलिए वहाँ की वायु को सुगन्ध युक्त बनाने के लिए अगरबत्तियाँ जलाते है। इसके अलावा अगरबत्ती के धुयें मे छोटे छोटे कीटाणु मच्छर आदि नष्ट करने की शक्ति होती है।	(३) उत्सवो मे अगरबत्तियाँ क्यो जलाई जाती है ?
(४) अगरबत्ती का धुआँ ऊपर को जाता है। किसी भी चीज को	(४) अगरबत्ती जलाकर, धुएँ गति दिखलाकर धुयें की गति

जलाने पर उसका धुआँ ऊपर को जाता है, कारण यह है कि धुआँ इतना हल्का होता है कि हवा के सहारे ऊपर को उठ जाता है।

(५) इतनी अगरबत्तियाँ बनाने मे आठ आने की सामग्री लगी है।

(६) ये अगरबत्तियाँ दस आने मे बेची जा सकती है? (संभावित)

(७) इनको बेचने से दो आने का लाभ हुआ।

(८) १००) रु० की सामग्री पर २५) रु० लाभ होगे।

पूछना) धुआँ किधर जाता है?

(५) इतनी अगरबत्तियाँ बनाने मे कितने पैसो की सामग्री लगी है?

(६) इनको बेचने से कितने पैसे प्राप्त हो सकते है?

(७) इनको बेचने से क्या लाभ हुआ?

(८) १००) रु० की सामग्री पर क्या लाभ होगा?

आदर्श प्रश्न—मोहन ने अगरबत्ती बनाने का मसाला १०) का खरीदा कागज, लेबिल छपाई व बाँस आदि चीजो मे दो रुपया और खर्च हुए, घर पर बनाकर बेचने मे उसे १५) मिले, तो उसे प्रति सैकड़ा क्या लाभ होगा?

विश्लेषण—

वस्तु	विधि
(१) १०) का मसाला लगा।	(१) कितने रुपये का मसाला लगा?
(२) कागज लेबिल और बाँस की काड़ियो मे २) खर्च हुए।	(२) कागज लेबिल और बाँस की काड़ियो मे क्या खर्च हुआ?
(३) कुल १२) खर्च हुए।	(३) कुल कितने रुपये खर्च हुए?
(४) कुल अगरबत्तियाँ १५) रुपये मे बेची गई।	(४) कुल अगरबत्तियाँ कितने रुपये को बेची गई?

(५) १५)—१२)=३) रु० लाभ हुए।

(५) क्या लाभ हुआ ?

(६) १००) पर २५) रुपये लाभ होगे।

(६) १००) पर क्या लाभ होगा ?

संश्लेषण—

१२) रुपये में कुल सामग्री खरीदी गई।

और १५) रुपये में उस सामग्री से बनी हुई अगरबत्तियाँ बेची गईं।

१५) विक्रय १२) क्रय।

१५)—१२) = ३) लाभ हुआ।

∵ १२ रुपये पर ३ रु० पर लाभ हुए।

∵ १ रुपये पर $\frac{3}{12}$ रु० लाभ हुए।

∴ १०० रु० पर २५ रु० लाभ हुए।

=२५)% लाभ

सामान्यीकरण—

(१) अगरबत्तियाँ किन स्थानों पर अधिक जलाई जाती हैं ?

(२) इसको जलाने से कौन कौन से लाभ होते है ?

(३) अगरबत्ती का धुआँ ऊपर की ओर ही क्यो जाता है ?

प्रयोग—

पाठ सूत्र

क्रमांक (७)

दो विषयो

कक्षा ५ समय १ घण्टा

क्रियाशीलन—गुलाल बनाना।

समवाय केन्द्र—उद्योग समवायी विषय—भूगोल और भाषा (रचना)

मुख्य उद्देश्य

क्रिया सम्बन्धी १—बालकों को हरे रंग का गुलाल बनाना सिखाना।

२—गुलाल मे कौन कौन सी चीजें डाली जाती है इसका ज्ञान कराना। गुलाल निर्माण में प्रयुक्त होने वाली वस्तुओ का ज्ञान।

ज्ञान सम्बन्धी—सामान्य विज्ञान मे होली के पर्व का ज्ञान, भूगोल में खनिज पदार्थो का ज्ञान ।

सामान्य उद्देश्य

क्रिया सम्बन्धी १—बालकों की रुचि उद्योग की ओर जाग्रत करना ।

२—बालकों को स्वावलम्बी बनाना ।

ज्ञान सम्बन्धी १—बालकों को खनिज पदार्थ से परिचित कराना ।

२—बालकों को शुद्ध लिखने और बोलने का अभ्यास करना ।

योजना

समवाय केन्द्र—उद्योग ।

कार्य की इकाई—हरे रंग का गुलाल बनाना ।

सहायक सामग्री

क्रिया सम्बन्धी—शैलखड़ी, अभ्रक, अरारोट, हरा रंग पानी आदि ।

ज्ञान सम्बन्धी—भारतवर्ष का नक्शा ।

समय विभाज

कार्य सम्बन्धी—

विषय—हरे रंग का गुलाल बनाना समय २० मि०

ज्ञान सम्बन्धी विषय—सामान्य विज्ञान का ज्ञान तथा खनिज पदार्थों का ज्ञान कराना समय ४० मि०

पूर्व ज्ञान

कार्य सम्बन्धी—बालक गुलाल से परिचित है ।

ज्ञान सम्बन्धी—बालक होली का पर्व मनाते हैं ।

क्रियाशीलन

उत्प्रेरणा—

१—फागुन माह में हम कौनसा त्यौहार मनाते हैं ?

२—होली के दूसरे दिन हम क्या करते हैं ?

३—गुलाल कैसे रंग का होता है ?

४—गुलाल मे कौन-कौन सी वस्तुएँ मिली रहती हैं ?

५—गुलाल कैसे बनाया जाता है ?

आज हम गुलाल बनाना सीखेंगे ।

छात्रों के सहयोग से कार्य की रूपरेखा

कक्षा व्यवस्था—शिक्षक कक्षा मे जाते ही व्यवस्था की ओर ध्यान देगा ।

सामग्री वितरण—दो बालको की सहायता से सामग्री वितरण का कार्य होगा ।

शिक्षक द्वारा कार्य का प्रदर्शन—प्रथम शिक्षक सुखासन से बैठेगे फिर एक कटोरी या मिट्टी का बडा दिया लेगा उसमे एक तोला अरारोट डालेगा । २ तोला शैलखडी मिलावेगा तथा आवश्यकता के अनुसार पानी मे घुला हरा रंग डालेगा फिर तीनो को मिलावेगा तथा जितनी चमक लानी होगी उसके अनुसार अभ्रक डालेगा और गुलाल बनाकर बालको को बतावेगा ।

बालकों द्वारा क्रिया करवाना—फिर बालको से क्रिया करवायेगा तथा जाँच करेगा और सुधार करेगा ।

कार्य का मूल्यांकन और निष्कर्ष—

१—बालको आज हमने कौनसी वस्तु बनाई ?

२—गुलाल बनाने के लिए कौन-कौन सो वस्तुओ की जरूरत पड़ी ?

३—वस्तुओ की मात्रा कितनी होनी चाहिए ?

४—अभ्रक क्यो मिलाया जाता है ?

प्रस्तुतीकरण—(समवायी ज्ञान)

सामाजिक अध्ययन (भूगोल)—

वस्तु	विधि
(१) शैलखड़ी हमारे देश मे अधिकतर राजस्थान मे पाई जाती है ।	(१) शैलखड़ी कहाँ पाई जाती है ?
(२) अभ्रक हमारे देश मे मुख्यत: तीन स्थानो पर अधिक मात्रा मे पाया जाता है ।	(२) अभ्रक कहाँ से प्राप्त होता है ?

१—बिहार (हजारी बाग)

२—मद्रास (निसोर जिला)

३—राजपूताना (अजमेर, मेवाड़, उदयपुर तथा जयपुर) मे भी पाया जाता है ।

(५) हमारे यहाँ लोहा, कोयला, सोना, चाँदी, ताँवा, मेगनीज, संगमरमर आदि खनिज पदार्थ पाये जाते है ।

(३) इसके अलावा और कौन-कौन से खनिज पाये जाते हैं ?

भाषा—

(४) गुलाल हम होली पर लगाते है ।

(४) गुलाल हम किस त्यौहार पर लगाते है ?

(५) होली का त्योहार फागुन शुक्ला १५ को मनाया जाता है ।

(५) होली का त्यौहार किस दिन मनाया जाता है ?

(६) होली के त्यौहार के सम्बन्ध मे एक कथा प्रचलित है । एक हिरण्यकश्यप राजा ने अपने पुत्र प्रह्लाद को भस्म करवाने के लिए अपनी बहिन होलिका की गोदी मे बैठने की आज्ञा प्रदान की । होलिका प्रह्लाद को गोदी मे लेकर अग्नि मे बैठ गई । उसमे यह शक्ति थी कि अग्नि उसे जला नही सकती थी । जब वह प्रह्लाद को लेकर अग्नि मे बैठ गई तो स्वयं जल गई और भगवान की कृपा से प्रह्लाद का बालबाँका भी नही हुआ । इस प्रकार भगवान ने भक्त को रक्षा की । इस घटना से सब लोग खुशी-खुशी प्रतिवर्ष होली का त्यौहार मनाकर प्रसन्न होते है ।

(६) होली का त्यौहार क्यो मनाया जाता है ?

(७) फागुन की पूर्णिमा से कुछ दिन पूर्व घास-फूंस लकडियों को इकट्ठा कर एक स्थान पर जमा करते हैं ।

(७) होली से कुछ दिन पहले क्या इकट्ठा करते है ?

(८) इसे पूर्णिमा की रात को जलाया जाता है ।

(८) इसे कब जलाया जाता है ?

(९) सब लोग होली खेलते हैं ।

(९) होली जल जाने के

बाद प्रातः काल होने पर क्या करते हैं ?

(१०) हम माथे पर गुलाल लगाकर नाच कूद कर पिचकारी से रंग दूसरों पर डालकर होली खेलते हैं।

(१०) हम होली कैसे खेलते हैं ?

(११) झगडा होता है।

(११) दूसरों पर कीचड़, धूल, डालने के क्या होता है ?

(१२) दूसरों पर कीचड, धूल न उछालकर, प्रेम से गले मिलकर आपसी झगडे भुलाकर हम होली को प्रेम और आनन्द का त्यौहार बना सकते हैं।

(१२) होली को हम प्रेम और आनन्द का त्यौहार कैसे बना सकते है ?

सामान्यीकरण—

१—गुलाल किस प्रकार बनाया जाता है ?

२—होली का त्यौहार किस प्रकार मनाना चाहिए।

प्रयोग—होली के सम्बन्ध में प्रचलित कथा लिखो।

पाठशाला संगठन

तृतीय प्रश्न-पत्र

बुनियादी विद्यालय संगठन

प्रश्न—१ **बुनियादीशाला संगठन के निर्देशक सिद्धान्त कौन से हैं ?**

प्रत्येक संस्था की स्थापना निश्चित उद्देश्यों को लेकर होती है। संस्था का संगठन निश्चित सिद्धान्तो अथवा नियमों के अनुसार किया जाता है। बुनियादी शाला भी एक संस्था है जो समाज मे समाज के सुसंस्कृत लघु रूप में स्थित है। शिक्षा का विषय मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक दोनों दृष्टियों से ही महत्वपूर्ण है। इसलिए इसके संगठन में इन दो पहलुओ पर मुख्यतः ध्यान देना होता है। बुनियादी शाला संगठन के प्रमुख निर्देशक सिद्धान्त अथवा नियम संक्षेप में इस प्रकार है:—

१. **लोकतन्त्रात्मक प्रणाली के अनुरूप होना**—आज देश में लोकतन्त्रात्मक सरकार है। प्रत्येक नागरिक शासकों के चयन मे भाग लेता है। इस प्रकार देश की व्यवस्था मे अप्रत्यक्ष रूप से योगदान देता है। बुनियादीशाला का संगठन भी लोकतन्त्रात्मक विधि के अनुसार किया जाता है। शालेय व्यवस्था बालकों द्वारा निर्वाचित मासिक मन्त्रिमण्डल द्वारा होती है। सभी निर्णय बालकों के बहुमत के आधार पर होते हैं। बालकों का मन्त्रिमण्डल, आम सभा एवं न्यायालय होता है। बालक स्वयं निर्मित नियमों का सम्मान करते है एवं अनुगमन करते है। शालेय मन्त्रिमण्डल प्रत्येक कार्य के लिए उत्तरदायी होता है। शिक्षकों

के सुझाव भी जनतान्त्रिक प्रणाली का ध्यान रखवा दिये जाते हैं। इस प्रकार बुनियादी शाला की व्यवस्था 'एवं लोकतन्त्रात्मक, स्वाध्यायी, स्वयं चालित एवं स्वयंशासित तथा सहयोगी समाज के रूप में की जाती है।"

२. **सर्वोदयवाद का नियम**—बुनियादी तालीम का मूलभूत सिद्धान्त है—"शोषणमुक्त वर्गरहित सर्वोदयवाद" की स्थापना। इस सिद्धान्त के अनुसार बुनियादी शाला के छात्रों में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं बरता जाता न कोई उच्च समझा जाता न निम्न। हरिजन व सवर्ण साथ मिलकर खाते पीते, कार्य करते एवं पठन-पाठन का लाभ उठाते है। इस प्रकार बुनियादी विद्यालय मानवीय भाईचारे सत्य-अहिंसा एवं सहानुभूति तथा प्रेम पर आधारित जीवन बिता समाज के समक्ष सर्वोदयी समाज का आदर्श उपस्थित करने मे लीन रहता है।

श्रम में श्रद्धा का सिद्धान्त—विद्यालय के बालक एवं शिक्षक दोनों ही कृषि औद्योगिक, भोजन निर्माण, ग्राम-सुधार की विभिन्न क्रियाओं को सानन्द सम्पादित करते हुये गौरवानुभव करते हैं। श्रम मे उनकी निष्ठा बढ़ती है। समाज एवं शाला मे सम्पर्क स्थापित होता है। जन कल्याण संभव है।

स्वावलम्बन का सिद्धान्त—स्वावलम्बन बुनियादी तालीम की कसौटी मानी गई है। इसलिए बुनियादी शालाओं का गठन इस प्रकार किया जाता है कि बालकों में अधिकाधिक स्वावलम्बन, कम से कम परावलम्बन की आदत का विकास हो। "बुनियादी विद्यालय में उद्योग द्वारा आर्थिक इस पर से व्यावहारिक एवं सजीव ज्ञान देकर बौद्धिक और समाज सेवा तथा स्वच्छता के आयोजनों से बालकों को आत्मनियंत्रक स्वावलम्बन का अभ्यास कराया जाता है।"

अनिवार्य निशुल्क शिक्षा—बुनियादी शिक्षा के इस सिद्धान्त के अनुरूप शाला की व्यवस्था की जाती है। यहाँ सभी के लिए अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा का प्रबन्ध किया जाता है। सभी शिक्षित हों।

मूलोद्योग द्वारा शिक्षा—यहाँ मूलोद्योग केन्द्रित शिक्षण की व्यवस्था होती है। समाजोपयोगी उद्योग जैसे कृषि कताई, बुनाई लकड़ी का काम आदि रखे जाते हैं जिनके द्वारा पर्याप्त समवाय पाठन हो सके।

मातृभाषाद्वारा शिक्षा—सबको अपनी संस्कृति एवं मातृभाषा की रक्षा करने एवं उसे समृद्ध बनाने का अधिकार है। मातृभाषा द्वारा बालकों को शिक्षण

सभी दृष्टि से सर्वथा उपयुक्त माना गया है। अतः बुनियादी तालीम के सिद्धान्त के अनुरूप बुनियादी विद्यालय मातृभाषा द्वारा शिक्षा देते है।

"बालक के संतुलित, सर्वाङ्गीण विकास का सिद्धान्त" – बुनियादी तालीम 'बालक के सर्वाङ्गीण विकास की प्रतीक है। अतः बुनियादी विद्यालयों मे उद्योग, सामुदायिक जीवन, पाठयेतर कार्यक्रम विज्ञान शिक्षण आदि की व्यवस्था का बालक के संतुलित सर्वांगीणी विकास को दृष्टि पथ मे रखती है। शाला को ग्राम विकास का केन्द्र बनाने का सिद्धान्त"—बुनियादी शाला ग्राम विकास का केन्द्र मानी गई है। अतः ऐसी प्रवृत्तिगो की शाला मे व्यवस्था की जाती है कि ग्राम के सांस्कृतिक, आर्थिक, बौद्धिक, नैतिक अर्थात् सर्वतोमुखी विकास में सक्रिय हाथ बटा सके। ऐसे आयोजन शाला मे अथवा शाला द्वारा किये जाते है।

प्रश्न २—पाठ्यक्रम निर्धारण के लिए आप किन-किन सिद्धन्तों को ध्यान में रखेंगे ? सोदाहरण स्पष्ट कीजिये।

पाठ्यक्रम – बालको की शिक्षा मे पाठ्यक्रम का महत्वपूर्ण स्थान है। डा० अदावल के शब्दो मे "पाठ्यक्रम एक मार्ग के सदृश है जिसका हम किसी विशेष लक्ष्य पर पहुँचने के लिए अनुसरण करते है। यह अध्ययन का एक क्रम है। शिक्षा के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अध्यापक तथा विद्यार्थी इस मार्ग का अवलम्बन ग्रहण करते है। अध्ययन विषयो अथवा क्रियाओ की गति चाहे कुछ भी हो पाठ्यक्रम अध्यापक रूपी कलाकार के हाथ मे एक उपकरण है जिसके द्वारा वह अपनी सामग्री (विद्यार्थी) को अपने आदर्श (उद्देश्य) के अनुकूल अपने कलागृह (पाठशाला) मे रूप प्रदान करता है।"

पाठ्यक्रम निर्माण से समय की बचत होती है, शिक्षण योजनाबद्ध होता है। परीक्षको को बालकों के स्तर का ज्ञान होता है। प्रचलित पाठ्यक्रम पुस्तकीय एकागी विकास करने वाला, अव्यावहारिक एवं विषयो को असम्बन्ध तरीके से विभाजित करके पढ़ाने वाला था। अब पाठ्यक्रम मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तो पर ढाला जाता और इसे सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने का प्रयास किया जाता है। पाठ्यक्रम निर्माण के मूलभूत सिद्धान्त इस प्रकार है :—

(१) "पाठ्यक्रम बालकों की रुचि, आयु, बाल विकास की अवस्थाओं और यक्तिगत विभिन्नताओं का ध्यान रखते हुए बनाया जाय।" बालकों का घर ाला और समाज में अनेक व्यक्तियों से सम्बन्ध स्थापित है। फलतः उसका ान और अनुभव दोनों ही बढते हैं। इससे यह सिद्धान्त निकलता है कि पाठ्य-'क्रम में बालकों के प्रयासों और अनुभवों को स्थान दिया जावे" क्योंकि शिक्षा का लक्ष्य मस्तिष्क में ज्ञान एवं तथ्यों का संग्रह मात्र कर लेना नहीं है। यही कारण है कि आज पाठ्यक्रम निर्धारण में बालक के प्रत्यक्ष अनुभवों और उसकी क्रियाशीलता को मान्यता दी जाने लगी है।

(२) बालक को शाला के बाहर अनेक अनुभव होते है। ये अक्रमबद्ध और अव्यवस्थित होते है। शहर के व गॉव के बालको के अनुभव एक दूसरे से भिन्न होते हैं। इस प्रकार अर्जित ज्ञान में बडी-बडी दरारें रह जाती है। "इसलिए पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिये जो इस प्रकार अर्जित ज्ञान को व्यव-स्थित करने में योग दे सके। यही कारण है कि बालक की क्रियाशीलता का पाठ्यक्रम-निर्माण में ध्यान रखा जाता है। इसीलिए कहा जाता है कि बालको का पाठ्यक्रम क्रियामूलक हो। क्रियामूलक पाठ्यक्रम अपेक्षाकृत अधिक उपयोगी, सजीव, स्वाभाविक होगा और बालक में आत्मविश्वास के बीज का वपन करेगा

(३) पाठ्यक्रम बालक की "सद्प्रवृत्तियो" को विकसित करे। इसमे समा विष्ट विषय बालक में समझने की शक्ति उत्पन्न करें ताकि बालक इस दुनिय को भली-भाँति देख व समझ सकें। असल मे "पाठ्यक्रम बालकों में सामाजिक व बौद्धिक आदतों को विकसित करने के लिए गठित किया जाता है।" इसक एकमात्र उद्देश्य विषव ज्ञान देना ही नही है।

(४) पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों को स्थान मिलना चाहिये जिनमे बाल रुचि लें। "विषयों का चयन बालक की प्रवृत्तियों एवं स्वभाव के अनुकूल हो। बालकों को देश, काल और परिस्थति के अनुसार सुनागरिक बनायें। सामा जिक आवश्यकताओं, रूढ़ियों और भौगोलिक परिस्थितियों को दृष्टि-पथ मे र कर चुने जावें। ये मानव के विचारों की एकता को दृढ़ करने वाले हो।

इस प्रकार उपर्युक्त चार बिन्दुओं को दृष्ट-पथ में रख कर पाठ्यक्रम बना के तरीकों का आविष्कार किया गया। इस सम्बन्ध में हर्बट के शिष्य जिलर

विधि उल्लेखनीय है। "उसने केन्द्रीयकरण" का सिद्धान्त विश्व के सम्मुख रखा। इसमे बताया गया कि इतिहास एवं साहित्य को केन्द्र-विषय मानकर अन्य विषयो की शिक्षा दी जा सकती है। उसके उपरान्त पार्कर ने केन्द्रीयकरण का सिद्धान्त तो माना पर इतिहास के स्थान पर प्रकृति विज्ञान को केन्द्रीय विषय मानने पर अत्यधिक बल दिया। आधुनिक युग के महान् शिक्षाशास्त्री जान डीवी ने कहा कि "बालक क्रिया करे और इस पर जो अनुभव प्राप्त हों, उनके सहारे जो ज्ञान दिया जावे वही सच्ची शिक्षा है।" भारत मे पूज्य बापू ने "क्रिया को वाहन अथवा माध्यम बनाकर ज्ञान देने पर बल दिया।" उन्होने कहा कि मूलोद्योग द्वारा शिक्षा दी जाय। बुनियादी तालीम के क्षेत्र मे यह समवाय विधि के नाम से विख्यात हुई।

बुनियादी पाठ्यक्रम—प्रारम्भिक वर्धा स्कीम में सम्पूर्ण शिक्षाक्रम के लिए ७ बर्ष की व्यवस्था की गई थी। इसके उपरान्त पर्याप्त विचार-विमर्श के पश्चात् १ वर्ष और जोड दिया गया। इस प्रकार शिक्षा के ये आठ साल एक अखण्ड इकाई के रूप मे अंगीकार किये गये है। इसमे इन पाँच प्रवृत्तियों को शिक्षण की मुख्य प्रवृत्तियाँ माना है :

(१) 'सफाई और स्वस्थ जीवन का अभ्यास।

(२) स्वावलम्बन का अभ्यास।

(३) समाजोपयोगी उत्पादक मूलोद्योग का अभ्यास।

(४) नागरिकता का अभ्यास और।

(५) कलात्मक एवं सॉस्कृतिक जीवन का अभ्यास।

उपर्युक्त अभ्यासों को शिक्षण का माध्यम बनाने का कारण है—इनका जीवन से अटूट सम्बन्ध होना। अन्य प्रान्तों के समान मध्य-प्रदेश मे भी हिन्दुस्तानी तालीमी संघ सेवाग्राम द्वारा प्रस्तावित पाठ्यक्रम की इस रूपरेखा के अनुसार अपनी-अपनी शालाओं के लिए क्रियामूलक पाठ्यक्रम का निर्माण किया है। वस्तुतः मध्य प्रदेश शासन द्वारा निर्धारित कक्षा १ से लेकर ८ तक के पाठ्यक्रम का आधार यही है।

पूर्व प्रचलित पाठ्ययक्रम प्रधानतः बौद्धिक या। लेकिन मध्यप्रदेश में वर्तमान समय मे प्राथमिक एवं पूर्व माध्यमिक स्तर पर जो पाठ्यक्रम प्रचलित

किया गया है; वह बुनियादी पद्धति पर आधारित है। यह बालकों को सुनागरिक, स्वावलम्बी, सफल शिक्षार्थी एवं सामाजिक जीवन व्यतीत करने में प्रवीण बनायेगा। यह मूलोद्योग पर आधारित शिक्षा प्रदान करेगा। बुनियादी विद्यालयों में सामुदायिक जीवन की व्यवस्था की जावेगी।

बुनियादी पाठ्यक्रम के गुण व विशेषताएँ—बुनियादी पाठ्यक्रम बालक को यह पाँच अभ्यास कर उसके सर्वाङ्गीण विकास की ओर प्रयत्नशील रहता है। यह बाल केन्द्रित है क्योंकि इसमें बालकों की क्षमताओं और रुचियों के अनुसार शिक्षा की व्यवस्था है। यह बालक को सुनागरिक बनाता है। उनमें लोकतन्त्रात्मक भावना का विकास करता है। इसमे सामाजिक अध्ययन का शिक्षण इस विधि से किया जाता है कि शिक्षार्थी मानव के स्वाभाविक विकास से परिचित हो जाता है। यहाँ वे राजनैतिक व सैनिक गतिविधियों को रटते मात्र नही है वरन् इस प्रकार अधिक समाजोपयोगी बनते है। यह बालक को स्वावलम्बी बनाता है और वे ज्ञान एक 'अभिन्न अखण्ड समष्टि' के रूप में प्राप्त करते है, न कि ज्ञान को परस्पर असम्बद्ध विषयों में विभाजित करके। इसमे बालक ज्ञान ग्रहण करने को लालायित रहते है। ज्ञान सजीव, आकर्षक एवं जीवनोपयोगी होता है। श्रम मे गौरव बढता है। इसमे बालक के स्थानीय वातावरण के अनुसार शिक्षा देने की व्यवस्था है। जैसे-जैसे बालक के ज्ञान-क्षेत्र का विस्तार होगा वैसे वैसे ज्ञान दिये जाने वाले ज्ञान की सीमा का भी क्रमिक विकास उसी अनुपात में होता जावेगा।

प्रश्न ३—कार्य योजना से आप क्या अर्थ समझते हैं? संस्था में प्रत्येक कार्य की साप्ताहिक, मासिक तथा वार्षिक योजना बनाना क्यों आवश्यक हैं। किसी एक कक्षा के एक उद्योग कार्य की मासिक योजना तैयार कीजिये?

उत्तर—किसी कार्य को कुशलतापूर्वक संपादित करने और मनोवाँछित

जाती है—वार्षिक, अर्द्ध-वार्षिक एवं दैनिक योजना ली जाती है। ऐसी योजना में कार्य का विभाजन बड़ी सरल रीति से हो जाता है। परन्तु बुनियादी

शिक्षालयों मे जहाँ कि क्रियामूलक पाठ्यक्रम चालू है तथा मूलोद्योग व जीवन की ठोस क्रियाओ एवं परिस्थितियो के अनुसार ज्ञान देने की व्यवस्था है—प्रत्येक कार्य की पूर्वयोजना बना लेना न्याय संगत एवं उपयोगी प्रतीत होता है। अन्यथा शिक्षण कार्य में बाधा उपस्थित हो जावेगी और शाली की प्रगति नही हो सकेगी। "इसलिए प्रत्येक बुनियादी शिक्षक का धर्म है कि वह प्रत्येक कार्य की वार्षिक, अर्द्ध वार्षिक, मासिक और दैनिक कार्य-योजना का निर्माण सत्रारम्भ के ही कर ले।" इसका सुफल यह होगा कि प्रत्येक कार्य ठीक विधि से सम्पन्न होगा। मनोवाञ्छित सफलता मिलेगी। समय की बचत होगी। बालक योजनाबद्ध एवं सुव्यवस्थित रीति से काम करना सीखेगे। अनावश्यक पुनरावृत्ति से बचाव होगा तथा शिक्षक प्राकृतिक औद्योगिक एवं सामाजिक प्रतिवेशो से अधिकाधिक लाभ उठाकर बालको को समवायी विधि से ज्ञान देने मे समर्थ हो सकेगा। इस प्रकार वह विभिन्न क्रिया कलापो द्वारा बालको के शिक्षण के साथ ही साथ ग्राम सुधार मे सुयोजित रीति से योगदान कर सकेगा।

सावधानियां—योजना का निर्माण करते समय बालको की संख्या, पाठ्यक्रम, व्यय, त्यौहार, पुस्तकें, उद्योग सम्बन्धी सामान, कार्यकर्त्ताओ की तादाद एवं पिछले वर्ष की समस्याओ एवं अनुभवों को भी अपने ध्यान मे रखना चाहिए। पहले वार्षिक योजना इन बिन्दुओ को दृष्टिगत रखके बनाई जावे। तदनन्तर उसकी अर्द्ध वार्षिक, मासिक, साप्ताहिक एवं दैनिक योजना बनाकर कार्य करना चाहिए।

कक्षा के उद्योग कार्य की एक मासिक योजना सुझाव रूप मे निम्न प्रकार से प्रस्तुत है :—

कताई उद्योग मासिक योजना माह जनवरी सन् १९६१

कक्षा ५ वाँ छात्र सख्या

दिनाक	सप्ताह	कपास सफाई	औटाई	तुनाई पोनी बनाना	कताई	विशेष
२ से ८-१-६१	प्रथम	प्रति छात्र २०) तोले				इस माह मे सफाई से कताई तक का ज्ञान दिया जायगा। कपास का हिसाब किया जायगा। कितना विनौला, कचरा सूतक अंग और गुण्डी प्रतिशत आदि का ज्ञान कराया जायगा।
७ से १५	द्वितीय	×	कपास मोटाई ३०) तोले			
१६ से २२	तृतीय	×	×	३०)तो		
२३ से ३१	चतुर्थ	×	×	×	कताई ३०)तो	

प्रश्न ४—शाला में समय विभाग चक्र का क्या स्थान है। बुनियादी शाला एव अबुनियादी शाला के समय विभाव चक्र बनाने के नियमों का उल्लेख कीजिए ? साथ ही कक्षा ५ का एक समय विभाग चक्र बनाइये।

समय विभाग चक्र की बुनियादी शाला मे उपयोगिता बताते हुये एक विद्वान ने लिखा है—"समय विभाग चक्र से शाला की विभिन्न कक्षाओ के अध्यापन मे सुविधा होती है। शाला का कार्य सुचारु रूप से चलता है। हमे

विदित हो जाता है कि हमे किस कक्षा को क्या पढ़ाना है। बालकों को मालुम रहता है कि किस समय उन्हे कौनसी क्रिया करनी अथवा ज्ञान प्राप्त करना है। शिक्षक इसका अवलोकन कर शिक्षण कार्य की दैनिक एवं साप्ताहिक योजना बना सकते है क्योकि इससे उन्हे पता लग जाता है कि सप्ताह मे उन्हे शिक्षण कार्य के लिए कितना समय मिलने वाला है। प्रधान पाठक एवं निरीक्षण करने वाले अधिकारियो के लिए यह दिशा सूचक का कार्य करता है। कुछ शिक्षा शास्त्रियो ने समय विभाग चक्र की तुलना घड़ी से की है जो उचित ही है। यह इसलिए कि इसस पता चलता है कि अमुक कक्षा मे अमुक कार्य अमुक कक्ष अथवा स्थल पर किया जावेगा।"

परम्परित शालाओ मे समय विभाग चक्र—अबुनियादी शालाओ मे समय विभाग चक्र का निर्धारण करते समय इन बातो का ध्यान रखा जाता है।

(१) **समय चक्र**—चक्र बनाते समय बात का ध्यान रख जाता है कि पाठ्य क्रम के सभी विषय इसमे स्थान पा सकें। सामान्यतः शिक्षक कोर्स पूरा करने की करने की दृष्टि से एक विषय लगातार पढ़ाते रहते है फिर दूसरा विषय कुछ दिवसो तक। यह ठीक नही है।

(२) **विषय की जटिलता एव सरलता** के अनुसार समय विभाग चक्र मे विषय के लिये अधिक या कम समय समय की व्यवस्था की जाती है।

(३) **शिक्षकों की योग्यता के अनुसार** उन्हे विषय पढ़ाने को दिये जाते हैं। फलतः शिक्षक पढ़ाने मे रुचि लेते है।

(४) इस ढंग से बनाया जाता है कि शाला मे उपलब्ध स्थान का ठीक ढंग से उपयोग किया जा सके उदाहरणार्थ यदि शाला मे एक ही विज्ञान कक्ष है तो दो कक्षाओ को विज्ञान का "प्रयोगात्मक कार्य एक साथ नहीं कराया जा सकता।"

(५) विषयो का क्रम इस प्रकार रखा जाता है कि जिसके बालक "थकावट महशूश न करें। कठिन विषयो को ऐसे समय में पढ़ाया जावे जबकि बालक की मानसिक दशा उत्तम स्थिति मे हो।

(६) सभी अध्यापक पर "लगभग ऐसा भार" पडे तथा बालक एवं शिक्षक एक दूसरे के निकटतम सम्पर्क मे आ सकें।

(७) शिक्षक को शाला समय मैं "कुछ विश्राम के" घण्टे दिये जावे अन्यथा लगातार पढ़ाने की दशा में थक जायगा। रोचक ढग से न पढ़ा सकेगा। फलतः बालको की भी रुचि नहीं रहेगी।

(८) समय विभाग चक्र का निर्माण करते समय "बालकों की आयु" के अनुसार घण्टों का समय निर्धारित करना आवश्यक समझा जाता है।

बुनियादी विद्यालय का समय विभाग चक्र—बुनियादी विद्यालयों मे उपर्युक्त नियमो का पालन कठिन समस्या है। यहाँ क्रियामूलक पाठ्यक्रम का पालन किया जाता है। फलतः समय का बन्धन अर्थात विषयवारी घण्टे नही होते। कभी बालक निरन्तर श्रम मे रत रह सकते तो कभी शिक्षण क्रम भी लगातार चलता रहता है। साथ ही शालाओ में पाठ्येतर कार्यक्रमो की व्यवस्था की जाती है जो मनोरजन के साथ समवाय ज्ञान के आगार सिद्ध होते है। अतः यहाँ तो विषयो अथवा ज्ञान एवं उद्योग को समय सप्ताह मे आनुपातिक रूप से दिया जाता है। यहाँ समय विभाग चक्र क्रियाशीलनो पर आधारित होता है न कि पाठन विषयों पर।

उपर्युक्त परिच्छेद मे बुनियादी शाला के समय विभाग चक्र के निर्माण मे ध्यान रखने वाली प्रमुख बातो का संक्षेप मे उल्लेख किया गया है परन्तु हम परम्परित शाला के उन नियमो का भी लाभ उठा सकते है जो बुनियादी शाला के हित मे हो। साथ ही इन नियमो का भी स्थान रखना चाहिए जब हम बेसिक शाला का समय विभाग चक्र बना रहे हों—

(१) सभी कक्षायें "सम्पूर्ण समय कार्य रत" रहे।

(२) "सभी कक्षाओं को आवश्यकतानुसार समान समय" मिले।

(३) बुनियादी शालाओ का समय विभाग चक्र क्रियामूलक अवश्य हो परन्तु यह आवश्यक नहीं कि शाला कार्य का प्रारम्भ किसी मूलोद्योग से ही हो।

(४) गणित और भाषा का ज्ञान दोपहर से पहले ही दिया जाय।

(५) कक्षाओ का मिश्रण जब सामूहिक कार्य के लिए किया जाय तो इसका समय विभाग चक्र मे उल्लेख हो।

(६) समय विभाग चक्र "ऋतु परिवर्तन" के साथ परिवर्तित होता रहे।

दिवसीय बुनियादी शाला के टाइमटेबिल का नमूना सुझाव रूप मे इस प्रकार है—

समय विभाग चक्र

सफाइ कार्य	१०·३० से १०·४५
प्रार्थना एवं उपदेश	१०·४५ से ११·००
मौन सूत्र यज्ञ	११·०० से ११·१५
समाज सेवा (सहकारी भण्डार)	११·१५ से ११·३०
समवाय शिक्षण	११·३० से १·३०
स्वल्पाहार एवं विश्राम	१·३० से २·००
सामूहिक सफाई	४·०० से ४·१०
खेल व पी० टी०	४·१० से ४·२५
राष्ट्र गान	४·२५ से ४·३०
घर को प्रस्थान	४·३०

प्रश्न ५—सफल अध्यापक के गुण तथा कर्तव्यों का विवेचन कीजिए।

भूमिका—शिक्षा के क्षेत्र मे शिक्षक का बडा महत्वपूर्ण स्थान है। सभी शिक्षा प्रणालियो ने शिक्षक के अस्तित्व को किसी न किसी रूप मे अंगीकार किया है। बुनियादी तालीम मे भी शिक्षक को बहुत व महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है क्योकि वह यहाँ बालकों को समवायी ज्ञान देने के साथ ही साथ बापू द्वारा कल्पित सर्वोदयी समाज के निर्माण मे सहायक होगा। वस्तुत शिक्षक तो जन्मजात होते है परन्तु फिर भी नीचे लिखे गुणों का अभ्यास का एक सफल शिक्षक वना जा सकता है—

सचरित्रता—बालक शिक्षक का अनुकरण करते है। शिक्षक उनके सामने जीता जागता आदर्श होता है। यदि शिक्षक सचरित्रता नहीं है उसका आचरण दूषित है तो ऐसा शिक्षक बालको को चरित्र हीन ही बना सकता है। अत: शिक्षक की सफलता के लिए सचरित्र होना आवश्यक है।

सहन शीलता—क्रोधी व्यक्ति अध्यापन कार्य के अयोग्य है। बालकों का

ज्ञान तथा कच्चा होता है। उसकी मौलिक कठिनाइयाँ होती है। वह प्रोढ़ो की बात समझ नहीं सकता है अतः गलती करता है। शिक्षक को गलती के कारणो का पता लगाना चाहिए। बालक मे आवश्यक सुधार का प्रयत्न करना चाहिए न कि क्रोधित होकर बालक को पीटना। इसके लिए शिक्षक को सहनशील होना चाहिए।

प्रसन्नचित रहना—बालक स्वभाव से विनोदप्रिय होते है। अतः प्रसन्न मुद्रा मे रहने वाला एवं बालको का रंजन करने वाला शिक्षक बालको मे शीघ्र ही लोकप्रिय हो सकता है। बालक उससे अनुराग करने लगते है। उसका सरस शिक्षण बालको को लुभा लेता है। साथ ही बालको मे ऐसा शिक्षक प्रसन्न चित्त रहने की आदत डालता है।

सहानुभूति—सफल शिक्षक के लिए बालको के हृदय मे सहानुभूति होना परमावश्यक है। जो अध्यापक बालको से प्रेम नही करता वह अध्यापक कहलाने के भी योग्य नही है। शिक्षक मे जन सेवा की भावना हो न कि शिक्षण कार्य को व्यापार समझने की।

नेतृत्व शक्ति—शिक्षक नेता है। वह समाज का नेतृत्व करता है। सफल अध्यापक बालक पर शासक की भाँति नेतृत्व नही करेगा वरन मित्र एवं सहयोगी के रूप मे नेतृत्व करेगा। बालको के साथ हिल मिल कर काम करेगा जब कक्षा मे जावेगा तो नेत्र नियन्त्रण ठीक रखेगा बालको को शारीरिक दन्ड नही देगा।

मधुर भाषण—मधुर भाषण कक्षा मे स्वस्थ वातावरण उत्पन्न करता है। अतः शिक्षक का भाषण सरस, रोचक, आरोह-अवराह सहित, कक्षानुसार तथा अनावश्यक बातो से रहित होना चाहिए। ऐसे शिक्षको की बातो को बालक ध्यानपूर्वक सुनते है। अध्यापन सरल होता है।

शीघ्र निर्णय बुद्धि शक्ति—शिक्षक मे इस प्रकार को शीघ्र निर्णय शक्ति मानसिक सावधानी और साधारण बुद्धि होनी चाहिए कि वह कक्षा मे उपस्थित हुई प्रत्येक परिस्थिति को सम्हाल सके और तत्काल वाँछित कार्य कर सके।

अपने विषय का पूर्ण ज्ञाता—सफल शिक्षक अपने विषय का पूर्ण याता होता है। वह स्वाध्यायी होता है उसके विद्यार्थी उससे अधिक ज्ञान नही रखते ऐसे शिक्षक बालकों द्वारा आदर के पात्र बन सकते है।

उद्योग का ज्ञाता—प्रत्येक शिक्षक को उद्योग का ज्ञान होना चाहिए। शिक्षक प्रयत्न करने पर उद्योग मे कौशल प्राप्त कर सकते है। सफल समवायी शिक्षण के लिए उद्योग में निपुण होना जरूरी है।

उपरोक्त गुणो के अतिरिक्त निभाने की क्षमता: बहुमुखी प्रवृत्ति, मनोविज्ञान का ज्ञाता, विद्यार्थी भाव रखने वाला कर्तव्यपरायण, न्यायप्रिय, आत्माभिमानी अनुशासन प्रिय, सांस्कृतिक एवं तर्कपूर्ण दृष्ठिकोण वाला, सामाजिक सत्य और अहिंसा का उपासक आदि गुणो का होना भी एक सफल अध्यापक मे होना आवश्यक है।

प्रश्न ५—पाठशाला का वातावरण "अपने प्रधानाध्यापक के चरित्र का सच्ची झलक देता है" अथवा "जैसा हेडमास्टर वैसा स्कूल" इस कथन की व्याख्या कीजिए और बतलाइये कि प्रधानाध्यापक के क्या गुण एवं कर्तव्य है ?

शिक्षालय का सुसंचालन, सुयोग्य प्रधानाध्यापक ही कर सकता है। यह अक्स कहा जाता है कि "जैसा हैडमास्टर होगा वैसा ही स्कूल" होगा अथवा पाठशाला के वातावरण से प्रधानाध्यापक का व्यक्तित्व झलकता है। वास्तव मे शिक्षालय की प्रवृत्तियो मे प्रधानपाठक के आचरण, रुचि तथा उसके कार्य प्रतिबिम्बित होते है वह शाला की समस्त प्रवृत्तियो का केन्द्र होता है। उदाहरण के लिए यदि प्रधान पाठक सचरित्र, ईमानदार; दृढ़ व्यक्तित्व का, कर्मठ और अध्यवसायी होगा, तो निश्चित है, कि उस शाला के बालक एवं शिक्षक उससे प्रेरित होकर एक आदर्श पाठशाला का निर्माण करेंगे। यदि प्रधान एक निरकुश शासक की तरह बालको एवं शिक्षकों पर शासन करेगा तो शिक्षण कार्य सुचारु रूप से चल नही सकेगा और असन्तोष का जन्म देगा। अतः वह एक आकर्षक व्यक्तित्व वाला कर्तव्यपरायण व्यक्ति हो उसके कार्य,--उसके कार्यों को चार अंगो मे विभाजित किया जा सकता है:—"अध्यापन, निरीक्षण, जनसम्पर्क और परीक्षा।

अध्यापन:—वह अध्यापक पहले है प्रधान अध्यापक बाद में। अतः अध्यापन उसकी दिनचर्या का महत्वपूर्ण अंग होना चाहिए क्योकि उसके अध्यापन अन्य शिक्षको के लिए आदर्श का कार्य करता है अध्यापन के अतिरिक्त उसे दूसरा कार्य शिक्षको में विषय का विभाजन उनकी योग्यतानुसार करना होता है तथा कठिन विषय स्वयं लेना होता है। तीसरे उसे अध्यापन के लिए कक्षाओं का चुनाव करना होता है। अक्सर प्रधान पाठक उच्च कक्षाओ को ही पढ़ाते हैं परन्तु उन्हें प्रारम्भिक कक्षाओ के विषय भी पढ़ाने चाहिए। उसे प्रत्येक कक्षा से सम्पर्क साधना पड़ता है। जब अन्य शिक्षक अवकाश पर हो तो उनके स्थान पर स्वयं पढ़ाकर बालको से सम्पर्क साध सकता है।

निरीक्षण—निरीक्षण के अन्तर्गत प्रधानाध्यापक को शाला के शिक्षण कार्य का निरीक्षण, शाला के कार्यालय का निरीक्षण, शिक्षालय का निरीक्षण छात्रालय का निरीक्षण एवं शाला की अन्य प्रवृत्तियो का निरीक्षण करना होता है।

जन सम्पर्क—शाला को ठीक प्रकार से चलाने एवं लोकप्रिय, बनाने के लिए उसे उच्चाधिकारियो से सम्पर्क, पालको एवं स्थानीय समाज से सम्पर्क एवं सहयोगी शिक्षको एवं बालको से सम्पर्क स्थापित करना होता है।

परीक्षा—परीक्षा, शिक्षा प्रणाली का अभिन्न अङ्ग है। अतः प्रधानाध्यापक को परीक्षाओ की समुचित व्यवस्था करनो पड़ती है उसे व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना चाहिए।

नोट—[प्रधानाध्यापक के गुणो का वर्णन करते समय छात्रगुरु पूर्व प्रश्न मे उल्लखित सफल शिक्षकों के गुण भी लिखें]।

प्रश्न ६ —बुनियादी शाला में उठने बैठने और लिखने का सही ढग क्या होना चाहिए ?

शाला में बालक बैठकर पढ़ते व लिखते है। लेकिन अध्यापक बालको के बैठने के ढंग पर ध्यान नही देते। कुछ बालक कमर टेढ़ी करके डेस्क पर झुक करके पैर पर पैर रखकर बैठ जाते हैं डेस्कों को भी बालक अपनी सुविधानुसार इधर उधर खिसका लेते है और कक्षा मे डेस्कें अव्यवस्थित हो जाती हैं। अतः शिक्षक को इन सब बातों को कक्षा मे प्रवेश करते ही देख लेना चाहिए और

बालको में ठीक ढंग से बैठने की आदत का विकास करना चाहिए। बालकों मे दाहिने हाथ से लिखने की आदत डाली जावे। बाँया हाथ कागज को पकडने का कार्य सम्पन्न करेगा। और दाहिने हाथ के सहायक के रूप कार्य करेगा। बालको को ठीक विधि से कागज का पकड़ना भी सिखाया जाय। ध्यान रहे कि उँगलियाँ कलम की नोक को न ढकने पावें। दाहिने हाथ ही सबसे छोटी उँगली और बाँह की भीतरी अस्ति पर सहारा मिले। अँगूठा और उससे लगी हुई दो उँगलियो से कलम पकड़ी जावे।

बुनियादी शिक्षालयों मे शिक्षको को चाहिए कि वे बालकों को ठीक ढंग मे बैठावें और सही ढंग से लिखने का अभ्यास करावें। यहाँ यह बताना भी प्रासंगिक ही है कि छोटे बालको को आगे व बडे बालको को पीछे बैठाया जावे। यह ध्यान रखा जावे कि बालक न तो पैर पर पैर चढाकर बैठे और न पैर हिलायें बालक घर से पुस्तकें खुली न लावेंगे वरन् थैलो में ठीक ढंग से रखकर लावेंगे और सभी बालक थैले अपने सामने बाँई ओर रखेंगे। कहने का सार यह है कि बालक लिखते और पढते ससय बालक झुककर न बैठें, सीना आगे निकला रहे और पीठ एवं सिर सीधे रहे। टाठ पट्टी पर बैठते समय भी, शरीर को सीधा रखें।

खड़ा होना—खडे होने का स्थिति मे हमे सीधा खडा होना चाहिए तथा शरीर का भार दोनों टाँगों पर बराबर पड़ता हुआ हो। सीना आगे की ओर हो मस्तक पीछे की ओर दवता हुआ रहे, कमर अन्दर को ओर खिची रहे और पुट्ठे बाहर की तरफ निकले रहे। खडे होने का यह तरीका अच्छा है परन्तु इसका पालन करना कठिन है। उचित तो यही है कि पैर आगे बढा दें। दूसरे पर अधिक भार आ जावेगा। पहले पैर को आराम मिल जावेगा। यह क्रम स्वास्थ के लिए हितकर है। सामान्यतः लोग अधिक खडे होने की स्थिति मे एक पैर पर सारा शरीर का बोझ डालकर दूसरे पैर को बगल मे फैला कर विश्राम देते है यह हानिकर है। अतः त्याज्य है। उठते समय बालक फुर्ती से उठे, न कि बोझिल से। उन्हे मेज पर झुक कर खड़े होना दीवाल का सहारा नहीं लेना चाहिए।

चलना—चलते समय शरीर सीधा रहे। सीना आगे निकला हो, मस्तक ऊँचा हो। हाथ प्राकृतिक रूप से हिलते रहे। पाव आगे बढ़ते समय आपस मे समानान्तर रहे।

बुनियादी शालाओं मे जहाँ उद्योग प्रधान शिक्षा है, बालक बालिका साथ पढ़ते हैं जहाँ बालक के सर्वांगीण विकास का उद्देश्य है शिक्षक को उनके सही ढंग से उठने, बैठने, लिखने, चलने आदि की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। जब बालक क्रियाशील हों उस समय उनके उठने, बैठने की ओर विशेष ध्यान दिया जावे ताकि शारीरिक विकृति न होने पावे क्योकि बुनियादी शालाओ मे छोटी उम्र के बालक पढने आते है और उनका शरीर कुप्रभावो से शीघ्र प्रभावित हो जाता है। बालिकाओ की ओर विशेष ध्यान दिया जावे क्योकि उनका शरीर अपेक्षाकृत अधिक कोमल होता है तथा इन दोनो का उन पर शीघ्र ही असर हो जाता है।

बालको को विभिन्न प्रकार से बैठना होता है अतः विभिन्न स्थितियो मे हमे बालको मे नीचे लिखी विधि से बैठना चाहिए।

शिक्षक के अध्यापन के समय—अध्यापक के कक्षा मे अध्यापन के समय बालक पुस्तक और शिक्षक की ओर दृष्टि रखते है। इस समय बालकों को इस विधि से बैठाया जावे उनकी माँस पेशियो की शक्ति न्यूनतम मात्रा मे व्यय हो। अतः रीढ़ की हड्डी सीधी रहे झुके नही। इसलिए मेज व डेस्क की ऊँचाई बालक की शारीरिक आवश्यकता के अनुकूल हो।

पुस्तक वाचन के समय—महीन अक्षरो वाली किताबें बालको की आँखो को कमजोर बनाती है। अतः छोटे बालको को बड़े अक्षर वाली पुस्तके पढ़ने को दी जावे। पुस्तक पढ़ते समय बालकों की आँखें कम से कम १२ इंच की दूरी पर और अधिकाधिक १८ इंच की दूरी पर हो।

लेखन के समय—लिखते समय बालक टेढ़े बैठते है उनकी रीढ की हड्डी वक्रा आकार हो जाती है लिखते समय बैठने का सर्वोत्तम तरीका तो यह कि रीढ़ की हड्डी न तो सामने झुके न दाहिनी अथवा बाँई तरफ ही वरन् सीधी रहे। जहाँ तक लिखने का प्रश्न है बालक को कृष्ण पट्ट पर बड़े-बड़े अक्षर लिखने का अभ्यास कराया जावे। इसके बाद सरकण्डे या बरू से कागज पर

लिखने का अभ्यास कराया जावे और फिर होल्डर या पेन्सिल का प्रयोग करें। बालको को कलम ठीक ढंग से पकड़ना बताया जावे।

प्रश्न ६—बुनियादी शाला में सामुदायिक जीवन पर संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।

बालकों को समूह में रहना बड़ा ही भाता है। जब बालको को समान वयस्की रुचि एवं समान विशेशताओं वाले जाते है; तो उनके आनन्द का ठिकाना नहीं रहता। शिक्षालयो मे ऐसे बालक कुछ घण्टे नियमित रूप से रहते ही है। यहाँ बालक एक दूसरे से मिलते जुलरे, खेलते एवं सहयोग देते है। यहाँ वे अपने कार्य-कलापो को इस प्रकार क्रियान्वित करते है; जिसकी तारीफ सारा समुदाय करे तथा ऐसी क्रियाओं को हेय समझते है; जिसे समुदाय नापसन्द करे। कहने का तात्पर्य यह है कि समुदाय बालको को ऐसा शिष्ट जीवन प्रदान करता है जिसका अभ्यास कर बालक सचरित्र बनते है। शाला के समुदाय का ऐसा जीवन बालक को स्वपरिष्कार की प्रेरणा प्रदान करता है क्योकि बालक अपने साथियो की दृष्टि मे गिरना नही चाहता। अमेरिकी शिक्षा-शास्त्री जान डीवी भी शिक्षालयो के अधिकाधिक समाजीकरण पर बल देता है। उसका कहना है कि बालक को अपने व्यक्तित्व का विकास करने के लिए सामाजिक कार्यों मे अधिकाधिक भाग लेना चाहिये। उसके अनुसार शाला एक सामाजिक संस्था है जिसे बालक मे सामाजिक जागृति पैदा करने के लिए कोशिश करनी चाहिये। ऐसा होने पर वह (बालक) समाज की देन मे अधिकाधिक लाभान्वित हो सकेगा। वह समाज-सेवी बनेगा। शिक्षालय का जीवन बालको को तभी आकर्षित कर सकेगा जबकि इसका संगठन घरेलू जीवन पर आधारित हो। इस विवेचन से जाहिर है कि शाला मे सामुदायिक जीवन का ऐसा कार्यक्रम बनाया जावे जो पूर्णतः व्यवस्थित हो।

जिन शालाओ मे छात्रावास है, उनमे सुव्यवस्थित एवं योजनाबद्ध सामुदायिक जीवन के संचालन मे सुविधा होती है। दिवसीय शालायें भी सुविधानुसार सामुदायिक जीवन का कार्यक्रम निर्धारित कर तद्नुसार आचरण कर सकती है। बुनियादी प्रशिक्षणालयो मे छात्र गुरू आदर्श सामुदायिक जीवन व्यतीत करते हैं। इसी का आधार बनाकर एवं आवश्यक संशोधन करके वे

अपनी शालाओं मे सामुदायिक जीवन की व्यवस्था करें। नीचे कुछ अभ्यास एवं बिन्दु लिखे जा रहे है जिनका आचरण बुनियादी विद्यालय करें। शिक्षक एवं अधिपाठक सामुदायिक जीवन का नियमित लेखा-जोखा रखे और इसके आधार पर बालको का वार्षिक मूल्लांकन किया जावे। अभ्यास इस प्रकार है—(१) स्वस्थ एवं शुद्ध जीवन तथा स्वावलम्बन का अभ्यास (२) भोजन कार्य का सभ्यास (३) समाज सेवा का अभ्यास (४) सांस्कृतिक जीवन का अध्यास (५) शारीरिक शिक्षा (६) और जनतान्त्रिक जीवन का अभ्यास। इन अभ्यासो के सम्बन्ध मे इस पुस्तक में यथा स्थान चर्चा की गई। शाला मे समुदायिक जीवन से सम्बन्धित कुछ उपयोगी बातें इस प्रकार है—

(१) छात्रालययुक्त शालाओ की व्यवस्था की जाये।

(२) शाला का जोवन एक छोटे से कुटुम्ब के समान बनाया जावे जो प्रेम और सहकारिता पर आधारित हो। विद्यार्थी इससे लाभ उठावें।

(३) प्रत्येक शिक्षार्थी अपने उत्तरदायित्व को समझे और शाला के सभी कार्यों मे योगदान करे।

(४) पाक गृह कार्य सभी विद्यार्थी पारस्परिक सहयोग से खुद करें।

(५) शाला एवं छात्रालय की सफाई सभी बालक करें।

(५) शाला के विभिन्न कार्य-कलापो को सम्पन्न करने के लिए बालको की टोलियाँ बना दी जावे जो बारी बारी से कार्य करें।

(७) प्रत्येक बुनियादी शिक्षालय मे बालकों का मन्त्रिमण्डल बनाया जावे ताकि शाला के कार्य कलाप लोकतन्त्रात्मक विधि से किये जा सकें। मन्त्रि-मण्डल का विधान बनाया जाय।

मन्त्रिमण्डल को कार्यावधि अधिक से अधिक २ मास और कम से कम १ मास रहे।

(८) सर्व धर्म समानत्व की प्रार्थना की जावे।

(९) प्रति शनिवार शाला मे सांस्कृतिक आयोजन सम्पन्न किये जायँ। अवसरानुकूल पर्व एवं त्यौहार भी मनाये जावें।

(१०) शाला मे सहकारी भण्डार एवं मध्य दिवस स्वल्पाहार की व्यवस्था हो जिसका सम्पूर्ण कार्य बाल शिक्षकों की देख रेख में करें।

(११) शाला में प्रतिदिवस १५ मिनट शारीरिक व्यायाम और प्रतिसप्ताह एक दिवस ३० मिनट का सामूहिक शारीरिक व्यायाम की व्यवस्था हो।

(१२) शाला प्रतिवर्ष ४ हस्तलिखित पत्रिका, एव यथाशक्ति एक मुद्रित वार्षिक पत्रिका प्रकाशित करे।

प्रश्न ७—बुनियादी शाला भवन का चयन करते समय किन किन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है ?

शाला की स्थिति—बुनियादी शिक्षालय बाल शिक्षण के साथ ही साथ ग्राम विकास के केन्द्र भी होते है। ग्रामोत्थान हेतु इसमे अनेक शैक्षणिक, सामाजिक, सास्कृतिक एव आर्थिक आयोजन किए जाते है। बुनियादी विद्यालय ग्राम के विकास में इस प्रकार योग देता है कि प्रत्येक घर में ज्ञान का प्रकाश हो गाँव का सास्कृतिक धरातल उच्च बने और गाँव के नरनारी प्रेम और सहयोगी से जीवन बिताते हुये एक आदर्श समाज के रूप मे गठित हों। यह तभी हो सकता है जबकि गाँव के सभी लोग शाला के आयोजनो में सोत्साह भाग लें। स्पष्ट है कि शाला का भवन बस्ती से लगा हुआ हो तभी तो बालक, वृद्ध, युवा, नारी शीघ्रता एवं सुगमता से इसके कार्यक्रमों मे भाग ले सकेंगे। इसके अतिरिक्त हमे शाला भवन की स्थिति का चुनाव करते समय कुछ और भी बातें ध्यान मे रखनी होगी जो संक्षेप मे इस प्रकार है:—

(१) **शान्त एवं स्वच्छ वातावरण**—शाला भवन शान्त एवं स्वच्छ वातावरण मे स्थित होना चाहिए। शाला के समीप कोलाहल उत्पन्न करने वाले साधन जैसे सिनेमा-घर, चक्की, कारखाना, स्टेशन आदि न हो। साथ ही शाला मे स्वच्छ वायु मिलने की सुविधा हो। कहने का तात्पर्य है कि शाला का वातावरण सुरम्य हो और बालक को आकर्षक लगे। इसलिए उचित तो यह होगा कि बस्ती के बाहर सुरम्य वातावरण मे शाला स्थापित की जावे। परिस्थितिवश जब शाला भवन नगर या ग्राम के मध्य बनवाना हो हो तो इसके समीप बगीचा हो। इस प्रकार शालाएँ अस्वच्छ एवं अस्वस्थ बातावरण से अपने बालको को बचा सकेंगी।

(२) **बालकों के पहुँचने में सुविधा**—शाला भवन ऐसे स्थान पर स्थित

हो जहाँ ग्राम के छोटे बालकों को भी पहुँचने मे असुविधा न हो। बुनियादी प्राथमिक शाला में तो ६ वर्ष की आयु के बालक पढ़ने आने लगते हैं। शाला कईग्रामों अथवा मुहल्लों के बालकों की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है, अत: समान अन्तर पर स्थित हो।

(३) **खेल को मैदान समीप हो**—शाला भवन के समीप इतनी जमीन हो कि इसमें बालक अपनी क्रीडा सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें और गाँव वाले भी इसका लाभ उठा सकें और छोटी कक्षाओं के बालक भी इसका लाभ उठावें। साथ ही आवश्यकता पड़ने पर शाला कोई बडा कार्यक्रम सम्पन्न करना चाहे तो ग्राम के नर नारी उसमे बैठाये जा सकें। यदि खेल का मैदान शाला के समीप न भी हो तो वह ऐसे स्थान पर स्थित हो जहाँ से गाँव के अथवा मुहल्ले के सभी आयु के बालकों को उस तक पहुंचने मे किसी भी प्रकार की असुविधा न हो।

(४) **शाला के समीप कृषियोग्य भूमि का होना**—शाला भवन से लगी हुई कुछ भूमि ऐसी होनी चाहिए जहाँ कृषि की जा सके। ग्राम के उन विद्यालयों मे जहाँ कृषि मूलोद्योग के रूप मे है १० एकड जमीन हो। जमीन के कुछ भाग में कृषि, कुछ मे बागवानी, सागवानी, चरी आदि उगाई जावे तथा इसी मे कृषि के पशुओं तथा भृत्यों के रहने के लिए प्रबन्ध हो। इस भूमि में बालक फूल लगावेंगे, सब्जी लगावेंगे, खाद बनाना सीखेंगे और सामान्यविज्ञान विषय का समवायी विधि से ज्ञान प्राप्त करेंगे और शाल का वातावरण आकर्षक भव्य एवं सुन्दर बना रहेगा। बालक प्रकृति की गोद मे पढेंगे। वे स्वावलम्बन का पाठ भी पढेंगे।

(५) **सीलन एवं दलदल से बचाव**—शाला भवन ऐसे स्थान पर निर्मित किया जावें, जहाँ सीलन, दलदल अथवा कीचड़ आदि का भय न हो। उचित तो यही होगा कि शाला किसी ऊँचे स्थान अथवा टीले पर स्थित हो जहाँ से वर्षा का पानी नीचे ढल जावे और पर्याप्त वायु एवं प्रकाश सुविधा पूर्वक प्राप्त भी हो सके। मच्छर आदि बालकों को रोग ग्रस्त न कर सकें।

शाला भवन के द्वार, कमरे और बनावट आदि—बुनियादी शाला क प्रमुख द्वार, कमरों के दरवाजे और खिड़कियाँ इस ढंग से बनायी जावें कि उनमे

पर्याप्त मात्रा में सूर्य का प्रकाश पहुँचता रहे और वायु का आवागमन अबाध गति से चलता रहे।

(१) कमरे इस विधि से बनाये जावें जो समवायी शिक्षण बाल सभा आदि के उपयुक्त हों तथा इन क्रियाओं को सम्पन्न करने मे कोई बाधा उपस्थित न हो।

(२) शाला भवन के निर्माण में हमें स्वास्थ्यकारी प्रवृत्तियों और सुविधाओं का विशेष ध्यान रखना चाहिए क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन अपना नीड़ बनाता है। थकान के दृष्टिकोण से भी हवादार कमरे बडे उपयोगी होते है। इसलिए कमरे ऐसे हों जहाँ पर्याप्त मात्रा मे पर्याप्त प्रकाश एवं स्वच्छ वायु मिलती रहे तभी बालकों का मन भी पढ़ाई में लगा सकेगा। दम घुटने वाले कमरे जहाँ, न तो पर्याप्त प्रकाश ही पहुँच पाता है, उन्हें स्वच्छ वायु नहीं मिल पाती, बालक के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इस दृष्टि ४० बालकों के लिए २८×२२ फुट नाप का कमरा काफी होगा। कक्षा में रोशनदान हों, खिड़की हो। कक्षा कक्ष की ऊँचाई भी १६ या १७ फुट हो। कक्षा कक्ष ३० फुट से अधिक लम्बे न हों, अन्यथा बालकों को शिक्षक द्वारा कही गई बात सुनने मे असुविधा होगी।

(३) **प्रकाश और वायु**—शिक्षालय में प्रकाश और वायु पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो सके इसलिए शाला का मुख पूर्व दिशा की ओर होना चाहिए। इस प्रकार पूर्व और पश्चिम का प्रकाश प्राप्त होगा। बालकों को प्रकाश बाँई दिशा से मिलना चाहिए जिससे लिखते समय कापी या पट्टी पर अँधेरा नहीं पडेगा। कमरे में भी खिड़कियाँ फर्श से ३ या ४ फुट ऊँचाई पर निर्मित की जावें। कमरे के क्षेत्रफल का २० प्रतिशत भाग खिडकियों में लगाया जावे। कहने का तात्पर्य यह है कि बालकों को पुस्तक पढने में परेशानी न हो। आँखों पर जोर न पडे। प्रत्येक बालक को औसतन ५० घन फुट वायु मिल जायगी।

(४) शाला की इमारत समवायी शिक्षण के साथ ही साथ ग्राम विकास का केन्द्र भी होगी। अतः शाला, समाज और पालकों में निकट सम्पर्क स्थापित होगा। अधिकांश कार्यक्रम दोनों के सहयोग से सम्पन्न किए जावेंगे जो बालकों

तथा ग्राम विकास मे योग देंगे। शाला में सहकारी भण्डार और पुस्तकालय की स्थापना की जावेगी। इसका लाभ सभी उठावेंगे। मनोरंजनात्मक प्रवृत्तियों का भी बुनियादी शाला में विशिष्ट स्थान होग। अतः शाला भवन में इनके लिए उपयुक्त भवन व कक्षा इत्यादि की व्यवस्था करनी ही होगी।

प्रश्न ८—संक्रामक रोगों से आप क्या समझते हैं ? ये कैसे फैलते हैं ?

प्रमुख संक्रामक रोगों का उल्लेख करते हुये बताइये कि उनके निराकरण के लिए आप क्या सुझाव देंगे ?

संक्रामक रोगों से बचाव किस प्रकार किया जा सकता है ?

बुनियादी शला को संक्रामक रोगों से बचाने के लिए आप क्या मार्ग अपनायेंगे ?

परिचय–इन्हे छूत के रोग भी कहते है। ये रोग अति सूक्ष्म कीटाणुओ द्वारा फैलते है। यह कीटाणु बड़ी ही तीव्र गति से बढ़ते हैं। इन्हें नेत्रों से देखा नही जा सकता। वास्तव में छूत के रोगो के दो भेद है–संसर्गज और संक्रामक। संसर्गज रोग उन्हें कहते है जो रोगी के सम्पर्क मे आने से फैलते है—जैसे दाद, खाज, आँखें दुखना आदि। "सक्रामक रोग रोगी के" दस्त, पेशाब, थूक, कै आदि से फैलते है अर्थात् हैजा। संक्रामक रोग के फैलने का कारण गन्दगी होती है। "संक्रामक रोगों का फैलना"—संक्रामक रोग के प्रसार के अनेक ढंग है यहाँ संक्षेप में इस विषय में लिखा जारहा है—

१. **हवा द्वारा**—चेचक, जुकाम, खाँसी, तपैदिक आदि रोग हवा के द्वारा फैलते है। इनका जबरोगी नाक से भीतर की साँस बाहर निकलता है तो इस वायु में रोग के कीटाणु होते हैं। जब कोई स्वस्थ मनुष्य साँस लेता है तो ये उसकी स्वाँस के साथ शरीर के भीतर प्रवेश कर जाते हैं।

२. **कीड़ों द्वारा**—मच्छर, पिस्सू, खटमल और आदि कीड़ों के काटने मे भी संक्रामक रोग फैलते हैं जैसे मलेरिया, प्लेग आदि।

३. **जल द्वारा**—हैजा, पेचिश, मियादी बुखार आदि ऐसे रोग हैं जो जल एवं खाद्य वस्तुओं से फैलते हैं। जब हम पानी पीते है अथवा भोजन खाते है तो ये उनमें सम्मिलित होकर हमारे शरीर में घुस जाते हैं।

४. सम्पर्क द्वारा—खाज, दाद, चेचक आदि ऐसे संक्रामक रोग हैं, जो रोगी के सम्पर्क मे आने से उसके द्वारा प्रयुक्त वस्तुओं जैसे बर्तन और कपड़े आदि के उपयोग मे लाने बड़ी जल्दी फैल जाते है।

५. अन्य—इनके अतिरिक्त घावो के द्वारा एवं प्रजनेन्द्रिय द्वारा भी रोग फैल जाते है। सुजाक एवं गर्मी ऐसे ही रोग है जो प्रजनेन्द्रिय के कारण फैल जाते है।

संक्रामक रोगों से सुरक्षा-संक्रामक का प्रसार चार रूपो मे होता है। ये रूप है-(१)द्रुत संक्रामकता,(२)स्थानीय सक्रामकता,(३) आकस्मिक संक्रामकता और (४) विश्व व्यापी संक्रामता। ये क्रमशः नगर या गाँव मे रोग शीघ्रता से फैलने पर, जगह-विशेष के कारण, कभी कदा एक दो व्यक्तियो को होने पर एवं विश्व के एक छोर से दूसरे छोर तक प्रसार होने पर देखे जा सकते है।

बचाव—संक्रामक रोगो की भयानकता को देखते इससे बचाव के लिए आवश्यक कदम तत्काल उठाने चाहिये जैसे (१) पानी, घर और वस्त्रो का स्वच्छता पर अधिक ध्यान दिया जाय (२) संक्रामक रोग से पीड़ित व्यक्ति को दूसरे स्वस्थ लोगो से अलग रखा जावे। (३) उसे अस्पताल मे भर्ती करवा दिया जाय (३) इस रोग से पीड़ित होते ही स्थानीय शासकीय अथवा अशासकीय डाक्टर या वैद्य से सहायता ली जावे तथा स्वास्थ्य विभाग को सूचित किया जावे। (४) रोग के प्रसार के विषय मे जानकारो प्राप्त होने पर इनसे सुरक्षा के लिए टीके लगवाये जावें जैसे चेचक, हैजा आदि के और (५) विसंक्रमण के लिए रागी के कपडे और वर्तन पानी मे उबाल लिये जावें ताकि कीड़े मर जावें तथा जिन चीजों को रोगी ने प्रयोग किया है जैसे, वस्त्र, वर्तन, पुस्तक आदि को कीटाणु नाशक दवाइयो जैसे पोटेशियम परमेगनेट, वोरिक एसिड, ब्लीचिंग पाउडर, आईड़ोफार्म से कीट रहित करके रोगो का दमन किया जा सकता है।

बालक और रोग—बालको का शरीर तरुणो की अपेक्षा नरम होता है। उन पर संक्रामक रोग शीघ्र ही असर डालते है। कुछ रोग तो केवल बालकों को ही होते है, उदाहाणार्थ कुकर खाँसी। संक्रामक रोग से ग्रसित बालक को शाला मे नहीं आने देना चाहिये। अन्य बालकों से अलग रखना चाहिये। शाला मे डाक्टरी

निरीक्षण अवश्य कराया जावे। जब द्रुत संक्रामकता का प्रसार हो तो शाला बन्द करदी जावे क्योकि बालक समूह मे रहते है और समूह मे संक्रामक रोग तीव्र गति से फैलते है। शाला को पूर्ण स्वच्छ रखना चाहिये। शौचालय एवं मूत्रालय को कीटनाशक दवाइयो जैसे चूना फिनाइल से साफ कराना चाहिये। कमरे की वस्तुओ को सूर्य की रोशनी मे सुखाना चाहिये और पानी लाल दवाई डालकर पीना चाहिये।

प्रमुख सक्रामक रोग तथा उनका निदान एवं उपचार—

हैजा—यह गर्मियो के दिनों मे फैलता है। कीटाणु इसे फैलाते है। इसका असर २ से ५ दिन तक रहता है। हैजे के कीटाणु भोजन अथवा पीने के पानी के साथ हमारे शरीर के भीतर प्रविष्ट हो जाते है। इसके फलस्वरूप रोगी को कै और दस्त की शिकायत होने लगती है। रोगी की उल्टी और मल पर मक्खियाँ बैठती है। वे अपने साथ हैजे के कीटाणु से जाती है। मीठे तथा भोज्य सामग्री पर बैठती और हैजे का प्रसार करती है। इस रोग की दशा मे रोगी को सफेद दस्त लगते है। कै होती है। वह घबड़ाता है। रोगी कमजोर हो जाता है और उसके नेत्र भीतर धँस जाते है।

इसका उपाय तो यही है कि खाने पीने की वस्तुओं को मक्खियो से बचाया जावे। हैजे से त्रस्त रोगी का कै दस्त को जला अथवा जमीन मे गाढ़ दिया जावे। उसके कपड़े और बर्तन दूसरे व्यक्ति प्रयोग न करें। सड़ी गली वस्तुऐं न खाई जावें। खाना गरम खाया जावे। नीबू का सेवन किया जावे। पानी मे लाल दवा डाल दी जाय। रोगी अमृतधारा और प्याज का सेवन करे। विद्यालय मे यदि किसी छात्र को कै हो जावे तो बालको को उससे दूर रखें। रोगी बालक को शीघ्र डाक्टरी सहायता दें। बालकों के हैजे का टीका लगवाया जावे।

मलेरिया:—इसे मच्छर फैलाते है। किसी रुग्ण व्यक्ति को काटकर मच्छर स्वस्थ व्यक्ति को काटता है। इस तरह से स्वस्थ व्यक्ति भी मलेरिया से पीड़ित हो जाते है। मच्छर गन्दे स्थानों, कोनों, अन्धेरी जगह, गड्ढो मे होते है। भारतीय ग्राम इसके बुरी तरह शिकार है। इसके रोगी को जाड़ा

देकर बुखार आता है। उसके पसीना निकलता है। शरीर टूटता है। जी खराब हो जाता है। भूख नही लगती। सिर मे दर्द होता है।

मलेरिया से बचने के लिए मच्छरों का अन्त कर देना चाहिये। घर में तथा घर के आस पास सफाई रखें। गड्ढे आदि में पानी जमा नही होने दिया जावे। गड्ढों, पोखर और घर में मच्छर नाशक औषधि छिड़की जावे। स्वास्थ्य विभाग से सम्पर्क स्थापित घर और शाला में डी० टी० टी० औषधि छिड़कवानी चाहिये। घर के समीप कूड़ा आदि नही डालना चाहिये। मलेरिया के रोगी को अलग रखें। कुनैन का सेवन करना चाहिये। रुग्ण बालक को पर्याप्त विश्राम करने दिया जावे। शाला में न आवे। उन्हे स्वच्छ रखा जावे। कुनैन का सेवन यथोचित रीत से कराया जावे।

चेचक—यह बाल, युवा यहाँ तक की वृद्धों को भी हो जाती है इसको जन साधारण में बड़ी माता कहते है। पहले इसका बड़ा जोर था। अब कम हो गया। क्योंकि इसके टीके की खोज की जा चुकी है। इससे ग्रसित बालक मर जाते थे। इस रोग से चेहरे पर गड्ढे से पड़ जाते है। कभी कभी अन्धे भी हो जाते है। यह दस से चौदह दिन तक रहती है। लगभग १।। महीना पूर्ण स्वस्थ होने मे लग जाता है। यह रोगी की चीजो का स्तैमाल करने, थूक द्वारा, कीटाणु द्वारा और दानो के खुरंट के द्वारा फैल जाती है। शुरू में रोगी के माथे मे पीड़ा, चेहरे पर लाली, जोर का बुखार और पीठ मे पीड़ा होती है। माथे और कलाई पर तीसरे रोज लाल दाने उठ आते है फिर शनैः शनैः यह सारे शरीर मे हो जाते है। इन दानों मे पानी भरा हुआ होता है जो ९ वें दिन गाढ़े पीव का रूप धारण कर लेता है। १४ वें दिन खरोंट बनने शुरू हो जाते है और कुछ दिन बाद ये झड़ने लगते है।

इससे बचने का उपाय है चेचक का टीका लगवाया जाय। डाक्टर से परामर्श करके बालको की अवस्थानुसार ३ बार टीका लगवाया जावे। एक बार के टीकेका असर वैसे तो सम्पूर्ण जीवन रहता है परन्तु यह असर कम हो जाता है शाला प्रवेश के समय प्रत्येक बालक के प्रत्यक दशा मे टीका लगवाना अनिवार्य कर दिया जाय। जिस बालक मे इस रोग से पीड़ित होने के आसार दिखाई दें

उसे तत्काल घर भेज दिया जावे । जब तक बालक रोग मुक्त न हो जावे । तब तक उसे शाला मे न आने दें ।

छोटी माता—यह खरोट अथवा रोगी के थूक मे मिले कीटाणु द्वारा फैलता है । तीन सप्ताह तक इसका असर रहता है । इसके रोगी के पेट अथवा छाती और फिर सम्पूर्ण शरीर पर दाने निकलते है, दानो पानी मे भरा होता है जो तीन चार दिन मे सूख जाते है । छोटी माता का रोग ज्यादा नुकसानदायक नही है । इसके लक्षण दिखाई पड़ते ही यह पता लगाना चाहिए कि बड़ी माता तो नही है । यह अपने आप ठीक हो जाता है । शाला म ऐसे बालको को न आने दिया जावे न उसके परिवार के अन्य बालको को ही । पपड़ियो को जला दिया जाय ।

कुकर खाँसी—यह छोटे बालको को होता है इससे बालकों के फेफड़े खराब हो जाते तन्दुरुस्ती क्षीण हो जाती है और क्षय रोग जाने का डर रहता है । इसमे बालको को बड़ी जोर की खाँसी आती रहती है, चेहरा लाल पड़ जाता है, साँस लेने कठिनाई होती है । बालक को कै हो जाती है । इसके लिए बालक को दूषित कफ का इन्जेक्शन लगवाना चाहिए और क्लोरो माईटिसिन दवाई का सेवन कराया जावे । यह निश्चित अवधि के उपरान्त जाती है । कीटाणु द्वारा फैलती है इसके रोगी को भी लगभग १।। माह तक शाला मे न आने दिया जावे । तत्काल इलाज की व्यवस्था की जाय ।

खाज—यह छूत का रोग है । इसमे बालक के खुजली मचती है । यह त्वचा की बीमारी है । यदि घर मे एक को यह बीमारी होती है तो सभी को हो जाती है । यह उँगलियों के बीच मे सबसे पहले होती है बड़ी जोर की खुजली मचती है । खुजाने से घाव बन जाते है । इसके रोगी को चटपटी चीजें न खाने दीजावें । गन्धक के पानी से स्नान कराया जावे और गन्धक का मल्हम घावों पर लगावें । इसके रोगी बालक को पूर्ण रूप से रोग मुक्त न होने तक शाला मे न आने दिया जावे ।

तपैदिक—इसे क्षय रोग या टी०बी० कहते है । यह भयानक रोग है । यह अधिकाशतः जान लेकर ही पिण्ड छोड़ती है । इस रोग मे रोगी के फेफड़े खराब हो जाते है । शरीर बड़ा कमजोर हो जाता है । इसके कारण दूषित

जलवायु, खराब अथवा कम भोजन, वंशानुक्रम, अधिक मेहनत करना, विलासिता आदि है। इसमें रोगी को खाँसी और कफ की शिकायत होती है महीन बुखार हमेशा चढ़ा रहता है और रोगी को भूख बहुत कम लगती है। इसके रोगी को क्षय से पीडित गाय या बकरी का दूध न दिया जाय। घनो बस्ती से दूर नदी, पहाड जंगल के समीप बने विशेष अस्पतालो जिन्हें सनेटोरियम भी कहते है, रखा जावे। रुग्ण व्यक्ति शुद्ध वायु और सूर्य के प्रकाश का प्रचुर मात्रा में सेवन करे। फेफडों को प्रभावित करने वाले रोग वैसे जुकाम खाँसी आदि से बचा जावे। इससे पीड़ित बालक को शाला में न आने दिया जाय। उसके मलमूत्र, थूक पर मिट्टी डाल दी जाय। शिक्षको को चाहिए कि वे बालको को स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक हिदायतें दे और स्वास्थ्य प्रद आहार से परिचित करावें।

इन्फ्लूएन्जा—इसका प्रभाव विश्व व्यापी होता है। यह जुकाम से मिलता जुलता परन्तु होता उससे अधिक कष्टदायक। कीटाणु इसका प्रसार करते है। इसके लक्षण है नाक तथा नेत्रो से पानी बहना, शरीर टूटना, माथे में पीड़ा, बुखार का चढ़ना, और शरीर का कमजोर हो जाना आदि। इसके प्रभावित रोगी को डाक्टर की सहायता होनी चाहिए। वह आराम करे। इन्जेक्शन लगवाये। दण्ड से बचे। इस रोग से पीड़ित बालक के तत्काल उसके घर पहुँचाया जावे। उसे पर्याप्त आराम दें। इस रोग का प्रचार बड़ी तीव्र गति से होता है। इसके अधिक प्रकोप होने पर शाला बन्द कर देना श्रेयस्कर है।

प्रश्न ६--"शाला-ग्राम विकास का केन्द्र है" सिद्ध कीजिए।

रूढ़िगत शालाओ में तो शिक्षक बालको को कुछ घण्टे प्रतिदिन किताबी ज्ञान देकर अपने कर्तव्य से मुक्त हो जाता है। इसके उपरान्त उसे न तो शाला से प्रयोजन और बालक की चिन्ता। स्थानीय समाज से सम्पर्क स्थापित करना और इसके विकास में योग देने की कल्पना तो वह करता ही नही है। फलतः बालको और उनके अभिभावको के हृदय में न तो शिक्षक के प्रति सम्मान का भाव है और न शिक्षालय के प्रति ममता ही। शिक्षा के क्षेत्र में उत्पन्न अनेकों विषम समस्यायें इसी स्थिति के कारण उत्पन्न हुई है। अनु-

शासन की समस्या उनमें से एक है। स्वतन्त्र भारत में इस प्रकार की स्थिति को अधिक दिनों तक चलने नही दिया जा सकता है। इसलिए बुनियादी शिक्षालयों का अधिकाधिक समाजीकरण किया जारहा है शालाओं को ग्राम विकास की प्रवृत्तियों का केन्द्र बनाया जारहा है अब बुनियादी शिक्षक बालकों का सर्वांगीण विकास करते हुए शाला मे ऐसी प्रवृत्तियों का संचालन करता है जो ग्राम विकास मे सहायक होती है। वैसे तो यह कार्य विकास विभाग के अन्तर्गत ग्राम सेवक एवं सेविकाऐं भी सम्पन्न करते है लेकिन शिक्षक इस कार्य को भली भाँति सम्पन्न कर सकता। इसीलिए सभी बुनियादी शालाओ से यह आशा की जाती है कि वे ग्राम के केन्द्र के रूप मे विकसित हों। समाज और शाला मे निकट सम्बन्ध स्थापित हो।

नीचे कुछ प्रवृत्तियाँ दी जारही है, शिक्षक इनके माध्यम से शाला को ग्राम का केन्द्र बनाने मे सहायक हो सकेंगे। ध्यान रहे कि इन प्रवृत्तियो का संचालन लोकतन्त्रात्मक विकास से सम्पन्न किया जावे।

१. **सांस्कृतिक आयोजन**—सांस्कृतिक आयोजन पर पृथक से प्रकाश डाला जारहा है यहाँ तो यह बताना ही पर्याप्त है कि शाला इनकाआयोजन करे। ये ग्रामीणो के सांस्कृतिक धरातल उठाने वाले हो। उनमे फैली कुरीतियो और अन्धविश्वास पर मार्मिक चाट करते हो। ये शाला मे आयोजित किये जावें। स्थानीय जनता एवं शाला-समाज मिलकर इनको मनावें। इनमे लोक गीत, लोक नृत्य, लोक नाटक को स्थान दिया जावे तथा चलचित्र प्रदर्शन की भी व्यवस्था कराई जावे।

सफाई एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रम—शाला आरोग्य केन्द्र का संचालन करे, एवं ग्राम मे सामूहिक सफाई की व्यवस्था भी करे। ग्रामीणो को भाषणो, संगोष्ठियों, प्रदर्शनी आदि के माध्यम से स्वास्थ्य सम्बन्धी जानकारी, आहार, पानी एवं सफाई सम्बन्धी बातें बता सकती है। इन समस्याओ के समाधान के रूप मे हल प्रस्तुत कर सकती है।

समाज सेवा—समाज सेवा की प्रवृत्तियो के विषय में भी लिखा जा चुका। समाज सेवा के अन्तर्गत शाला भवन, शाला का मार्ग, शौचालय, मूत्रालय का

निर्माण, सड़क बनाना, पुलिया बनाना आजाते हैं। इसी प्रकार प्राथमिक चिकित्सा, संक्रामक रोगों की रोकथाम में योग देना आदि कुछ कार्य क्रमों को शाला संचालित कर सकती है।

आर्थिक आयोजन—ग्राम का सर्वेक्षण कर ग्राम के आर्थिक विकास मे योग। स्थानीय उद्योग धन्धों का अध्ययन कर इनमें सुधार कर बातें प्रस्तुत करें। उदाहारणार्थ कृषि के नवीन औजार, अधिक फसल उगाने की विधि, खाद का निर्माण, आदि बातो के सम्बन्ध मे ग्रामीणों का ज्ञान दे। वह प्रकृति द्वारा उपलब्ध वस्तुओ के समुचित उपयोग पर भी बल दे ताकि इन्हे अधिकाधिक जन हितकारी बनाया जा सके। ग्रामीणो की बनी वस्तुओं का प्रदर्शनी मे प्रदर्शन का उन्हे प्रोत्साहन दें।

समाज शिक्षा केन्द्र के रूप में विकास—शाला समाजिक शिक्षा का केन्द्र बन जाये। इसके अन्तर्गत पुस्तकालय एवं वाचनालय, अध्ययन मण्डल, रेडियो, सास्कृतिक एवं सामाजिक आयोजन, शैक्षणिक पर्यटन, संग्रहालय एवं प्रदर्शनी आदर्श ग्राम रचना की योजना बनाना, सामूहिक प्रार्थना, सेवा दल, ग्राम रक्षक दल, सहकारी समिति की स्थापना, ग्रामो के उद्योगो के विकास मे योग आदि की व्यवस्था सुविधानुसार कर शाला ग्राम का केन्द्र बन सकती है।

कहने का तात्पर्य यह है कि शाला ग्राम की आवश्यकताओं, समस्याओं का पता लगावे। तदनुसार विभिन्न कार्यक्रमो की योजना बना कर ग्रामीणों का सक्रिय सहयोग प्राप्त करें और इस प्रकार ग्रामोत्थान मे अपना योग दें। शाला के अध्यापको के मध्य विभिन्न गतविधियों का बटबारा कर दिया जावे। प्रत्येक शिक्षक के निर्देशन मे विद्यार्थी की एक-एक टोली बनादी जावे।

प्रश्न १०—अबुनियादी शाला को आप बुनियादी शाला में किस प्रकार रूपान्तरित करेंगे ?

बुनियादी शालाओं की प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए ?

उत्तर—आज बुनियादी शिक्षालय देश में बड़ी संख्या मे खुल रहे हैं। परम्परित शालाओ को बुनियादी ढांचे में परिवर्तित किया जारहा है। इस

परिवर्तन के फलस्वरूप शासन को बड़ी धनराशि की व्यवस्था करनी होगी। अतः जब तक यह व्यस्वथा न होने पावे तब तक बुनियादी शालाओ मे बुनियादी शाला के ऐसे कार्यक्रम अविलम्ब लागू कर दिये जावें जिनका व्यवस्था मे व्यय न होता हो अथवा आसानी से शाला मे प्रबन्ध हो जाय। नीचे ऐसी ही प्रमुख प्रवृत्तियो का उल्लेख किया जारहा है जिन्हे शिक्षक बुनियादी शालाओ मे सुगमता से अपना सकते है—

सामूहिक प्रार्थना—प्रत्येक शाला मे सर्व धर्म समानत्व के आदर्श के अनुरूप प्रार्थना की व्यवस्था की जावे एवं प्रशिक्षण केन्द्रो के ढंग पर आवश्यक हेर फेर के साथ इसका पालन हो।

सफाई एवं आरोग्य—बुनियादी तालीम मे सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है। अतः बालक शाला की सफाई करें। नित्य ही बालोपयोगी खेल खिलाये जायं। शालेय वातावरण को स्वच्छ एवं स्वास्थ्यप्रद रखा जावे।

मध्य दिवस स्वल्पाहार—शिक्षक, ग्रामीणो के सहयोग से बालका के लिए मध्य दिवस स्वाल्पाहार की व्यवस्था करें जिसे बालक स्वयं बनाये एवं शिष्ट ढंग से खायें।

स्वायत्त शासन की व्यवस्था—शाला मे स्वायत्त शासन अर्थात् बालको को ग्राम सभा मन्त्रिमण्डल आदि का गठन किया जाय। इसके ऊपर अन्यत्र प्रकाश डाला जा चुका है।

साँस्कृतिक आयोजन—इसी पुस्तक मे अन्यत्र पढें।

पत्रिका सम्पादन—हस्तलिखित पत्रिकाओ का सम्पादन बालको से कराया जावे। सुविधानुसार वार्षिक पत्रिका का भी।

उद्योग कक्ष—मूलोद्योगो की व्यवस्था की जावे एवं स्थानीय कुटीरोद्योगो एवं गृह उद्योगों का सहारा लेकर बालको को समवाय द्वारा किया जाय।

शाला सहकारी भण्डार—शाला, सहकारी भण्डार चलावे। ग्रामोपयोगी एवं बालोपयोगी अन्य पाठ्येतर क्रियाओं की व्यवस्था करें। स्काउट दल, समाचार वाचन पर्यटन आदि की व्यवस्था शाला सुविधानुसार कर सकती है। हाँ! ये सारे कार्यक्रम शैक्षणिक महत्व लिये हुये हो।

प्रश्न ११—बालकों द्वारा पुस्तकालय के समुचित उपयोग के लिए आप कौन कौन से उपाय काम में लायेंगे ?

पुस्तकों का किसी भी शिक्षा प्रणाली मे बड़ा महत्व होता है। पुस्तकें अतीत की जीती जागती तस्वीरों का काम करती है। विचार परिवर्तन एवं ज्ञान के लिए पुस्तकों का बड़ा महत्व है। इसीलिए शालाओं मे पुस्तकों की व्यवस्था की जाती है अतः आवश्यक है कि बालक पुस्तकालयों का अधिकाधिक उपयोग करें। इसलिए आकर्षक एवं बालक की रुचि के अनुकूल पुस्तको का चुनाव करने के साथ-साथ हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पुस्तकें बाल के विकास के अनुकूल, मनोरजक, सरस, चित्रमयी मोटे अक्षरों वाली, रोचक शैली की, बालको के व्यावहारिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाली सरल, भाषा वाली तथा कापीनुमा साइज वाली हो। तब ही बालक अधिकाधिक रुचि लेंगे।

पुस्तक चयन का तरीका एवं व्यवस्था—

(१) पुस्तकों की सूची बालको के मनोविकास के अनुकूल एवं कक्षा के स्तर के अनुसार बनी हो। विशेष पुस्तको की अधिक प्रतियाँ भी रखी जाती हैं।

(२) पुस्तकालयाध्यक्ष बालको को पुस्तक को पढने का सुझाव दें :

(३) अध्यापक अपनी कक्षा मे पुस्तक वितरित करे।

(४) निश्चित दिन एवं निश्चित समय पुस्तक वितरण के लिए रखा जावे।

(५) निश्चित अवधि के लिए पुस्तकें प्रदान की जावें।

(६) पुस्तकालय भवन की दीवालो पर सूक्तियाँ, वचन, चित्र आदि लगें हों जिनसे बालको को पुस्तकें पढ़ने मे समुचित वातावरण मिल सके।

(७) पुस्तक देते सयय शिक्षक पुस्तक सम्बन्धी निर्देश दें कि अमुक विषय अथवा पाठ का अध्ययन किया जावे।

(८) पुस्तक पढने वाले बालकों का लेखा जोखा रखा जावे तथा अधिक पुस्तक लेने वाले एवं पढ़ने वाले को प्रतिमास पारितोषिक की व्यवस्था की जावे।

पुस्तक वितरण की व्यवस्था जितनी सरल होगी तथा पुस्तकें इच्छानुसार होंगी, वातावरण उतना ही सुखद होगा तो स्वतः बालकों में पुस्तक पढने की आदत पडेगी, वे अध्ययनशील बनेंगे।

पुस्तकालय भवन में बैठने की ठीक व्यवस्था की जावे तथा वातावरण शान्त हो। लेखा जोखा रखकर परीक्षा में समय कुछ अंक इस निमित्त निर्धारित रखे जावें तो निश्चय ही बालक, पुस्तकालय का अधिकाधिक उपयोग कर समय का सदुपयोग करेंगे।

प्रश्न १२—शाला के उचित प्रबन्ध में पुरस्कार तथा दण्ड का क्या स्थान है ?

अनुशासन मे जो स्थान दण्ड का है वह पुरस्कार का भी है। अनुशासन भंग करने वालो को दण्ड तथा पालन करने वालों को पुरस्कार मिलता है। "यदि दण्ड अपराध में रोड़ा है तो पुस्कार अच्छी आदतो का निर्माता अर्थात दण्ड की प्रेरणा व्यवहार क्षेत्र मे नकारात्मक प्रेरणा है तो पारितोषिक का विधान सकारात्मक प्रेरणा।"

स्वभाव से मनुष्य पुरस्कार का इच्छुक है, वह जो भी कार्य करता है, उसके पीछे पुरस्कार की भावना आ जाती है।

पारितोषिक का प्रयोग प्रारम्भ मे विद्यार्थियो मे और लगन से परिश्रम करने की प्रेरणा प्रस्तुत करने के लिए होता है। लेकिन इसकी अधिकता बालक को लोभी बना सकती है। निस्संदेह इससे कार्य मे लगन पैदा होती है लेकिन इस स्थूल पारितोषिक से बालक का ध्यान हटाकर निकट साथियों, सम्बन्ध वालो एवं शिक्षको की प्रशंसा आदि को ही बड़ा पारितोषिक समझने लगे, ऐसी व्यवस्था हो। शालाओं मे अधिक अंक प्राप्त करने वाले तथा क्रीडा एवं व्यायाम प्रतियोगिता में जीतने वालों को पुरस्कार विशेष रूप से दिये जाते है। परन्तु यह विशेष लाभप्रद नही। सर्वोत्तम का क्या उत्तम होगा ? ऐसे कमजोर बालक जिन्होने अधिक परिश्रम करके सुधार किया, उन्हे उत्साहित करना लाभप्रद होगा। बालक ने कितना सुधार वर्ष भर में किया है इसी के आधार पर पारितोषिक दिया जावे न कि इस पर कि वह अन्य विद्यार्थियों से इतने अधिक अंक पाता है।

कहने का तात्पर्य है कि बालकों मे अनुशासन की भावना एवं सदआचरण का विकास करने वाले पुरस्कार दिये जावें ।

प्रश्न १३—बालक के विकास में किन्हीं दो का महत्व बतलाइये—
(क) उत्सव (ख) सांस्कृतिक कार्यक्रम (ग) शैक्षणिक यात्रायें ।

उत्सव—उत्सवो का बुनियादी तालीम के अनुसार बालकों के विकास मे बड़ा महत्व है । उत्सव के दिनों में पहले शाला बन्द रहती थी किंतु अब शाला में छुट्टी न रखकर इनका आयोजन किया जाता है । इन्हें सामाजिक शिक्षण का उत्तम साधन माना जाता है । इनके द्वारा शिक्षक और बालक में घनिष्ट सम्पर्क स्थापित होता है । एक शिक्षा शास्त्री के अनुसार "ये वे मनोवैज्ञानिक क्षण है जिनमे सामाजिक अध्ययन उनके प्रत्यक्ष रूप में उपस्थित होकर सरल ग्राह्य होता है । सृजनात्मक और रचनात्मक व सांस्कृतिक प्रवृत्तियो के प्रकाशन का अवसर प्राप्त होता है । बालको मे स्फूर्ति एवं उत्साह आता है । बालकों की आत्मा का परिचय मिलता है ।" बालकों का जीवन सरस होता है । बालक सुसंस्कृत बनते है, नेतृत्व की भावना का विकास होता है । बालक का अध्ययन व्यावहारिक होता है ।

सांस्कृतिक आयोजन—पूर्व शालाओं के विपरीत बुनियादी शालाओं मे सांस्कृतिक आयोजनो की धूम मची रहती है ये आयोजन सोद्देश्य होते है और बालक के विकास में सहयोग देते है । इन कार्यकमों से बालक अपनी पूर्व संस्कृति से परिचय प्राप्त करते है । अक्षर ज्ञान को अधिक महत्व प्रदान न कर शिक्षा मे प्रगतिशील दृष्टिकोण जब से अपनाना शुरू किया है तब से बालक क सांस्कृतिक विकास की ओर ध्यान दिया जाने लगा है । ये हमारे सास्कृतिक स्तर के प्रतीक है । शाला में सांस्कृतिक जीवन के अभाव में बालकों का जीवन नीरस होता है । बालकों मे राष्ट्रीयता की भावना भरने, नेतृत्व शक्ति का विकास करने, बालको को सत्यम, शिव, सुन्दरम का पुजारी बनाने के लिए इनका मनाया जाना आवश्यक है । ये स्थानीय संस्कृति का परिष्कार करने वाले हों एवं प्रति शनिवार एवं विशेष अवसरों पर आयोजित किये जाँय ।

शैक्षणिक यात्रायें—शैक्षणिक यात्रायें बालक के ज्ञान को सरल, रोचक और व्यापक बनाती है। वह अनुभव प्राप्त करके सीखता है। इस प्रकार सीखा हुआ ज्ञान व्यावहारिक होता है और शीघ्रता से भूला नहीं जा सकता है। इसीलिए शैक्षणिक यात्राओं का आयोजन शालाओं द्वारा किया जाता है। बालक उत्साही व उत्सुक होते है तथा भ्रमण का उन्हें शौक होता है। कक्षा की चहार दीवारी की अपेक्षा भ्रमण द्वारा सीखा हुआ ज्ञान स्थायी होता है। इर दृष्टिकोण का विस्तार व रुचि का विकास होता है। खेलते, कूदते, चलते फिरते बालक शिक्षा ग्रहण करते है आवश्यकता इस बात की है कि भ्रमण उद्देश्य हीन न हो। प्राथमिक शाला के बालको को आसपस के नदी नाले एवं प्राकृतिक एवं एतिहासिक स्कूलों की सैर करानी चाहिए—कक्षा चार व पाँच के बालको को जिले की सैर कराई जा सकती है परन्तु बालको से परामर्श कर लिया जाय।

प्रश्न १४ – ग्राम की उन्नति में शाला किस प्रकार सहायक हो सकती है ?

बुनियादी शिक्षा के अनुसार शाला ग्राम की उन्नति की रामबाण औषधि है। बुनियादी शाला नीचे लिखे ढंग से ग्राम की उन्नति मे सहायक हो सकती है—

उद्योगों का विकेन्द्रीयकरण— बुनियादी शाला में उद्योग केन्द्रित शिक्षा प्रदान की जाती है। ग्रामोद्योगों, गृहोद्योगों पर बल दिया जाता है। फलतः उद्योग विकेन्द्रित होते है और समाज की व्यवस्था बदलती है। जो श्रम करता है वही आनन्द उठाता है। हस्त कौशल के प्रति प्रेम—बालक हाथ से चीजें बनायेंगे उपयोग करेंगे, उन्हे संतोष होगा। परोक्ष रूप से गाँव के कारीगरों के बने समान की खपत होगी।

समानता तथा स्वतंत्रता की स्थापना—हमारे देश में जातिवाद, वर्ग भेद का बोलबाला है। नई तालीम वर्ग विहीन समाज की रचना करना चाहती है। बिना ऊँच नीच के भेदभाव के बालक सफाई कार्यों, सांस्कृतिक आयोजनों में भाग लेते हैं। उद्योग की क्रियायें स्वतन्त्र रूप से करते है अतः समानता एवं स्वतन्त्रता की भावना आती है।

स्वावलम्बी समाज—प्रत्येक बालक स्वावलम्बी बनने का प्रयत्न करते हुए दूसरे का कम से कम सहारा लेता है। इसी प्रकार गाँव एक आत्म निर्भर इकाई के रूप में अग्रसर होता है।

श्रम की प्रतिष्ठा और छूआछात का अन्त—शाला में बालक कार्य करके सीखते है, उनमें श्रम के प्रति आदर भाव पैदा होता है। प्रत्येक कार्य बालक बिना भेदभाव के एक दूसरे के सहयोग से करते है। छूआछूत की भावना का नाश होता है।

सहकारिता से कार्य—एक लेखक के अनुसार बुनियादी शिक्षा के कार्यक्रमो को पूर्ण करने मे शाला के बालको की सहकारिता से कार्य करने की कल्पना की गई है। बुनियादी शाला अपनी सहकारी समिति का नमूना भी अपने गाँव वालों के सामने रख सकती है। इससे गाँव वालों को ऐसी सहकारी समितियाँ बनाने तथा संगठित करने की प्रेरणा मिलेगी।

सबको शिक्षित करेगी—इस तालीम में ६ से १४ वर्ष तक के सभी बालको को अनिवार्य रूप से शिक्षित किया जावेगा। यह जीवन द्वारा जीवन के लिए शिक्षा है। जब सब ही शिक्षित हो जावेंगे तो रूढ़िवादिता, अन्धविश्वास, द्वेष, भेदभाव का काला मुँह सदैव के लिए हो जावेगा।

ग्राम पुनर्गठन—शाला समाज का सुसंस्कृत छोटा रूप है समाज और शाला का संबंध अटूट है। शाला की समाज सेवा, सांस्कृतिक, सफाई, उद्योग सम्बन्धी गतिविधियों ग्राम पर अनुकूल प्रभाव डालती है ग्रामीणों को प्रेरणा भी मिलती है। शाला दवाई, सफाई, सामाजिक शिक्षा, पत्र, डाकखाना, खेल प्रत्येक का केन्द्र होती है। साराश यह है शाला समाज की प्रगति मे बड़ी सहायक होती है। श्रमदान आदि करके शाला गाँव का उपकार करती है।

जनतंत्रात्मक शासन व्यवस्था की स्थापना—शाला का जीवन जनतन्त्रात्मक प्रणाली पर आधारित होता है। बालक अपना मन्त्रि मण्डल बनाते हैं, उत्तरदायित्व ग्रहण करते है, बालकों का, बालको द्वारा, बालकों के लिए शासन आदर्श होता है। स्थानीय समाज इसका अनुकरण कर सकता है।

प्रश्न १५—संक्षेप में बतलाइये कि किसी ग्राम का सामाजिक एवं शैक्षणिक अध्ययन करते समय आप किन किन बातों को ध्यान में रखेंगे ?

नई तालीम ने सर्वोदय समाज की स्थापना करने का बीडा उठाया है। यह तालीम ग्रामों का निर्माण करना चाहती है, नव निर्माण करने से पूर्व हमे ग्राम की सामाजिक एवं शैक्षणिक स्थिति का पता लगाना होगा। तभी हम अपनी योजना तदनुसार बना सकेंगे और क्रियान्वित कर सकेंगे।

सामाजिक—गाँव मे सहकारी भन्डार है क्या, ग्रामपंचायत है, अथवा नहीं ? पंचायत मे गत वर्ष कितने मामले आये, किस ढंग के थे तथा कितने मामलों मे समझौता हुआ ? हरिजनों की स्थिति कैसी है उनके साथ सद्व्यवहार एवं समानता का व्यवहार किया जाता है अथवा नहीं ? हरिजन बालकों के प्रवेश के कारण क्या कोई विशेष परिस्थिति उत्पन्न हुई ? ग्राम मे प्रचलित कुरीतियाँ बाल विवाह आदि तथा उद्योग एवं फसलों का भी ध्यान रखा जावेगा। दुर्व्यसनों मे कितना अपव्यय किया गया ? कोई समाज सेवा का कार्य हुआ अथवा नही, ग्राम से क्या निर्यात और क्या आयात होता है ?

शैक्षणिक—शाला किस प्रकार की है ? विद्यार्थियों की कक्षावार कुल संख्या क्या है ? शाला मे कितने शिक्षक है तथा किन किन मूलोद्योग द्वारा शिक्षण दिया जाता है ? शाला भवन सरकारी है, अथवा गैर सरकारी ? शाला भवन पर्याप्त है अथवा नही। शाला की आवश्यकतायें क्या क्या है ?

ग्राम मे बाहर से आने वाले बालकों एवं बाहर शिक्षा लेने गये बालकों की संख्या कितनी है ? अनिवार्य शिक्षा योजना लागू है अथवा नही है ? है तो क्या क्या कठिनाइयाँ आती हैं ? क्या सामाजिक शिक्षा की व्यवस्था है ? कितने प्रौढ पढने आते है ? साक्षरता का क्या प्रतिशत है ? ग्राम मे कन्याशाला है, अथवा नहीं, है तो, बालिकाओं की संख्या कितनी है ? क्या ग्राम मे पुस्तकालय की व्यवस्था है ? ग्राम में उच्च शिक्षा प्राप्त कितने व्यक्ति निवास करते है ? वे क्या करते हैं तथा ग्राम की उन्नति मे उनका क्या योगदान है ?

प्रश्न १६—किन्हीं दो पर टिप्पणियाँ लिखिये:—ग्राम सफाई, ग्राम सेवा, चेचक, अनुशासन, प्राथमिक चिकित्सा।

ग्राम सफाई—नई तालीम का प्रत्येक कार्य सफाई से प्रारम्भ होता है।

व्यक्तिगत सफाई, घर की सफाई और समाज की सफाई हमारे नैतिक कर्तव्य है। बुनियादी शाला के कार्यक्रम मे सफाई की व्यवस्था होती है। इससे स्वच्छता और आरोग्य के नियमो का प्रसार होता है, ग्रामीण जीवन मे इन नियमो को लागू करने का एक मात्र साधन ग्रामीण शालाएँ ही है। बालक इन नियमों को प्रत्येक घर तक ले जावेंगे। प्रत्येक शाला मे एक सफाई मन्त्री होता है वह अपने शिक्षको के परामर्श से सफाई कार्य का विभाजन कर ग्राम की सफाई कर सकता है। शाला ग्राम सफाई के लिए स्थानीय समाज के सहयोग से सामूहिक आयोजन कर सकती है। स्थानीय डाक्टरे, स्वास्थ्य-विभाग का सहयोग लिया जा सकता है। कूडे के गड्ढे गाँव के बाहर बनाने, डी डी. टी. छिड़कने, गन्दे पानी को गाँव के बाहर करने के लिए शाला एक महत्वपूर्ण भाग अदाकर सकती है। सफाई कार्यक्रमों का आयोजन कर सफाई के नियमों, महत्व आदि से ग्रामीणों को ग्राम सफाई की ओर प्रेरित किया जा सकता है।

ग्राम सेवा—जैसा कि पूर्व मे लिखा जा चुका है कि बुनियादी शाला गाँव का नव निर्माण करेगी। हमारे गाँव गन्दगी, अशिक्षा, कुरीतियों, कुटेबों, गुटबन्दी आदि के शिकार है। नई तालीम को इन दोषो से इनका उद्धार करना है। गाँव की गन्दगी और अस्वस्थता मिटाने के लिए विभिन्न सामूहिक सफाई कार्यक्रम किए जा सकते है। सामाजिक शिक्षा एवं अनिवार्य शिक्षा द्वारा तथा विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन करके अशिक्षा, कुरीतियो, कुटेबों गुटबन्दी का नाश किया जा सकता है। श्रमदान करके नव निर्माण किया जा सकता है। विभिन्न गृह उद्योगो का प्रचार एवं प्रसार करके शाला गाँव के लोगों को स्वावलम्बी बना सकती है। औषधि वितरण करके रोगो की रोक-थाम की जा सकती है। इस प्रकार के विभिन्न ग्राम सेवा सम्बन्धी कार्य करके शाला ग्राम्य जीवन का उत्थान कर सकती है।

चेचक—इसे बड़ी माता भी कहते है। यह बालकों एवं युवको को होती है। कभी-कभी वृद्धों पर भी इसकी कृपा हो जाती है। इसके टीके लगाने के आविष्कार से इसका जोर कम हो गया है इससे मृत्यु तक हो जाती है। इसके प्रकोप से पूर्ण स्वस्थ होने मे १॥ महीना लग जाता है। इससे बदसूरती आती है और अन्धे अथवा काने भी हो जाते हैं। यह रोगी के थूकने व उसके

सम्पर्क में आने से हो जाती है। तेज बुखार, मुख पर लाली, पीठ और सिर मे दर्द इसके प्रारम्भिक लक्षण है। सारे शरीर पर लाल लाल दाने से उभर आते हैं इनमें पहले पानी फिर पीप आ जाता है और बाद मे खंरोट बन जाते है। इसका एक मात्र इलाज टीका लगाना ही है।

अनुशासन—शिक्षालयों में अनुशासन का पालन बहुत महत्त्वपूर्ण है। अनुशासन का मतलब है कर्त्तव्य का पालन। अत: शिक्षालय का प्रत्येक अंग-प्रधानाध्यापक, शिक्षक और बालक, अपने कर्त्तव्यो का पालन करें। अनुशासन के प्रति विभिन्न मत है। एक मत है कि डॉट-फटकार से रहता है, दूसरे, कि अनुशासन से रहना वंश परम्परागत है, तीसरे, अनुशासन समाज से सीखा जाता है आदि। अनुशासन के दो भेद है—(१) बाह्य अनुशासन (२) आन्तरिक अनुशासन। बाह्य से मतलब है कि नियम पालन के आदेश देना और आन्तरिक अनुशासन में बालक स्वयं नियम और कर्त्तव्य पालन करना सीखें। शालाओं में अनुशासन हीनता के अनेक कारण होते है जैसे अध्यापको द्वारा ठीक नेतृत्व प्रदान न करना, दोष पूर्ण शिक्षा प्रणाली, आर्थिक कठिनाइयाँ, समाज मे आदर्श का अभाव, माता-पिताओं का अशिक्षित होना, किन्तु बालको में अनुशासन रखा जा सकता है यदि बालकों को ठीक अध्यापन, निर्देशन, सहानुभूति, उचित प्रोत्साहन मिले। समाज को भी हमे आदर्श बनाना होगा यह कार्य हम शाला द्वारा कर सकेंगे।

प्राथमिक चिकित्सा—मानव जीवन में अनेक आकस्मिक घटनायें घटती रहती हैं। चलते, फिरते, खेलते, कूदते, यात्रा करते, पानी में तैरते, या आग से तापते समय दुर्घटनायें हो जाया करतीं हैं। रक्त बहने लगता है, हड्डी टूट जाया करती है, आग से जल जाते है, पानी में डूब जाते है। कभी साँप, बिच्छू आदि सताते हैं, अत: हमारे लिए यह जानना आवश्यक है कि हमें ऐसी दशा में क्या करना चाहिए? बहुधा तत्काल डाक्टर नही मिलते। डाक्टर न मिले और रोगी की जान पर बन आये तो आश्चर्य नही। इसलिए तुरन्त कुछ न कुछ उपचार करना आवश्यक होता है। ऐसे उपचार को प्राथमिक चिकित्सा कहते है, सदा एकसी प्राथमिक चिकित्सा की आवश्यकता नहीं होती यह अवसर के अनुसार करना चाहिए डबने वाले को जो सहायता दी जावे वह जले को नहीं।

प्रश्न १७—अध्यापक को डायरी क्यों रखना चाहिए ? यदि आप प्रधानाध्यापक बन जावें तो डायरी में किन बातो को देखना चाहेंगे ?

जिस बही मे शिक्षक अपने वर्ष भर के शिक्षण कार्य की रूप रेखा को नियोजित करता तथा नित्य प्रति के कार्य का विवरण लिखता है, वही शिक्षक की डायरी कहलाती है । इसके द्वारा पता चलता है कि क्या पढ़ाना है तथा क्या पढ़ाया जा चुका है ? आवश्यकतानुसार शिक्षक अपनी गति तीव्र या धीमी कर सकता है । कार्य सुचारु ढङ्ग से चलता है । शाला की स्थिति, प्रगति, सफलता, उद्देश्य प्राप्ति प्रयोगो का सही एवं सत्य ज्ञान तत्काल प्रदान किया जा सकता है ।

देखने योग्य बिन्दु—निर्धारित कालम ठीक भरे हो । लकीरें सीधी, अक्षर साफ और सुडौल हों । अनावश्यक बातें न लिखी हो । नैमित्तिक कार्य जैसे शौचादि तथा प्रार्थना आदि नित्य न लिखे जावें । प्रति माह अथवा सत्र का कार्य विभाजन चक्र प्रारम्भ मे ही लिख दिया जाया करे । लेखन यान्त्रिक मात्र ही न रह जाय यथा समय निरीक्षण एवं परीक्षण किया जाय । नियमित रूप से लिखी जाय (अवकाश दिवसो मे भी) तथा शिक्षक, बालक, कक्षा आदि की सही जानकारो देते हों ताकि आवश्यकता पड़ने पर अभिभावकों एवं अधिकारियों को ठीक जानकारी प्रदान की जा सके । शिक्षण सम्बन्धी पूर्ण जानकारी दे सके । शाला की सामूहिक एवं व्यक्तिगत क्रियाओ आदि का भी उल्लेख हो । कक्षा की नियमित प्रगति का लेखा रखती हो, शैली रोचक तथा आकर्षक हो । (समानार्थी दोहो, मुहावरो, कहावतो आदि का प्रयोग इस दिशा मे लाभप्रद होंगे) स्वाध्याय, विशेष घटना आदि का उल्लेख हो ।

नोट:—डायरी ठीक ढंग से रखनी चाहिए । आवरण पृष्ठ चढ़ा लेना उचित होगा तथा डायरी लिखते समय सर्व प्रथम हम दैनिक कार्यो का लेखा तत्पश्चात अनुभव, इसके अनन्तर सुझाव व समस्याएं तथा अन्त में विचारो मे परिवर्तन एवं जीवन पर प्रभाव आदि का उल्लेख करें ।)

प्रश्न १८— वर्तमान परीक्षाओं के विषय में अपने विचार व्यक्ति कीजिए ।

कोई भी शिक्षा प्रणाली परीक्षा से मुक्त नही है । छात्र जीवन प्रारम्भ

करने के साथ ही साथ परीक्षा का क्रम प्रारम्भ हो जाता है। प्रायः परीक्षायें लिखित, मौखिक और व्यावहारिक रूप में ही ली जाती है।

परीक्षा के उद्देश्य—निर्धारित पाठ्यक्रम को सफलता पूर्वक समाप्त करने की जाँच, बालको को उच्च शिक्षा के लिए प्रवेश हेतु जाँच, बालको को उनकी योग्यता के क्रमानुसार चयन करने के उद्देश्य से जाँच तथा पाठशाला और वहाँ के शिक्षिको के कार्य की जाँच परीक्षा के उद्देश्य है।

परीक्षा का विभाजन—शालाओ मे समय की दृष्टि से दैनिक साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक, अर्द्ध वार्षिक एवं वार्षिक परीक्षाओ को आयोजना की जाती है वार्षिक परीक्षा मे उत्तीर्ण बालको को उच्च कक्षा मे चढ़ा दिया जाता है।

प्रचलित परीक्षा प्रणाली के दोष.—वर्त्तमान परीक्षा प्रणाली की सर्वत्र निन्दा की जाती है। संक्षेप मे दोष इस प्रकार है—

(१) बालक और शिक्षक की सोचने की, अध्ययन की ओर भाव व्यक्त करने की प्रणाली ही बदल देतो है, बालक को रटने तथा कण्ठाग्र कर लिखने की प्रेरणा व आदत डालती है।

(२) बालक का वाछित मनोविकास नही करती है।

(३) प्रचलित परीक्षा प्रणाली देश की संस्कृति, परिस्थिति, विकास और समाज के प्रतिकूल है।

(४) परीक्षाओ की भरमार बालको को दब्बू बनाती है।

(५) जीवन की आवश्यकताओ से मेल नही खाती।

(६) बालक का एकांगी विकास करने का प्रयत्न करती है, व्यक्तिगत विकास का कोई स्थान नहीं है।

(७) बालक को भाग्यवादी बनाती है। इसमे संयोग की प्रधानता होती है कापियों की जाँच ठीक नही हो पाती। प्रत्येक परीक्षक का स्वयं का अपना माप होता है, वह अपनी रुचि के अनुसार अंक प्रदान करता है।

(८) कभी-कभी बालको पर शारीरिक, मानसिक और नैतिक दुष्प्रभाव डालती है।

(९) परीक्षाओं मे निश्चित उद्देश्य का अभाव है। "बिनोवाजो ने इन परीक्षाओं को जुलाब के तुल्य बताया है।"

"आवश्यक सुधार—बालको की जाँच मे अन्तरिक व बाह्य दोनों ही परीक्षाओ का समावेश हो। अन्तरिक परीक्षा द्वारा बालको की नियमित प्रगति का परिचय प्राप्त होगा और बाहरी परीक्षा द्वारा उनकी स्वतन्त्र और निष्पक्ष जाँच होगी ' बालकों का आवश्यक रिकार्ड रखना उपयोगी होगा। लेखी परीक्षाओ के साथ मौखिक परीक्षाओ का भी समावेश हो। बालको की प्रगति का नियमित रिकार्ड रखा जाकर मूल्याकन किया जावे। परीक्षा बालकों की क्षमता के अनुकूल हो। उत्तर पुत्तको के मूल्याकन मे समानता हो। अंको के स्थान पर अ ब स द आदि श्रेणियाँ दी जावे। योग परीक्षक रखे जावें।"

प्रश्न १६ - "पाठशाला तथा कक्षा प्रबन्ध में दण्ड का क्या स्थान है ? आपके विचार से दण्ड जिस उद्देश्य से दिया जाता है क्या वह सफल होता है ? दण्ड देते समय किन किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?"

दण्ड अनुशासन भंग करने का परिणाम है ऐसा विचार पुराने शिक्षा शास्त्रियो का है। बुनियादी शिक्षा बाल केद्रिन्त शिक्षा है। अनुभव से यह ज्ञात हुआ कि यदि शाला का जीवन समुचित हो; शिक्षण ठीक हो तथा सामाजिक जीवन व्यवस्थित और संगठित हो तो दण्ड देने की समस्या उठती ही नही। यदि उठती भी है तो न्यूनतम रूप मे। दुर्भाग्य से प्रायः ऐसा कम ही देखा जाता है कि कोई शाला सम्पूर्ण सुविधाजनक परिस्थितियो से युक्त हो। फिर भी यह प्रयत्न होना चाहिये कि दण्ड देने की न्यूनतम आवश्यकता पड़े। नई तालीम दण्ड पर कार्य और कारण की दृष्टि से विचार करती है। यदि अनजान मे बालक, बिना जाने बूझे ऐसा कोई कार्य कर देता है जिससे अनुशासन भंग होता है तो उसे दण्ड नही देना चाहिये। शिक्षालय में बालक को दण्ड देते समय अपराध के समय की परिस्थिति का पता लगाना चाहिये। यदि कोई बालक जानबूझ कर अनुशासन भंग करता है तो उसे दण्ड मिलना चाहिये।

अपराधी को दण्ड देना यह एक स्वाभाविक नियम है। बालको को दण्ड देते समय हमे उसके उद्देश्य का ज्ञान होना चाहिये। दण्ड के उद्देश्य से दण्ड यह नियम त्याज्य है। दण्ड का सर्वोत्तम उद्देश्य है बालक का सुधार करना। आम तौर पर बालकों को अनुशासन भंग करने से रोकने, अपराध की पुनरावृत्ति न करने आदि के उद्देश्य से दण्ड दिया जाता है। जब बालक को अनुशासन

भंग करने के परिणाम का बोध हो जाय तो वह अपराध करने से रुकेगा और उसमें सुधार होगा। इस प्रकार दण्ड का मुख्य उद्देश्य है—बालक का सुधार। परिस्थिति, अपराध की गुरुता एवं सुधार का उद्देश्य लिये हुए जो दण्ड दिया जाता है, सफल होता है, ऐसी लेखक की सम्मति है।

निर्देश—न्यूनतम शारीरिक दण्ड दें। दण्ड शाला समाज के समक्ष न दिया जावे। दण्ड अपराध की गुरुता के अनुसार हो। दुर्बल एवं भावुक छात्रों को शारीरिक दण्ड न देना ही उत्तम है। किशोरावस्था वाले विद्यार्थियों को शारीरिक दण्ड न दिया जावे। शारीरिक दण्ड अपराध करने के कुछ समय बाद देना चाहिये ताकि बालक अपराध के परिणाम को समझ जावे। जब अध्यापक क्रोधित हो तब दण्ड नही देना चाहिये। दण्ड ऐसा हो जो बालकों का सुधार कर सके। दण्ड उदाहरण स्वरूप हो जिसका प्रभाव अन्य बालको पर भी पड़े। दण्ड ऐसा न हो जिससे सामूहिक विरोध की भावना पैदा होता हो। विद्यार्थियों को बुद्धू आदि कह कर अपमानित न किया जाय। दण्ड का विवरण कार्यालय मे रखा जावे। दण्ड की सूचना अभिभावको पर पहुंचा दी जावे। दण्ड निष्पक्ष एवं न्यायपूर्ण होना चाहिये।

प्रश्न २०—ग्रामीण क्षेत्र में अपनी शाला को लोकप्रिय बनाने के लिए आप किन उपायों को काम में लेंगे ?

भारत ग्रामो मे बसता है। ग्रामो की उन्नति होगी तो भारत की उन्नति स्वयं हो जावेगी अतः ग्रामो की सर्वांगीण उन्नति के लिए शाला एक महत्वपूर्ण कार्य कर सकती है, अतः शाला को ग्राम की प्रवृत्तियों का केन्द्र बनाकर अधिकाधिक लोकप्रिय बनाया जा सकता है। संक्षेप मे नीचे लिखे कार्यक्रम ग्रामीण पाठशाला को लोकप्रिय बनाने मे अपूर्व सहयोग दे सकते है—

शिक्षक एव पालक सम्पर्क—शिक्षक पालक संघ की स्थापना शिक्षण-व्यवस्था बालक आदि की समस्याओ के सम्बन्ध मे विचार विमर्श तथा सहयोग प्राप्त किया जाय। शाला प्रवेश के समय बालको के अभिभावकों से सम्पर्क बढ़ाया जाय। कक्षाध्यापक व्यक्तिगत सम्पर्क साधें। प्रगति पत्रो द्वारा बालकों की गतिविधियों, कार्य प्रगति आदि का नियमित लेखा पालको के पास भेजा

जाय। दूसरे शब्दों में शिक्षक की बालकों मे रुचि, पालकों की शाला मे रुचि उत्पन्न कर सकती है।

सांस्कृतिक कार्यक्रम—पुस्तकालय एवं वाचनालय की व्यवस्था। अध्ययन मण्डलों की स्थापना। पाठशाला मे एक रेडियों की व्यवस्था। साहित्यगोष्ठी, नाटक, संगीत, लोक गीत, लोक नृत्य आदि का आयोजन। राष्ट्रीय, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, पर्वों का आयोजन। शैक्षणिक यात्रायें, जिनमें शिक्षक बालक व संरक्षक भाग लें। संग्रहालय एवं प्रदर्शिनी का आयोजन हो।

अन्य कार्यक्रम—श्रमदान एवं ग्राम सफाई की योजना। ग्राम की सामाजिक आर्थिक आदि समस्याओं का अध्ययन एव उनकी पूर्ति का सामूहिक यत्न, गाँव की आबादी एवं नाप जोख का लेखा रखना स्वास्थ्य सम्बन्धी ज्ञान का प्रचार एवं प्रसार तथा रोगो से बचने के उपाय, स्थानीय उद्योग धन्धों के विकास का प्रयत्न, कृषि के नवीनतम वैज्ञानिक सुधारों से परिचित कराना। सहकारी समिति की स्थापना, खेल तमाशे आदि का आयोजन, सामूहिक प्रार्थना कर धार्मिक सहिष्णुता का भाव जागृत करना, सेवा दल की स्थापना एवं मेलो तया हाट की व्यवस्था करना। शिशु शिक्षा प्रसार केन्द्र, महिला कल्याण केन्द्र, ग्राम रक्षक दल आदि संगठनो का आयोजन। सार्वजनिक स्थानों की सफाई, निर्माण कार्य आदि का आयोजन ग्राम सम्पर्क शिवरो के विशेष आयोजन शाला को लोकप्रिय बनाने मे सहायक होते हैं।

प्रश्न २१—**ग्रामीण शिक्षक और शहरी क्षेत्र के शिक्षक की समस्याओं का तुलनात्मक विवेचन कीजिए।**

ग्रामीण शिक्षकों की समस्यायें—शिक्षा के इस प्रसार काल मे शिक्षकों की समस्यायें विशेष कर ग्रामीण शिक्षक के समक्ष अनेक समस्यायें जैसे—आवास, भोजन, वस्त्र, शिक्षण, सामाजिक, आर्थिक, सास्कृतिक आदि आती है। अपने आवास के साथ-साथ शाला के लिए उचित स्थान की व्यवस्था शिक्षक को ही करनी पड़ती है। यह कार्य वह स्थानीय समाज एवं शासन के सहयोग से सुलझाता है। इसके पश्चात उसे भोजन एवं वस्त्रादि की समस्या का सामना करना पड़ता है। यदि भोजन एवं वस्त्र उसे उपलब्ध नही होते, तो शहर से लाकर

इसकी व्यवस्था करनी होती है। वास्तव मे स्वावलम्बी होने के लिए उसे उद्योग मर्मज्ञ एवं पाक विज्ञान का मर्मज्ञ होना आवश्यक है।

इससे सन्दर्भ में अनाज सफाई से रोटी बनाने तक ईंधन, पकाना आदि की समस्या आती है। किसी किसी गाँव मे समुचित खाद्य सामग्री का अभाव होता है और आसानी से बाहर से मँगाई भी नही जा सकती है अतः उपलब्ध सामग्री से ही काम चलाना होता है। बरसात में ग्रामीण शिक्षक के सम्मुख उपस्थित होने वाली कठिनाइयों की कल्पना पाठक स्वयं कर सकते है। ग्रामीण बालको का शैक्षणिक स्तर गिरा हुआ है। ग्रामीण निर्धन होते है। आवश्यक पुस्तको का अभाव भी शिक्षक के कार्य मे रोड़ा है। बालक अपने पाठको के कृषिकार्य मे सहयोग देते है अत. अनुपस्थित रहते है। छूत छात, अन्धविश्वास, सचार साधनो का अभाव समुचित आवागमन के साधन न होना आदि कठिनाइयाँ उसके कार्य का दुरूह बनाती है।

शहरी शिक्षक की समस्याएँ—इसके विपरीत शहरो "शिक्षक के सम्मुख ऐसी समस्याए" उत्पन्न नही होती। शहरा मे प्रत्येक प्रकार की व्यवस्था संभव है। अधिकाश पालकगण शिक्षित होते है। शहर मे शिक्षक को अनुशासन सम्बन्धी समस्या का सामना करना पडता है। किन्तु समुचित शिक्षण एवं व्यवहार द्वारा इसे सुलझाया जा सकता है। बालोद्यान, स्वास्थ्य प्रद जलवायु, के अभाव मे शिक्षक के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड जाता है। शहरी जीवन की मंहगाई भी तो उन्हे कष्ट देती है।

हमारी राष्ट्रीय सरकार दोनो ही क्षेत्रो, विशेषकर ग्रामीण क्षत्र के शिक्षको की समस्याओ को शनैः शनैः सुलझाने का प्रयत्न कर रही है किन्तु स्वयं का एवं पालको का सहयोग भी अपेक्षित है।

प्रश्न २२—आप शाला मे स्वायत्त शासन की व्यवस्था कैसे करेंग।

भूमिका—शाला के सुसंचालन हेतु प्रधानाध्यापक एवं शिक्षक बालको के सहयोग से शाला मे अनेक आयोजन करते है। इनमे बालको मे कार्य शक्ति का विकास होता है तथा सहयोग एवं उत्तरदायित्व की भावना आती है। इसलिए शाला के विभिन्न कार्यों को, विद्यार्थी समाज के विभिन्न समूहो मे बाँट दिया

जाता है। ये कार्य बालक शिक्षक की निगरानी में स्वयं करते हैं। इस प्रकार शाला का स्वशासन शिक्षक एवं बालकों के सहयोग से होता है।

जामिया मिलिया, दिल्ली में तो बालक वर्ष में एक दिन शाला का पूर्ण संचालन करते हैं। वे ही प्रधानाध्यापक एवं अध्यापक होते है और अपने साथियो को पढ़ाते और शाला की व्यवस्था करते है, शाला का अधिकाधिक स्वशासित होना, उसकी उन्नति का द्योतक है।

बुनियादी शाला मे स्वायत्त शासन की व्यवस्था के लिए बालको को अधिकाधिक उत्तारदायित्व सौपा जाता है। कक्षा का मन्त्रि-मण्डल प्रति मास गठित होता है। सम्पूर्ण शाला के केन्द्रीय मन्त्रि मण्डल का चुनाव वर्ष मे छै बार हो विद्यार्थी समाज अपना एक नेता चुनेगा यह नेता अपने मन्त्रिमण्डल का गठन करता है सम्पूर्ण मन्त्रि मण्डल एक होकर कार्य करता है। सुविधा की दृष्टि से प्रमुख कार्यो का विभाजन इस प्रकार किया जाता है :—

ये मन्त्री सेवा भाव से कार्य करते है न कि मालिक के समान। साथ ही समाज अन्य सदस्यो का कर्त्तव्य होता है कि वे इन्हे वाछित सहयोग देते रहे।

प्रधान मन्त्री—इनको समाज प्रतिमास अपने मुखिया के रूप मे चुनता है। ये समाज मे से "अपने" साथी मन्त्रियो को चुनते है। उनके सहयोग से रचनात्मक कार्यों को सम्पन्न करने के लिए रूपरेखा निश्चित करते है। यह मन्त्रियो के कार्यो की देखभाल करते है। समाज का नेतृत्व करते है एवं शालेय प्राधानाध्यापक (राष्ट्रपति) एवं सामुदायिक जीवन के परामर्शदाता से मिलकर अन्य कार्य सम्पन्न करते है।

गृह मन्त्री— इन पर समाज की सुरक्षा, रोशनी एवं अतिथिगणो का सत्कार व उनका समाज से परिचय कराना, घन्टियाँ बजाना, प्रार्थना भवन मे उपस्थिति लेना प्रमुख दायित्व है। ये प्रधान मन्त्री की उपस्थिति मे उनका सम्पूर्ण कार्य भार सम्हालते हैं। इन्हे उप प्रधान मन्त्री भी कहा जाता है।

भोजन मन्त्री—भोजन हमारी बुनियादी जरूरत है। दिवसीय बुनियादी शाला मे मध्यदिवस स्वल्पाहार एवं छात्रालय युद्ध शालाओ मे दोनो संभव सामूहिक मोजन की व्यवस्था करना इसका कार्य है। भोजन सम्बन्धी आय व्यय का हिसाब रखना, साप्ताहिक पालियाँ लगाना, सामान खरीदना, इनका

प्रमुख कार्य है। ये अपने कार्य के लिए उपमन्त्री अथवा कोठार मन्त्री भी रख सकते हैं। संक्षेप मे समाज को सुपाच्य, सस्ता एवं सन्तुलित भोजन की व्यवस्था करना इनका काम होता है।

अर्थ मन्त्री—विभिन्न मन्त्रालयो में होने वाले आय-व्यय का लेखा रखते है। रसीदें देते है, ये सहकारी भण्डार के कार्य को भी सम्हालते है।

शिक्षा मन्त्री—ये शाला में शैक्षणिक आयोजन जैसे विचार संगोष्ठी, वाद-विवाद प्रतियोगिता, अन्त्याक्षरी, विद्वानो के भाषण एवं बाल कवि सम्मेलन का आयोजन करते है। समाचार-पत्र एवं पुस्तकालय की व्यवस्था मे योग देते है।

सफाई एव स्वास्थ्य मन्त्री—ये नित्य छात्रो की पाली बनाकर शाला के कक्षो, अहाते आदि की सफाई की व्यवस्था करते है। साथ ही स्वास्थ्य सम्बन्धी अन्य कार्य जैसे खेलो की व्यवस्था, कीटनाशक औषधि छिड़कवाना, बीमारो का उपचार आदि कार्यों मे योग देते हैं।

उद्योग मन्त्री—बुनियादी शालाओ मे कई उद्योग चलते है। ये उद्योगो का लेखा जोखा रखते है, उपस्थिति लेते हैं एवं स्वावलम्बन का हिसाब रखते है। साथ ही उद्योग कक्षो की नियमित व्यवस्था करते हैं।

सांस्कृतिक मन्त्री—इनका कार्य राष्ट्रीय एवं सामाजिक समारोह दैनिक प्रार्थना साप्ताहिक सांस्कृतिक कार्यक्रम एवं विशेष आयोजन करना है। समाज के जीवन को रंजनमय बनाकर समाज को सुसंस्कृत बनाते है शिष्टाचार का साक्षात शिक्षण मिलता है।

इस प्रकार शाला का जनतन्त्रात्मक स्वरूप बालको को स्वायत्त शासन प्रदान करता है। इसके लिए समाज का विधान बना लेना चाहिये जिसके तीन अग हों-आम सभा—मन्त्रिमण्डल एवं न्यायालय सबके कार्य निश्चित हो। प्रत्येक मास अथवा दूसरे मास चुनाव हो और प्रतिवेदन सुनाये जावें। शिक्षक सभी कार्यक्रमों में भाग लें। आवश्यकता नुसार मार्ग दर्शन। मासिक रिपोर्ट वाचन के समय समाज का कोई सदस्य मन्त्री से प्रश्न पूछे तो मन्त्री समुचित उत्तर दें। नाराज न हो।

प्रश्न २३—शाला द्वारा ग्राम सम्पर्क कैसे स्थापित करेंगे ?

भूमिका–बालकों के समुचित विकास के लिए शिक्षक एवं पालकों (स्थानीय-समाज) में सम्पर्क आवश्यक है। अतः शिक्षक पालकों से सम्पर्क स्थापित करे तथा पालक भी बालकों में रुचि लें।

१- **सम्पर्क के तरीके—बालकों के शाला प्रवेश के समय**—शिक्षक, बालक के दाखिले के समय पालकों मे सम्पर्क साधे। उनसे परिचय बढाये एवं सद्व्य-वहार करें। उन्हें बालकों के प्रति उनके उत्तरदायित्व का ज्ञान करावें।

२ —**उत्सवों पर बुलाना**—शाला में विभिन्न आयोजन किये जाते हैं, इन उत्सवों मे पालकों को बुलाकर बालको के बारे मे विचार विमर्श किया जाता है। इससे सम्पर्क बढ़ेगा। पालकों को अपने बालकों को उत्सव मे सक्रिय भाग लेते देख आनन्द मिलेगा।

३—**पालक सम्मेलन**—प्रतिवर्ष शाला मे कम से कम दो बार पालक सम्मेलन आयोजित किया जावे। इस अवसर पर बालक सास्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत करें। स्वल्पाहार की व्यवस्था हो। इस मौके पर बालकों के व्यवहार, शिक्षिण, स्वास्थ्य, आदि की चर्चा कर सम्पर्क स्थापित करें।

४—**शिक्षक पालक सघ**--प्रत्येक ग्रामीण शाला की ओर से शिक्षक पालक संघ का निर्माण होना चाहिए। इसमे बालको के पालको की एक समिति बनादी जावे। यह शाला के प्रत्येक कार्य, उदाहरणार्थ; अनुशासन, भवन, पुस्तकालय के विषय में सहयोग देगी।

५—**प्रगति पत्रों द्वारा**—बालको की प्रगति का मासिक लेखा जोखा उनके संरक्षको के पास भेजा जावे। इसमे बालक की शैक्षणिक, सास्कृतिक, शारीरिक एवं व्यवहार सम्बन्धी बातो का विवरण हो। इसमे बालक की शुल्क, उपस्थित, दण्ड, पुरस्कार एवं प्रगति का अवश्य उल्लेख किया जावे। फलतः पालक बालको मे रुचि लेंगे और सम्पर्क बढ़ेगा। शाला और बालकों का हित होगा।

६—**कक्षा शिक्षक का पालकों से सम्पर्क**—कक्षा शिक्षक सुविधानुसार पालकों से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करे। बालकों की अन्य शिक्षकों से जानकारी प्राप्त कर पालकों को बतावे।

शिक्षकों को चाहिये कि वे प्रति सप्ताह कुछ पालकों से अवश्य मिलें। उधर

पालकों को भी शाला मे बालको के हितार्थ सम्पर्क स्थापित करना ही चाहिये ।

७—**बुनियादी शालाऐ एवं सरंक्षकों से सहयोग**—बिना स्थानीय समाज के सहयोग के शाला का कार्य नही चल सकता है, और न शिक्षालय के उद्देश्य की पूर्तिहो सकती है । शाला का सीधा सम्पर्क स्थानीय ग्रामोद्योगो से होता है । शाला, जीवन ठीक ढंग से बिताना औरकाम ठीक ढंग से करना सिखाती है । ग्राम और शाला का अधिकाधिक सम्पर्क पालक, बालक शिक्षक एवं शाला के लिए हितकारी है । बुनियादी शालाऐं सम्पर्क स्थापित करने के उपर्युक्त सभी मार्गो का अवलम्बन ग्रहण करती है ।

प्रश्न २४—ग्राम का आर्थिक अध्ययन करते समय आप किन किन बातों को ध्यान में रखेंगे ?

ग्राम का आर्थिक अध्ययन करते समय हम सर्व प्रथम इस बात का पता लगायेंगे:—"गाँव में कौन कोन से धन्धे प्रचलित है ? उनसे कितने आदमी अपनी रोजी कमा रहे है ?"

इसके बाद गाँव मे प्रचलित गृहउद्योगो पर ध्यान देंगे कि कौन २ गृहउद्योग चल रहे है ? उनमे कितने आदमी लगे हे ? गाँव मे कृषि होती है, अतः यह पता लगाना भी आवश्यक है, कि गाँव मे कितनी जमीन है ? जमीन कितनी की है ? गाँव मे पैदा होने वाली फसलें कौन कौन सी है ? कितनी जमीन पर तरकारी तथा कितनी जमीन पर फल आदि पैदा किये जाते है ? यह भी देखा जावेंगा कि एक व्यक्ति के पास अधिक से अधिक कितनी जमीन है ? प्रति व्यक्ति जमीन का औसत क्या है ? खुद खेती करने वाले कितने है ? दूसरों से कराने वाले कितने है ? गाँव की औसत मजदूरी प्रति व्यक्ति क्या है ? क्या भूमिदान भी दिया गया है ? कुटेबों जैसा जुआ व शराब खोरी में गाँव का कितना पैसा बरबाद होता है ? विवाह आदि कार्यों पर कितना अनावश्यक व्यय किया जाता है ? इसके पश्चात यह देखा जावेगा कि गाँव से कौन सा सामान निर्यात तथा आयात होता है ? निकटतम बाजार कौनसा है ? आवागमन तथा लाने लेजाने के क्या साधन है ? तथा सामान लाने लेजाने में क्या रुकावटें आती है ?

प्रश्न २५—नई तालीम में पाठ्य पुस्तक का क्या स्थान है ?

नई तालीम में पुस्तक का महत्वपूर्ण स्थान है। बुनियादी तालीम की यह आलोचना कि यह उद्योग केन्द्रित है, अतः इसमें पुस्तको का कोई स्थान नही है, बेबुनियाद, निस्सार एवं अनुचित है। पुस्तकें इस तालीम में साध्य के रूप में नही वरन् साधन के रूप मे प्रयोग की जाती है। उनका उपयोग ज्ञान को व्यापक बनाने के लिये होता है। कार्य योजना बनाने और विभिन्न क्रिया-शीलनों की व्यवस्था करने के लिए उनका उपयोग किया जाता है ? एक लेखक के मतानुसार "समवाय के काम के द्वारा जो कुछ भी ज्ञान प्राप्त किया जाय उसकी पुष्टि समुचित पथ-प्रदर्शन के साथ स्वाध्याय द्वारा हो सकती है। साथ साथ उचित भाव प्रकाशन के साथ बोलकर पढ़ना एक कला है। इस कला के अभ्यास के विना शिक्षा अधूरी रह जाती है। अतः बुनियादी शालाओ में इन्हे पाठ्य ग्रन्थ के रूप में न पढते हुये विद्यार्थी अच्छी चुनी हुई उपादेय पुस्तकें पढते है" कक्षावार सूची बनाई जाती है। बालक पुस्तकें सामूहिक एवं व्यक्तिगत रूप से खरीद कर पढते है।

प्रश्न २६—बुनियादी शालाओं के रिकार्ड के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त कीजिये ?

शाला की स्थिति, प्रगति, कार्य—प्रणाली आदि का ज्ञान प्राप्त करने के लिए शाला मे रिकार्ड रखा जाना आवश्यक है। ये बालक पालक, शिक्षक, शाला एव शिक्षाधिकारियो—प्रत्येक दृष्टि से उपयोगी है। समुचित, सबल एवं योजनाबद्ध कार्य चलाने, व बालको की प्रगति का मूल्याकन करने की दृष्टि से इनका बड़ा महत्व है। नई तालीम उद्योग केन्द्रित शिक्षा है। इसमें कार्य योजना पहले ही बना ली जाती है बाद में प्रगति की रिपोर्ट लिखी जाती है ? इससे स्वयं की भूलें एवं प्रगति का ज्ञान होता है। ये आने वाले कार्य-कर्त्ताओ को ठीक दिशा बताते है। ये लेखे साहित्य-निर्माण की नीव है। आय व्यय का सही ज्ञान, सफल योजना और परीक्षाएँ इन्ही रेकार्डो पर निर्भर करती है। ये रिकार्ड बालक, शिक्षक, कक्षा, एवं कार्यालय सम्बन्धी होते है।

बालक विषयक रिकार्ड—इसके अन्तर्गत कार्य योजना पुस्तिका, मासिक प्रगति पुस्तिका, दैनन्दिनी, उद्योग सम्बन्धी लेखे के लिए उद्योग पुस्तिका एवं ज्ञान संचय हेतु स्वाध्याय पुस्तिका का रखना बालकों को अनिवार्य है।

शिक्षक विषयक—इसके अन्तर्गत शिक्षक के लिए डायरी, योजना पुस्तिका, कक्षा प्रगति पुस्तिका, उद्योग पुस्तिका, स्वाध्याय पुस्तिका एवं साहित्य निर्माण पुस्तिका, क्रमशः दैनिक कार्य के लेखे योजना विवरण एवं स्पष्टीकरण तथा कार्य विभाजन, मासिक प्रगति जानने कक्षा नोट्स प्रयोगों के परिणाम आदि लिखने के लिए रखना जरूरी होता है।

कक्षा विषयक—कक्षा योजना, कक्षा प्रगति, कक्षा उद्योग, कक्षा उपस्थिति, बाल-प्रगति, बाल-निरीक्षण, सांस्कृतिक सामाजिक कार्यों तथा समाचार पत्र वाचन आदि के लिए रजिस्टर अलग अलग रखे जाते हैं। इनकी गिनती कक्षा विषयक रिकाडो मे की जाती है।

कार्यालय विषयक:—बुनियादी शाला मे भर्ती रजिस्टर, शिक्षक उपस्थिति रजिस्टर, स्टाक रजिस्टर, विजिटर्स बुक, निरीक्षण पुस्तिकायें (निरीक्षको एवं प्रधानाध्यापक के लिए पृथक पृथक) आदेश पुस्तिका, आवक-जावक रजिस्टर, डाक बुक, रसीद एवं चालान, कट्टा पुस्तकालय रजिस्टर, दैनिक कार्य विभाजक चक्र, मूल्यांकन रजिस्टर, आदि रखने पड़ते है। इसके अलावा उद्योग सम्बन्धी रजिस्टर, शिक्षक के वेतन भुगतान के बिल, आदि के रजिस्टर, रखे जाते हैं।

सावधानियां—ये अत्यधिक न हो। समय व समय इनका निरीक्षण रहे। प्रारूप व्यापक हों। बालको की प्रगति का सही मूल्यांकन करते हो। शाला की समस्त सही जानकारी देते हों। शाला के समुचित विकास के लिए उपयोगी हो, सत्य हों तथा ठीक समय पर रखे गये हो।

प्रश्न २७—टिप्पणियां लिखो:—संग्रहालय, प्रदर्शिनी।

संग्रहालय—शिक्षण मे संग्रहालय का उपयोग सहायक सामग्री के रूप मे होता है। नक्शे, चार्ट आदि की तरह हम संग्रहालय में इकट्ठी की गई अन्य वस्तुओ से शिक्षण व्यापार में सहायता ले सकते है। प्रत्येक बुनियादी शिक्षालय में एक संग्रहालय होना अनिवार्य है। इसमें स्थानीय बीज, मिट्टी, कुटीर उद्योगों के नमूने आदि का संग्रह उपयोगी होगा। इसमें सामाजिक अध्ययन तथा सामान्य विज्ञान विषयो से सम्बन्धित वस्तुएँ एकत्रित करके और उनका सदुपयोग करके बालको का ज्ञानवर्द्धन किया जा सकेगा। इसमे शीशे की अलमारियों

शिक्षा की आधुनिक विचारधाराएँ

चतुर्थ प्रश्न पत्र

का रिकार्ड रखा जावेगा और उस पर से मूल्यांकन किया जावेगा। केवल तीन घण्टे की विषय परीक्षा से इतिश्री नही हो जाती।

आधार—बुनियादी शिक्षा पुष्ट विकसित मनोविज्ञान पर और आधारित है। क्रिया द्वारा शिक्षा देकर बालक की क्रियाशीलता का उपयोग कर बालकेन्द्रित शिक्षा देती है। शिक्षा का माध्यम मातृभाषा है। शिक्षण-विधि समवायी है। बालक को रटना नहीं पड़ता वरन् क्रिया करते बालक स्वाभाविक, सरल, जीवनोपयोगी ज्ञान अर्जित करता चलता है। इसका आर्थिक आधार भी सबल है बालक मूलोद्योगी क्रियायें करके जीवनोपयोगी पेशे सीखते हैं। उधर शिक्षा का व्यय भी निकाल लेते है। स्वाश्रयी बनते है। वह एक कर्मठ व कमाऊ नागरिक के रूप मे विकिसित होता है। इसकी सामाजिक विशेषता भी दृढ़ है। वह श्रम मे गोरव समझने लगता है। यह "सादा जोबन उच्च विचार के अनुसार" शिक्षा प्रदान करती है। यह सामाजिक भेदभावो को मिटाती है। इसमे सभी वर्गों के बालक खेलते-कूदते पढ़ते, खाते-पीते है। यह राष्ट्रीयता के विकास में सहायक है। यह महान आदर्शों एवं बेकारी आदि की समस्या का समाधान कर राष्ट्रीय हितो के अधिकाधिक अनुकूल है। यह हमारी सभ्यता एवं संस्कृति के अनुरूप है और निर्धनता आदि देश की वर्तमान आवश्यकताओ की पूर्ति करने मे सहायक है। यह मानवीय उच्च गुणो-सत्य, अहिंसा, प्रेम, विश्वशांति आदि को प्राथमिकता दे प्रत्येक व्यक्ति के नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास मे सहायक है। इसके सम्बन्ध मे अनेक शंकाएँ उठाई गई है जैसे बालक से अधिक श्रम लिया जायेगा। इसमे उत्पादित वस्तुओ का विज्ञान के युग मे क्या मेल है? स्वाबलम्बन की कल्पना दोषयुक्त है। मूलोद्योग बालको मे श्रमिक और शिक्षको मे मालिक के भाव पैदा करेगा। शिक्षालयो और कारीगरो मे कम्पटीशन होगा, बुनियादी प्रशिक्षित शिक्षको का अभाव है। यह सारे तर्क और शंकाएँ निर्मूल है। अब ये पुरानी पड़ चुकी है। इनका समाधान खोजा जा चुका है। आलोचको को चाहिए कि वे सफल बुनियादी विद्यालयो का अवलोकन कर अपने भ्रमों का निवारण कर लें। शिक्षक को ले० की पुस्तक 'बुनियादी पाठन पद्धतियो मे' शंका और समाधान' शीर्षक के अन्तर्गत वर्णित विषय को पढ़न उपयोगी होगा।

विनोबा

प्रश्न—विनोबा जी का संक्षिप्त परिचय देते हुये उनके शिक्षा विषयक विचारों पर प्रकाश डालिये ?

उत्तर—भूदान यज्ञ के प्रेरक आचार्य विनोबा भावे से लगभग सभी देश-वासी परिचित हैं। विद्वानों के अनुसार नेहरूजी गाँधी जी के राजनैतिक उत्तराधिकारी हैं तो विनोबाजी आध्यात्मिक। उच्च कोटि के विचारक, साधक लेखक और महान् शिक्षा शास्त्री है। उनका जन्म सं० १९५२ मे गागोरा (महाराष्ट्र) मे उच्च ब्राह्मण कुल मे हुआ था। उनकी शिक्षा दीक्षा गागोरा, बड़ौदा और काशी मे सम्पन्न हुई है। बिनोबा जी का विचार है कि कताई कार्यक्रम से ग्रामो की दरिद्रता को भगाया जा सकता है। गाँधी जी ने उनके सम्बन्ध मे लिखा है "उन्होने हँसी उडाने वालों को भी यह सिद्ध करके दिखा दिया है कि कताई एक ऐसी अच्छी दस्तकारी है जिसका उपयोग बुनियादी तालीम मे बखूबी किया जा सकता है।" उन्होने स्थितप्रज्ञ दर्शन, गीता प्रदचन, विनोबा के विचार, विचारपोथी आदि प्रसिद्ध पुस्तको की रचना की है। वे सर्वोदयी समाज के निर्माण के लिए प्रयत्नशील है।

बापू द्वारा प्रस्तावित बुनियादी शिक्षा के वे सबल समर्थक है। और कटु-आलोचक भी इस तालीम के प्रति उनकी बड़ी आस्था है। शिक्षा विषयक उनके विचार भाषणो और लेखो मे व्यक्त होते रहते है। वे प्रचलित शिक्षा प्रणाली के प्रबल आलोचक है। विनोबा जी के शब्दो को गाँधी के उपरान्त बुनियादी शिक्षा के क्षेत्र में सर्वाधिक प्रामाणिक माना जाता। ऐसा इस लेखक स्वयं क भी विश्वास है। विद्वान अपनी बात को सिद्ध करने के लिये विनोब जी के विचारो को उद्धृत करते हैं। वैसे कुछ विद्वानो के समक्ष उनक रूप एक भूदानी सर्वोदय कार्यकर्त्ता के रूप मे ही अधिक प्रकट हुआ है अत कुछ लोग तो उन्हे शिक्षा शास्त्री मानने मे संकोच प्रकट करते है। सम्भवत उन्हें विनोबा के शिक्षकत्व के रूप का ज्ञान नहीं हो। यहाँ हम संक्षेप मे उनके शिक्षा विषयक कुछ विचारों को प्रस्तुत कर रहे हैं, आशा है कि पाठक विनोब जी के शिक्षकत्व के रूप को भली भाँति पहिचान सकेंगे और अपने सन्देह क निवारण कर लेंगे। उन्हे भली भाँति विदित हो जावेगा कि विनोबा एक महा

शिक्षा शास्त्री भी है। वैसे प्रत्येक मनुष्य स्वयं अपना शिक्षक है स्वयं विद्यार्थी और यह विश्व शिक्षालय।

विनोबा के शिक्षा विषयक विचार—वे बापू के समान शिक्षा के द्वारा बालक का सर्वाङ्गीण अर्थात् शारीरिक, मानसिक एवं अध्यात्मिक विकास करना चाहते है। प्रचलित ढङ्ग की एकांगी शिक्षा के वे विरोधी हैं। वे बालकों को क्रिया द्वारा शिक्षा देने का समर्थन करते हैं। बुनियादी शिक्षा दर्शन, शिक्षा सिद्धांतो मे उनका विश्वास। विनोबा के शिक्षा विषयक बिचार समझने के लिए इसी पुस्तक मे वर्णित महात्मा गाँधी के शैक्षणिक विचारों का समझना पर्याप्त होगा। उन पर पुनः प्रकाश डालना यहाँ उचित प्रतीत नही होगा। उदाहरण स्वरूप उनके कुछ शिक्षां विषयक विचार नीचे उद्धृत है—

विनोबा जी के स्वावलम्बन पर विचार—वे कहते है "आज कल बहुत से लोग कहते है कि तालीम मे स्वावलम्बन का बहुत महत्व है। पर मेरे मन मे इसका बहुत गहरा अर्थ है। तालीम मे कुछ उद्योग और कुछ शारीरिक परिश्रम सीखना चाहिए, ताकि जनता स्वावलम्बन बने, इतना ही मेरा अर्थ नहीं है। शरीर से परिश्रम तो करना ही चाहिए'''उत्पादन भी बढ़ेगा और आरोग्य भी सुधरेगा। इस तरह उद्योग से लाभ होगे। इसलिए कम से कम उस अर्थ मे तो तालीम मे स्वावलम्बन का माद्दा होना ही चाहिए'' परन्तु मेरा अर्थ इतना ही नहीं है " इस प्रकार विनोबा जी चाहते है कि बालकों मे स्वतन्त्र रूप से विचार करने की शक्ति का उदय हो और इस प्रकार की शिक्षा ग्रहण कर भविष्य मे भी विद्योपार्जन कर सकें। ठीक भी है 'सा विद्या या विमुक्तये'।

पूर्व बुनियादी शिक्षा और विनोबा—विनोबा जी कहते है–"मेरी दृष्टि में तो छोटे बच्चो की तालीम, जिसको हम पूर्व बुनियादी तालीम कहते हैं कुटुम्बों में होनी चाहिए। माता-पिता ही छोटे बच्चों के प्रथम गुरु है और दूसरे गुरुओं के से उनका अधिकार श्रेष्ठ है"। सच भी यह है छोटे बालक माँ-बाप के सम्पर्क में रहते हैं। और स्वाभाविक ढंग से उनके आचरण का प्रभाव उनके बालकों पर प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार की शिक्षा जीवनपर्यन्त प्रभाव शालिनी रहती है।

परीक्षा प्रणाली के विषय में विचार—पूज्य विनोबा जी ने इसकी तुलना जुलाब से की और कहा "जिस विषय की मुझे परीक्षा देनी पड़ी, उसका

मुझे विशेष ज्ञान नही है पर जिस विषय की परीक्षा नही दी, उसका मुझे अच्छा ज्ञान है। इसलिए अपने अनुभव से मे परीक्षा को मूल्य नही देता पेट साफ करने के लिए जैसे जुलाब लेना पड़ता है, परीक्षाएँ भी ठीक वैसी ही होती है। परीक्षा दे दी कि सारा ज्ञान साफ। इसलिए शिक्षा शास्त्र द्वारा खड़े किये गये इस ढ़ोग में पड़ने की जरूरत नहीं।" एक स्थान पर उन्होने इसे अनैतिक बताया।

विद्यालय—विनोबा जी ने छात्रालय युक्त शालाओं को "कौटुम्बिक पाठशाला" का नाम दिया है और कहा है कि "मदरसे में घर घुसना चाहिए। समाज शास्त्र को चाहिये कि शालीन कुटुम्ब का निर्माण करे और शिक्षण को चाहिवे कि कौटिम्बिक पाठशाला स्थापित करे। छात्रालय अथवा शिक्षकों के घर को शिक्षा की बुनियाद मानकर उस पर शिक्षण की इमारत रचने वाली शाला ही कौटुम्बिक शाला है। स्पष्ट है कि विनोबाजी इसे प्राचीन गुरुकुल की प्रणाली का रूप प्रदान करने की चेष्टा की है। जहाँ शिक्षक के समीप बालक रहकर शिक्षा ग्रहण करते थे और ऐसी शिक्षा वास्तव में जीवन की शिक्षा होती थी। वास्तव मे बुनियादी विद्यालयो के सम्बन्ध मे उनकी यह कल्पना बडी ही उपयुक्त है। विनोबा ने छात्रालयोपयोगी कुछ नियम भी बताये है—वे शाला को समाज की गति विधियों का केन्द्र मानते जो सक्रिय रूप से काया कल्प कर सकती है।

इस प्रकार उनके शिक्षा विषयक विचार भारतीय आदर्शों और आवश्यकताओ के अनुकूल है।

बुनियादी तालीम के पोषक—बुनियादी शिक्षा की प्रेरणा बापू ने दी। बापू ने जिन विचारों को जनता के सम्मुख रखा उसका उसका पोषण पूज्य विनोबा कर रहे है। बापू के सत्य के प्रयोगो से अनुभूत विचारो पर विनोबा स्वयं आचरण कर उसकी व्यावहारिकता सबके सम्मुख रख रहे है। वे प्रत्येक बुनियादी शिक्षा सम्मेलन मे पहुंचते है। मातृभाषा के माध्यम एवं उद्योग के द्वारा शिक्षा, तालीम द्वारा समाज नव निर्माण, ग्रामोद्योग का पुर्नजीवन, सर्वोदय की स्थापना आदि बुनियादी शिक्षा से सम्बन्धित क्रिया कलापो का जोरदार समर्थन और उसका प्रचार व प्रसार, शंकाओ का निवारण सब ही तो विनोबा

गी कर रहे हैं। उनके पोषण का ही फल है कि आज बुनियादी शिक्षा राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के पद पर भली भाति आसीन हो पाई है।

वर्तमान भारत में शिक्षा

प्रश्न १—स्वतन्त्र भारत में शिक्षा की विभिन्न गतिविधियों पर संक्षेप में निबन्ध लिखिए।

उत्तर—हम लोकतन्त्र की वायु मे बिचरते है। जनतन्त्र के नागरिक को अधिकार और दायित्वो का ज्ञान होना परमावश्यक है। अच्छा नागरिक बनाने के लिए शिक्षा का होना बड़ा ही जरूरी है। इसलिए राष्ट्रीय सरकार ने शिक्षा की अनेक योजनाएँ अपने हाथ मे ली है। अतीत काल मे गुरुकुलों मे शिक्षा दी जाती थी। मध्य युग मे मन्दिरों मे और मकतबो मे दी जाने लगी। अँग्रेजों ने शिक्षा को वर्तमान स्वरूप प्रदान किया है। आजकल देश मे अँग्रेजी शासन द्वारा चलाई गई शिक्षा का अभी तक बोल-बाला है। यह शिक्षा मानव का एकाङ्गी विकास करतीहै। हमारी सरकार शिक्षा की ऐसी व्यवस्था करने में सलग्न है कि यह बालक का सर्वाङ्गीण विकास कर सके। संक्षेष में शासन द्वारा की जा रही कार्यवाहियो एवं विभिन्न स्तरो में शिक्षा की स्थिति निम्न प्रकार है:—

पूर्व प्राथमिक शिक्षा—इस शिक्षा से तात्पर्श ढाई साल की शिक्षा से लेकर छः साल की शिक्षा से है। इस स्तर पर संघीय शासन एवं प्रान्तीय सरकारों की नीति अशासकीय प्रयत्नों को प्रोत्साहन देने की है। इस स्तर पर किडरगार्टन मान्टेसरी, नर्सरी ढंग की शिक्षण पद्धतियो के शिक्षा-केन्द्र देश के मुख्य मुख्य नगरो मे है। पूर्व बुनियादी शिक्षा के प्रकाश मे आ जाने से इसका क्षेत्र गर्भाशय से लेकर छः वर्ष तक की चिक्षा से हो गया है। वैसे पूर्व प्राथमिक शिक्षा पर आगामी अध्याय में प्रकाश डाला जावेगा। कन्द्रीय समाज-कल्याण-मंडल इस शिक्षा मे विशेष कार्य कर रहा।

प्राथमिक और पूर्व माध्यमिक शिक्षा—प्राथमिक स्तर में कक्षा १ से कक्षा ५ तक की शिक्षा एवं पूर्व माध्यमिक मे कक्षा ६ से ८ तक की शिक्षा की व्यवस्था है। प्राथमिक स्तर पर अनिवार्य नि.शुल्क शिक्षा प्रदान करने का

शासन का लक्ष्य है। आशा है तृतीय पंचवर्षीय योजना तक शासन इसमे सफलता प्राप्त कर लेगा। इस शिक्षा को बल्कि कक्षा १ से ८ तक की शिक्षा को उपयोगी बनाने के लिए परम्परागत शिक्षा पद्धति को हटाकर बुनियादी शिक्षा के अनुसार बालक शिक्षित किये जावेंगे ताकि देश को अच्छे नागरिक सुलभ हो सकें। इस स्तर पर कार्यरत शिक्षकों के आर्थिक व सामाजिक सम्मान में वृद्धि के लिये उनके वेतन-क्रम सुधारे जा रहे है और राष्ट्रपति योग्य प्राथमिक व माध्यमिक शालाओं के शिक्षकों को पदक प्रदान करते हैं।

माध्य शिक्षा—इसमें कक्षा ९ से लेकर ११ तक की शिक्षा की व्यवस्था है। इस स्तर पर शिक्षालयों मे कैरियर मास्टरो की नियुक्ति की जा रही है। जो बालक का मनोवैज्ञानिक अध्ययन कर उसके भावी शिक्षा के लिए परामर्श देते है। बहूद्देशीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयो की स्थापना की जा रही है। यहाँ शिक्षार्थियों को विभिन्न उद्योगों-धन्धों की शिक्षा दी जावेगी। विभिन्न प्रान्तों के शिक्षा विभागों ने एजूकेशनल वोकेशनल गाईडेन्स केन्द्र स्थापित किये हैं। इस स्तर की परीक्षाओं के विभिन्न अखिल भारतीय स्तर पर एक व्यवस्थापक मन्डल की स्थापना की जा चुकी है जो फेल एवं पास विद्यार्थियो को उद्योग एवं ट्रेनिंग सम्बन्धी प्रबन्ध करता है। देश के पिछड़े वर्ग जैसे हरिजन, आदिवासी आदि मे शिक्षा का आलोक फैलाने के निमित्त हरिजनसेवकसंघ, आदिम विभाग सरीखी संस्थायें प्रयत्नशील है। अन्धे, भूखे, लंगडे विद्यार्थियों के लिए भी शिक्षा की व्यवस्था की ओर शासन प्रयत्नशील है और उनके निमित्त शैक्षणिक उपकरणो का निर्माण करने के लिए भारतीय शासन ने कुछ पग उटाये हैं। प्रशिक्षण सम्बन्धी कार्यक्रम को प्रमुखता प्रदान की जारही है। बी० ए० का डिग्री कोर्स तीन वर्ष का कर दिया गया है। इण्टर तोड़कर फर्स्टईअर माध्यमिक शिक्षा में और सैकिण्डियर को बी० ए० में मिला दिया गया है।

इस प्रकार शासन ने शिक्षा को उपयोगी बनाने के लिए अनेक शिक्षा सम्बन्धी योजनाएँ हाथ में ली हैं ताकि शिक्षित नागरिक देश के विकास में योग दे सकें और देश सम्पन्न बने।

स्वतन्त्रता के उपरान्त शिक्षा—१५ अगस्त, १९४७ को स्वतन्त्र होने

के उपरान्त सन् १९५० में भारत प्रभुतासम्पन्न स्वतन्त्र गणतन्त्र देश बना। इस समय प्रचलित शिक्षा आँग्ल शासन का अभिशाप थी। फिर स्वतन्त्र भारत की आवश्यकताओं को कैसे पूरा कर सकती है। शिक्षा पुस्तक केन्द्रित थी और विश्वविद्यालयीन शिक्षा को शासन ने विशेष महत्व दे रखा था। शिक्षा बौद्धिक व निरुपयोगी थी। ग्राम उपेक्षित थे। यान्त्रिक और व्यावसायिक शिक्षा की दशा असन्तोषजनक थी। इस समय ६ से ११ साल तक, ग्यारह से चौदह साल तक, चौदह साल से सत्रह साल तक और सत्रह से तेईस साल तक के बालकों को क्रमश: "४२%, १३·९, ६ ४% और ०·९%" शिक्षा की व्यवस्था थी।

प्रथम पाँच साला योजना में शिक्षा—प्रथम पाँच-साला योजना जिसकी काल सीमा १९५१ से १९५६ तक थी शिक्षा व्यय के लिए १६९ करोड़ रुपये निर्धारित किए गए। (प्रान्तीय सरकारो ने १२५ करोड व केन्द्रीय शासन ने ४४ करोड़ रुपये) इस योजनावधि मे प्रत्येक प्रान्त में २ अथवा ३ पूर्व प्राथमिक शिक्षक-प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की गई। छ: साल तक के बालक बालिकाओं की शिक्षा को अधिकाधिक मनोवैज्ञानिक बनाने पर बल दिया गया। प्राथमिक एवं पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र मे परम्परित नीरस पाठ्यक्रम के स्थान पर बुनियादी पाठ्यक्रम चालू किया गया। शिक्षको को बुनियादी ढंग का प्रशिक्षण देने के निमित्त बुनियादी प्रशिक्षण विद्यालय, महाविद्यालय और स्नातकोत्तर बुनियादी प्रशिक्षण महाविद्यालय खोले गये। बुनियादी शालाओं की संख्या तथा इनमे पढने वाले बालको की संख्या मे पर्याप्त वृद्धि हुई। माध्यमिक शालायें काफी बढी। बहुद्देशीय विद्यालय प्रचलित किये गये। शिक्षा को व्यावहारिक एवं उपयोगी बनाने के लिये पग उठाये गए। शिक्षा के अन्य क्षेत्र जैसे टेकनीकल एवं इन्जीनिरिंग, सामाजिक, व्यावसायिक तथा स्त्री शिक्षा एवं विकलागों की शिक्षा विषयक योजनायें बनीं और उन पर व्यवस्थित ढंग से अमल किया गया। शिक्षक-प्रशिक्षण केन्द्र भी खुले और सन् १९५५-५६ में इन केन्द्रों की संख्या ४४९ हो चली। प्रत्येक शिक्षालय में राष्ट्रीय सैन्यदल व सहायक सैन्यदलों का प्रचलन किया गया। इस प्रकार लगभग शिक्षा के सभी क्षेत्रो मे योजनायें बनी, उन पर अमल किया गया और अनेक सुधार किये गये

अथवा सुधारार्थ रूपरेखा प्रस्तुत की गई। शिक्षा का प्रचार व प्रसार हो चला।

दूसरी पाँच साला योजना—द्वितीय पाँच साला योजना की कालावधि सन् १९५६ से सन् १९६१ तक है। इस योजना काल में शिक्षा पर ३०७ करोड़ रुपये खर्च होने है। इस निधि मे संघीय सरकार ९५ करोड़ तथा प्रान्तीय सरकारें २१२ करोड़ रुपये जुटावेंगे। यह अनुमान किया गया है कि इस योजना की सफल समाप्ति के उपरान्त शिक्षा के विभिन्न क्षेत्र में ११ वर्ष तक के ६२·७%, १४ वर्ष तक के २२·५% और १७ साल तक के ११·७% बालक शिक्षा ग्रहण कर पायेंगे। ग्राम-संस्थान, दृश्य श्रव्य-संस्थान की स्थापना की गई है। स्त्री-शिक्षा,अंधे बालको की शिक्षा, पुस्तकालय, अध्यापकों की ट्रेनिग, उद्योग शिक्षण, शाला मे मनोरंजन के साधन उपलब्ध करना आदि क्षेत्रो मे विकास हुआ है और कई योजनाएँ कार्य रूप मे परिणत की गई है। हिन्दी व संस्कृत के प्रचार व प्रसार के लिए केन्द्रीय बोर्डों का संगठन किया गया है।

तृतीय पाँच साला योजना—तीसरी पाँच साला योजना की प्रारम्भिक रूपरेखा प्रकाशित हो चुकी है। इस रूप-रेखा मे कहा गया है "शिक्षा के कार्यक्रम में खास जोर इन बातों पर दिया जावेगा। ६ से ११ वर्ष तक के सभी बच्चों को पढने-लिखने की सुविधा देना, माध्यमिक और विश्वविद्यालय के स्तर पर विज्ञान की शिक्षा में सुधार करना, सब वर्गो के शिक्षकों को प्रशिक्षण देना और तकनीकी शिक्षा का विस्तार करना।"

"तीसरी योजना में ६ से ११ वर्ष तक के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने की सुविधाएँ उपलब्ध की जावेगी।"

"६ से ११ वर्ष के विद्यालय जाने वाले बच्चों मे लड़कियों का अनुपात इन छः राज्यों में औसत से भी बहुत कम है। मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश जम्मू तथा काश्मीर बिहार और उड़ीसा। इन राज्यो मे प्राथमिक शिक्षा कार्य-क्रम को आवश्यकतानुसार साधनों और सुविधाओ की सहायता दी जावेगी, ताकि तीसरी योजना के अन्त मे अखिल भारतीय अंक लगभग ८०% तक पहुंच सके।"

इसके अतिरिक्त सभी प्रारम्भिक विद्यालयों को बुनियादी शिक्षा के तरीके से चलाने के कार्यक्रम का विस्तार किया जावेगा। शिक्षकों को बहुत बड़ी संख्या मे बुनियादी प्रशिक्षण दिया जावेगा। उच्चतर माध्यमिक एवं बहूउद्देशीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय खोले जावेंगे। परीक्षा-प्रणाली में सुधार किया जावेगा। प्रशिक्षण केन्द्रों मे शिक्षा विषयक शोधकार्य को प्रोत्साहन दिया जावेगा।

इस प्रकार हम देखते है कि स्वतन्त्र भारत में शिक्षा का प्रसार सभी क्षेत्रों मे द्रुत गति से किये जाने की व्यवस्था की गई है। आवश्यकता है जनता इसमें सहयोग दे और शिक्षा सुविधाओ से लाभ उठाये। तभी जनतन्त्र के अनुकूल सुनागरिक शिक्षालयो से ढल कर निकल सकेंगे। शिक्षा के इस विकास के साथ शिक्षालयो में अनुशासन की समस्या को हल करने के लिए शासन को कुछ ठोस कदम उठाने चाहिये और शिक्षा स्तर को उठाने मे सतत् प्रयत्नशील रहना चाहिये।

पूर्व प्राथमिक शिक्षा का स्वरूप एव विकास

प्रश्न १—पूर्वप्राथमिक शिक्षा क्या है ? इसकी क्या आवश्यकता है ? भारत के लिए आदर्श पूर्व प्राथमिक शिक्षा का स्वरूप निर्धारित कीजिए।

२—भारत में पूर्वप्राथमिक शिक्षा के क्रमिक विकास पर सक्षिप्त निबंध लिखिये।

तात्पर्य एवं आवश्यकता—पूर्व प्राथमिक शिक्षा से तात्पर्य बालक के जन्म से लेकर छ. साल तक की उम्र तक की शिक्षा से है। भारत मे बुनियादी शिक्षा के प्रचलन से इसका क्षेत्र गर्भाधान से लेकर ७ वर्ष तक की शिक्षा से हो गया है। स्वतन्त्रता से पूर्व शासन ने शिक्षा सम्बन्धी दायित्व को ठीक ढंग से नहीं निभाया। फल यह हुआ कि इस दिशा मे लोगो का ध्यान ही नहीं गया इधर स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त जो भी प्रगति इस क्षेत्र में हुई है उसे क्रान्तिकारी नही कहा जा सकता है। फिर भी इस दिशा मे प्रयास प्रारम्भ हो गये हैं और जनता का ध्यान भी इस ओर इंगित हुआ है। नीचे हम इस स्तर पर शिक्षा की आवश्यकता पर विचार करेंगे :—

१. **माता-पिता की निरक्षरता एवं पुराने ढंग का पालन-पोषण**—वैसे इस काल की शिक्षा के सम्बन्ध मे बापू ने कहा था कि "पूर्व-बुनियादी शिक्षा राज्य का कर्त्तव्य नही है।" विनोबाजी भी कहते है कि "मेरी दृष्टि में तो छोटे बच्चों की तालीम, जिसे हम पूर्व-बुनियादी तालीम कहते है कुटुम्बो में होनी चाहिए। माता-पिता ही छोटे बच्चों के प्रथम गुरू हैं और दूसरे गुरुओं से उनका अधिकार भी श्रेष्ठ है।" लेकिन पूर्व-प्राथमिक शिक्षा जिसका आदर्श स्वरूप पूर्व-बुनियादी तालीम ढंग पर निश्चत हो चुका है इस प्रकार घर पर नही दी जा सकती। इसका प्रथम कारण तो यह है कि हमारे माता-पिता इतने पढ़े-लिखे नही है कि वे इस वय के बालको को आदर्श शिक्षण प्रदान कर सके। दूसरे हमारे घरों में बालकों का जो पालन पोषण-होता है वह अभी तक पुराने ढर्रे पर चलता चला जारहा है। इस प्रकार प्रत्येक गृह "आदर्श पूर्व-बुनियादी शाला" का स्वरूप ग्रहण नही कर सकता जब तक कि समाज का रहन-सहन एवं शैक्षणिक स्तर काफी ऊँचा न उठ जावे। फलतः पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के लिए पूर्व-प्राथमिक शिक्षालय स्थापित करने होगे।

(२) **घर और समाज का दूषित वातावरण**—खेद है कि हमारे घर और समाज का वातावरण दूषित है। माता-बहिनो का अशिक्षित होना, उनकी संकुचित मनोवृत्ति, शिशुओ की उपेक्षा, कुटेवें कुछ ऐसे तथ्य हैं जो बालकों मे दुर्गुणों के अंकुर पैदा कर सकते हैं। अतः बालकों को घरो के ऐसे दूषित वातावरण से बचाव एवं बालको की मनोवैज्ञानिक जरूरतों की दृष्टिगत रखने वाले पूर्व प्राथमिक शिक्षालयो की आवश्यकता है।

(३) **अभिभावकों का उद्योग केन्द्रों में कार्य करना**—भारत मे प्रजातन्त्र के अनुरूप और बढ़ते हुये जीवन स्तर के निमित्त माता-पिता दोनो को ही उद्योग केन्द्रो अथवा अन्य व्यवसायों में जाना होगा। इसकी शुरूआत हो चुकी है। जब वे काम पर जावेंगे तो घर पर उनके बालकों की देखभाल कौन करेगा। स्पष्ट है उनकी अनुपस्थिति मे बच्चो की देखभाल करने के लिये पूर्व प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना करनी होगी।

(४) **घर के अभावों की पूर्ति हेतु**—पूर्व प्राथमिक शिक्षालय उन अभावों की पूर्ति करेंगे जिनकी कमी हमारे घरों में पाई जाती है जैसे व्यवस्थित

जीवन, सुरम्य वातावरण, भोजन, सामुदायिक जीवन एवं जाति भेद का अन्त आदि।

(५) **ढाई वर्ष से लेकर छः वर्ष तक की अवस्था का सदुपयोग** सामान्यतः भारत मे इस डम मे बालक खेलते कूदते तथा घर के दूषित वातावरण में अपने को कुसंस्कृत किये गुजार लेता है। इस समय बालक की कुछ मनोवैज्ञानिक जरूरतें हैं, उनकी उपेक्षा कर दी जाती है फलतः जब बालक छः वर्ष की अवस्था के उपरान्त शाला मे प्रवेश पाता है तो उसे कुछ अटपटा एवं भय सा लगता है। मानो खुले हाथ-पैरो को बाँध दिया गया हो। पूर्व प्राथमिक बुनियादी शिक्षा मानव की सारी शिक्षा की आधार शिला है। जब प्रजातन्त्र मे शिक्षा से बालक के सन्तुलित सर्वांगीण विकास को अपेक्षा की जाती है तो इस काल मे बालक की क्षमताओ, झुकावो और रुचियो को निश्चित दिशा मे मोड़कर सुसंस्कृत बनाने की दिशा मे अग्रसर किया जा सकता है। दूसरे इस काल विधि की शिक्षा प्राथमिक शिक्षा के लिये बालको को तैयार करेगी। इस दृष्टि से पूर्व प्राथमिक शिक्ष. का बड़ा महत्व है।

(६) **इस समय के संस्कारों का आजीवन प्रभाव**—इस समय बालको पर जो भी पूर्व निर्धारित एवं सुनियन्त्रित प्रभाव डाले। जावेगे। वे बालक पर आजीवन पडे रहेगे। इसलिये बालको मे अच्छे संस्कारो को उत्पन्न करने की दृष्टि से इस कालाविधि की शिक्षा का बड़ा महत्व है। बड़े होने पर तो अच्छे गुणों को सिखाना कठिन होता है क्योकि मनुष्य को दूसरी की सलाह बुरी लगती है और वह अपने को सबसे अधिक बुद्धिमान समझने लगता है।

इस प्रकार हम देखते है सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, शैक्षणिक सभी दृष्टियों से पूर्व प्राथमिक शिक्षा का बड़ा महत्व है। विदेशो और विशेषकर भारत में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र मे नीचे लिखी पद्धतियाँ सर्वाधिक प्रचलित है—

१. मान्तेसरी प्रणाली
२. बालोद्यान अथवा किंडरगार्टन प्रणाली, एवं
३. नर्सरी शिक्षण पद्धति

मान्तेसरी प्रणाली—इसमे कार्य द्वारा शिक्षा के महत्व को आँका गया है।

इसमें विभिन्न शैक्षणिक उपकरणों (Appratus) द्वारा बालकों को एन्द्रिक प्रशिक्षण दिया जाता है। ये उपकरण ही बालको को लेखन एवं वाचन सिखाने के लिये प्रयुक्त किये जाते हैं। यह पद्धति बालक को स्वच्छन्दता प्रदान करती है। बालक इच्छानुसार खेलता और पढ़ता है। बालक के व्यक्तिगत विकास पर अधिकाधिक बल दिया जाता है। इस प्रणाली के अनुसार शाला को 'शिशु मन्दिर' कहते है। यहाँ बालकों के लिये भोजन आदि की व्यवस्था होती है। ये शिशु मन्दिर बालको को एक आदर्श घर का वातावरण प्रदान करते है। हमारे देश मे अनेक ऐसे शिक्षालय है। बडे बड़े नगरो में कम से कम एक शिशु मन्दिर पाया जाता है जो जनता के प्रयासों से चलता है।

किंडरगार्टन या बालोद्यान प्रणाली—फ्राबेल इसके प्रणेता हैं। "किन्डर 'माने छोटे बच्चे' और 'गार्टन' माने 'बाग' अर्थात् 'बच्चों का बाग'।" इसमे फ्राबेल के कथनानुसार 'बालक पौधे है और शिक्षक माली'। इसमे खेल द्वारा शिक्षण की प्रणाली का अनुगमन किया जाता है। इसके अन्तर्गत शालेय वातावरण सजावट पूर्ण होता है। इसमे बालको को संगीत की ध्वनि पर मार्च करके प्रार्थना स्थान पर आना, शिष्टाचार के नियम महान् पुरुषो के जीवन वृन्तान्त आदि का अभ्यास कराया जाता है। बालकों को कक्षा के कमरों मे सामग्री रखी मिलती है जिससे ये बालक खेलते है। फ्राबेल ने इन्हे उपहार कहा है। ये बेलनाकार, धनाकार और गोलाकार होते है। इस प्रणाली मे बालको की कल्पना शक्ति का विकास करने के लिए स्वच्छन्द वातावरण प्रदान किया जाता है। बालक खेल पसन्द करते है। यह बालक की विचार कल्पना और विवेक त्रिशक्ति के विकास में बड़ा उपयोगी है। इसमें बालको के निमित्त खिलोने, खेल, चित्रादि का विशेष स्थान है। यह प्रणाली बालक की सहज क्रियाशोलता, और सहयोग आदि शक्तियो के विकास पर बल देता है।

नर्सरी पद्धति—इसका प्रचलन उन विदेशो के उद्योग प्रधान नगरो में हुआ है। जहाँ माँ कार्य करने उद्योग केन्द्रो मे चली जाती है। इसमे २½ से ५ वर्ष तक के बालकों के शिक्षण की व्यवस्था होती है। ऐसे शिक्षालय प्राकृतिक

वातावरण में स्थापित किये जाते है। इसमे बालकों के भोजन मनोरंजन, उपचार, विश्राम आदि की व्यवस्था होती है। ये शालायें बालक के शारीरिक विकास में सहायता देती है। बालक की कल्पना शक्ति को विकसित करती हैं और मानसिक ग्रन्थियों को नहीं पड़ने देती।

शिशु शिक्षण का आदर्श स्वरूप

ये प्रणालियाँ विदेशी 'परम्पराओ पर आधारित है। व्यय साध्य हैं। भारत अभी इन पद्धतियो को अपनाने योग्य नहीं हुआ है। इसलिए अभी तो इतना हो सम्भव हो सकता है कि हम इन पद्धतियो के अच्छे गुणो को अपनालें और इनका भारतीयकरण करलें अथवा इन विशेषताओ का समावेश पूर्व बुनियादी शिक्षा मे करलें। एक लेखक के शब्दो मे, "एक आदर्श बाल शिक्षा जोवन के द्वारा तथा सामाजिक वातावरण म होनी चाहिए ताकि बालक का व्यक्तिगत एवं सामाजिक उत्कर्ष साथ-साथ हो सके। अतः पूर्व बुनियादी शिक्षा म "बच्चों का शारीरिक पोषण" तन्दुरुस्ती की देखभाल व्यक्तिगत और सामाजिक सफाई तथा आरोग्य, आत्म निर्भरता, सामाजिक शिक्षा, काम व खेल की सृजनात्मक व रचनात्मक प्रवृत्तियो, भाषा कला व संगीत मे आत्माभिव्यक्ति, साधारण हिसाब, प्रकृति निरीक्षण आदि क्रियायें सम्मिलित है।"

इसीलिये बापू ने बताया कि बालक द्वारा सम्पन्न होने वाले कार्य विध्वंसात्मक न हो कर रचनात्मक हो। लेखन के सम्बन्ध मे गाँधी जी का विचार था, "रंगो की पहिचान कराके चित्र से लिपि शुरू करें, क्योकि अक्षर भी आखिर चित्र ही है।" इस अवस्था म खेल और काम को अलग अलग न पढ़ाया जाय।

अतः यहाँ पूर्व बुनियादी शिक्षा का संक्षिप्त स्वरूप देने के साथ ही उन स्थानो का उल्लेख किया जावेग जहाँ पर उपर्युक्त पद्धतियो की विशेषताओं का इसमें समावेश करना उपयोगी है जोकि भारतीय परिस्थितियो तालमेल खा सकें।

पूर्व बुनियादी शिक्षा का स्वरूप—पूर्व बुनियादी शिक्षा की व्यवस्था आयु के अनुसार इस प्रकार रहेगी।

गर्भाशय से लेकर जन्म तक—'इस समय माँ का शिक्षण बालक के जन्म मे पूर्व का शिक्षण माना गया है। इस समय माँ के लिए समुचित आहार, कपड़े, आराम, सही वातावरण एवं सत्साहित्य की व्यवस्था की जानी चाहिए।' इस दृष्टि से प्रोढ़ शिक्षा विशेष सहायक हो सकती है। स्थानीय औषधालय और ग्राम सेवकाएँ गर्भिणी स्त्रियों का, समुचित ढंग से मार्ग दर्शन कर सकती है। ऐसी व्यवस्था हो जाने पर शारीरिक व मानसिक रूप से बालक ठीक उत्पन्न होगा। उसमे किसी प्रकार की मानसिक एवं शारीरिक विकृति नही पाई जावेगी।

उत्पन्न होने से लेकर ढाई साल तक—बालक यह समय घर मे ही बिताता है। अतः उसे शारीरिक रोगो से बचाया जावे। इस उम्र मे बालक मे मानसिक ग्रन्थियो का जन्म न होने पावे। यह उम्र बालक की तीव्र गति, शारीरिक एवं मानसिक विकास की द्योतक है। इस समय बालको को ठीक विधि से मल-मूत्र विसर्जन करना, चलना, वार्तालाप करना, भोजन करना, अपनी सफाई खुद करना आदि का ज्ञान करावें। बालक अध्यापक का सम्पर्क सधवाया जाय।

ढाई साल से लेकर ४ साल तक की शिक्षा—इस समय बालक नसंरी पद्धति द्वारा संचालित शाला मे प्रवेश करे। यह अवस्था बालक की एन्द्रिक एवं रचनात्मक प्रवृत्ति के विकास मे महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इस अवसर पर बालकों के लिए रचनात्मक कार्य व खेल का आयोजन किया जाय।

४ से ७ साल तक की शिक्षा—इस समय मान्तेसरी प्रणाली बड़ी उपयोगी सिद्ध हो सकती है। अन्य शिक्षण पद्धति भी अपनाई जा सकती है।
शिक्षण मे प्रयुक्त किये जाने वाले साधन सादे व भारतीय हों जैसे तकली, अटेरन, खुर्पी, पेड़-पाधे, पत्थर, मिट्टी आदि। क्रियायें ऐन्द्रिक प्रशिक्षण प्रदान करेंगी।

इन अवस्था मे बालको मे स्वावलम्बन के बीज बो देने चाहिये। श्रम उत्पादक हो। बालक अपना काम स्वयं करं। इस अवसर परबालको के शारीरिक विकास पर विशेष ध्यान रखा जाय शालाओं मे डाक्टर रखे जायें। पूर्व बुनियादी शाला के बालक माता-पिता के सम्पर्क मे रहे। शिशुशाला घर के निकट स्थापित की जायें। माता पिताओ को बाल शिक्षण की जानकारी देने

की व्यवस्था हो। बालानुरूप अवसरानुकूल सांस्कृतिक आयोजन सम्पन्न हों। बालक शाला में प्राप्त गुणों को घर तक पहुँचायें।

इस समय बालक मे सामाजिक एवं चारित्रिक गुणों का संचार किया जाये। सामूहिक प्रार्थना, सामूहिक भोजन एवं सामूहिक अन्य कार्यों द्वारा बालको में सहकारिता, स्वच्छता, नम्रता, आज्ञाकारिता का विकास करना चाहिये ताकि वे आत्मानुशासन की ओर अग्रसर हों।

पाठ्यक्रम—उपर्युक्त विवेचन के अनुसार पूर्व बुनियादी शिक्षा मन्दिरों मे नीचे लिखा पाठ्यक्रम रखा जाता है।

(१) **स्वच्छता**—

(१) शरीर व कपड़ो की सफाई

(२) शाला को सफाई

(२) **रचनात्मक कार्य**—

(१) रंग का काम (२) खिलौने व बर्तनों का निर्माण

(३) कताई और (४) बागवानी।

(३) **सांस्कृतिक कार्य**—

(१) संगीत, चित्रकला और सांस्कृतिक कार्यक्रम

शालाओ मे बालको का रेकार्ड रखा जावे। स्त्रियाँ उन्हे पढावें और माँ की सी ममता प्रदान करें।

पूर्व प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य—

(१) बालको को प्राथमिक शिक्षा के लिए तैयार करना।

(२) छोटी वय के बच्चों का सर्वांगीण एवं सामंजस्य पूर्ण विकास।

भारत में विकास—भारत में, विश्व के अन्य समुन्नत राष्ट्रों, जैसे, रूस, इंगलैण्ड, अमेरिका के समान इस क्षेत्र मे विकास नही हो पाया है। वरन् इस क्षेत्र मे प्रगति हुई ही नही है। भारत मे श्रीमती बिज्जुबाई बघेका एवं श्रीमती ताराबाई मोड़क ने बोर्डी नामक स्थान पर बम्बई के समीप आज से ३५ वर्ष पूर्व इस दिशा म स्वतन्त्र रूप से कार्य करना शुरू किया। आंग्ल शासन शिक्षा के प्रति उदासीन था। अतः उसने इस दिशा मे कोई पग नही उठाया। सन् १९४४ मे जान सार्जेण्ट की रिपोर्ट मे कहा गया था कि प्राइमरी शिक्षा

के पहले बाल-शिक्षा का विचार एवं महत्ता जनता को समझाई जावे। इसके उपरान्त राष्ट्रपिता बापू ने सेवा ग्राम में सम्पन्न हुए अखिल भारतीय बुनियादी शिक्षा सम्मेलन मे बुनियादी क्षेत्र जीवन की प्रथम साँस से अन्तिम साँस तक माना। इस प्रकार पूर्व बुनियादी शिक्षा के महत्त्व को अंगीकार किया गया। इस दिशा मे जनता द्वारा ही थोड़ा बहुत काम किया गया। ३ से ६ वर्ष तक के बच्चो को सामाजिक अनुभव एवं सद्व्यवहार की शिक्षा देने के पूर्व प्राथमिक बेसिक स्कूलो की व्यवस्था की जाय।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त सन् १९५० से देश के बहुमुखी विकासार्थ पंचवर्षीय योजनाओ का चलन हुआ और इन योजनाओं मे पूर्व प्राथमिक शिक्षा के विकासार्थ कार्यक्रम निश्चित किया गया। आजादी से पहले नीचे लिखी संस्थाएँ स्वतन्त्र रूप से मुख्यतः कार्य कर पही थी, जो उल्लेखनीय है—

(१) पूर्व प्राथमिक शिशु-बिहार बोर्डी (बॉम्बे)

(२) शिशु बिहार, कलकत्ता।

(३) राजघाट स्कूल, बनारस तथा

(४) बसंत थ्योसोफिकल स्कूल, अड्यार।

पहली पचशाला योजनांतर्गत विकास—राष्ट्र की आर्थिक क्षमताओ को देखते हुए प्रथम पंचवर्षीय योजनान्तर्गत पूर्व प्राथमिक शिक्षा पर शासन यथोचित ध्यान नही दे सका अपितु शासन ने इस दिशा में कुछ पग उठावे, वे इस प्रकार है—

(१) पूर्व प्राथमिक शिक्षा स्तर पर दीक्षित शिक्षका की समस्या का हल करने के निगित्त पूर्व प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये। ये केन्द्र मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, देहली, मद्रास, एवं केरल मे खोले गये।

(२) जनता के व्यक्तिगत प्रयासो द्वारा संचालित पूर्व प्राथमिक शिक्षा केन्द्रो जिन्हें बाल मन्दिर अथवा शिशु मन्दिर कहते है अनुदान दिया जाने लगा।

(३) पूर्व प्राथमिक शिक्षा विषयक अनुसंधान कार्यों मे सहायता प्रदान की गई।

(४) हर एक जिले में कम से कम एक परियोजना केन्द्र खोला गया जो कि केन्द्रीय समाज कल्याण मण्डल के अन्तर्गत था। प्रत्येक परियोजना केन्द्र के तत्वावधान मे पाँच बाल वाड़ियों की स्थापना की गई। इन बाल वाड़ियों में बालकों को खिलौने देने, भोजन देने, स्नान, कपड़े बदलने आदि की यथा शक्ति सुविधाएँ प्रदान की जाती है। इससे उन माताओ को राहत मिलती है जो दिन में कार्य करने उद्योग केन्द्रों अथवा कार्यालय आदि में जाती है। शासन के इस सीमित रूप मे उत्तरदायित्व वहन करने के फलस्वरूप ऐसे शिशु मन्दिरों की संख्या सन् १९५६ तक ६३० होगई है।

इस कालावधि मे यह भी निश्चय हुआ है कि बालवाड़ी कार्य औद्योगित प्रतिष्ठान, श्रमिक केन्द्रों मे अपने हाथ मे ले एवं अन्यत्र यह कार्य स्थानीय संस्थाएँ सम्पादित करें। स्थानाभाव मे खुले मैदानों एवं वृक्षो के तले पूर्व प्राथमिक शिक्षालय चलाये जावे।

द्वितीय पंचशाला योजनान्तर्गत—इसमे भी प्रथम योजनान्तर्गत कार्यक्रम को अग्रगति प्रदान करने का कार्य सम्पन्न किया गया है। बालवाड़ी के अन्तर्गत ग्रामसेविकाएँ इस दिशा मे अपने दायित्व को यथाशक्ति वहन कर रही है। बालबाडो को इस कार्य के निमित्त बीस रुपये मासिक खर्च प्रदान किया जाता है, जो कम है।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में—

इस योजना मे केन्द्रीय व प्रान्तीय सरकारो को पूर्व प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र मे प्रभावशाली पग उठाने चाहिये और इस शिक्षा के लिए जनता मे व्यापक प्रचार व प्रसार कर जनमत एकत्रित करना चाहिये और व्यक्तिगत प्रयासो को प्रोत्साहन देने के लिए अधिक अनुदान की व्यवस्था की जानी चाहिए। प्रत्येक प्रशिक्षण सस्था से एक आदर्श शिशु मन्दिर सम्बद्ध कर देना चाहिये जिससे जो शिक्षक प्रशिक्षण प्राप्त करके लौटें वे प्राथमिक विद्यालय के साथ पूर्व प्राथमिक शिक्षा की प्रारम्भिक व्यवस्था को करना प्रारम्भ करदें। आज बालकों को छः वर्ष से अवस्था से पूर्व प्राथमिक विद्यालयों मे भर्ती किया नहीं जाता, उधर पूर्व प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था नही होती। शासन को चाहिए कि वह इस दिशा मे अवश्य ही कोई व्यावहारिक एवं उपयोगी हल ढूँढ

निकालें। इस वय के बालकों के निमित्त, सारे भारतीय शैक्षणिक उपकरणो के निर्माण एवं प्रशिक्षित शिक्षकों की समस्या, इस वय के निमित्त बालोपयोगी साहित्य के निर्माण हेतु कार्यक्रम निश्चित करना चाहिये ताकि शिशु-अध्यापक बालक के सर्वाङ्गीण विकास का प्रतीक बन जावे। कहने का सारांश यह है कि पूर्व प्राथमिक शिक्षा का अखिल भारतीय स्तर पर स्वरूप निर्धारित किया जाकर इस स्तर की शिक्षा का अधिकाधिक विस्तार किया जाय।

प्राथमिक एव पूर्व माध्यमिक शिक्षा

प्रश्न—प्राथमिक शिक्षा का महत्त्व प्रतिपादित कीजिये ?

उत्तर—हमारा देश एक प्रजातन्त्र देश है। प्रजातन्त्र पढ़े लिखे समझदार नागरिकों पर निर्भर है। अन्यथा सरकार अपढ़ और मूर्खों की जमात बनकर रह जावेगी। उधर प्रत्येक प्रजातन्त्र देश अपने नागरिकों से विशिष्ट प्रकार के आचरण की अपेक्षा करता है जो प्रजातन्त्र के अनुकूल हो। खेद है हमारे देश मे प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र मे सन्तोषजनक प्रगति नही हुई है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त भी जिस लोक कल्याणकारी राज्य का हम दावा करते है और अपने संविधान मे अनिवार्य मुफ्त प्राथमिक शिक्षा को राजनीति के निर्देशक तत्वो में प्रमुख स्थान रखा है, धनाभाव के कारण लागू नही कर पाये है।

प्राथमिक शिक्षा का महत्व निम्नलिखित दृष्टियो से महत्वपूर्ण है—

प्रजातन्त्र की सफलता के निमित्त—प्रजातन्त्र को सफल बनाने के लिए शिक्षित नागरिको की आवश्यकता असंदिग्ध है। शिक्षा मानव के दृष्टिकोण को व्यापक बनाती है तथा उन्हे अपने अधिकार और कर्तव्यो का समुचित ढंग से उपयोग एवं सीमाओ का ज्ञान हो जाता है। वे जाति भेद, वर्ग भेद और चाटुकार उम्मीदवारो के चंगुल मे न फंसकर योग्य एवं कर्मठ, न्यायी व राष्ट्र-सेवी उम्मीदवारो को चुन सकते हैं जो कि देश की भली प्रकार से व्यवस्था कर सकें। साक्षर नागरिक ही देश की राजनीति मे समुचित ढंग से भाग ले सकता है। इसलिए प्राथमिक अनिवार्य शिक्षा की बड़ी जरूरत है।

मनोवैज्ञानिक कारण—मनोवैज्ञानिक रूप से इस वय मे अर्थात् ७ से ११ वर्ष की अवस्थागत विशेषताओ, क्षमताओ रुचियों की आवश्यकताओं के समुचित

उपयोग के लिए बालकों को शिक्षा देना जरूरी है। इस समय बालक में जैसे संस्कार उत्पन्न किये जावेंगे उनका प्रभाव चिरस्थायी रहेगा। अतः बालकों के लिए मनोवैज्ञानिक, नैतिक सभी दृष्टियो से प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करना आवश्यक है।

प्रश्न—१ स्वतन्त्रता से पूर्व भारत ने प्राथमिक एवं पूर्व माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में क्या प्रगति की थी ?

२—स्वतन्त्रता मिलने के उपरान्त भारत में प्राथमिक एवं पूर्व माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में विकास का उल्लेख कीजिए।

उत्तर—प्राथमिक शिक्षा का महत्व सर्व विदित है। इसके महत्व पर पहले ही प्रकाश डाला जा चुका है। भारत में प्राथमिक शिक्षा को लागू करने का सुझाव सबसे पहले विलियम एडम ने सन् १८३८ में दिया था। इसके उपरान्त प्राथमिक अनिवार्य शिक्षा की बात बम्बई के सर्वे कमिश्नर ने १८५२ में व गुजरात के शिक्षा निरीक्षक श्री टी० सी० होय ने सन् १८५८ मे कही। लेकिन यह प्रस्ताव ठुकरा दिये गये। इधर लोगो के हृदय मे राष्ट्रीयता जगने लगी थी। १८८५ मे अखिल भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस की स्थापना हुई और इसके सदस्यों ने प्राथमिक शिक्षा के लिए आवाज उठाना शुरू कर दिया। इस दिशा मे सर इब्राहीम रहीमतुल्ला और श्री चिम्मनलाल सीतलबाड़ ने सर्व प्रथम प्रयत्न किये तदनुसार प्राथमिक शिक्षा के निमित्त एक कमेटी नियुक्त की गई। कमेटी ने रिपोर्ट दी कि अभी अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा लागू करने का समय नहीं आया है। अतः बात टल गई।

लेकिन अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की माँग बढने लगी और बड़ौदा के महाराज सयाजीराव ने इस दिशा मे पग उठाया और प्रयोगात्मक रूप में सन् १८९३ मे अमरोली क्षेत्र मे अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा लागू कर दी गई और १९०२ तक सम्पूर्ण राज्य में इसका प्रसार कर दिया गया। बड़ौदा के महाराज के इस सफल प्रयोग ने अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की माँग को और बलबती बना दिया। सर्वत्र जोर की माँग होने लगी। काँग्रेसी नेता श्री गोपाल कृष्ण गोखले ने अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की माँग थी। उन्होंने साक्षरता का महत्व बताया और बड़ौदा का उदाहरण प्रस्तुत किया। उन्होने १९ मार्च

१९१० में इम्पीरियल धारा परिषद में अनिवार्य शिक्षा का सिद्धान्त लागू व
के लिए एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया। सरकार ने श्री गोखले को इस विषय
भविष्य में विचार करने का आश्वासन दिया। फलत: गोखले ने प्रस्ताव व
ले लिया। परन्तु सरकार ने अपने आश्वासन का पालन नहीं किया। इ
फलस्वरूप श्री गोखले ने १६ मार्च १९११ को अपना प्रसिद्ध विधेयक रख
दुर्भाग्यवश वह विधेयक पास न हो सका। लेकिन इस विधेयक ने शिक्षा
राज्य की नीति से भारतीयों को अवगत करा दिया और सरकार को इस वि
में सोचने समझने के लिए मजबूर होना पड़ा। इसके उपरान्त तिलक और
विट्ठलभाई पटेल ने अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की आवाज उठाई।

१९१८ में प्राथमिक शिक्षा का विकास फिर होने लगा। बम्बई प्रार्था
शिक्षा कानून इसी वर्ष पास किया गया। इस कानून के अन्तर्गत म्यूनिसपै
टियों को ६ से ११ वर्ष तक के बालकों को अनिवार्य शिक्षा देने की आज्ञा दी
गई। पंजाब, संयुक्तप्रान्त, बंगाल बिहार और उड़ीसा में १९१९ में प्राथ
शिक्षा कानून पास हुए। सन् १९२० में मध्यप्रान्त और मद्रास मे भी शि
कानून बने। अब देश मे प्राथमिक शिक्षा प्रचार व प्रसार होने लगा। इ
उपरान्त १९३१ से १९३७ के बीच प्राथमिक शिक्षा की गति ढीली पड़ ग
हर्टाग कमेटी की शिफारिशो और बोर्डों के निजी स्वार्थों और शास
कर्मचारियो ने प्राथमिक शिक्षा के विकास मे बाधा पहुँचाई।

प्राथमिक शिक्षा के इतिहास में सन् १९३७ से सन् १९४७ तक के
का बड़ा महत्व है। विभिन्न प्रान्तो मे उत्तरदायी सरकारें बनी। जनता
राष्ट्रीय नेता शिक्षा के प्रति सजग हो गये। इसी काल मे बापू ने देश के स
बेसिक शिक्षा योजना को प्रस्तुत किया। प्रचलित शिक्षा प्रणाली की
आलोचना 'हरिजन' पत्र मे लेख लिखते हुए 'बेसिक योजना' के
भूमिका बनानी शुरू कर दी। अक्टूबर १९३७ मे गाधी जी के सभापतित्व
एक अखिल भारतीय शिक्षा सम्मेलन आयोजित किया गया। उन्होने कहा
प्रत्येक बच्चे को अनिवार्य मुफ्त शिक्षा दी जावे। शिक्षा का माध्यम मातृभ
को बनाया जाय तथा समाजोपयोगी उत्पादक मूलोद्योग के माध्यम से बाल
को शिक्षा दी जावे ताकि बालक का सर्वांङ्गीण विकास हो सके। हरी

अधिवेशन (१९३८) में इसे स्वीकार कर लिया गया और इसे सरकारी तौर पर सभी कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों ने अपने प्रान्त मे प्रचलित कर दिया। इस शिक्षा योजना को अखिल भारतीय स्वरूप प्रदान किया गया। प्रान्तों मे बड़ी संख्या में बेसिक स्कूल खुले। दुर्भाग्यवश १९३९ में सभी कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों ने त्याग पत्र दे दिये। फलतः इस प्राथमिक शिक्षा का विकास रुक गया।

सन् १९४४ में सार्जेण्ट योजना प्रकाश में आई इसमें "५ या ६ वर्ष तक के बालकों के लिए अनिवार्य सार्वजनिक निःशुल्क बेसिक या प्राथमिक शिक्षा" की शिफारिश की गई थी इस योजना को केन्द्रीय परामर्शदात्री समिति ने स्वीकार कर लिया और अमल करना भी शुरू कर दिया। पंचवर्षीय योजनाएँ बनाई गईं इसमें ६ से ११ वर्ष के बालकों के लिए अनिवार्य शिक्षा देने की व्यवस्था है। सन् १९६१ में द्वितीय पंचवर्षीय योजना समाप्त होने को है। इनमें अनिवार्य निशुल्क योजना की व्यवस्था है तथा तीसरी योजना की प्रारम्भिक रूपरेखा प्रकाशित हो चुकी है। यह अनुमान किया गया है कि 'तीसरी योजना की समाप्ति पर भी ६ से ११ वर्ष तक के बच्चों मे विद्यालय जाने वालो का अनुपात शायद लगभग ८० प्रतिशत तक पहुँच पाएगा।

प्रश्न—बुनियादी शिक्षा के क्रमिक विकास पर प्रकाश डालिये (१९६०)

उत्तर—महात्मा गांधी इस शिक्षा प्रणाली के जनक है। उन्होने प्रचलित शिक्षा प्रणाली के दोषों को भली भाँति समझा और बताया कि देश के पिछड़ेपन, गरीबी तथा अन्य विषम समस्या का कारण सुशिक्षा का अभाव है। उन्होने बताया कि प्रचलित ढंग की शिक्षा देश के राष्ट्रीय हितों के विपरीत है। "हरिजन" पत्र द्वारा उन्होने प्रचलित शिक्षा के दोषों का पर्दाफाश किया। उन्होने सन् १९३७ मे हरिजन पत्र मे एक लेख लिखा जिसमें उन्होने प्रचलित शिक्षा पर करारा प्रहार करते हुए शिक्षा की व्याख्या अपने ढंग से की और कहा "शिक्षा से मेरा तात्पर्य है बच्चों या मनुष्य की तमाम शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियो का सर्वाङ्गीण विकास। साक्षरता न तो शिक्षा का अन्तिम ध्येय है, और न उससे शिक्षा का आरम्भ ही होता है। वह तो स्त्री-पुरुषों को शिक्षित बनाने के अनेक साधनों में से एक साधन मात्र है।" गांधी

जी के इन विचारो ने शिक्षा जगत मे क्रान्ति सी मचा दी। उनके इन विचारों पर खूब टिप्पणी हुई जिनका गाँधी जी ने अपने पत्र मे समाधान प्रकाशित किया। शिक्षाशास्त्री उनकी ओर आकर्षित हुए। २२ अक्टूबर सन १९३७ को वर्धा में एक अखिल भारतीय शिक्षा सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें राष्ट्रीय शिक्षाशास्त्रियों और शिक्षा मन्त्रियो ने भाग लिया। गाधी जी इस सम्मेलन के सभापति बने इसमें नीचे लिखे प्रस्ताव स्वीकृति हुये—

(१) प्रत्येक बालक को सात साल तक मुफ्त अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जाय।

(२) मातृभाषा ही शिक्षा का माध्यम रखा जाय।

(३) बालकों को शिक्षा किसी उत्पादक उद्योग को केन्द्र बनाकर दी जावे यह उद्योग बालक के वातावरण का ध्यान रखकर चयन किया जावे।

(४) इस प्रणाली को अपनाने पर शिक्षक का वेतन स्वतः निकल आवेगा। ऐसी सम्मेलन आशा करता हैं।"

इन प्रस्तावो को असली रूप देने के लिए डा० जाकिर हुसैन के नेतृत्व मे एक समिति का निर्माण किया गया। समिति ने अपनी पहली रिपोर्ट मे (२ दिसम्बर १९३७) इस शिक्षा योजना के उद्देश्य सिद्धान्त और संगठन पर राय व्यक्त की। इसने अपनी दूसरी रिपोर्ट (अप्रेल १९३८) मे मुख्य रूप से पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में प्रकाश डाला। हरिपुरा अधिवेशन मे इस शिक्षा योजना को स्वीकार किया गया। इसका प्रचार व प्रसार वेग से हो उठा। पाठ्यक्रम में मातृभाषा, गणित, मूलोद्योग, सामान्य विज्ञान, सामाजिक अध्ययन, कला, संगीत राष्ट्रभाषा आदि रखे गये।

इसके अनन्तर श्री बी० जी० खेर की अध्यक्षता में बेसिक शिक्षा पर विचार करने के लिए दो बार समितियाँ नियुक्त की गईं इस कमेटी की कुछ प्रमुख सिफारिशें इस प्रकार है—

(१) इसे ग्रामीण क्षेत्रों में सर्व प्रथम लागू करें।

(२) बालक की अपनी मातृ भाषा शिक्षा का माध्यम हो।

(३) हिन्दुस्तानी राष्ट्रभाषा अपनाई जाय।

(४) ५ या ११ वर्ष की उम्र के बाद ही छात्र बेसिक शिक्षालयों से दूसरे स्कूलों में प्रवेश लें।

(५) बेसिक शिक्षा का ८ साल का कोर्स हो। इसके दो भाग किये जावें प्रथम जूनियर स्तर (५ वर्ष का) दूसरा सीनियर स्तर (तीन वर्ष का)

(६) ऐसे छात्र जो जूनियर स्तर पूरा कर चुके हैं अन्य ढंग के शिक्षालयों मे प्रवेश पा सकें।

ये सिफारिशें केन्द्रीय परामर्शदाता मण्डल ने स्वीकार कर इनका सम्बन्ध सार्जेण्ट योजना से जोड़ दिया (१९४४)। अब इसने राष्ट्रीय शिक्षा योजना का रूप प्राप्त कर लिया। इसका नाम बेसिक शिक्षा पड़ा। इसके सिद्धान्त है—"सात वर्षीय अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा, उद्योग के माध्यम से शिक्षा, मातृभाषा शिक्षा माध्यम, शिक्षा का स्वावलम्बी होना और सर्वोदयवाद। यह आर्थिक, सामाजिक मनोवैज्ञानिक सबल आधारो पर आधारित है।"

इसके अनन्तर बुनियादी शिक्षा लगभग तीन वर्ष तक देश में तीव्र गति से

शिक्षा की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—प्राथमिक शिक्षा से तात्पर्य ६ वर्ष की अवस्था के बाद कक्षा १

से कक्षा पाँच तक की शिक्षा से ह और पूर्व माध्यमिक शिक्षा का तात्पर्य कक्षा ६, ७ व ८ की शिक्षा से है। स्वतन्त्रता के पहले हमारे देश में विदेशी सरकार थी। वह भारत में शिक्षा विषयक सुधारों के प्रति जागरूक नहीं थी। वह यहाँ के बालकों का सर्वाङ्गीण विकास करना अपना कर्त्तव्य नही समझती थी। वह तो चाहती थी कि भारतीयों को इतनी शिक्षा दे दी जावे कि वे लिखना-पढ़ना व काम चलाऊ ज्ञान सीख जावें। अतः कक्षा एक से आठ तक के बालकों के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम पुस्तक प्रधान था। विद्यार्थियों से पुस्तकीय ज्ञान रटने को कहा जाता था। बालकों को लिखने-पढ़ने और काम चलाऊ गणित का ज्ञान दे दिया जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि शिक्षा बालक का बौद्धिक अर्थात एकांगी विकास करती थी। सन्तुलित सर्वांगीण विकास नही। बालक की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओ की उपेक्षा की जाती थी।

इससे दुखित होकर महात्मा गांधी ने प्रचलित शिक्षा के दोषों को समझा और भली भाँति अनुभव किया और प्रभावशाली तरीके से प्रचलित शिक्षा के दोष बताते हुए कहा कि यह शिक्षा प्रणाली हमारे देश के राष्ट्रीय हितों प्रतिकूल है, हमें पंगु बनाती है और साक्षरता मात्र है। बालक का सर्वाङ्गीण विकास करने में असमर्थ है आदि। उन्होंने कहा कि इस शिक्षा प्रणाली को समूल नष्ट कर बुनियादी शिक्षा प्रणाली को अपनाना चाहिए। इसमे बालको का सर्वांगीण विकास करने की शक्ति है तथा सभी दृष्टियों से अनुकूल भारतीय शिक्षा योजना है। आज सारे देश मे बुनियादी शिक्षा का प्रचार व प्रसार हो रहा है। नवीन बेसिक विद्यालय खोले जा रहे है और परम्परित शालाओं को बुनियादी शालाओं मे परिवर्तित किया जा रहा है। प्रथमिक एवं पूर्व माध्यमिक शालाओं में बुनियादी पद्धति के अनुसार पाठ्यक्रम निर्धारित कर तदनुसार शिक्षा दी जाती है। नीचे बुनियादी शिक्षा का संक्षिप्त स्वरूप दिया जा रहा है। इस स्वरूप को पढ़ने से पहले यह बताना उपयोगी प्रतीत होता है कि बुनियादी शिक्षा मे किसी मूलोद्योग के द्वारा शिक्षा दी जाती है जैसा कि मध्यप्रदेश, बिहार, राजस्थान आदि प्रान्तों में प्रचलित है परन्तु उत्तरप्रदेश ने मूलोद्योग के द्वारा शिक्षा की व्यवस्था अपने बेसिक स्कूलों मे न करके उद्योग और शिक्षा की व्यवस्था की है अर्थात अन्य विषयों के समान बालकों को उद्योग प्रथक रूप से

पढाया अथवा सिखाया जाता है इस पर से बालकों को अभिन्न अखण्ड समष्टि के रूप मे ज्ञान नहीं दिया जाता।

बुनियादी शिक्षा का स्वरूप

पूज्य बापू इस प्रणाली के प्रवर्तक है। यह प्रचलित दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली के विरुद्ध एक प्रतिक्रिया है। यह आधुनिकतम शिक्षा प्रणाली है। विश्व में प्रचलित विभिन्न शिक्षा प्रणालियो की अच्छाइयों का इसमें समावेश किया गया है। यह बालक का सर्वांगीण विकास एवं समाज का नवनिर्माण करती है। यह भारतीय आवश्यकताओ के अनुकूल है। इसके अनेक नाम हैं 'बुनियादी तालीम' बेसिक, शिक्षा, 'नई तालीम' आदि। इन विभिन्न नामों के कारण है—इसका जीवनोपयोगी ज्ञान देना, बालक की बुनियादी जरूरतों को पूरा करना, बालक के अनुकूल होना, प्रमुख उद्योगों से सम्बन्धित होना, देश की सभ्यता एवं संस्कृति तथा शिक्षा व्यवस्था का आधार होना एवं वर्ग विहीन सर्वोदयी समाज निर्माण की आधार शिला होगा।

इस योजना का जन्म सन् १९३७ में हुआ था। इसे देश भक्तों का समर्थन प्राप्त हुआ था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् इसे राष्ट्रीय शिक्षा योजना के रूप में स्वीकार कर लिया गया है तथा विभिन्न राज्यों में बुनियादी शिक्षालय उत्तरोत्तर बढते ही जा रहे है। इस प्रणाली के सिद्धान्त, कार्यप्रणाली आदि बताने से पूर्व यहाँ पर उन कारणों का संक्षिप्त विवरण देना समीचीन होगा जिन्होंने इसे अंकुरित, पुष्पित और पल्लवित होने में सहयोग दिया है। वे कारण हैं—

(१) आंग्ल शासन का लड़खड़ाना,

(२) सन् १९३५ के कानून द्वारा स्वराज्य का सूत्रपात जिससे जनतन्त्र प्रणाली के अनुरूप शिक्षा देना,

(३) प्रचलित शिक्षा का सदोष होना,

(४) शिक्षकों की बेकारी का निवारण करना,

(५) पुस्तकीय एवं अव्यावहारिक शिक्षा का होना,

(६) परीक्षा केन्द्रित शिक्षा के स्थान पर जीवन केन्द्रित शिक्षा देना,

(७) खर्चीली शिक्षा के स्थान पर अपेक्षाकृत कम व्यय वाली शिक्षा देना,

(८) मातृभाषा के माध्यम से स्वाभाविक एवं सरल तरीके से ज्ञान देकर सांस्कृतिक उन्नयन करना,

(९) प्रेम में गौरव बढाना,

(१०) पूँजीवाद को रोकना एवं हस्त कौशल का ह्रास न होने देना,

(११) गरीबी का अन्त करना एवं शिक्षा हेतु शासन के समक्ष अर्थाभाव की समस्या को हल करना आदि।

स्पष्ट है कि भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए आवश्यक है कि शिक्षा मुफ्त अनिवार्य और पर्याप्त मात्रा में हो, शिक्षा प्राप्त कर बालक जीविकोपार्जन कर सके, श्रम में गौरव बढ़ाना समझें, और सुनागरिक बनें, शिक्षा सबको समान अवसर प्रदान कर श्रेणीविहीन सर्वोदयी समाज की स्थापना मे योग दें; मातृभाषा एवं राष्ट्रभाषा को समुचित स्थान प्राप्त हो। इसमे भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के कल्याणकारी तत्वों का समावेश हो। बालक की रुचि का ध्यान रखकर उसे स्वाश्रयी बनाए। बुनियादी शिक्षा इन आवश्यकताओं को पूरा करती है। इसीलिए इसके "मूलभूत सिद्धांत" हैं—

(१) सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए अनिवार्य नि शुल्क शिक्षा।

(२) कर्म केन्द्रित अर्थात् जीवन केन्द्रित शिक्षा।

(३) शिक्षा का माध्यम मातृभाषा।

(४) समाज शिक्षा या समग्र शिक्षा।

(५) जीवन की स्वाश्रयिता और सर्वोदयी समाज की रचना।

बापू ने सन् १९४५ के सम्मेलन मे बुनियादी शिक्षा को "जीवन की शिक्षा" का रूप दिया और बताया कि इस शिक्षा का क्षेत्र गर्भाधान से लेकर जीवन की अन्तिम साँस तक होगा। इसी समय "जीवन शिक्षा" का कार्य इन पाँच भागो में विभाजित किया गया था—

(१) "प्रौढ़ शिक्षा (मातृभाषा के माध्यम से सभी की आयु के लोगों के लिए शिक्षा)।

(२) उत्तम बुनियादी शिक्षा।

(३) उत्तर बुनियादी शिक्षा (चौदह वर्ष से कम के नवयुवकों के लिए शिक्षा)

(४) [illegible]

(५) पूर्व बुनियादी शिक्षा सात वर्ष से कम आयु वालों के लिए शिक्षा।"

इसमे सात वर्ष से १४ वर्ष तक के बालकों के लिए नि.शुल्क शिक्षा की वस्था की गई है। इसके पाठ्यक्रम से गणित, मातृभाषा, सामान्य विज्ञान, ामाजिक अध्ययन, चित्रकला, संगीत और राष्ट्रभाषा को रखा गया है। ारीरिक व्यायाम प्रत्येक के लिए अनिवार्य रखा गया है।

इसमे उद्योग के माध्यम से शिक्षण किया जावेगा। आवश्यकतानुसार ामाजिक एवं प्राकृतिक प्रतिवेशो को शिक्षण का साधन बनाया जावेगा। इसी ो इस प्रणाली मे समवायी विधि के नाम से सम्बोधित किया गया है। ातृभाषा का पहले मौखिक ज्ञान दिया जावेगा। इसके अनन्तर पढ़ना-लिखना ाया जावेगा। ऐसे उद्योगों को इसमे स्थान दिया गया है जो बालकों की मता के अनुसार हों एवं जिसमे शिक्षण की पर्याप्त सम्भावनाएँ हो। स्थानीय द्योग जो ऐसी आवश्यकताओ की पूर्ति करते हैं। इसमे स्थान दिया जाता है। से इस योजना मे कताई, बुनाई, गत्ते का काम, मिट्टी का काम, मृदु उद्योग, षि, बढ़ईगीरी, चर्म कार्य, मछली पालन आदि को प्रमुख स्थान दिया गया है।

ऊपर के दिए गए विषयो को पढ़ने के लिए समय-विभाग-चक्र, दिन का था छात्रावासयुक्त शालाओं मे सर्वकालीन समय-विभाग-चक्र बनाया जाता है। स्तृत अध्ययन के लिए लेखक की शाला प्रबन्ध पुस्तक का अवलोकन करें।

इसमे प्रचलित शिक्षा प्रणाली का उन्मूलन कर साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक ादि परीक्षाएँ रखी जावेगी, अर्जित ज्ञान एवं सामुदायिक जीवन का रिकार्ड ख मूल्यांकन किया जावेगा।

अध्यापक का स्थान—बुनियादी शिक्षक, समाज संगठक एवं समाज का ता भी है, वह भारत को कुशल नेतृत्व प्रदान करेगा। बालको को आदेश ही देगा वरन् मार्ग दर्शक के रूप मे उसकी सहायता करेगा। केवल प्रशिक्षित ाक्षक ही शिक्षालय मे रखे जावेंगे। यह प्रणाली नवीनतम शिक्षा प्रणाली है। समे पर्याप्त शोध कार्य होना है। अतः शिक्षालयो एवं प्रशिक्षण केन्द्रो मे जो ो प्रयोग हो उनको समायोजित करके प्रकाश में लाया जावे तथा उनका प्रसार ं प्रचार किया जाय।

यह प्रणाली भारत की शैक्षणिक आवश्यकताओं को पूरा कर सकती है।

मनोवैज्ञानिक है। यह शिक्षा शास्त्र सम्मत है। बालक का संतुलन सर्वाङ्गीण विकास करती है। ज्ञान अभिन्न एवं अखण्ड समष्टि के रूप मे दिया जाता है; विषय परस्पर सम्बद्ध होते है। मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देती है। बालक कमाते हुए सीखते है।

आज सभी प्रान्तो मे आदर्श बुनियादी प्रशिक्षण महाविद्यालय एवं बुनियादी प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थापना हो चुकी है एवं हो रही है। वस्तुतः बुनियादी शिक्षा की सफलता योग्य प्रशिक्षित शिक्षको पर निर्भर है और यह दायित्व है बुनियादी प्रशिक्षण केन्द्रो का। यहाँ देश की कुछ प्रसिद्ध एवं आदर्श प्रशिक्षण संस्थाओ एवं महान शिक्षा शास्त्रियों का उल्लेख किया जारहा है जिन्होने बुनियादी शिक्षा के प्रचार व प्रसार कार्य मे बहुमूल्य योगदान किया है।

विशिष्ट बुनियादी शिक्षा केन्द्र

प्रश्न १—बुनियादी शिक्षा के प्रयोग केन्द्रों के नामों का उल्लेख कीजिये। उनमें से किसी एक केन्द्र की शैक्षणिक कार्य प्रणाली का वर्णन कीजिए।

उत्तर—हिन्दुस्तानी तालीम संघ, सेवाग्राम वर्धा, मध्य प्रदेश—इस संस्था ने बुनियादी तालीम के क्षेत्र मे बड़ा ही महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसकी स्थापना अप्रैल सन् १९३९ को हुई थी। इसका संचालन आचार्य ई० डबल्यू० आर्यनायकम् एवं श्रीमती आशा देवी के हाथो म है। इस संस्था से प्रशिक्षण पाए शिक्षको ने भारत के कोने कोने में जाकर बुनियादी शिक्षा का प्रसार किया है। इसी संस्था ने सबसे पहले बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा योजना के प्रचलन के लिए एक काम चलाऊ शिक्षा क्रम का निर्माण किया था और देश के समक्ष रखा था। इसने बुनियादी शिक्षा के अनेक प्रयोग किए और इस क्षेत्र मे सबसे अग्रणी संस्था के रूप मे ख्याति अर्जित की है। इसके अवलोकनार्थ देश विदेश के शिक्षा शास्त्री आते है और बुनियादी शिक्षा का साक्षात् दर्शन करने का प्रयास करते है। यह संघ आज भी बापू के स्वावलम्बन के आदर्श को सम्मुख रख बुनियादी शिक्षा के स्वावलम्बी पक्ष पर जोर दे रहा है। यह सर्वोदयी समाज की रचना करना चाहता है। बुनियादी तालीम के द्वारा इस

प्रकार के समाज की रचना हेतु मार्च सन् १९६० में 'सर्वोदय सम्मेलन सेवा-ग्राम' में इस प्रकार का प्रस्ताव रखा गया—

"नई तालीम का विचार एक अलग कार्यक्रम के रूप में नही, बल्कि एक ऐसे तत्त्व के रूप में किया जाना चाहिए, जिसका तकाजा है कि सर्व सेवा संघ के खादी, खेती, गोसेवा, ग्रामाद्योग आदि सारे कार्यों का लक्ष्य एक ही हो, मानव निर्माण ग्राम-स्वराज्य हमारा लक्ष्य है, लेकिन आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक सांस्कृतिक आदि सभी पहलुओ से ग्राम स्वराज्य तभी सिद्ध हो सकता है, जब उनके लिए परिपक्व बुद्धि ओर पूरी तरह विकसित मनुष्यों का समाज यत्नशील हो। इसलिए सर्व-सेवा-संघ के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक कार्यक्रम मुख्यतया शैक्षणिक कार्यक्रम होना चाहिए।" इस प्रस्ताव पर आधारित आगामी वर्ष के निमित्त इन कार्यक्रमों को दृष्टि-पथ मे रखकर सम्पन्न किए जाने का निर्णय किया गया।

१—कार्यकर्त्ताओ के दीक्षित करने की व्यवस्था।

२—जनता की सहानुभूति सर्वोदय के प्रति जागृत करना।

३—अध्यापन कार्य-विषयक सर्वेक्षण करना।

इसके अन्तर्गत निम्न संस्थाएँ है—

१—पूर्व बुनियादी बिद्यालय

२—बुनियादी विद्यालय—स्थानीय शिक्षार्थियों के निमित्त दूसरा बाहर से आने वालों के निमित्त छात्रालय युक्त।

३—उत्तर बुनियादी विद्यालय।

४—ग्रामीण विश्व विद्यालय।

५—प्रौढ़ शिक्षण विभाग।

६—तालीमी भवन, बुनियादी प्रशिक्षण केन्द्र, पूर्व बुनियादी प्रशिक्षण भवन तथा बुनियादी प्रशिक्षण विभाग।

७—अन्तर्राष्ट्रीय भवन।

योगदान—हिन्दुस्तानी तालीम का प्रत्येक कार्य ही स्वतः योगदान है। संक्षेप में इसने बुनियादी शिक्षा का प्रचार व प्रसार किया है। बुनियादी शिक्षा के कार्यकर्त्ता तैयार किये है जिन्होने देश विदेश में बुनियादी शिक्षा की दुन्दभि

बजादी है। बुनियादी तालीम की प्रगति एवं विकास में इस संस्था का सर्वाधिक योग है।

गांधीग्राम, मंदुराई—मद्रास—इस संस्था की स्थापना सन् १९४७ मे हुई थी। इसका उद्घाटन श्री बी० जी० खेर ने किया था। बापू ने इस पुन्य अवसर पर आशीष दिया था "सत्य के राज्य मे सफलता अवश्यम्भावी है।" श्री जी० रामचन्द्रन इस संस्था के सचालक हैं। उन्होने हिन्दुस्तानी तालीम संघ के प्रतिनिधि को हैसियत से दक्षिण भारत में बुनियादी तालीम की ज्योति जलाई है। इस संस्था का संचालन जनतन्त्रात्मक विधि से होता है। इस संस्था के लक्ष्य है—

१—ग्रामीणों के जीवन से अज्ञानता, गरीबी एवं स्वास्थ्य को हानि पहुचाने वाले तत्वों का मूलोच्छेदन करना।

२—ऐसे नवीन सर्वोदय समाज की रचना करना जो शोषणहीन, वर्गहोन एवं अहिंसक हो।

३—बुनियादी तालीम का प्रचार।

४—देहाती आर्थिक स्वाश्रयिता का विकास।

५—ग्रामीणों के स्वास्थ्य को उन्नति।

इसके अन्तर्गत संस्थाएँ इस प्रकार हैं:—

१—शिशु कल्याण गृह—इसमे अनाथों का पालन पोषण एवं शिक्षा की व्यवस्था है।

२—प्रवर-बुनियादी-विद्यालय—इसमे आठवी कक्षा तक समवाय शिक्षण दिया जाता है।

३—उत्तर बुनियादी बिद्यालय—इसमें बुनियादी ढंग का उच्च शिक्षा दी जाती है।

४—छात्रालय मे विद्यार्थी रहते हैं।

५—बुनियादी शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र में दसवीं कक्षा पास शिक्षक प्रशिक्षण लेते हैं।

६—सेविकाश्रम—प्रौढ़ाओं को सामान्य शिक्षा प्रदान की जाती है।

७—मूलोद्योग प्रशिक्षण केन्द्र

८—समाज शिक्षा व्यवस्थापक प्रशिक्षण केन्द्र ।

९—उच्च शिक्षा निमित्त ग्रामीण संस्था कृषि महाविद्यालय एवं ग्राम सेवा महाविद्यालय है ।

१०—अम्बर चरखा निरीक्षक केन्द्र ।

११—ग्रामीण परिचारिका प्रशिक्षण केन्द्र ।

१२—पायलट स्वास्थ्य योजना जन स्वास्थ्य के लिए प्रयास करती है ।

१३—ग्रामीण उद्योग न्यायालय—इसमे कुटीरोद्योगो का प्रशिक्षण दिया जाता है ।

१४—खादी विभाग ।

१५—सास्कृतिक समिति ।

१६—गाना गोष्ठी ।

१७—दी फेलोशिप आफ फ्रेण्डस आफ ट्रूथ यह भाईचारा बढ़ाती है ।

१८ - कल्वी-कझागम—यह संस्था साहित्यक है ।

१९—शान्ति सेना—यह अहिसात्मक रूप से शान्ति स्थापनार्थ ट्रेनिंग देती है ।

२०—प्रेस ।

२१—हिन्दी भवन—हिन्दी सिखाई जाती है ।

योगदान—(१) बुनियादी शिक्षा विषयक प्रयोग इसमे हो रहे है ।

(२) बुनियादी शिक्षा का प्रचार व प्रसार कर रही है ।

(३) बुनियादी शिक्षा के अनुरूप अनाथो को आश्रय प्रदान कर शिक्षा प्रदान करती हैं ।

(४) कुटीरोद्योगो के विकास मे सहायक है ।

(५) शान्ति सेना के प्रशिक्षण को व्यवस्था की है ।

(६) सर्वोदयी समाज के निर्माणार्थ प्रयत्नशील है ।

विश्व भारती

गुजरात विद्यापीठ से पूर्व गान्धी जी ने शान्ति निकेतन (अब विश्व भारती विश्वविद्यालय) मे कुछ बुनियादी शिक्षा विषयक प्रयोग किये थे । गांधी जी ने

यहाँ सुझाव रखा कि सभी खुद भोजन पकावें और अन्य कार्य खुद अपने हाथ से करें। उनकी योजना सभी को बड़ी पसन्द आई। सहकारी ढंग से सभी कार्य सम्पन्न हुए। सभी को स्वयं अपने हाथ से कार्य करने मे उल्लास होता था और वे व्यावहारिक रूप से आत्मनिर्भरता का पाठ सीखते थे। इस तरह गान्धी जी का यह स्वावलम्बी शिक्षा का एक सफल प्रयोग था।

शान्ति निकेतन जिसने अब विश्व भारती का रूप धारण कर लिया है, रवीन्द्रनाथ टैगोर ने स्थापित किया था। गुरुदेव प्रकृति प्रेमी थे। अत. उन्होने शहरी भीडभाड से दूर कलकत्ते से १०० मील दूर बोलपुर नामक स्थान पर प्रकृति की गोद मे इस विद्यालय की स्थापना की थी। गुरुदेव का विचार था कि प्रकृति के निकट सम्पर्क से बालको को प्राकृतिक रहस्यो का परिचय प्राप्त होगा और जीवन के ऊषाकाल मे ही वे आध्यात्मिकता से परिचय प्राप्त कर लेंगे। उनका यह भी विचार था कि पूर्व पश्चिम की और पश्चिम पूर्व की अच्छाइयो को ग्रहण करे। एक दूसरे के निकटे आवे। विश्व बन्धुत्व की भावना जागृत हो। उनके इन विचारो का जीता जागता स्वरूप यह विश्व विद्यालय है जहाँ देश विदेश के विद्यार्थी ज्ञान का आलोक लेने आते है। यही छात्रावास है।

विश्व भारती के उद्देश्य—इस महान संस्था की स्थापना नीचे लिखे आदर्शों को लेकर की गयी है। एक लेखक के शब्दो मे इस संस्था के उद्देश्य इस प्रकार है:—

(१) भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से मनुष्य मस्तिष्क द्वारा अनुभव किये हुए सत्य को अलग-अलग रूपो के सम्बन्ध मे मनुष्य के मस्तिष्क का अध्ययन करना।

(२) पूर्व की भिन्न भिन्न संस्कृतियो का उनकी आधार भूत एकता पर धैर्य पूर्ण अध्ययन तथा खोज के द्वारा एक दूसरे के अधिक समीप लाना।

(३) जीवन के ऐसे ऐक्य तथा एशियाई विचार के दृष्टिकोण से पश्चिम के देशों से सम्पर्क स्थापित करना।

(४) पारस्परिक अध्ययन द्वारा पूर्व तथा पश्चिम के विचारो के सम्मिलन

की अनुभूति के लिए प्रयत्न करना और इस प्रकार दोनों गोलार्धों के बीच के विचारों के स्वतन्त्रतापूर्वक आदान-प्रदान द्वारा विश्व शान्ति के लिए उपर्युक्त आधारभूत परिस्थितियो को शक्तिशाली बनाना।

(५) इस प्रकार के आदर्शों को दृष्टिकोण में रखते हुए शान्ति निकेतन में संस्कृति का एक केन्द्र स्थापित करना जहाँ धर्म, साहित्य, विज्ञान और हिन्दू, बौद्ध, जैन, इस्लामी, सिख, ईसाई, तथा अन्य सभ्यताओं की कला मे खोज कार्य पाश्चात्य सभ्यताओ के साथ हो सके ····।"

संस्थायें—विश्व भारती के अन्तर्गत नीचे लिखी संस्थाएँ है।

(१) **कला भवन**—यहाँ ललित कलाओ के शिक्षण की व्यवस्था है परन्तु चित्रकला को अधिक महत्व प्राप्त है।

(२) **शिक्षा भवन**—इसका सम्बन्ध कलकत्ता यूनीवर्सिटी से है। यहाँ शिक्षार्थियो को कलकत्ता यूनीवर्सिटी की उपाधियो के लिये तैयार किया जाता है।

(३) **विद्या भवन**—इसमे हिन्दी, पाली, सस्कृत, फारसी आदि भाषाओं तथा दर्शनो पर खोज की जाती है।

(४) **चाइना भवन**—यहाँ भारतीयो को चीनो संस्कृति और साहित्य तथा चीनियो को भारतीय संस्कृति और साहित्य का अध्ययन करने की व्यवस्था है।

सगीत भवन—संगीत और नृत्य की शिक्षा यहाँ दी जाती है।

शिल्प भवन—इसमे कुटीर उद्योगो का प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है।

गांव पुनः सगठन सस्था—यह ग्रामीणो से सम्पर्क साधती है। ग्रामीणो की समस्याओ का अध्ययन कर उनका हल खोजती है। यह संस्था अपने कृषि फार्म म कृषि सम्बन्धी जो सफल प्रयोग करती है उनसे ग्रामीणो को परिचित कराती है। इसके अन्तर्गत छात्र ग्राम-जनो की सफाई-आरोग्य और कुटीरोद्योगो का ज्ञान देते है। शिक्षक और शिक्षार्थी ग्रामीणो को नागरिकता का ज्ञान प्रदान करते है। गाँवो मे समाज सेवा करने जाते है। इसके अन्तर्गत सहकारिता और प्रेम के गुणो को व्यावहारिक रूप मे सीखते हुए लकड़ी और

बर्तन का कार्य एवं दुग्ध शाला व पशु पालन का कार्य भी सीखते है। इस संस्था के अन्तर्गत नीचे लिखे विभाग है।

(१) **दुग्ध शाला**—यहाँ आधुनिकतम तरीके से पशुओं का पालन-पोषण किया जाता है और यह विश्वविद्यालय समाज के निमित्त यहाँ दूध की व्यवस्था करता है।

(२) **कृषि विभाग**—यहाँ छात्रो को कृषि कार्य का प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रशिक्षित छात्र कृषि को जीवन पेशे के रूप मे स्वीकार करते है। कृषको को कृषि के क्षेत्र मे हुई आधुनिकतम खोजो का परिचय दिया जाता है और खेती करने का आदर्श तरीका बताया जाता है।

(३) **कुटीरोद्योग विभाग**—इसके अन्तर्गत काष्ठकला बर्तन बनाने व कताई-बुनाई आदि की शिक्षा का व्यवस्था की गई है।

(४) **ग्राम कल्याण विभाग**—यह विभाग कृषको को सफाई और आरोग्य सम्बन्धी सूचना देता है। यही कृषको का इलाज भी करता है। इसमे दवाखाना है। रात्रिपाठशालाओ की व्यवस्था कर कृषको को शिक्षित करता है।

ऐसा स्वरूप है विश्व भारती का जो गुरुदेव के व्यक्तित्व का जीता जागता दर्शन प्रदान करता है। यहाँ का वातावरण काव्यमय है। विश्व बन्धुत्व के यहाँ दर्शन होते।

शिक्षक प्रशिक्षण

प्रश्न १—शिक्षाक प्रशिक्षण का महत्व बताइये।

उत्तर—सुनागरिक अपने राष्ट्र के भविष्य को स्वर्णिम और गोरवमय बना सकते है। सुनागरिकों का निर्माण करती है सुशिक्षा। और सुशिक्षा एवं शिक्षा प्रणाली की सफलता अच्छे एवं समुचित ढंग से प्रशिक्षित शिक्षका पर निर्भर होती है। हमारे देश व अन्य देशो मे शिक्षक-प्रशिक्षण विषयक अनेक योजनाएँ बनी और सुधार किए गये है। विभिन्न शिक्षण पद्धतियो का प्रादुर्भाव हुआ। शिक्षा जगत मे अनेक शोधें हुई है और शिक्षा मे मनोविज्ञान ने प्रवेश करके शिक्षको के प्रशिक्षण को बहुत ही महत्वपूर्ण विषय बना दिया है।

इधर पिछले कुछ वर्षों मे बालक के सर्वांगिक विकास को शिक्षा ने अपना लक्ष्य निर्धारित किया है। बाल केन्द्रित शिक्षा भी जारी है। जीवन द्वारा जीवन की शिक्षा देने की बात उठाई गई है। शिक्षा विषयक इन बातों को समझने, शिक्षा प्रणाली का सफलतापूर्वक अनुगमन एवं संचालन करने, बालको को मनोवैज्ञानिक ढंग से जीवनोपयोगी शिक्षा देने, प्रजातन्त्र के अनुरूप राष्ट्र सेवक नागरिक उत्पन्न करने और मुख्य रूप से भारत में बुनियादी शिक्षा के प्रचार हो जाने से और अनिवार्य प्राथमिक निःशुल्क अनवार्य शिक्षा लागू करने के लिए प्रशिक्षित शिक्षकों का बड़ा महत्व है क्योंकि बुनियादी प्रशिक्षण परम्परित प्रणाली से भिन्न प्रकार का प्रशिक्षण प्रदान करती है। यहाँ कर्म द्वारा ज्ञान देने की योजना है। और उधर बालक के विकास के साथ समाज नव निर्माण के दायित्व को निभाना है। अतः उसे शिक्षण, सामुदायिक जीवन और उद्योग विषयक समुचित प्रशिक्षण प्राप्त करना आवश्यक है। अतः शिक्षको को प्रशिक्षण देना जरूरी है। वैसे भी प्रशिक्षण शिक्षक को शिक्षक का व्यक्तित्व प्रदान करेगा और अपने पेशे मे निष्णात् बनायेगा।

प्रश्न २—भारत में शिक्षण प्रशिक्षण के स्वरूप एवं प्रगति का विवरण कीजिए।

उत्तर—प्राचीन भारत मे शिक्षक प्रशिक्षणालय नही थे। बस विद्वान होना ही पर्याप्त था। अंग्रेज शासन में शिक्षक प्रशिक्षण का स्वरूप एवं विकास परिलक्षित हुआ। इस काल मे कक्षा नायक अथवा टोलीनायक की व्यवस्था थी। ये टोली नायक अपने शिक्षकों के निर्देशानुसार निम्न वर्गो (कक्षाओ) के बालको को पढाते और प्रगति की गतिविधियों से शिक्षकों को परिचय देते थे। बुड ने सन् १८५४ से अपनी रिपोर्ट मे शिक्षको के प्रशिक्षण की महत्ता बताई और कहा कि इंग्लैड के समान भारत मे भी ट्रेण्ड शिक्षको की जरूरत है। फलतः १८५९ मे चलते फिरते निर्देशको द्वारा कई ग्रामो के शिक्षकों को इकट्ठा कर प्रशिक्षण प्रदान करने की परिपाटी डाली गई। इन ट्रेण्ड शिक्षकों को अतिरिक्त वेतन दिया जाने लगा। १८८२ में ऐसे प्रशिक्षण का अन्त कर नार्मल स्कूलो मे प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई। अब प्रशिक्षित शिक्षक बढ़ने लगे। इसके अनन्तर हर्टाग समिति की स्थापना हुई।

उसके सुझाव के अनुसार शिक्षक प्रशिक्षण का विकास सन् १९३७ तक रुक गया इसके पश्चात् गैर सरकारी प्रयासों के फल स्वरूप सन् १९३७ में बुनियादी शिक्षा का जन्म हुआ और भारत को आजादी मिलने तक इस क्षेत्र में कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के अनन्तर बुनियादी तालीम राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के पद पर प्रतिष्ठित की जा चुकी है अब सब बालको को अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा देनी है। उनका सर्वांगीण विकास करके उसे समाजपयोगी सुनागरिक बनाना है ताकि वह राष्ट्रीय हित कर सके अब इसका प्रभाव शिक्षक प्रशिक्षण के स्वरूप पर भी पडा है अब नार्मल पद्धति के स्थान पर शिक्षकों को बुनियादी ढंग का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की गई है शिक्षको को विषय का ज्ञान देने में पारंगत बनाने का शिक्षक प्रशिक्षणकेन्द्रों का दायित्व ही नहीं रह गया है अब तो शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र, उद्योग, सामुदायिक जीवन, सिद्धान्तिक और व्यावहारिक शिक्षण का प्रशिक्षण शिक्षकों को देते है ताकि बालकों को समन्वय विधि मे ज्ञान दे सके और सर्वोदय के अनुसार बालकों को सामाजिक जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा दें। संक्षेप मे भारत के प्रजातन्त्र के उपयोगी सर्वांगीण विकास करे। इसीलिए शिक्षक प्रशिक्षण के लक्ष्य ये रखे गये है— (१)शिक्षको के शिक्षण को मनोवैज्ञानिक बनाना (२)शिक्षक का व्यक्तित्व प्रदान करना। (३) कुशल अध्यापन का अभ्यास करना (४) अपने पेशे मे शिक्षको मे श्रद्धा करना (५) उनको बालक का सर्वांगीण विकास करने के योग्य बनाना (६) शिक्षकों का सर्वांगीण विकास करना (७) सर्वोदय समाज रचना मे प्रवीण बनाना और (८) प्रजातान्त्रिक समाज व्यवस्था जो सत्य अहिंसा और प्रेम पर आधारित है बुनियादी तालीम का महत्व बताना आदि।

शिक्षक प्रशिक्षण की संस्थाएँ

पूर्व प्राथमिक शिक्षकों के लिए—पूर्व प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाएँ हमारे देश में बहुत कम है। इस दिशा मे अशासकीय प्रयास ही अधिक हुए इस स्तर पर पूर्व बुनियादी, किडर गार्टन, मान्तेसरी नर्सरी आदि विभिन्न ढंग के पाठ्यक्रम प्रचलित हैं। ५४ पूर्व प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाएँ इस देश मे है जो मैट्रिक उत्तीर्ण पदाभिलाषियों को प्राथमिकता देती है। इस स्तर पर

देश के अनुकूल पूर्व बुनियादी ढंग की ट्रेनिंग शिक्षकों को दी जाना उपयोगी होगा।

बेसिक ट्रेनिंग स्कूल एवं कॉलेज—प्राथमिक शिक्षकों को प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए देश में विभिन्न राज्यो ने बेसिक प्रशिक्षण विद्यालय खोज रखे हैं जहाँ बुनियादी ढंग का प्रशिक्षण दिया जाता है। इनमें प्रवेश पाने वाले छात्राध्यापकों की न्यूनतम योग्यता मैट्रिक या इनके समकक्ष अन्य योग्यता है। एक वर्ष प्रशिक्षण की अवधि है जो दो वर्ष होनी चाहिए तभी बुनियादी ढंग का प्रशिक्षण प्रदान किया जा सकता है कुछ पुराने ढंग के नार्मल ट्रेनिंग स्कूल है। जो देर अबेर बुनियादी स्वरूप धारण कर लेंगे।

पी० जी० बी० टी कालेज—इन्हें हिन्दी मे स्नातकोनर बुनियादी प्रशिक्षण महाविद्यालय कहते हैं। इनमे बुनियादी ढंग का प्रशिक्षण स्नातक एवं प्रशिक्षित स्नातको को प्रदान किया जाता है। इनमें बुनियादी शिक्षा विषयक शोध कार्य प्रसार कार्य भी सम्पन्न होते है। ये विद्यार्थियो को B. Ed (Basic) और M. Ed के लिए तैयार करते है।

टीचर्स ट्रेनिंग कालेज—इन्हें शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय कहते है। ये L. T., B. T., B. Ed. आदि के लिए छात्राध्यापकों को तैयार करते है। इस प्रकार के विद्यालय (कुछेक) M. Ed. के लिए भी छात्रो को तैयार करते है। इनमे परम्परागत ढंग का प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है।

महिलाओ के लिए प्रथक से प्रशिक्षण केन्द्र तो है ही साथ हो वे पुरुषो के साथ भी प्रशिक्षण प्राप्त कर सकती है।

मध्य प्रदेश में शिक्षा

निम्नाङ्कित पर टिप्पणी लिखो—

प्रश्न १—म० प्र० में समाज शिक्षा, म० प्र० में स्त्री शिक्षा, म० प्र० में शिक्षक प्रशिक्षण (१९६०) बुनियादी शिक्षा का प्रचार कार्यक्रम।

२—मध्य प्रदेश में शिक्षा विस्तार हेतु, पंचवर्षीय योजनान्तर्गत कौन-कौन-सी योजनाएँ गत तीन वर्षों में क्रियान्वित की गई हैं? (१९६०)

३—मध्यप्रदेश में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा विकास पर सक्षेप में निबन्ध लिखिए?

४—म० प्र० में पूर्व प्राथमिक शिक्षा पर प्रकाश डालो।

उत्तर—अन्य राज्यों के समान पूर्व प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र मे जनता व अशासकीय प्रयासों को प्रान्तीय सरकार प्रोत्साहन देती है। वह इन संस्थाओ को अनुदान करती है—

शाला संख्या एवं अनुदान—पूर्व-प्राथमिक विद्यालय सन् १९५६ मे ९६ थे। अब इन विद्यालयो की संख्या १६९ तक हो चुकी है। इस प्रकार की शालाओ मे ७२,१६६ रुपये अनुदान स्वरूप सन् १९५६ मे दिए गये थे। आशा है कि यह अनुदान सन् १९६० ६१ मे १,५०,००० हो जावेगा। इस प्रकार सन् १९६०-६१ तक पहले की अपेक्षा ७७८३४ रु० का अनुदान अधिक मिल उठेगा।

पाठ्यक्रम—इस स्तर पर पहले विभिन्न इकाइयो मे एकसा पाठ्यक्रम प्रचलित नहीं था। अतः एकीकृत पाठ्यक्रम का निर्माण कर लिया गया है जो आगामी सत्र से शालाओ मे प्रचलित कर दिया जावेगा।

पूर्व प्राथमिक शिक्षक व शिक्षिका प्रशिक्षण—वैसे तो तभी आयु के बालकों के निमित्त प्रशिक्षित शिक्षको की आवश्यकता है परन्तु, इस अवस्था के कोमल हृदय बालको के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता है। जबलपुर व इन्दौर मे क्रमशः १-१ पूर्व प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र हैं। इन दोनो प्रशिक्षण केन्द्रों के निमित्त एक एकीकृत पाठ्यक्रम का निर्माण किया जा चुका है। यह कार्य एक 'विशेषज्ञ समिति ने, किया है। इन दोनों प्रशिक्षण केन्द्र की परीक्षा प्रणाली का भी एकीकरण किया जा चुका है।

प्रश्न ५—**मध्यप्रदेश में प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र से सम्बन्धित प्रगति का विवरण प्रस्तुत कीजिए।**

प्राथमिक शिक्षा की कक्षायें—इस समय सम्पूर्ण मध्यप्रदेश में प्राथमिक स्तर पर कक्षा एक से कक्षा ५ तक की पढाई की व्यवस्था है। पहले मध्य-भारत, विन्ध्यप्रदेश और भोपाल क्षेत्र मे तो उपर्युक्त ढंग से ही व्यवस्था थी परन्तु महाकौशल क्षेत्र में कक्षा ४ तक ही इस स्तर मे व्यवस्था थी। महा-कौशल की प्राथमिक शालाओ मे सन् १९५८ से ५वी कक्षा जोड़ दी गई है।

शिक्षार्थियों की संख्या—प्रान्त के प्राथमिक विद्यालयों सन् १९५६-५७ में १०,८२,५३१ छात्र पढ़ते थे। आशा है कि सन् १९६०-६१ में यह संख्या अठारह लाख तक पहुंच जावेगी। इस प्रकार ९० प्रतिशत की बढोतरी का की संख्या अनुमान है। इस साल की संख्या १७,६३,३५८ है। यह संख्या सन् १९५६ से ७०% ज्यादा है।

प्राथमिक विद्यालय—प्रान्त में सन् १९५६ में २०,७३२ प्राथमिक विद्यालय थे जिनकी संख्या अब २९,६१५ हो चुकी है। इसके अलावा आठ हजार नई कक्षाएँ विद्यालयों मे और जोडी गई है। यदि हम इस जुडी प्रत्येक 'नई कक्षा की एक शिक्षकीय शालाएँ मानें तो इस योजनावधि में १५०० शाखाओं की वृद्धि होजाती है। वस्तुतः शालाओं का पूर्व निर्धारित लक्ष्य केवल तेरह हजार का ही था। स्पष्ट है कि ७२% प्राथमिक शिक्षालय बढे हैं। संघीय शासन की शिक्षा नीति के अनुक्रम मे मध्यप्रदेश शासन ने तीसरी पाँच साल योजना के अन्तर्गत ६ से ११ साल तक की आयु तक के बालकों के लिये अनिवार्य मुफ्त शिक्षा की व्यवस्था की है। शासन ने इस विषय मे संघीय शासन से आवश्यक धन की माँग की है। अनिवार्य शिक्षा योजना को प्रयोग स्वरूप २१ विकासखण्डों मे प्रचलित कर दिया गया। इन क्षेत्र में आवश्यक शिक्षक भेजे गये हैं। उपयुक्त स्थानो पर शालायें खोली गई है। सम्पूर्ण प्रदेश का शैक्षणिक सर्वेक्षण (Educational Survey) सन् १९५८ मे सम्पन्न हो चुका है। इससे प्राथमिक स्तर की शिक्षा-विषयक विभिन्न योजनाओ को बनाने में सुविधा होगी।

बालिकाओं की शिक्षा—राज्य मे बालिकाओ के लिए प्रथक कन्या शालायें है परन्तु सह शिक्षा भी चालू हैं। कन्या शालाओं मे स्त्री शिक्षिकाओं की नियुक्ति ही अधिकाश रूप मे की गई है।

ग्रामीण शिक्षिकाओं के लिए मकान-महिलाएँ ग्र.मों मै शिक्षिका का कार्य अपनाने में हिचकती है। इसका प्रमुख कारण उनके लिए ग्रामो में मकान की समुचित व्यवस्था नही है। अतः इस समस्या को सुलझाने के लिए शासन द्वारा संघीय सरकार की सहायता से योजना बनाई जा रही है। ग्रामों में महिला

शिक्षिकाओं के निमित्त निवास गृह बनाए गये हैं और बनाये जा रहे हैं। राज्य में स्त्री शिक्षा पिछड़ी दशा में है। स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में और अधिक प्रभावशाली कदम तृतीय पाँच साला योजना में संघीय शासन की सहायता प्राप्त कर उठाये जाने की आशा है।

शालाओं का बुनियादी स्वरूप—मध्यप्रदेश मे विलीन हुए विभिन्न राज्यों में विभिन्न पाट्क्रम प्रचलित थे। उनका एकीकरण कर सम्पूर्ण राज्यो में एक से आठ तक बुनियादी शिक्षा पद्धति का पाठ्यक्रम शालाओं में जारी कर दिया गया है। राज्य में एक बुनियादी शिक्षा परिषद् गठित की गई है जिसका कार्य प्रचलित शालाओं का बुनियादी शालाओं में रूपान्तरीकरण, बुनियादी प्रशिक्षण साहित्य और पाठ्क्रम आदि पर बहुमूल्य सलाह देना है।

पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण—राज्य की विभिन्न इकाइयों में विभिन्न ढंग की राष्ट्रीयकृत पुस्तकें प्रचलित थीं। अब उनका एकीकरण कर सम्पूर्ण मध्यप्रदेश के लिए कक्षा एक से ८ तक २३ राष्ट्रीयकृत पुस्तकें प्रचलित की है।

संगोष्ठियाँ और शिविर—अनेक शिविर एवं संगोष्ठियाँ शिक्षा विषयक समस्याओं पर विचार करने आयोजित की जाती रही है। हर साल सम्पूर्ण राज्य में 'बुनियादी शिक्षा सप्ताह' मनाया जाता है। इससे बुनियाद शिक्षा का प्रचार-प्रसार व सुधार होते है और भावी कार्यक्रम निश्चित किये जाते हैं।

शिक्षकों की स्वीकृत वेतन श्रेणी—मध्यप्रदेश में विलीन हुए विभिन्न राज्यों मे प्राथमिक शिक्षकों के विभिन्न वेतनक्रम प्रचलित थे। नवीन मध्यप्रदेश के निर्माण के पश्चात् वेतन का एकीकरण एवं सुधार किया गया। जिससे शिक्षक की स्थिति में सुधार हो। एकीकृत वेतन मान नीचे लिखे अनुसार है जो सम्पूर्ण राज्य में प्रथम अप्रैल सन् १९५८ से लागू कर दिए गए हैं—

१ मिडिल पास अदीक्षित अध्यापक—४०-१-५०-२-७०।

२. मिडिल पास दीक्षित अध्यापक—४५-२·५०-६० अ० रो० ५-१००।

३. मैट्रिक पास अदीक्षित अध्यापक—४५-२·५०-६० अ० रो० ५-१००।

४. मैट्रिक पास दीक्षित अध्यापक—५०-२·५०-६० अ० रो० ४-१००-५-१२५।

बेकारी निवारण योजना—इस योजना के अन्तर्गत शिक्षित व्यक्तियों की बेकारी का निवारण करने के लिए १८५० अध्यापक एवं ३७ सहायक शाला निरीक्षको को आगामी वर्ष नियुक्त किए जाने की व्यवस्था की गई है।

शिक्षकों की नियुक्ति—शिक्षको की नियुक्ति विज्ञापन द्वारा करने का निर्णय किया गया है। योग्य और अनुभवी पदाभिलाषी व्यक्तियों को शिक्षकों के पदों पर नियुक्त करने के शासन ने नियम बनाये हैं। शिक्षकों का चयन चुनाव-समिति करती है।

प्राथमिक शिक्षा और तीसरी पाँच-साला योजना—४५ करोड़ रुपए का प्रावधान शिक्षा के निमित्त किया गया है। जिसमें २० करोड़ रुपए अनिवार्य मुफ्त शिक्षा (६ से ११ वर्ष के वय के बालक एवं बालिकाओं के लिए) चालीस हजार बुनियादी विद्यालय खोलने और सभी प्राथमिक विद्यालयों को बुनियादी शिक्षालयो मे रूपान्तरित करने पर व्यय किये जावेंगे।

माध्यमिक शिक्षा—योजनाकाल मे ११६ विद्यालयों का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। लेकिन इस संस्था से दूने से भी ज्यादा अर्थात् २९६ विद्यालय परिवर्तित किये गये है। पिछडे क्षेत्रो मे पाँच नये हायर सैकेण्डरी स्कूल सन् १९६० मे स्थापित किये जायेंगे। १० कन्या मिडिल स्कूलो को अगले साल हायर सैकेण्डरी स्कूल का रूप प्रदान कर दिया जावेगा। पाँच कन्या शालाओं को सन् १९५८-५९ मे हायर सैकेण्डरी स्कूल बनाया जा चुका है। दस शासकीय हाई स्कूलों को हायर सैकेण्डरी स्कूल मे परिवर्तित करने की व्यवस्था सन् १९६०-६१ मे की गई है। सन् १९६१ मे कुल हाई स्कूल एवं हायर सैकेण्डरी स्कूल ६५० हो जायेंगे जब कि सन् १९५६ मे इनकी संख्या ४२१ थी। इस १९५६ की तुलना मे सन् १९६१ मे २२९ विद्यालय बढ़ चुकेंगे।

आगामी सत्र में छै नवीन मल्टी परपज हायर सेकेन्ड्री स्कूल खोले जावेंगे और १५० के लगभग हाई स्कूलों को हायर सेकेन्डरी स्कूल मे परिवर्तित और कर दिया जावेगा।

प्रधानाचार्यो एवं लेक्चरारों का वेतन मान—हायर सैकेण्डरी के आचार्यों के पद का वेतन मान २५०-५५० व लेक्चरारों का १५०-३५० वेतन मान निर्धारित किया गया है। प्रत्येक हायर सैकेण्डरी स्कूलो में कुछ स्नातक शिक्षकों के पद लेक्चरारो के पदो मे बदल दिये गये है।

विज्ञान की शिक्षा की सुविधाएँ—ऐसे शिक्षालयों जिनमे विज्ञान की शिक्षा की व्यवस्था नही थी। इसकी व्यवस्था की गई है तथा जिन कन्याों को

लोक शिक्षा संचालनालय द्वारा मध्यप्रदेश मे शिक्षा १९५६-६१ शंक्षिप्त विवरण के आधार पर विद्यालयो मे विज्ञान की शिक्षा का प्रबन्ध नही है उनमें विज्ञान शिक्षा की सुविधा देने का प्रबन्ध किया जा रहा है।

माध्यमिक शिक्षामंडलों का एकीकरण—पहले राज्य में दो माध्यमिक शिक्षा मंडल थे एक मध्यभारत क्षेत्र मे था—मा० शि० प० जो भोपाल मध्य-भारत और विन्ध्य प्रदेश क्षेत्र की परीक्षा लेता था दूसरा महाकौशल रीजन का—मा० शि० प० जो महाकौशल क्षेत्र की परीक्षा लेता था। इन दोनो का एकीकरण करके प्रथम नवम्बर १९५९ से सम्पूर्ण राज्य के निमित एक मा० शि० मण्डल की स्थापना की गई है। इस तरह शासन ने पाठ्यक्रम, पाठ्य पुस्तको एवं नियमों में एक रूपता लाकर माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र मे प्रभाव शाली कदम उठाया है।

प्रश्न ६—पूर्व माध्यमिक शिक्षा में हुई प्रगति का उल्लेख कीजिये।

उत्तर—पूर्व माध्यमिक शिक्षा से तात्पर्य कक्षा ६, ७ व ८ की शिक्षा से है। इन्हें माध्यमिक विद्यालय या मिडिल स्कूल कहते है। ऐसी माध्यमिक शालाओं की संख्या सन् १९५६ में १६०४ थी। अब सन् १९६१ तक १९७८ तक होने की व्यवस्था की गई है। पहले यह निर्धारित लक्ष्य था कि योजना काल में ३३२ माध्यमिक विद्यालय खोले जावें। अब १९६१ तक ३७४ माध्य-मिक विद्यालम खोले जावेंगे।

१४० प्राथमिक शालाओं को सन् १९६०-६१ तक माध्यमिक विद्यालय मे परिणत करने का प्रावधान रखा गया है तथा मध्य भारत रीजन के ऐसे प्राथमिक विद्यालय जिनमें कक्षा ७ चल रही है तथा जिनकी संख्या ९५ है कक्षा ८ खोलने का निश्चय किया गया है। भविष्य में ये शालायें माध्यमिक विद्यालयों का रूप धारण कर लेंगी।

प्रश्न ७—माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में मध्य प्रदेश राज्य ने क्या प्रगति की है?

हाई स्कूल—शासन का लक्ष्य योजनाकाल मे ३४ हाई स्कूल खोलने का था। १६९ हाई स्कूल सन् १९६१ तक स्थापित हो चुकेंगे। इस संख्या में गैर सरकारी स्कूल भी है, जिन्हें शासन ने अपने हाथ मे ले लिया है। इस प्रकार राज्य की प्रत्येक तहसील में हाई स्कूल स्तर तक की शिक्षा के साधन प्राप्त हैं।

हायर सैकेण्डरी स्कूल—संघीय शासन द्वारा माध्यमिक शिक्षा के पुर्नगठन विषयक निर्धारित नीति के अनुक्रम मे कि हाई स्कूलो को तीन शाला पाठ्यक्रम वाले हायर सैकेण्डरी स्कूलो में रूपान्तरित किया जावे, म० प्र० शासन ने भी योजनावधि मे २९८ हाई स्कूलो को हायर सैकेण्डरी स्कूलों मे बदला है। इस संख्या मे गैर सरकारी विद्यालयो की संख्या मे भी जुड़ी हुई है तथा इन्हे उनके निर्धारित व्यय का परिवर्तन के लिये ७५% अनुदान के रूप मे प्रदान किया गया है।

अतिरिक्त पद—महाकौशल के अतिरिक्त शेष क्षेत्रो के विद्यालयों मे शिक्षको के दो अतिरिक्त पद अगली साल से देने की व्यवस्था की गई है क्योकि इनमे ग्यारहवी कक्षा जुड़ जाने से शिक्षकों की कमी महसूस हो रही थी।

होनहार छात्रों का प्रोत्साहन—शासन की नीति है कि किसी भी योग्य छात्र को शाला प्रदेश दने से मना न किया जावे। हॉ। ४ विषयो मे निरन्तर २ वर्ष फेल होने वाले छात्रो पर प्रतिबन्ध लगाया गया है। इस वजह से सभी जगह शालाओ का विस्तार हुआ है। इस दिशा मे गैर सरकारी प्रयासो को भी शासन प्रोत्साहित करता है।

जन सहयोग—जो अशासकीय विद्यालय (४४) शासन ने अपने हाथ मे लिए है उनमें से प्रत्येक ने दस-दस हजार रुपया का जन सहयोग प्रदान किया है। उन विद्यालयो की बागडोर शासन के हाथ मं जाने से स्थिति में सुधार हुआ है।

शिक्षकों की नियुक्ति—इनकी नियुक्ति के लिए भो आवश्यक नियमो का निर्माण किया गया है। योग्यता और अनुभव के आधार पर नियुक्ति की प्रथा प्रचलित की गई है।

स्त्री शिक्षा—इस क्षेत्र में हमारा राज्य बहुत पिछड़ा हुआ है। इस दिशा में राज्य सरकार प्रसार निमित्त उचित पग उठा रही है। एक वरिष्ठ महिला पदाधिकारी की नियुक्ति की जाने की व्यवस्था है जो स्त्री शिक्षा के प्रसार में कार्य करेगी। अनेक महिला सहायक निरीक्षिकाओं की नियुक्ति की जा रही है।

प्रश्न ८—म० प्र० में प्राथमिक शिक्षकों के लिए शिक्षक प्रशिक्षण सुविधाओं का सविस्तार उल्लेख कीजिए ?

उत्तर–शिक्षको के प्रशिक्षण का कार्य बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है प्रशिक्षण, शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत शिक्षको को शिक्षक का व्यक्तित्व प्रदान करेगा। बुनियादी शिक्षा के प्रचार व प्रसार के साथ बुनियादी ढङ्ग की प्रशिक्षण संस्थाएँ शासन ने खोली हे। शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र दीक्षित शिक्षक प्रदान कर शिक्षा के स्तर में सुधार करते है। अतः शासन ने शिक्षको के प्रशिक्षण पर अधिक ध्यान दिया। पुरानी संस्थाओ में छात्राध्यापको की संख्या बढाई है। तथा नवीन प्रशिक्षण संस्थाएँ खोली हैं। इस सम्बन्ध में मध्यप्रदेश राज्य में हुए विकास एवं गतिविधियो का लेखा जोखा इस प्रकार है—

प्राथमिक शिक्षकों के निमित्त—भारत के विभिन्न राज्यो की अपेक्षा शिक्षक प्रशिक्षण के सम्बन्ध में हमारा राज्य बहुत पिछडा हुआ है। हमारे यहाँ दीक्षित शिक्षको का प्रतिशत २·८८ है। ध्यान रहे कि देश का प्रतिशत ६१·२ है। सन् १९५६ मे ४४ प्रशिक्षण केन्द्र थे जो हर साल ५२८८ शिक्षको को ट्रेनिग देते थे। १९६१ तक ७१ नये शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र खुल चुकेंगे। संघीय शासन की सहायता से पचास खुलेंगे। ये अब खुल चुके है। अब १०४ प्रशिक्षण केन्द्र हो जावेंगे जो हर बडी संख्या मे शिक्षको को दीक्षित करके निकालेंगे। इस तरह यह संख्या सन् १९५६ मे प्रशिक्षित होने वाले शिक्षकों से दूनी से भी अधिक हो जावेगी। महिलाओ को प्रशिक्षण देने के लिए इनमे से छः प्रशिक्षण शालाओं मे केवल महिलाएँ ही प्रवेश पा सकेंगी जो इन्ही मे सम्मिलित है तथा अन्य संस्थाओ मे से प्रत्येक १५ महिलाओं को को हर वर्ष प्रशिक्षण देंगी। अनुमानुसार २,०७० महिलाएँ हरसाल दीक्षित होकर इन प्रशिक्षण केन्द्रो से निकबेंगी। आदिवासियो को प्रशिक्षण सुविधा प्रदान करने के लिए ४ शिक्षक प्रशिक्षण केन्द्र आदिवासी क्षेत्र झाबुआ, बस्तर और मण्डला में स्थापित की गई है। प्रशिक्षण केन्द्र के भवनों का निर्माण किया जा रहा है।

पाठ्यक्रम—सन् १९६० से पूर्व राज्य की विभिन्न इकाइयो मे प्रथक-प्रथक पाठ्यक्रम प्रचलित थे। सन् १९६० मे सारे प्रशिक्षण केन्द्रो म एकीकृत पाठ्य-

क्रम प्रचलित किया गया है। इस प्रशिक्षण का काल एक साल है। इसे 'बुनियादी प्रशिक्षण पत्रोपाधि प्रारुप पाठ्यक्रम' कहते है। इसके चार अंग है। (१) सैद्धान्तिक शिक्षा सिद्धान्त एवं बाल मनोविज्ञान, सामान्य एव विशेष पाठन पद्धति, शाला प्रबन्ध, स्वास्थ्य एवं सामाजिक संगठन, शिक्षा की आधुनिक विचारधाराएँ एवं सामान्य विज्ञान (२) अध्यापन कार्य (प्रचलित एवं समवायी शिक्षण का अभ्यास (३) उद्योग (लकडी, मिट्टी, कताई बुनाई, कागज आदि का अभ्यास) और सामुदायिक जीवन (पाठ्येतर कार्य क्रम एवं सर्व धर्म सर्वोदयो विचारधारा के अनुसार जीवन यापन) शिक्षक प्रशिक्षण प्रमाण पत्र परीक्षा माध्यमिक शि० म० भोपाल, सन् १९६०-६१ से लिया करेगा।

सगोष्ठियां—हमारे राज्य मे भौपाल, पचमढ़ी, सीहोर, कुण्डेश्वर, रायपुर, जबलपुर आदि स्थानो पर बुनियादी शिक्षा संगोष्ठियों की आयोजना की गई है। इससे बुनियादी शिक्षा का प्रचार व प्रसार होता है तथा प्राथमिक विद्यालयो को मार्ग दर्शन मिलता है। हर साल बुनियादी शिक्षा सप्ताह मनाया जाता है। बेसिक शिक्षा शिविर आयोजित किये जाते है।

विविध

प्रश्न १—उच्चतर माध्यमिक स्कूलों के शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण सुविधाओं का उल्लेख कीजिये।

उत्तर—उच्च माध्यमिक विद्यालयो (हायर सैकेण्डरी स्कूल) के निमित्त शिक्षको को प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए मध्यप्रदेश मे १० प्रशिक्षण महाविद्यालय है जिनमे एक गैर सरकारी है। ये प्रशिक्षण केन्द्र १,११८ दीक्षित शिक्षक प्रतिवर्ष प्रदान करते है अब ग्वालियर मे एक स्नातकोतर बुनियादी प्रशिक्षण महाविद्यालय खुल जाने से १२४६ प्रशिक्षित स्नातक शिक्षक प्रति वर्ष मिलेंगे।

एम० एड०—ये प्रशिक्षण विद्यालय शिक्षा मे स्नाकोत्तर उपाधि के लिए विद्यार्थी तैयार करते। केवल सात मे ही एम० एड० की व्यवस्था है। एम० एड० उत्तीर्ण शिक्षार्थियो को प्रशिक्षण केन्द्रो मे प्रशिक्षण देने के लिये व प्रशासनाधिकारी के स्थान पर नियुक्त किया जाता है। प्रान्तीय प्रशिक्षण महा-

विद्यालय जबलपुर में एय० ए० (मनोविज्ञान) की शिक्षा की व्यवस्था है। राज्य के चार प्रशिक्षण महाविद्यालयों में "एक्स्टैन्सन सर्विस" की व्यवस्था है।

शिक्षा के अन्य क्षेत्र जैसे महाविद्यालयीन शिक्षा, तान्त्रिक शिक्षा, शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र में नूतन मध्यप्रदेश मे विकास एवं सुधार हेतु अनेक योजनाएँ बनी है और उन्हे कार्यान्वित किया गया है। वास्तव मे शिक्षा के इस शीघ्र विकास के लिये यहां के शिक्षा मन्त्री माननीय डा० शंकर दयाल शर्मा के प्रयत्न सराहनीय है।

विभिन्न राज्यों को शिक्षा का तुलनात्मक अध्ययन

प्रश्न १—उत्तर प्रदेश. बिहार और मध्यप्रदेश में शिक्षा प्रणालियों का तुलनात्मक विवरण दीजिये।

२—केन्द्रीय शिक्षा विभाग का संगठन विवरण संक्षेप मे दीजिए।

३—उत्तर प्रदेश के शिक्षा संगठन पर प्रकाश डालिए ?

४—मध्यप्रदेश के शिक्षा संगठन का विवरण दीजिए।

उत्तर—संघीय संगठन—"शिक्षा का विषय केन्द्र का नही है। इस विषय पर राज्य अपनी नीति निर्धारित करते है। केन्द्र राज्यो को शिक्षा प्रसार के लिये अनुदान देता है और सलाह देता है।" केन्द्र ने शिक्षा से सम्बन्धित कई विशेषज्ञों के आयोग नियुक्त किये जिन्होने शिक्षा मे सुधारार्थ अनेको उपयोगी शिफारशें की है।

केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय का प्रधान अधिकारी केन्द्रीय शिक्षा मन्त्री होता है। इस समय इस पद पर प्रसिद्ध बुनियादी शिक्षा-शास्त्री डा० के० एल० श्रीमाली है। शिक्षा विषयक सामान्य नीति का निर्धारण करना और विभिन्न राज्यो में शिक्षा के स्वरूप में एकरूपता लाना इसका प्रमुख कार्य है। उसकी सहायता के लिए अथवा दो उप शिक्षा मन्त्री भी नियुक्त किये जाते हैं। इस मन्त्रालय की व्यवस्था शिक्षा सचिव और शिक्षा सलाहकार करते है। इस मन्त्रालय के ये विभाग है—(१) प्रारम्भिक और बेसिक शिक्षा (२) माध्यमिक शिक्षा (३) उच्च शिक्षा और यूनेस्को (४) हिन्दी(५) समाज शिक्षा और समाज

कल्याण (६) शारीरिक शिक्षा और आमोद-प्रमोद (७) छात्रवृत्ति (८) व्यवस्था ।

इस मन्त्रालय को ये परिषदें शिक्षा विषयक परामर्श देती है—(१) केन्द्रीय सलाहकार शिक्षा परिषद (१) अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षा समिति (३) विद्यालय अनुदान आयोग (४) केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद (५) अखिल भारतीय प्रारम्भिक शिक्षा समिति ।

मध्यप्रदेश में शिक्षा व्यवस्था—मध्य प्रदेश मे शिक्षा बिभाग की व्यवस्था इस प्रकार की गई है कि मन्त्रि परिषद मे शिक्षा मंत्री है । राज्य की शिक्षा के प्रति उनका उत्तरदायित्व है । वे राज्य की शिक्षा सम्बन्धी नीति का निर्धारण करते है । उनकी सहायता के निमित्त एक शिक्षा सचिव और २ उपशिक्षा सचिव ग्वालियर, इन्दौर, भोपाल, रीवा, होशंगाबाद, जबलपुर, रायपुर और बिलासपुर सहायता से कार्य करते है । शिक्षा सचिव अधिकारियो की नियुक्ति, आय व्यय, निर्देश, अनुदान आदि विषयक कार्य करते हैं । एक उप शिक्षा सचिव माध्यमिक एवं प्राथमिक तथा दूसरा डिग्री कालेजो से सम्बन्धित कार्यों की देख-भाल करते है । डिग्री कालेजो के प्रिसपल जिन्हे हिंदी मे प्राचार्य कहते है । शिक्षा सचिव से सीधा सम्पर्क रखते है जबकि स्नातकोत्तर प्रशिक्षण महाविद्यालयो के प्राचार्य संचालक शिक्षा विभाग से ।

शिक्षा संचालक प्रशिक्षण, प्राथमिक शिक्षा की देख भाल करते है उनकी सहायता के लिए मुख्यालय मे दो तीन उप शिक्षा संचालक एवं विभिन्न सभागो (म० प्र० मे आठ शिक्षा सम्भाग है—ग्वालियर, इन्दौर, भोपाल, रीवा, होशंगाबाद, जबलपुर, रायपुर और बिलासपुर) मे एक उप शिक्षा सचालक होता है । सम्भागो के सर्वोच्च शिक्षाधिकारी को उप शिक्षा संचालक अथवा शिक्षा अधीक्षक कहते है । यह उप शिक्षा संचालक अपने अन्तर्गत जिलो मे शिक्षा व्यवस्था, स्थानान्तर, नियुक्ति, माध्यमिक शिक्षा आदि की देख भाल करता है उसी के अन्तर्गत प्रशिक्षण केन्द्र भी होते है ।

नोट—मध्यप्रदेश मे वृतीय उपशिक्षा संचालकों के नीचे एक-एक सहायक उपशिक्षा संचालक नियुक्त किए जाने की योजना है ।

प्रत्येक उप शिक्षा संचालक के अन्तर्गत कई जिला शाला निरीक्षक होते है जो अपने जिले मे प्राथमिक, पूर्व प्राथमिक एवं पूर्व माध्यमिक शिक्षा की देख भाल उप शिक्षा निरीक्षक एवं सहायक निरीक्षको की सहायता से करते हैं। वृत्तीय कन्या शालायें निरीक्षिका भी होती है जो महिला सहायक शिक्षा निरीक्षक की सहायता से अपने वृत्त मे प्राथमिक एवं पूर्व माध्यमिक शिक्षा की देख भाल करती है। संचालक शिक्षा विभाग शिक्षा संचालनालय भोपाल मे रहते है।

बिहार में शिक्षा व्यवस्था

बिहार राज्य ने बुनियादी शिक्षा के क्षेत्र मे बड़ी प्रगति की है। अब वहाँ पर संशोधित वेतन क्रम शिक्षको के निमित्त लागू कर दिया गया है। बिहार मे भी अन्य राज्यो के समान समय पर शिक्षा की प्रशासनिक व्यवस्था मे परिवर्तन होते रहे है। प्राथमिक शिक्षा के विकास की दिशा म प्रभावशाली कदम उठाये जा रहे है। स्थानीय संस्थाओ के अधिकारो को समित किया गया है। प्राथमिक शिक्षा की देखभाल सन् १९५४ के बिहार लोकल सेल्फ गवर्नमन्ट आर्डीनेस के मुताबिक "जिला मजिस्ट्रेट व जिला विद्यालय निरीक्षक" मिल कर करते हैं। इनकी सहायता के लिए प्रत्येक जिले मे उपनिरीक्षक होते है। प्रत्येक जिले मे एक जिला शिक्षा योजना समिति की स्थापना की गई है। यह समिति अपने जिले मे बुनियादी शिक्षा के प्रचार व प्रसार के लिए कार्यक्रम बनाती है। यही जिले मे अनावर्त्तक व्यय के धन को निर्धारित करता है। एक स्थानीय समिति हर एक बुनियादी विद्यालय मे होती है। इसके मन्त्री होते है इसी शाला के अधिपाठक। राज्य मे अशासकीय एवं शासकीय दोनो प्रकार के प्राथमिक विद्यालय है। यहाँ एक बुनियादी शिक्षा बोर्ड है और शालाओ मे बुनियादी पाठ्यक्रम प्रचलित है। कुछ पुस्तकें शासन ने स्वयं प्रकाशित की है। तथा कुछ प्रकाशको की पुस्तको को राज्य के शिक्षालयो मे चलाने की मान्यता दी है। बिहार मे केवल छै प्रतिशत उच्चतर माध्यमिक विद्यालय सरकारी है शेष गैर सरकारी। शासन उन्हे अनुदान भर देता है। हरिजनो और पिछड़े वर्गो के छात्रों को छात्रवृत्ति दी जाती है। माध्यमिक शिक्षा मंडल बिहार उच्चतर

माध्यमिक विद्यालयों की विभिन्न परीक्षाओं को लेते है एवं जिला शिक्षा निरीक्षक हायर सैकेण्डरी स्कूल का निरीक्षण करते हैं।

उत्तर प्रदेश में शिक्षा व्यवस्था

राज्यकीय मन्त्रिमण्डल में एक शिक्षा मन्त्री है जो शिक्षा के प्रति उत्तरदायी हैं। शिक्षा सम्बन्धी नीति निर्धारित करते हैं। उनके नीचे एक शिक्षा सचित्र है। इसके नीचे शिक्षा संचालक। कार्याधिक्य के कारण विगत कुछ वर्षों से उनकी सहायता से लिए एक संयुक्त शिक्षा संचालक का पद और बढ़ाया गया है। दोनो के सहायतार्थ पृथक-पृथक निजी सचिव (१-१) है। पृथक रूप से एक उप शिक्षा संचालक, संचालक की सहायता के लिए नियुक्त किया गया है।

मुख्य शिक्षा संचालनालय इलाहाबाद मे है। उनके सहायतार्थ हैडक्वार्टर पर चार उप शिक्षा सचालक और रखे गये है। एक "सहायक शिक्षा संचालक (महिलाएँ)" की भी नियुक्ति की गई है। संचालक की सहायतार्थ कुछ अधिकारियो मे से शिक्षा विस्तार अधिकारी, "रजिस्ट्रार विभागीय परीक्षाएं, सचिव माध्यमिक शिक्षा बोर्ड तथा पाठ्य-पुस्तको के विशेष अधिकारी प्रमुख हैं।"

शिक्षा को व्यवस्था के निमित्त राज्य सात मण्डलो मे बँटा हुआ है, "मेरठ बरेली, आगरा, लखनऊ, इलाहाबाद, वाराणसी, गोरखपुर।" प्रत्येक मंडल मे एक उप शिक्षा संचालक रहता है। उसके नीचे प्रत्येक जिले मे जिला शालानिरीक्षक होते है। उच्च माध्यमिक विद्यालयो एवं ट्रेनिंग स्कूलो पर जिला शाला निरीक्षक का ही नियंत्रण रहता है। वह अपने अधीनस्थ उपनिरीक्षको को सहायता से जिले की प्राथमिक एवं माध्यमिक शालाओं पर नियंत्रण रखता है। कई "सहायक उपनिरीक्षक" भी होते है। कन्या शाला के निमित्त प्रत्येक जिले मे उपनिरीक्षिका की नियुक्ति की गई है।

म्यूनिसिपैलिटियो मे प्राथमिक एवं पूर्व माध्यमिक शिक्षा की व्यवस्था शिक्षा अधीक्षक के द्वारा की जाती है जिसको सहायतार्थ एक उप शिक्षा अधीक्षक एवं एक सहायक महिला जिला अधीक्षक होती है।

राज्य मे कई बेसिक प्रशिक्षण विद्यालय है। राजकीय शैक्षिक प्रयोग शाला

में शिक्षा विषयक शोध कार्य किया जाता है। अब अधिकाश जिलो मे दो नार्मल स्कूल खोले गये हैं।

इलाहाबाद मे एक "ब्यूरो आफ सायकलोजी" है। पूर्व प्राथमिक स्तर के लिए शिशु पाठशालाऐं अर्थात् नर्सरी स्कूल है। (२½ से ६ साल) परन्तु इनकी संख्या कम है। प्रारम्भिक विद्यालय बेसिक शालाओ मे परिणत किये जा रहे है। इनमें अनिवार्य निःशुल्क शिक्षा (६ से ११ वर्ष) की व्यवस्था है। इसके ऊपर जूनियर हाई स्कूल है इसके ऊपर हायर सैकेण्डरी स्कूल है। नगरो में नगरपालिका और गाँवो मे जिला परिषद (District Board) प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था करते है।

अनिवार्य शिक्षा की समस्याएँ

प्रश्न १—अनिवार्य शिक्षा की क्या समस्याऐं हैं ?

उत्तर—मध्यप्रदेश मे अनिवार्य शिक्षा विषयक गतिविधियो (स्वरूप एवं प्रगति) पर तो पूर्व मे प्रकाश डाला ही जा चुका है। यहाँ अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की समस्याओ पर प्रकाश डाला जा रहा है।

वैसे केन्द्रीय शासन और प्रान्तीय सरकारें देश मे अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा लागू करने के लिए दृढ़ संकल्प है। फिर भी इस पुनीत कार्य मे अनेक समस्याऐं रोड़ा बनकर सामने आई ह जिनकी वजह से अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का कार्यक्रम तीव्र गति से प्रसरित नही हो सका है और देश का बहुत बड़ा भाग ज्ञान क आलोक से वंचित है। हाँ। आशा है तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्त तक हम इस दिशा मे काफी सफलता प्राप्त कर लेंगे। नीचे कुछ प्रमुख समस्याऐं अखिल भारतीय एवं मध्यप्रदेश की दृष्टि से लिखी जा रही है।

राज्य की तरफ से—सभी प्रान्त अपने राज्य मे अनिवार्य शिक्षा को लागू करना चाहते है परन्तु हर एक राज्य अनिवार्य शिक्षा को लागू करने की मन इच्छित नीति को अपनाये हुये है। सम्पूर्ण देश के लिए एक संगठित योजना नही है। संघीय शासन भी शिक्षा पर इतना ध्यान नही द पाता जितनी कि जरूरत है। खाद्य और विदेशी समस्या पर अधिक समय व धन व्यय हो जाता है। शिक्षा की नीति आदर्शवादी और भावुकतापूर्ण है।

आर्थिक समस्याएँ—सरकार द्वारा अनिवार्य शिक्षा लागू करना ही

पर्याप्त नहीं है। देश की अधिकांश जनता निरक्षर और दरिद्र है। एक कृषक अथवा मजदूर की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं कि वह अपने बालकों को अनिवार्य पाठशालाओं मे पढ़ने को भेज दें। ऐसा करने से उसकी पारवारिक आय कम हो जावेगी क्योकि बालक भी तो उसके कार्य मे मदद करते अथवा कमाते हैं जैसे पशु चराना, पालिश करना आदि। यही कारण है कि निम्न वर्ग के बालक शिक्षा सुविधाओ का लाभ प्राप्त करने से घबराते है।

भौगोलिक समस्याएं—यह भी एक बाधा है। देश हमारा विशाल है। ग्रामीण क्षेत्रो में प्राथमिक शिक्षा प्रचलित करने मे बडी कठिनाइयां हैं ग्रामों के लिए समुचित आवागमन के साधनो का अभाव, सड़क न होना, निरीक्षण न होना। म० प्र० के उत्तरी इलाकों मे तो जैसे भिण्ड, मुरैना आदि में तो डाकुओं के कारण और भी परेशानी है। शिक्षक जाने में घबराते है और बालकों को भी भय बना रहता है कि हमें रास्ते में से कही डाकू उठा न ले जावें। देश के बर्फीले व पहाडी इलाको में स्कूल की स्थापना करना निश्चित रूप से कठिन कार्य है।

सामाजिक दोष—हमारे समाज में अभी तक अनेक कुरीतियाँ विद्यमान है जैसे बाल विवाह, हरिजनो को अछूत समझना और स्त्रियो को शिक्षित न करने को ही धर्म समझना। छोटे लड़के व लड़कियो के विवाह कर दिये जाते है और अधूरी शिक्षा छोड़ देते है। लड़कियो का धर्म केवल रोटी बनाना व घर की व्यवस्था करना ही समझा जाता है। अतः अभिभावक उन्हें पढ़ने नही भेजते। हरिजनो का शाला में प्रवेश उच्च वर्ग अपना अपमान समझता है।

पुस्तकीय पाठ्यक्रम—शालाओं में नीरस पुस्तक केन्द्रित पाठ्यक्रम का चलन है और शालेय वातावरण नीरस अतः बालक शाला जाने में रुचि नही दिखाता। म० प्र० ने बुनियादी पाठ्यक्रम का प्रचलन का इस समस्या को हल कर लिया। कुछ अन्य प्रान्तों ने भी ऐसा किया है पर बुनियादी शिक्षालयो को वास्तविक बुनियादी स्वरूप प्रदान करना होगा। केवल नाम मात्र बदलने से काम नहीं चलेगा।

भाषा की बाधा—भारत में कुछ ऐसे वर्ग है जो ज्ञानालोक से वंचित है।

उनकी अपनी कोई न तो भाषा है और न साहित्य। इनको किस भाषा में माध्यम से शिक्षा दी जावे। यह भी एक बाधा है।

अप्रशिक्षित शिक्षक—अधिकांश शिक्षक दीक्षित नही है। उनकी शिक्षा अमनोविज्ञानिक और बहुत ही नीची कोटि की होती है। उधर शिक्षकों को वेतन भी कम मिलता है। इस दिशा मे संघीय शासन ने कदम उठाये हैं। म० प्र० में शिक्षकों के वेतन क्रम को सुधारा गया है और प्रशिक्षण संस्थाएँ खोली गईं।

प्रशासन की समस्या—म० प्र० मे तो बहुत कम संस्थाएँ हैं जो अशासकीय है, अथवा स्थानीय संस्थाओं के नियन्त्रण मे है। इसलिए कोई प्रशासनिक जटिल समस्या का प्रश्न ही उपस्थित नही होता परन्तु जिन प्रान्तो मे स्थानीय संस्थाओ के हाथ मे प्राथमिक शिक्षा है वहाँ यह समस्या अवश्य वीभत्स रूप धारण किये रहती है। स्थानीय संस्थाओं मे दल बन्दी का जोर रहता है। तथा शालाओ पर सरकारी व स्थानीय बोर्डों का दोहरा नियन्त्रण रहता है। इस दिशा मे कुछ सुधार किये जा रहे है।

सामाजिक एवं प्रौढ़ शिक्षा

प्रश्न १—मध्यप्रदेश में सामाजिक शिक्षा पर टिप्पणी लिखो (१९६०)।

२—भारत में सामाजिक शिक्षा के क्रमिक विकास पर प्रकाश डालिये।

३—सामाजिक शिक्षा की क्या समस्याएँ हैं। मध्य प्रदेश की दृष्टि से उत्तर दीजिये।

४—भारत मे प्रौढ़ शिक्षा के विकास पर प्रकाश डालिये ? अब हम इसे सामाजिक शिक्षा क्यों कहते है ?

उत्तर—प्रौढ शिक्षा की समस्या भारत के शिक्षा जगत की जटिल समस्याओं में से एक है। हमारा देश एक प्रजातन्त्र देश है। अशिक्षित नागरिकों के बलबूते प्रजातन्त्र सफल नहीं हो सकता। देश के अधिकांश प्रौढ निरक्षर है। प्रौढ़ो को सुनागरिक बनाने, उनमें राजनीतिक चेतना उत्पन्न करने, देश का सामाजिक, एवं आर्थिक विकास करने, शिक्षा का प्रचार व प्रसार करने, (बालकों को स्कूल भेजने का महत्त्व जानने) के लिये लिए प्रौढ़ शिक्षा का बड़ा महत्व है।

शिक्षा का तात्पर्य एवं स्वरूप—पहले निरक्षरों को साक्षर बनाने अर्थात हस्ताक्षर मात्र सिखाने को ही प्रौढ शिक्षा समझा जाता था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त प्रौढ शिक्षा का तात्पर्य बदल गया है। इसने समाज शिक्षा का रूप ले लिया है। हुमायूँ कबीर के मतानुसार, "प्रौढ़ शिक्षा स्वतन्त्र समाज के स्वतन्त्र व्यक्तियों के लिए होनी चाहिये। इसका अर्थ केवल अक्षर-ज्ञान नहीं है। निरक्षरता को नष्टप्राय करना होगा। लोगों के जीवन स्तर, उनके रीति-रिवाज तथा पारिवारिक जीवन मे सुधार करके ऊपर उठाना होगा और उनके आर्थिक स्तर को प्राचीन दस्तकारी व घरेलू उद्योगों में नये प्रयोगों के समावेश द्वारा ऊपर उठाना होगा। प्रौढ शिक्षा द्वारा ही नागरिक उत्तरदायित्व तथा जीवन की भावना को लोगों में करना होगा।"

इसी प्रकार एक शिक्षा शास्त्री के शब्दों मे प्रौढ शिक्षा अब सामाजिक शिक्षा का अर्थ "निरक्षर को साक्षर बना देना ही नही है, वरन् उसमे आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक राष्ट्रीय चेतना भी भरना है। इसीलिए प्रौढ़ों के पाठ्य-क्रम मे लेखन-पठन, गणित, शरीर विज्ञान एवं आरोग्य सामान्य विज्ञान, प्राथमिक चिकित्सा भूगोल, कृषि, ग्रामोपयोगी अर्थशास्त्र एवं नागरिकता का विषयक जानकारी का समावेश किया गया है।'

भारत में प्रौढ़ शिक्षा का विकास—भारत मे प्रौढ शिक्षा का प्रारम्भ सन् १९२० से ही मानना चाहिये। इसके पहले बंगाल व बडौदा मे क्रमशः रात्रि पाठशालाएँ एवं पुस्तकालय खोले गये थे। सन् १९२१ मे भारतीय कांग्रेसी मंत्रि-मण्डलों ने प्रौढ शिक्षा के प्रसार में योग दिया। सन् १९३७ तक बम्बई, मद्रास, उत्तर प्रदेश, पंजाब, त्रावनकोर, बंगाल व मध्य प्रदेश मे प्रौढ शिक्षा के क्षेत्र मे कार्य किया गया। सन् १९३७ के उपरान्त इस दिशा में शिथिलता आगई! हाँ? ईसाई मिशनरियों ने इस क्षेत्र मे कुछ कार्य किया। सन् १९३७ के उपरान्त प्रौढ शिक्षा के क्षेत्र मे फिर प्रयास किये गये और उत्तर प्रदेश, बंगाल, मद्रास, बिहार में उल्लेखनीय कार्य हुआ। प्रौढों के निमित्त पाठ्यक्रम का निर्माण किया गया। मैजिक लैण्टर्न का उपयोग किया, जाने लगा। देश के विभिन्न भागों में प्रौढ शिक्षा के क्षेत्र मे प्रगति होने लगी। 'केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार मंडल' ने सन् १९३९ में प्रौढ शिक्षा समिति की

स्थापना की। इससे अनन्तर सार्जेण्ट रिपोर्ट ने १९४४ में प्रौढ शिक्षा के सम्बन्ध मे उपयोगी सुझाव दिये।

स्वतन्त्र भारत मे प्रौढ शिक्षा के क्षेत्र मे पर्याप्त प्रगति परिलक्षित हुई है, परन्तु इस गति को सन्तोषजनक नही कहा जा सकता। अब समाज शिक्षा सुनागरिकों का निर्माण करती है उनके सर्वाङ्गीण विकास के प्रति सचेत है। सन् १९५६ में प्रान्तीय शिक्षा मन्त्रियो के सम्मेलन मे यह प्रस्ताव आया कि बारह से पचास वर्ष के प्रौढो को तीन वर्ष के अन्दर प्रतिशत साक्षर बना दिया जाय। फलतः विभिन्न प्रान्तों ने सामाजिक शिक्षा के प्रसार के लिये योजनाएँ निर्मित की और कार्य तेजी से होने लगा। अनेक रात्रि पाठशालाएँ और सामाजिक शिक्षा शिविर खोले गये। दृष्य-श्रव्य सामग्री का उपयोग किया गया। दिल्ली के ग्रामो मे इस दिशा मे काफी रुचि दिखाई गई। देश में सामाजिक शिक्षा के प्रचार व प्रसार के लिये अनेक योजनाएँ है। सन् १९५२ से इस दिशा में काफी कार्य हुआ है। ग्रामो में सामुदायिक केन्द्र खोले गये है। इनमे साक्षरता ही नहीं बरन् प्रौढो के मनोरंजन, स्वास्थ्य व खेल कूद आदि पर भी ध्यान दिया जाता है। पहली पाँच साला योजना काल में सामाजिक शिक्षा के लिये सघन पुस्तकालय, जनता कालेजो, सामुदायिक केन्द्रो (Community Centres) का निर्माण किया गया। तृतीय पांच साला योजना की रूपरेखा में सामाजिक शिक्षा के सम्बन्ध में व्यक्त किया गया कि—''सामाजिक शिक्षा के क्षेत्र में भी दूसरी योजना की अवधि में कुछ प्रगति हुई है। साक्षरता केन्द्र सामुदायिक केन्द्र, वाचनालय और पुस्तकालय, बड़ी संख्या में खोले जा रहे हैं। कुछ समय से राष्ट्रीय मौलिक शिक्षा-सस्थान (National Institute of Fundamental Education) और अखिल भारतीय श्रव्य तथा दृश्य संस्थान (Central Audio Visual Institute) जन शिक्षा की विधियो और समस्याओं का अध्ययन कर रहे थे। इस दिशा भें देश के विभिन्न भागो में बहुत सारे नवीन कार्य हो चुके है। अब उनके आधार पर सामाजिक शिक्षा का विशेष कर प्रौढ़ शिक्षा का कार्य क्रम बनाया जा सकेगा।

प्रौढ़ शिक्षा की समस्याएँ—मध्य प्रदेश में प्रौढ शिक्षा के महत्व को

समझा गया। सन् १९४६-१९४७ में प्रौढ शिक्षा वर्ग खोले गये। इनकी संख्या चौबीस से अधिक ही होगी ५६९९७ का शासकीय अनुदान प्रदान किया गया। चल पुस्तकालय, सामाजिक शिक्षा केन्द्र समाज शिक्षा शिविर बहुत बड़ी संख्या में खोले गए। 'दीपक' नामक एक पत्रिका का सम्पादन किया गया और जबलपुर में नगर के लिये 'जिला समाज शिक्षा समिति' का गठन किया गया। नये मध्यप्रदेश में ९२२ समाज शिक्षा केन्द्र लोक शिक्षण विभाग द्वारा संचालित किये जा रहे है। प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रो की संख्या बारह हजार से भी ज्यादा है। इसके अतिरिक्त विकास विभाग तथा समाज कल्याण परिषद सत्ताईस ऐसे केन्द्रो की व्यवस्था करते हैं। ये केन्द्र प्रौढ़ व्यक्तियों को साक्षर बनाने के साथ उन्हे सचेत सुनागरिक बनाने का प्रयास करते है। विभिन्न प्रकार के १५९२ पुस्तकालय प्रोढ़ शिक्षा के प्रसारार्थ शासन द्वारा सन् १९५८ तक खोले जा चुके थे। सामाजिक शिक्षा के अन्तर्गत स्थानीय संस्कृति का पुनरुद्धार किया जा रहा है। ग्रामीणो में चेतना जगी है। सम्पूर्ण राज्य में १२०० जगहों पर चलचित्र दिखाये गये। ६४५ वाचनालय खोले गये हैं। राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में समाज शिक्षा के प्रसारार्थ विभिन्न योजनाएँ कार्यान्वित की गई है मध्य भारत क्षेत्र में समाज शिक्षा के क्षेत्र में काफी प्रचार व प्रसार हो रहा है। इस क्षेत्र को विभिन्न जिलो में समाज शिक्षा उपनिरीक्षको को नियुक्ति की गई है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में मध्यप्रदेश ने समाज शिक्षा को कई योजनाओ को हाथ मे लिया है जैसे पुस्तकालयो, पत्रिकाओ समाज शिक्षा शिविरो, साहित्य, शिक्षको एवं प्रशिक्षण आदि।

समाज शिक्षा की समस्याएँ—समाज शिक्षा के प्रसार में अनेक बाधाएँ है। जिन्होने समाज शिक्षा के विकास में रोड़ा अटकाया है। अतः इन कठिनाइयो का शीघ्रताशीघ्र निदान करना होगा ताकि समाज शिक्षा का प्रचार व प्रसार तीव्र गति से हो सके और देश से इस अपढ़ता के कलंक को सदैव के लिये निर्मूल किया जा सके। इस दृष्टि से नीचे कुछ समस्याएँ दी जा रहीं है जो कि समाज शिक्षा के विकास में बाधक हैं—

(१) **निरक्षरता**—देश में निरक्षरता बड़ी मात्रा में विद्यमान है। इतनी

अधिक निरक्षर जनता को साक्षर बनाना वस्तुत बड़ा ही कठिक कार्य है। देश के लगभग १८ करोड़ प्रौढ़ों को शिक्षित करने के लिए बहुत समय एवं विशाल धन की आवश्यकता पड़ेगी। यदि धन की समस्या को हल कर भी लिया जाय तो सबसे बड़ी व्यावहारिक बाधा "ऐसे निरक्षर वयस्क को पढाना जिसने आज तक एक अक्षर भी न पढ़ा हो बड़ा कठिन कार्य है"।

(२) **समाज शिक्षा के शिक्षक**—शासन की ओर से ऐसी समुचित व्यवस्था हो पाई है कि समाज शिक्षा के क्षेत्र में प्रशिक्षित शिक्षिक मिल सकें। अधिकाँश नही प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र ऐसे मिलेंगे जहाँ अल्प शिक्षित व्यक्ति इन केन्द्रों का संचालन करते हैं उन्हें न तो समाज शिक्षा की दीक्षा ही मिली है और न उन्हे प्रौढ मनोविज्ञान का बोध ही है। ध्यान रहे प्रौढ़ों का मन व व्यवहार बालको से भिन्न होता है। इसलिए आवश्यक है कि समाज शिक्षा में दीक्षित, प्रौढ मनोविज्ञान से परिचित व्यक्तियों को ही प्रौढ़ शिक्षक बनाया जावे ताकि वे प्रौढोपयोगी विधियों से शिक्षण दें।

उपस्थिति—अधिकाँश प्रौढ़ शिक्षा, केन्द्रों मे गैरहाजिर रहते है। इसका प्रमुख कारण प्रौढ़ों का अपने धन्धों मे व्यस्त रहना और प्रौढ़ शिक्षा का सरस न होना ही है। दिन भर श्रम करके प्रौढ इस योग्य नही रहते कि वे विद्योपार्जन कर सकें। थक जाते है।

पाठ्यक्रम—अभी तक प्रौढ़ों का पाठ्यक्रम भी एक समस्या बना हुआ है। इतना तो निश्चय ही है कि उनका पाठ्यक्रम बालकों के पाठ्यक्रम से भिन्न ढंग का होना चाहिये। अधिकाँशतः अभी तक प्रौढ़ो को सामाजिक विषय का ज्ञान देना उपयोगी माना गया है परन्तु अनुभव से यह विदित हुआ है प्रौढ़ों की शिक्षा में उनके सर्वाङ्गीण विकास के लिए सामाजिक, स्वास्थ्य विषयक, औद्योगिक विषयो मे सम्बन्धित जानकारी को स्थान दिया जावे। पाठ्यक्रम में रोचकता लाने के निमित्त सरस कहानियाँ, लोक साहित्य, कुटीरोद्योगों से सम्बन्धित जानकारी, दृश्य श्रव्य उपकरण आदि की व्यवस्था की जावे। बुनियादी शिक्षा द्वारा प्रतिपादित प्रौढ़ शिक्षा के पाठ्यक्रम को अपनाना सर्वोत्तम रहेगा (इसके लिए देखें तिवारी कृत बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्त पुस्तक) शहरी प्रौढ़ों को टेक्नीकल ढंग की शिक्षा की व्यवस्था की जावे।

अशासकीय प्रयास का अभाव—प्रौढ़ शिक्षा प्रसार का दायित्व केवल शासन के ऊपर डालना ठीक नही। जन प्रयासों को इस क्षेत्र में आना चाहिये। शिक्षित जनता इसके प्रसार में हाथ बटाये। धनी मानी लोग सामने आवें। नवयुवक स्वयं सेवक बनकर इस समस्या के समाधान में योग दें प्रौढ़ों को पढावें। दुर्भाग्य है कि इस देश के नवयुवक इसके प्रति जागरूक नहीं हैं।

इस प्रकार प्रौढ शिक्षा का प्रचार व प्रसार जनता व शासन के सम्मिलित प्रयासो से हल हो सकता है जनता कालेजो में प्रशिक्षित व्यक्ति प्रौढ शिक्षा के कार्यक्रम को भली भाँति सम्पन्न कर सकते है। देश में प्रौढ साहित्य, प्रौढोपयोगी शैक्षणिक उपकरणो की व्यवस्था की जावे। शिक्षको का दायित्व है कि वे प्रौढ शिक्षा के कार्य को भी अपने हाथ में लें। आशा है बुनियादी शिक्षक प्रौढ शिक्षा के कार्य को भली भाँति करने में उत्साह दिखावेंगे क्योंकि बुनियादी शिक्षक नव समाज का निर्माण जो करेगा। नव समाज का निर्माण अपढ़ प्रौढ़ों से कैसे हो सकता है। अत. यह कार्य भी नैतिक दृष्टि से उसकी कर्त्तव्य परिधि मे आता है।

जामिया मिलिया, दिल्ली

परिचय—यह शिक्षा केन्द्र भारतीय शिक्षा जगत में एक महान प्रयोग है। यह संस्था राष्ट्रीय विचारधारा वाले मुसलमानों द्वारा पोषित एवं संचालित है। सन् १९२० मे मौलाना मुहम्मदअली ने अलीगढ मे पहले पहल स्थापना की थी। इसके अनन्तर सन् १९५५ में यह महान संस्था अलीगढ से उठकर दिल्ली लाई गई है। तब से अब तक यहीं पर शिक्षा का आलोक फैला रही है। इस संस्था के अध्यपको ने सन् १९२८ मे प्रण किया था कि वे ही इस संस्था का इन्तजाम एवं देखरेख करेंगे, बीस साल तक एक सौ पचास रुपये माहवारी तनुख्वाह से अधिक ग्रहण नही करेंगे। उनका विचार था, "हमे स्वतन्त्रता की परेशानियाँ मंजूर है किन्तु शासन से आर्थिक सहायता लेकर संस्था को कमजोर बनाना और शासकीय प्रतिबन्धो से सस्था को अपने उच्च आदर्शों से गिरा देना हमें मान्य नही।" इसी पुनीत अवसर पर इसके अध्यापकों ने 'अन्जुमन तालीमे मिल्ली' नाम से एक संघ का निर्माण किया और इस शिक्षण संस्था की देखभाल करनी

शुरू करदी। संघ का यह नाम सन् १९३८ मे परिवर्तित कर दिया गया। और इसका नाम जामिया मिलिया इस्लामिया सोसाइटी रखा गया। इसी नाम से अब यह प्रसिद्धि प्राप्त करती जा रही है।

उद्देश्य—इस संस्था के लक्ष्य इस प्रकार व्यक्त किये जा सकते है—

(१) शिक्षार्थियों में मानवता के उच्च गुणों जैसे समाज की सेवा, सहृदयता, आत्मा पर नियन्त्रण एवं आत्मगौरव का विकास करना।

(२) उन्हें स्वविचारो को स्वतन्त्र ढंग से अभिव्यक्त करने का मौका देना।

(३) उनका बौद्धिक विकास करना एवं समाज की जिम्मेदारियों को कुशलतापूर्वक वहन करने के योग्य बनाना।

(४) शिक्षा की ऐसी व्यवस्था करना जिससे छात्र अपनी संस्कृति के साथ अन्य संस्कृतियो के उपयोगी तत्वों को स्वीकार करें।

(५) उनके चरित्र गठन में योग देना।

(६) छात्रो की भावात्मक एवं बौद्धिक शक्तियों को विकसित होने का अवसर देना।

(७) भारतवासियों, मुख्यत: भारत में रहने वाले मुसलमानो के लिए राष्ट्रीय भावना से अनुप्राणित 'धार्मिक एवं सेक्यूलर शिक्षा' की व्यवस्था करना।

(८) शिक्षा विषयक प्रयोग करना।

"जामिया की उच्चतम आकांक्षा यह होती कि वह भारत के मुसलमानों के लिए जीवन का एक ऐसा स्वरूप विकसित करे जिसका केंद्र-विन्दु इस्लाम धर्म हो और हमारी राष्ट्रीय संस्कृति का इस प्रकार विकास करे कि उसका मानव जाति की विश्व संस्कृति से तादात्म्य हो जाय। यह इस सिद्धान्त को मानकर चलती है कि सच्ची धार्मिक शिक्षा मुसलमानों में देश भक्ति तथा एकता की भावना को जागृत करेगी तथा उनमें वास्तविक राष्ट्रीय हितो की उन्नति एवं सेवा की महत्वाकांक्षा की जन्म देगी, जिससे अन्ततोगत्व भारत मानव जाति की सेवा में अपना पूर्ण योग देकर देश के तथा प्रगति, शान्ति एवं न्याय की भावना का उत्थान कर सकें।"

कार्य प्रणाली एवं स्वरूप—जैसा कि पूर्व में लिखा गया है यह संस्था अपनी व्यवस्था एवं संचालन स्वयं करती है उसे हम 'स्वायत सत्ता प्राप्त संस्था कह सकते हैं। इस शिक्षा संस्था के अन्तर्गत अनेक शिक्षण सस्थाए तथा विभाग हैं। इन सबको मिलाकर जामिया मिलिया का संगठन हुआ है जिन संस्थाओ को मिलाकर जामिया मिलिया का स्वरूप बना है, संक्षेप में वे इस प्रकार दर्शायी जा सकती हैं—

आवासयुक्त कालेज—इसमें समाज विज्ञान और भाषा के उच्च अध्ययन का प्रबन्ध है। इसी कालेज में समाज शिक्षा खेती एवं सामुदायिक विकास विषयक ट्रेनिग का भी समुचित प्रबन्ध है। इसमें एक बड़ी लाइब्रेरी भी है।

आवासयुक्त बहुधन्धी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय—इस संस्था में माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्रदान की जाती है परन्तु साथ ही साथ उद्योग सम्बन्धी प्रशिक्षण भी प्रदान किया जाता है।

आवासयुक्त प्राथमिक विद्यालय—इस विद्यालय में बुनियादी ढंग का शिक्षण बालको को प्रदान किया जाता है। यहाँ शिक्षक और बालको के मध्य मृदु सम्बन्ध स्थापित करने को सतत् चेष्ठा की जाती है। बालक स्वानुभाव से ज्ञानार्जन करते है उदाहरणार्थ शालेय बैंक, सहकारी भण्डार एवं उद्यान आदि का कार्य बालक ही खुद प्रास करते है।

शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय—इसमे शिक्षकों बुनियादी ढंग का प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है इसमे दो कोर्स है। एक जूनियर कोर्स जिसको पूरा करने के उपरान्त प्रशिक्षणार्थियो को डिप्लोमा दिया जाता है दूसरा सीनियर कोर्स है जिसको पूरा करने के उपरान्त प्रशिक्षणार्थियो बी० एड० की उपाधि प्रदान की जाती है।

प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र—इसके अन्तर्गत प्रौढ़ शिक्षा (सामाजिक शिक्षा) विषयक परीक्षण होते है तथा प्रौढ़ोपयोगी साहित्य के प्रकाशन की व्यवस्था की जाती है। यह साहित्य उर्दू तथा हिन्दी दोनों भाषाओं में प्रकाशित होता है।

कला शिक्षा केन्द्र—इसमे कला एवं विभिन्न उद्योग धन्धो विषयक प्रशिक्षण की व्यवस्था है।

अन्य विभाग—इनके अतिरिक्त ग्राम शिक्षा केन्द्र इतिहास एवं राजनीति शिक्षा केन्द्र, समाज विज्ञान, एवं ग्रामीण अर्थशास्त्र का शिक्षा केन्द्र, बालको की बिरादरी एवं मकतब जामिया लि० है (पुस्तक प्रकाशन कार्य) है।

आज इस संस्था ने बहुत तरक्की करली है। भारतीय शासन ने इसकी बड़ी सहायता की है तथा इसके विकास मे अपनी सामर्थ्य भर योगदान दिया है। जिन महान उद्देश्यों को सम्मुख रख यह स्थापित हुई है उन्ही महान उद्देश्यों को लेकर यह भविष्य में विकसित होती रहे।

इसका योगदान—(१) इसने बुनियादी शिक्षा के प्रचार व प्रसार में योग दिया है।

(२) बुनियादी तालीम के प्रयोगो में सहायता पहुँचाई है।

(३) इस संस्था ने बुनियादी शिक्षा एवं जनता को अनेक कर्मठ कार्यकर्त्ता प्रदान किये है जो देश में बुनियादी शिक्षा का आलोक फैला रहे है।

(४) इसने बुनियादी प्रौढ़ शिक्षा एवं बाल शिक्षा के अनुरूप सैकड़ो पुस्तकें प्रकाशित की है।

(५) इसने हिन्दू मुस्लिमो के बीच राष्ट्रीयता को बचाये रखने में प्रयास किया है ताकि बुनियादी शिक्षा के उद्देश्यो को पूर्ण किया जा सके।

बुनियादी शिक्षा सामान्य विज्ञान

पंचम प्रश्न-पत्र

बुनियादी शिक्षा सामान्य विज्ञान

प्रश्न १—वायु के दबाव से आप क्या समझते हो ? प्रयोगों द्वारा सिद्ध कीजिए कि वायु दबाव डालते है ?

उत्तर—वायु पृथ्वी के चारो ओर है। यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता कि पृथ्वी के चारो ओर हवा कितनी ऊँचाई तक है किन्तु वैज्ञानिकों का मत है कि यह वायु मण्डल में २०० मील की ऊँचाई तक अवश्य है। इस विशाल घेरे को वायुमण्डल कहते हैं। इस वायु में अन्य गैसें नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, आक्सीजन, कार्बनडाइआक्साइड अमोनिया, हीलीयम, व जल की वाष्प का भी भाग उपस्थित है। हवा में भार होता है--जिस प्रकार अन्य ठोस या द्रव पदाथो में भार होता है। उसी भाँति हवा में भी भार (बजन) होता है। अगर हवा को तुला द्वारा तोला जाय तो परिणाम स्वरूप आप देखेंगे कि हवा भार रखती है। हवा का यह भार निम्नलिखित प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया जा सकता है।

(१) प्रयोग—एक गुब्बारा लीजिए उसको भौतिक तुला द्वारा तोल लो। तत्पश्चात उसमें हवा भर कर पुनः तोलो इस बार तोलने पर आपको ज्ञात होगा कि गुब्बारा पूर्व से भारी है।

(२) **प्रयोग**—एक साइकल का ट्यूब या फुटबॉल का ब्लेडर लीजिए, इनको खाली भौतिक तुला द्वारा तोल लीजिए इसके बाद इनमें पम्प से हवा भरकर पुनः तोलिए। पुनः तौलने पर आपको ज्ञात होगा कि पहली तौल की अपेक्षा दूसरी तौल अधिक है।

अतः उपरोक्त प्रयोगो से सिद्ध होता है कि हवा में भार होता है।

वायु का दबाव—जिस वस्तु मे भार होता है वह वस्तु दबाव डालती है। इसलिए वायु भी दबाव डालती है। कहा जाता है कि वायु मण्डल की हवा का दबाव प्रत्येक "मनुष्य पर १२ से १६ टन तक या तीन हाथियों के भार के बराबर" पड़ता है। प्रत्येक मनुष्य सर्वथा इतना अधिक वजन अपने ऊपर सदैव रखे रहता है। किन्तु यह दबाव हमको प्रतीत नही होता। क्योंकि हमारे शरीर के अन्दर की रक्त नालिकाओ म रक्त का दबाव इतना अधिक होता है कि, "वह हवा के बाहरी दबाव के बराबर हो जाता है।"

जब हम काफी ऊँचे स्थान पर पहुच "जाते है, तो कभी-कभी हमारी नाक से रक्त आने लगता है। उसका कारण यह है कि ऊंचे स्थान पर हवा का दबाव कम जाता है व वहां रक्त का दबाव हवा के दबाव से अधिक होने के कारण, खून नालिकाओ से बाहर निकल जाता है।

वायु का दबाव वायु मण्डल म समान नही रहता जैसे-जैसे हम ऊँचे चढ़ते जावेगें, वैसे-वैसे वायु मण्डल का दबाव भी कम होता जावेगा। "करीब-करीब २०० मील की ऊँचाई पर वायु का दबाव बिल्कुल नही होगा।"

वायु का दबाव सिद्ध करना—हवा मे भार होता है इस कारण वह दबाव डालती है। यह निम्न प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया जा सकता है।

प्रयोग १—एक किसी भी आयतन का पिपेठ लीजिए, मुँह के द्वारा उसमे पानी खींच कर भरलो, जब पानी भर जावे तो ऊपरी सिरे को उंगली से दबाइये, उँगली के दबाने पर आप देखेगें कि उसका पानी नही गिरेगा। इसका कारण यह है कि नीचे वाले सिरे पर वायु का दबाव पड़ता है अतः वायु दबाव के ही कारण उसका पानी नहीं गिरता।

प्रयोग २—एक काँच का गिलास पानी से भरा, उसे कार्ड बोर्ड या गत्ते

ले ढक दो व धीरे-धीरे ओंधा करिये ऐसा करने पर गिलास का (Water) नहीं फैलेगा। क्योंकि गत्ते पर वायु का दबाव पानी के दबाव से अधिक है।

प्रयोग ३—पतली टीन का एक डिब्बा लो, जिसका मुँह छोटा हो उसे आवश्यकतानुसार रबड़ के एक कार्क से अच्छी तरह बन्द कर दो। इसके बाद डिब्बे मे पानी भर के उसे इतना गरम करो कि उसकी भाप निकलने लगे। जब समस्त पानी भाप के रूप मे परिवर्तित हो जावे तो जल्दी ही उसके मुँह से रबर का कार्क कसकर लगादो। इस प्रकार यह डिब्बा वायु से शून्य हो जावेगा किन्तु वायु मण्डल के दबाव के कारण वह थोड़ी देर मे पिचक जावेगा क्योंकि उस डिब्बे के बाहरी धरातल पर वायु का दबाब पडता है।

प्रयोग ४—"ओटो वोन गैरिक का यन्त्र" यह यन्त्र पीतल का बना हुआ होता है जो किसी भी व्यास के पीतल के एक गोले के दो बराबर गोलार्द्धों मे बटा हुआ होता है। जिसके एक गोलार्द्ध मे एक और टोटी लगी होती है इस टोटी का पम्प से (Connction) सम्बन्ध जोड़कर गोलार्द्धों की हवा निकाल ली जाती है। इन गोलार्द्धों के किनारे पर रबर लगादी जाती है; जिससे न भीतर की हवा निकल पावे, न बाहर की हवा भीतर घुस पावे। साधारण स्थिति मे ये दोनों गोलार्द्ध आसानी से अलग किये जा सकेंगे किन्तु जब इन दोनों को बन्द कर दिया जावेगा व उसमे से हवा निकाल ली जाने पर इन दोनों गोलार्द्धों को आसानी से अलग नही किया जा सकेगा। क्योंकि भीतर गोलार्द्ध, वायु शून्य हो जाते है, तथा बाहर की वायु ऊपर दबाव डालती है। अतः इसी हवा के दबाव के कारण वे आसानी से अलग-अगल नही किये जा सकेंगे।

इस यन्त्र का प्रयोग सर्व प्रथम जर्मन वैज्ञानिक ओटोवोन गेरिक ने जर्मन सम्राट के समक्ष किया था। अतः इसी वैज्ञानिक के नाम पर इस यन्त्र का नाम (ओटोवोन गैरिक का यन्त्र) रखा गया है। ओटोवोन गैरिक ने १५ इन्च व्यास के दो गोलार्द्धों की हवा निकाल कर प्रयोग किया था। अतः उसे अलग करने हेतु प्रत्येक गोलार्द्ध मे ८-८ घोड़े लगाने पड़े। तब १६ घोड़ो की शक्ति लगने पर ये दोनों गोलार्द्ध अलग किये जा सके थे।

प्रयोग ५—३६ इंच लम्बी पारे से भरी हुई एक नली लो उसका मुँह नीचा करके पारे से भरी हुई नाँद मे उलट दो; उलटने के कारण थोड़ा पारा नाँद मे

गिर जावेगा और ३० इन्च पारा नली मे रह जावेगा। यह ३० इन्च पारा भी वायु के दबाव के कारण ही रहता है।

प्रयोग ६—हवा से भरा हुआ एक फुटवाल का ब्लेडर लो, इस ब्लेडर को काँच के एक चोकोर बन्द बक्स में रखदो, काँच का बक्स ऐसा हो कि बाहर की हवा उसके भीतर प्रवेश न कर सके इस वक्स मे एक ओर टोंटी लगी हो. जिससे बक्स की हवा पम्प की सहायता से निकाली जा सके। तब हम देखेंगे कि फुटबॉल का ब्लैडर फूलता हुआ नजर आवेगा। ब्लैडर इस कारण फूलता है क्योंकि उसके ऊपर वायु का दबाव नही पड रहा है व ब्लेडर के भीतर वायु भरी हुई है अतः वह दबाव डालती है। इसी कारण वह फूलता हुआ प्रतीत होने लगता है।

प्रश्न २—वायु दाव मापक यन्त्र से आप क्या समझते हो ये कितने प्रकार के होते हैं। प्रत्येक का वर्णन कीजिये :—

उत्तर – "हवा का दबाव नापना—वायु के दबाव को भी हम यन्त्र द्वारा नाप सकते है। जो यन्त्र वायु के दबाव को नापने के काम मे आता है उसे "बैरोमीटर" या "वायु दाबमापक" यन्त्र कहते है इस प्रकार के यन्त्र की खोज सर्व प्रथम १६०३ मे "टोरसिली" नाम के वैज्ञानिक ने की थी। वायु के दबाव को निम्न लिखित तीन बैरोमीटरो से मापा जाता है।

१. **सरल बैरोमीटर**—यह लगभग एक मीटर लम्बी काँच की मजबूत $\frac{1}{4}$ इन्च व्यास की नली होती है जिसम शुद्ध पारा भरा रहता है।

बैरोमीटर बनाना—लगभग एक मीटर लम्बी मजबूत काँच की नली लो, जिसका एक सिरा बन्द होना चाहिए, खुले भाग से शुद्ध व शुष्क पारा भरो। पारा भरते समय ध्यान रहे कि कोई बुलबुला नली मे न रहने पाये। फिर एक प्याले मे पारा भर कर नली के सिरे पर अँगूठा लगा कर उस नली को पारे की प्याली मे पलट दो। ऐसा करने पर कुछ पारा नीचे गिर जाता है। थोड़ी देर बाद पारे का तल स्थिर हो जावेगा। फिर उस नली को "उर्ध्वाधर" खड़ी करके स्टेण्ड मे कसदो। इस प्रकार साधारण बैरोमीटर बनाया जाता है।

बैरोमीटर की नली मे जो स्थान पारे के ऊपर खाली है वह वायु शून्य है। और इसी वायु शून्य भाग का "इसके आविष्कारक के नाम पर टोरी सिली का

शून्य कहते है।" अगर इस टोरी सिली के शून्य में जरा भी वायु रहने दी जाय तो वह वायु दबाव को ठीक ठीक नही नाप सकता "बैरोमीटर मे पारे का स्तम्भ वायु के दबाव को व्यक्त करता है। अगर किसी स्थान पर पारे का स्तम्भ २९ इन्च है तो कहेंगे कि वायु का दबाव २९ इन्च है।"

२. **फोटिन का बैरोमीटर**:—यह सरल बैरोमीटर का सुधरा हुआ रूप है। इसका प्रयोग मौसम जाचने वालेदफ्तरों मे मौसम जानने हेतु किया जाता है। यहकाफी भारी व लम्बा होता है अतः एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में अत्यधिक कठिनाई होती है।

३. **ऐनीरोइड या द्रव्यहीन बैरोमीटर**—इसमें किसी प्रकार का द्रव नहीं होता। यह आकार व बजन मे अन्य बैरोमीटरों से हल्का होता है।

"यह एक पतली चद्दर का बना हुआ बक्स होता है। इसके अन्दर की सब वायु निकाल दी जाती है। जैसे ही वायु का दबाव कम या अधिक होता है, वैसे ही—बक्स की चादर का ढक्कन ऊपर या नीचे दबता है।" यह ऊपर नीचे की गति लीवरो द्वारा विस्तृत होकर सूचक सुई से मिली रहती है। सूचक सुई डाइल पर घूमती है", जिस पर चिन्ह व अंक होते है। वे चिन्ह व अंक किसी अन्य बैरोमीटर से मिलान करके बना दिए जाते है। इस यन्त्र का प्रयोग विशेष रूप से पहाड़ो पर चढ़ने वाले, तथा हवाई जहाज के चालक करते है।

वायु दबाव में परिवर्तन—"ऐनीराइड बैरोमीटर की सहायता से ९-९-१९४८ ई० मे सर्व प्रथम प्रयोग किये गये। उन्होने मालूम किया कि ९०० फी० की चढ़ाई पर बेरोमीटर मे पारा लगभग १ इन्च कम हो जाता है। सन् १९२२ की एवरेष्ट की चढ़ाई पर मालूम हुआ कि २०,००० फी० ऊँचा चढने पर बैरोमीटर केवल १०२ इंच दबाव दिखाता है।"

प्रश्न ३—किसी भी स्थान का मौसम का ज्ञान किस प्रकार किया जाता है?

मौसम का ज्ञान—मौसम का ज्ञान वर्तमान काल में अत्यन्त आवश्यक है। इसकी आवश्यकता विशेष कर किसानों व हवाई जहाज, पानी के जहाज वालो को होती है। यदि पानी के जहाज व हवाई जहाजों वालो को मौसम का ज्ञान न होता रहे तो तेज हवा व तूफान से उनको उसके नष्ट होने का भय रहता है।

मौसम को पहले बताने के लिए भिन्न भिन्न स्थानों के मौसम का हाल मालूम होना चाहिए। बेतार के तार की सहायता से आजकल मौसम ज्ञान बहुत दूर दूर तक हो सकता है। वह विज्ञान जिसकी सहायता से मौसम के विषय मे बातें मालूम होती है "मौसम विज्ञान" कहलाता है। बैरोमीटर व थर्मामीटर के बनने से इस विज्ञान मे बडी उन्नति हुई है।

"किसी भी मौसम की बातें मालूम करने वाले स्थान निम्नलिखित माप लिए जाते है।"

१—बैरोमीटर से वायु दबाव नापा जाता है। यदि बैरोमीटर धीरे धीरे ऊपर चल रहा है तो अनुभव किया जाता है कि मौसम साफ और अच्छा होगा। अगर वह धीरे धीरे नीचे चल रहा हो ती मौसम मे नमी रहेगी यहाँ तक कि वर्षा भी होगी।

२—शुष्काद्र थर्मामीटर से आद्रता नापी जाती है ?

३—वायु की दिशा और गति ज्ञात की जाती है।

४—आकाश की दशा—जो भी दशा हो।

५—दिन और रात का सबसे अधिक व सबसे कम ताप।

६—बादलों की गति ?

७—दिन में सूर्य कितनी देर से निकल रहा है ?

८—वर्षा कितनी हुई।

वायु दबाव एवं बुनियादी शिक्षा—बुनियादी शालाओ को मौसम विज्ञान का ज्ञान अत्यावश्यक है। ग्रामो मे मौसम का ज्ञान शाला मे नित्य बैरोमीटर लगाकर सूचनापट्ट पर चिपका कर ग्रामीणों को बताना चाहिए। बालको को भी मौसम का ज्ञान हितकारी होता है।

प्रश्न ४—शक्ति क्या है ? शक्ति प्राप्ति के कौन कौन से साधन हैं ?

शक्ति क्या है—जब कोई प्राणी या मशीन कार्य करें तो हम कहते है कि उसमें शक्ति है। किसी प्राणी या मशीन की "कार्य क्षमता को उस वस्तु की कार्य शक्ति कहते है।" जैसे कोई अधिक कार्य करता है तो कोई कम, तो हम कहते है कि अमुक मे कार्य शक्ति अधिक या कम है।

"अगर कोई पत्थर का टुकड़ा जमीन पर पड़ा हुआ है तो वह इस दशा मे

कुछ कार्य नही कर सकता, किन्तु अगर उसे किसी ऊँचे स्थान से लुढकाया जाय तो, उसमे पृथ्वी के गुरुत्वकर्षण के कारण शक्ति उत्पन्न हो जावेगी।

शक्ति दो प्रकार की होती है—(१) गतिज (२) स्थितिज।

(१) **गतिज शक्ति**—गतिज वह शक्ति कहलाती है, जिसमें शक्ति पदार्थ की गति के कारण उत्पन्न होती है जैसे हवा या पानी स्थिर रहे तो उसमें शक्ति नही होती परन्तु जब वह चलने लगे तो उसमे काफी शक्ति आ जाती है। इस प्रकार हम देखते है कि गति के कारण हवा, पानी तथा अन्य पदार्थ मे शक्ति उत्पन्न हो जाती है।

(२) **स्थितिज शक्ति**—वह शक्ति है जो पदार्थ की स्थिति बदलने पर उत्पन्न होती है। जैसे पत्थर का टुकड़ा जमीन पर पडा हुआ था तब उसमे शक्ति नही थी। परन्तु जब उसे ऊँचे स्थान से लुढकाते है तब उसमें शक्ति उत्पन्न हो जाती है।

ताप, ध्वनि, प्रकाश, विद्युत, चुम्बकत्व आदि सभी शक्ति के विभिन्न रूप है। किन्तु हम इन शक्तियो को दूसरे प्रकार की शक्ति मे बदल सकते है। शक्ति से हम छोटे से छोटा व बड़े से बड़ा कार्य कर सकते है।

शक्ति के निम्नलिखित साधन हैं—

(१) **पवन या वायु**—जब वायु वेग से चलती है, तब उसमे इतनी शक्ति होती है कि वह बडे बडे मकानो को थोड़े से समय मे ही उखाड़ फेंक सकती है। किन्तु स्थिर वायु मे शक्ति नही होती। वेग से चलने वाली वायु के निम्न कार्य हो सकते है—

(अ) बडी-बड़ी नावें इसकी सहायता से काफी दूर तक ले जाई जा सकती है।

(ब) पवन चक्की भी चलाई जा सकती है। इनसे कुएँ से जल, आटे की चक्की आदि कार्य ले सकते है।

(२) **जल या पानी**—"जब पानी भी हवा की भाँति स्थिर रहता है तो उसमे शक्ति नही होती किन्तु जब वह वेग से बहता है तो उसमे शक्ति आ जाती है।"

(अ) हमारे देश मे बड़े-बड़े बाँध बनाये जा रहेहै जैसे भाखड़ा, नागल, चम्बल,

कोसी, दामोदर, हीरा कुण्ड आदि नदियों के ऊपर बाँध बाँधे जा रहे हैं जिससे वर्षा ऋतु मे इनका जनसंहारक रूप रुक जावेगा साथ ही साथ इन बाँधों से करोड़ों रुपये का वार्षिक लाभ भी हो सकेगा।

(ब) रुके हुए पानी से सिंचाई होगी।

(स) पानी मे वेग उत्पन्न करके विद्युति शक्ति उत्पन्न की जावेगी।

(द) पानी की भाप बनाकर इंजन चलाये जावेंगे।

(३) **तेल**—यह ज्वलन शील द्रव पदार्थ है। इसको जब भाप के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है तब वाष्प मे काफी विशाल इन्जन, मोटर, आदि चलाने की क्षमता आ जाती है। किन्तु भारत मे यह शक्ति सीमित है।

(४) **कोयला**—यह शक्ति के साधनों मे प्रमुख है। संसार का $\frac{1}{3}$ भाग कोयला भारत मे पाया जाता है किन्तु यह सीमित होने के कारण समस्त आवश्यकताको की पूर्ति अधिक समय तक नही कर सकता कहा जाता है कि २०० साल मे भारत का समस्त कोयला समाप्त हो जावेगा। अतः इसका प्रयोग हमे सावधानी से करना चाहिए।

(५) **वाष्प**—पानी व कोयले से वाष्प उत्पन्न की जाती है। इससे अनेको विशाल कारखाने, रेलें, मोटरें इत्यादि चलाई जाती है। भारत मे वर्तमान काल मे अधिकतर रेलें वाष्प की सहायता से चलाई जाती है।

(६) **विद्युत**—वर्तमान काल मे शक्ति के साधनो मे विद्युत का प्रयोग सबसे अधिक हो रहा है। यह विद्युत सरल, सस्ती तथा सुगमता से प्रयोग की जा सकती है। इस शक्ति को चलाने हेतु सिर्फ बटन दबाने की आवश्यकता है। परन्तु अन्य शक्ति के साधनों को प्रयोग करने मे कठिनाई होती है। इसी कारण इस शक्ति का प्रयोग अधिक मात्रा मे हो रहा है।

(७) **मानव शक्ति**—प्राचीन काल मे इस शक्ति का प्रयोग अधिकांश किया जाता था किन्तु जैसे जैसे मशीनों का आविष्कार होता गया वैसे ही वैसे इस शक्ति का प्रयोग कम किया जाने लगा है। वर्तमान काल में इस शक्ति का उपयोग बहुत कम किया जा रहा है।

(८) **पशु शक्ति**—पशु शक्ति का स्थान भी अन्य शक्तियो मे विशेष रूप

से है। वर्तमान काल में इस शक्ति का उपयोग कृषि कार्य तथा लघु उद्योगों में किया जाता है।

प्रश्न ५—यान्त्रिक लाभ (Mechanical advantage) से आप क्या समझते हैं ?

यन्त्रों की सहायता से हमको कार्य करने मे अत्यन्त आसानी हो जाती है तथा कोई भी अधिक बजन यन्त्रों की सहायता से कम बल (ताकत) लगाकर उठाया जा सकता है। बिना यन्त्र की सहायता से उस भार को उठाने में अधिक बल लगाना पड़ता है। "अतः मशीन की सहायता से उस भार को उठाने में जो कम बल लगता है तथा बल का मशीन से जो लाभ होता है। उसे यान्त्रिक लाभ (Mechanical advantage) कहते हैं।

जो भार उठाया जाता है और जितना बल उस भार को उठाने हेतु मशीन के द्वारा लगाना पड़ता है, वह मालूम कर लिया जाता है उसके अनुपात को ही यान्त्रिक लाभ कहते हैं।

यान्त्रिक लाभ (Mechanical advantage)=

$$\frac{\text{उठाया हुआ भार}}{\text{लगाया हुआ भार}}$$

मशीनों से निम्न लिखित क्या लाभ है ?

(१) मान लीजिए कि मशीन के बिना कोई मनुष्य X प्रतिरोध दूर कर सकता है तो मशीन की सहायता से X से अधिक प्रतिरोध दूर किया जा सकता है।

(२) मशीन की सहायता से बल अनुकूल जगह पर अनुकूल विधि से लगाया जा सकता है।

(३) मशीन की सहायता से बिना मशीन के प्रयोग की अपेक्षा अधिक भार उठाया जा सकता है।

(४) मशीन के द्वारा किसी बिन्दु की चाल उससे अधिक तेज चलाई जा सकती है।

प्रश्न ६—लीवर तथा घिरनी से आप क्या समझते हो ?

लीवर—लीवर एक बड़ी ठोस सीधी अथवा टेढ़ा डण्डा कहलाता है जो एक स्थिर बिन्दु से इधर उधर सुगमता पूर्वक घूम सके स्थिर बिन्दु को आलम्ब (Fulcrum) (टेक) कहते है। इसको प्रयोग में लाने के लिये जो बल लगाया जाता है उसको (power or effort) शक्ति कहते हैं। और रुकावट जिसको वह दूर करता है, बोझ भार (Weight or load) कहते है। आलम्ब (टेक) से शक्ति और भार के बिन्दुओ की दूरी को भुजाऐं कहते है।

लीवर तीन प्रकार के होते हैं—

(१) प्रथम प्रकार के लीवर वे होते है जिनमे बल और भार (टेक) या आलम्ब (Fulcrum) के इधर उधर होते है। या आलम्ब बल और भार के बीच में होता है। इस प्रकार के लीवर के उदाहरण हेण्ड पम्प तराजू (s°a saw) सी० सो० है। इस प्रकार के डबल लीवर्स चिमटी और कैंची है। केंची का जोड़ आलम्ब (टेक) है। जो वस्तु काटी जाती है। भार का काम करती हैं और उँगलियो मे बल लगाया जाता है।

२—दूसरी प्रकार के लीवर वे होते है। जिनमें बल और भार (टेक) आलम्ब के एक ही ओर होते है तथा भार, बल और आलम्ब (टेक) के बीच मे होता है। इस प्रकार के लीवर, कार्क दबाने वाला यन्त्र, सरौता, एक पहिये का ठेला व आम काटने का सरोता इत्यादि है। इस स्थिति मे कम भार उठाने के लिये शक्ति अधिक लगती है।

३—तीसरी प्रकार के लीवर वे होते है जिनमे बल-आलम्ब (टेक) और भार के बीच मे होता है। मनुष्य के हाथ का बाजू चमीटा इसका उदाहरण है। कुहनी आलम्ब का काम करती है। भार हाथ की हथेली पर रखा जाता है और बल पुट्ठे लगाते है। इस लीवर मे बल अधिक लगाना पड़ता है, पर कार्य शीघ्रता से होता है।

घिरनी या चरखी—(pully) यह लकड़ी अथवा लोहे के बने हुये एक पहिये की भाँति होती है, जिसका घेरा नालीदार होता है। यह एक धुरी पर (axle) पर सुगमता पूर्वक स्वतन्त्रता से घूम सकती है। वह चौखटा (frame)

जो उसकी धुरी के किनारो को सम्भालता है, ब्लॉक (block) कहलाता है। नाली मे से एक रस्सी होकर गुजरती है। उसका चौखटा (block) कहीं जड़ दिया जाता है तो घिरनी स्थिर कहलाती है। यदि उसका चौखटा ऊपर नीचे चल सकता है तो घिरनी को अस्थिर कहते हैं। स्थिर घिरनी केवल बल की दिशा बदलने के काम आती है। रस्सी के एक सिरे पर बोझा लटका दिया जाता है और दूसरे पर बल लगाया जाता है। ऐसी घिरनी पर्दे खीचने, लट्टू लटकाने, कुऐ से पानी खीचने, हाथ के पंखे खीचने और बोझ उठाने के काम आती है। ठुकी हुई घिरनी से कोई यान्त्रिक लाभ नही होता। अर्थात् बल उतना ही लगाना पड़ता है जितना घिरनी के बिना लगाना पड़ता है बल मे कुछ कमी नही होती है।

ताप (Heat)

प्रश्न ७--ताप क्या है ताप प्राप्ति के कौन-कौन से साधन हैं ? यह एक स्थान से दूसरे स्थान को किन-किन रीतियों द्वारा चलता है। उदाहरण द्वारा समझाइये।

"जब हम जलती हुई आग के सामने खडे होते हैं तो हमको गर्मी मालूम होती है। और ज्यो ही आग से दूर हटते है हमको आग की गर्मी कम मालूम होती जाती है, और अन्त मे एक स्थान ऐसा आता है जहाँ हमको गर्मी बिलकुल प्रतीत नही होती। इस उष्मा को हम भली प्रकार पहिचानते हैं और कह सकते है कि उष्मा (ताप) के कारण ही हमे गर्मी प्रतीत होती है। पर (ताप) उष्मा क्या है।

परिभाषा—ताप एक प्रकार की ऊर्जा (energy) है जो अणुओं (Molecules) की चाल से उत्पन्न होती है, किसी वस्तु के अणु (Molecules) मे जितनी उर्जा होती है, उसमे उतनी ही उष्मा भी होती है।

किसी गर्म वस्तु को छूने पर कोई कम और कोई अधिक गर्म प्रतीत होती है। यह अधिक व कम गर्म प्रतीत होना दो बातो पर निर्भर है। (१) उस वस्तु में कितनी उष्मा है ? (२) वह वस्तु उष्मा की कैसी परिचालक है ?

उष्मा के उत्पादक (Sources of Heat)

ऊष्मा निम्नलिखित रीतियों से उत्पन्न होती है—

(१) **सूर्य**—ताप के उत्पादकों में सूर्य सबसे प्रमुख व लाभदायक है। यह है, इसके बिना जीवन असम्भव है प्रत्येक वस्तु की पैदावार हवा का चलना, वर्षा होना समस्त क्रियाएँ सूर्य की उष्मा पर ही निर्भर हैं।

(२) **रासायनिक परिवर्तन** (Chemical Change)—बहुत से रासायनिक परिवर्तनों से उष्मा पैदा होती है। जब कोयला आक्सीजन से संयोग करता है तब ऊष्मा पैदा होती है।

(३) **यान्त्रिक क्रिया** (Mechanical Action)—यान्त्रिक क्रिया होती है तब ताप पैदा है, एक पत्थर दूसरे से रगड़ खाता है, लोहे के टुकड़े हथौड़े से पीटे जाते है तब उष्मा पैदा होती है।

(४) **विद्युत** (Electricity)—जब विद्युत किसी तार मे होकर जाती है तो उष्मा पैदा होती है।

(५) **दशा परिवर्तन** (Change of State)—पानी के भाप बनने के लिये उष्मा की आवश्यकता है और जब भाप से पानी बनता है तो उष्मा निकलती है।

उष्मा का संचरण (Transivission of Heat)

उष्मा तीन प्रकार से एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंच सकती है। चालन (Conduction), संवहन (Convection), विकिरण (Radiation) इन तीनों को भली भाँति समझने के लिये निम्न प्रयोग काम में लाये जाते है।

मान लीजिए एक पंक्ति में कई लड़के खड़े हैं और पंक्ति के एक सिरे पर नारंगियों का ढेर है। अब नारंगियाँ दूसरे सिरे पर पहुंचानी है यह कार्य निम्न तीन रीतियों से किया जावेगा।

(१) पहला लड़का एक नारंगी उठाकर अपने पास वाले लड़के को देदे वह अपने बराबर वाले को दे इस प्रकार नारंगियाँ एक लड़के से दूसरे तक पहुंचा कर अन्तिम लड़के तक पहुंचा सकते हैं। इस रीति को चालन Conduction कहते हैं। इसमें उष्मा एक स्थान से दूसरे स्थान पर कणों के द्वारा चलती है।

जिस प्रकार इस रीति में नारंगियाँ एक के बाद एक लड़के से अन्तिम लड़के पर पहुँचती है।

(२) **संवहन** (Convection)—इसमे उष्मा के कण उष्मा को स्वयं ले जाते है। कण एक स्थान से दूसरे स्थान को चलते हैं और उष्मा स्वयं देते हैं। जबकि नारंगियाँ को एक लड़का स्वयं उठाकर और चलकर निश्चित स्थान पर पहुँचादें। इस रीति को (Convection) कहते हैं।

(३) **विकिरण** (Radiation)—इसमे उष्मा सीधी उष्मा देने वाले से उष्मा लेने वाले पर पहुँचती है और बीच की वस्तुओं पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। उपरोक्त उदाहरण मे नारंगियों के पास का लड़का नारंगियाँ उठा उठा कर अन्तिम लड़के के पास फेंके। इस रीति मे बीच वाले लड़कों को कुछ भी नहीं करना पड़ता है। इस रीति को विकिरण (Radiation कहते है।

उष्मा का चालन (Conduction of Heat)

प्रयोग—एक लोहे की छड़ का एक सिरा आग में रखो और दूसरे सिरे को हाथ मे रक्खो। थोड़ी देर मे यह सिरा जो तुम्हारे हाथ है इतना गर्म हो जावेगा कि तुम पकड़ न सकोगे। प्रारम्भ मे छड़ के वे कण जो आग में गर्म हो जाते है अपने बराबर वाले कणो को उष्मा पहुचाते है, फिर वे अपने समीप वाले कणों को, इस प्रकार उष्मा धीरे-धीरे एक कण के दूसरे कण में व दूसरे से तीसरे मे इस प्रकार उष्मा सारी छड़ में फैल जाती है।

परिभाषा—इस प्रकार से उष्मा के फैलने की रीति को जिसमें उष्मा एक कण से दूसरे कण को मिलाती है और कण स्वयं नहीं चलते हैं चालन (Conduction) कहते है।

भिन्न-भिन्न वस्तुएँ भिन्न-भिन्न गति से उष्मा को फैलाती है। जो वस्तुएँ उष्मा को शीघ्रता से फैलाती है, उष्मा के अच्छे चालक (Good Conductor) कहलाती है। काँच, पत्थर, लकड़ी गेस उष्मा के बुरे चालक है। पारे के अतिरिक्त सारे द्रव पदार्थ ताप के बुरे परिचालक (Bad Conductor) है।

उष्मा का संवहन (Conduction of Heat)—

द्रव व गैस उष्मा के बुरे चालक है। जब कोई द्रव नीचे से गर्म किया जाता है तो गर्म होने वाले भाग का घनत्व कम हो जाता है, अर्थात् वह हल्का

जाता है। इस कारण वह ऊपर उठता है। अधिक ठण्डे और भारी भाग इधर उधर से इसका स्थान लेने के लिये आ जाते है। वे भी गर्म हो जाते हैं तब ऊपर उठने लगते है। इस कारण संवहन धारायें (Convection Current) चलने लगती है। दूसरी रीति को जिस में उष्मा एक स्थान से दूसरे स्थान पर गर्म कणों के चलने से पहुँचती है, संवहन (Convection) कहते है।

परिभाषा—"उष्मा के एक स्थान से दूसरे स्थान को जाने की वह रीति जिसमें द्रव तथा गैस के कण (घनत्व में अन्तर होने के कारण) एक स्थान से हटकर दूसरे स्थान पर पहुचते है। और उष्मा देते है संवहन (Convection) कहलाती है।"

विकिरण (Radiation)—**परिभाषा**—जब उष्मा एक जगह से दूसरी जगह सीधी रेखाओ में चलती है और रास्ते मे उष्मा का प्रभाव नही होता तो उसे विकरण कहते है।

सूरज से हमको उष्मा विकिरण द्वारा मिलती है। जलती हुई लकड़ी व कोयलों से भी हमको पास खडे होने पर इसी प्रकार उष्मा मिलती है। इससे उष्मा तेज चलती है।

प्रश्न ८—उदाहरणों द्वारा सिद्ध कीजिये कि ठोस ताप पाकर बढ़ते हैं।

Expansion of Solid

प्रयोग (१) ठोस पदार्थ गर्म करने पर लम्बाई, आयतन व क्षेत्रफल मे बढ़ते है। इसी रीति से समस्त मानव प्राणी लाभ उठाते रहत है। यह एक साधारण सा अनुभव है कि जब लुहार गाड़ी व ताँगो के पहियो पर लोहे की हाल चढ़ाते है तो भी वे इसी सिद्धान्त का लाभ उठाते है। वह उपलो की आग से लोहे की हाल को गर्म करता है गर्म करने से वह बढ़ जाती है। वह बढ़ी हुई हाल को पहिये पर चढ़ा देता है। और पानी की धार से उसको ठण्डा करता है। वह सिकुड़ती है और सिकुड़कर पहिये को खूब जकड़ कर पकड़ लेती है।

(२) काँच की बोतल में फँसी हुई डाट के निकालने का सबसे उत्तम उपाय यही है कि उसकी गर्दन को चारों ओर से गर्म किया जाय गर्दन गर्म होने

फैल जाती हैं। अतः डॉट ढीली हो जाती है उस समय उसको बाहर निकाल दिया जाता है।

(३) घण्टी "दो धातुओं की बनी हुई छड़ (Compound bar) आग लगने से घण्टी को बजने का काम देती है। बिजली की घण्टी मे दो एक ही लम्बाई की छड़ें होती है (१) लोहे की (२) ताँबे की। ऐसी छड़ को (compound bar) कहते है। यह किसी बैटरी के धन ध्रुव (positive pole) से मिला दी जाती है, इस बैटरी का ऋण ध्रुव (negative pole) एक विद्युत की घण्टी से मिला हुआ रहता है।

साधारण अवस्था में विद्युत की घण्टी नही बजती, परन्तु जब किसी स्थान पर आग लग जाती है और वहाँ इस प्रकार का प्रबन्ध होता है तो वह छड़ गर्म हो जाती है। ताँबा लोहे की अपेक्षा अधिक बढ़ता है। दोनों किनारो पर छड़ जड़ी होने से ताँबे की छड़ किनारों की ओर नही बढ़ सकती। इस कारण वह मुड जाती है। इससे यह पेच से मिल जाती है। और घण्टी स्वयं बजकर आग का समाचार दे देती है।

"ठोस वस्तुएं गर्म होने पर फैलती है" यह निम्न प्रयोगो से भी सिद्ध किया सकता है।

(१) **ग्रेवी सैंडी का छल्ला (आयतन में वृद्धि देखना)**—इस यन्त्र को लो। इसमे एक गोल छल्ला और एक गोला होता है। साधारण ताप पर गोला छल्ले मे से आर पार जा सकता है। गोले को गर्म करो और उसे छल्ले पर रख कर देखो कि गर्म होकर छल्ले मे होकर वह नही निकलता है। इससे स्पष्ट है कि ठोस गर्म करने पर आयतन मे बढ़ते है।

(२) **बार एण्ड गेज** Bar and Gaze—"लम्बाई मे वृद्धि देखना" इसमें एक धातु की छड़ होती है जो पेच से कसी रहती है और दूसरे किनारे पर स्केल लगा होता है जिस पर एक संकेतक (Pointer) लगा रहता है। इस को इस प्रकार रखना चाहिये कि छड़ फैलाने पर यह गोल पैमाने के सहारे घूमने लगे। छड़ को अगर गर्म किया जाता है तो गर्म होने पर हम देखेंगे कि फंकेतक पैमाने के सहारे चलने लगता है। इससे सिद्ध होता है कि छड़ गर्म होने से फैलती है।

(३) "दो रेल की पटरियों के बीच की जगह भी इसी कारण छोड़ते है। व मकानों में भी लोहे के गर्डरों के फैलने के लिये खाली स्थान छोड़ दिया जाता है।

लम्बाई में वृद्धि (Bar and Gauge)—इसमें Bar छड़ की लम्बाई Gauge के बराबर होती है। साधारण स्थिति में Bar गेज में चली जाती है किन्तु गर्म करने पर Bar नहीं जाती इससे स्पष्ट है कि ठोस गर्म करने पर लम्बाई मे बढ़ते हैं।

प्रश्न ६—श्वासोच्छ्वास या श्वसन क्रिया से आप क्या समझते हैं? इसमें शरीर के कौन-कौन से अंग कार्य करते हैं?

श्वासोच्छ्वास या श्वासन (Respiration) वह क्रिया है जिसके द्वारा जीवधारी वायु मे से आक्सीजन या प्राणवायु को ग्रहण करते हैं तथा कार्बन डाईआक्साइड गैस बाहर निकालते है यह क्रिया मानव जीवन के लिये भी अत्यावश्यक है। इस क्रिया के बिना मनुष्य जीवित नही रह सकता। अगर मनुष्य को थोड़े समय के लिये भी आक्सीजन इस क्रिया द्वारा प्राप्त न हो तो उसका दम घुट जायगा एवं वह मर जावेगा।

इस क्रिया को हम दो भागों मे विभक्त कर सकते है।

(१) **हवा का भीतर जाना** (Inspiration)—यह वह क्रिया है जिसमे वायु फेफड़ो में बाहर से प्रवेश करती है।

(२) **उच्छवास** (Expiration)—यह श्वासन की वह क्रिया है जिसमें वायु फेफड़ों से बाहर निकलती है।

जब हम वायु को साँस द्वारा ग्रहण करते है तो उसकी रचना निम्न-तालिका अनुसार होती है।

(१) नाइट्रोजन = ७९.००% (२) आक्सीजन = २०.००%

(३) कार्बनडाईआक्साइड = ००.०३% (४) अन्य गैस व पानी ००.०७%

हमारे फेफड़े वायु में से आक्सीजन को ग्रहण कर लेते है और बदले में कार्बन डायआक्साइड गैस को उच्छवास क्रिया द्वारा निकालते है। इसमें वायु का संगठन निम्न प्रकार है।

(१) नाइट्रोजन ७९·५% (२) आक्सीजन १६.००%

(३) कार्बन डायआक्साइड ४·००% (४) अन्य गैसें व पानी ००·५%

दूषित वायु का स्वश्न क्रिया पर प्रभाव

बन्द स्थानों मे, जैसे सिनेमा हाल, थियेटर आदि स्थानों में जहाँ अधिक मनुष्य एक साथ श्वास प्रश्वास करते है वहाँ वायु शीघ्र गन्दी हो जाती है। कभी अधिक दूषित वायु में स्वांस क्रिया करने से सिर में दर्द चक्कर आना आदि प्रारम्भ होने लगते हैं और कभी कभी के भी हो जाती है। इसके साथ साथ दूषित वायु मे रहने वाले मनुष्य पीले व कमजोर होते हैं। तथा अधिकतर वे संक्रामक बीमारियों के शिकार रहते है।

प्राकृतिक अवस्था के अतिरिक्त कार्बन डायआक्साइड अधिक होने पर श्वांस क्रिया पर निम्न प्रभाव होता है।

(१) अगर हवा मे कार्बन डायआक्साइड २% उपस्थित है, तो श्वास तेजी से चलती है।

(२) ,, ५% ,, तो हाँफने की क्रिया प्रारम्भ हो जाती है

(३) ,, ६ से ८% ,, व्यक्ति का साँस लेना कठिन हो जाता है

(४) ,, १६ से २०% ,, व्यक्ति बेहोस हो जाता है।

(५) ,, २५% ,, होने पर व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है

श्वसन क्रिया मे शरीर के निम्नलिखित मुख्य अंग काम में आते है।

(१) नाक (२) गला (ध्वनि यन्त्र) (३) श्वास नली (४) फेंफड़े (५) डायफार्म।

(१) **नाक**—नाक ही श्वांस लेने का वास्तविक सही द्वार है सर्व प्रथम वायु नाक मै से प्रवेश करती है, नाक के नकुए अन्दर की ओर सकरे होते गये है। नाक मे उपस्थिति वालों तथा तरल पदार्थ के कारण वायु में उपस्थित छोटे छोटे कीटाणु, धूल के कण इत्यादि रुक जाते हैं।

(२) **गला या ध्वनियन्त्र**—नाक से वायु गले मे प्रवेश करती है। गले के समीप ही भोजन जाने के मार्ग के पास ही एक पर्दा लगा रहता है। जो केवल वायु को ही स्वांस नली मे प्रवेश होने देता है।

(३) **स्वास नली**—यह लगभग ४ इन्च लम्बी व १ इंच मोटी होती है। नीचे की ओर यह नली दो भागों मे विभक्त होती है जो एक दायें व दूसरी

बायें फेंफड़े मे जाती है। ये नालिकायें अनेक शाखायें व उपशाखाओं मे विभक्त रहती है। व फेंफड़ो मे एक प्रकार का जाल सा बिछा देती है।

(४) **फेंफड़े**—नाक से वायु स्वासनली मे होकर फेंफड़ो मे पहुँच जाती है। यहाँ पर वायु से आक्सीजन सोख ली जाती है।

(५) **डायफ्राम**—फेंफड़े डायफ्राम के ऊपर आने के कारण सिकुड़ते हैं तो वायु, नाक तथा श्वास नली के द्वारा बाहर निकल आती है। फिर जब डायफ्राम नीचे की ओर झुकता है तो फेंफड़े फिर बढे जाते है, जिससे वायु फिर नाक व श्वास नली द्वारा फेंफड़ो के अन्दर आ जाती है। इस प्रकार यह क्रिया निरन्तर चला करती है।

प्रश्न १०—**निम्नलिखित कीड़े मकोड़ों के जीवन चक्र व शरीर रचना पर प्रकाश डालिए।**

घरेलू मक्खी—हम सब ने ही मक्खी को देखा है, यह सभी स्थानो पर, अधिकतर गन्दे स्थान पर अण्डे देता है।

वर्णन—मक्खी के शरीर मे तीन हिस्से होते है (१) सिर, (२) धड़, (३) पेट। इसके पाँच आँखें होती होती है। इसमे से दो बड़ी तथा तीन छोटी होती है। इसी कारण मक्खी अपने चारो तरफ आसानी से देख सकती है। इसके सिर 'पर' दो बाल होते है। जिन्हे फीलर्स कहते है। इसकी जीभ एक लम्बी नली की तरह होती है। इसके छः टाँगें होती है अपनी आगे की दो टाँगो से यह अपना सिर साफ करती रहती है। इसके पर मजबूत होते है।

भोजन—यह अपना भोजन ठोस रूप मे ग्रहण नही कर सकती, परन्तु जिस ठोस को खाना चाहती है, उस पर अपनी जीव द्वारा एक तरल पदार्थ डाल देती है, इससे वह द्रव रूप में बदल जाता है फिर उसे यह ग्रहण कर लेती है।

जीवन चर्या—मक्खी अपने अण्डे, गन्दे स्थानो पर और अधिकतर तो यह घोडे या अन्य जानवरों की लीद व गोबर के पास देती है। एक मक्खी ५००-७०० तक अन्डे देती है। इसके अन्डों को बढ़ने में देर नही लगती। अण्डे देने के २४ घण्टे मे अन्डे लम्बा आकर ग्रहण कर लेते है, जिसे लारवा कहते है, फिर ८ दिन मे लारवा प्यूपा मे बदल जाता है, प्यूपा का आकार अण्डे

जैसा होता है, तथा इसका रँग भूरा होता है, फिर प्यूपा चार, पाँच दिन में पूरी मक्खी का रूप ग्रहण कर लेता है।

गर्मियों व बरसात में इनकी संख्या जाड़े के दिनों से बहुत अधिक होती है। जाड़े का समय इसके लिए अधिक उपयुक्त नहीं है।

मक्खियो से हानियाँ—मक्खियाँ हमारे लिए बहुत हानिकारक है क्योंकि यह गन्दे स्थानों पर बैठकर वहाँ से अपने शरीर पर बीमारी के कीटाणु व गन्दगी को चिपका लाती है तथा जिन खाने की वस्तुओं पर मक्खियाँ बैठती है उससे वे हमारे शरीर में प्रवेश कर जाती हैं जिससे हमको अनेक भयंकर बीमारियाँ भी होने की सम्भावना है।

मक्खियाँ वस्तुओं पर बैठकर उन्हें गन्दा कर देती हैं।

सावधानियाँ

(१) भोजन व खाने की वस्तुओं को ढक कर रखो।

(२) रसोई गृह में स्वच्छता रखो।

(३) मकान के आस पास गन्दगी व गड्ढे न हो।

(४) समय-समय पर घर मे कीड़े मारने की दवा छिडकवाते रहना चाहिए।

(५) जहा इन्होने अण्डे दिए हों वहाँ की गन्दगी हटाकर व उस स्थान पर मिट्टी का तेल छिड़कना चाहिए।

(६) स्थान-स्थान पर थूकना व गन्दगी नही करना चाहिए।

(७) मकानों मे समय समय पर धुलाई इत्यादि कराते रहना चाहिए।

खटमल

जीवन चर्या– खटमल छोटा सा मनुष्य का खून चूसने वाला प्राणी है। इनका निवास स्थान दीवाल के छेद, पलंग, खाट, तथा जमीन आदि है। इसका मुख्य 'भोजन' मनुष्य का खून है। इनका रंग बादामी, या गहरा होता है यह एक घर से दूसरे घर व एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से पहुँच जाते है। यह कई दिन तक भोजन बिना भी रह सकता है। क्योकि एक बार मे यह इतना खून चूस लेता है।

(१) **हानियाँ**—इनसे मनुष्य अत्यधिक परेशान रहता है। क्योंकि जिन

स्थानो में ये उत्पन्न हो जाते है उन स्थानो मे शीघ्रातिशीघ्र अपनी संख्या बढ़ा लेते है। रात्रि के समय चैन से नही सोने देते।

(२) इनके द्वारा एक मनुष्य की बीमारी दूसरे मनुष्य को भी लग जाती है।

बचने के उपाय—(१) खाट या पलंग को धूप मे रखना या उसे गरम पानी से धो डालना चाहिए।

(२) सोते समय मच्छरदानी का प्रयोग करना चाहिए।

(३) घरों तथा बिस्तरों को स्वच्छ रखना चाहिए।

(३) जूँ

वर्णन—जूँ भी खटमल की ही भाँति बिना पंखों का होता है। यह उड़ नही सकता। यह शरीर, कपड़े तथा बालो मे आमतौर पर रहता है। यह भी मनुष्य का खून चूसता है, और मनुष्य का रक्त ही इसका भोजन है।

हानियां—(१) इनसे भी अनेको बीमारियाँ फैलती है।

(२) कभी कभी यह जन इन्द्रियों के बालो मे रहने लगता है।

इस प्रकार के जूँ का 'जमजूँ' कहते है, यह चमड़ी को कसकर पकड़ लता है।

बचने के उपाय—

(१) बालो व कपड़ो व त्वचा को सर्वथा स्वच्छ रखना चाहिए। उन्हे सदैव साबुन शम्पू आदि से स्वच्छ करते रहना चाहिए।

(२) कंघे, कपड़े, तालियों इत्यादि को स्वच्छ रखना चाहिए तथा किसी अन्य व्यक्ति को जहाँ तक हो सके प्रयोग नही करने देना चाहिए।

(३) जूँ हो जाने पर जूँ मारने का पाउडर प्रयोग करना चाहिए।

प्रश्न ९—मधुमक्खी की शरीर रचना व इनके जीवन चक्र तथा मानव जीवन में इनकी उपयोगिता के विषय में लिखिये ?

मधुमक्खी अत्यन्त लाभदायक है। इससे हमको शहद, मोम, आदि प्राप्त होते है। इसके साथ साथ इनकी सहायता से अधिकाँश फूलो मे परागकण एक फूल से दूसरे फूल मे जाते है जीव जिससे गर्भाधान (Polination) की क्रिया होती है। अतः यह वनस्पति जगत के लिए भी लाभदायक है।

जीवन चर्या—इनका रहन सहन, सामाजिक व्यवस्था व कार्य कुशलता हमारे सामने आदर्श का पाठ सिखाता है। छत्त में साधारणतः ३ प्रकार की मक्खियाँ होती है।

(१) रानी (२) नर मक्खियाँ और (३) मजदूर मक्खी।

एक बडे छत्ते में लगभग ६०,००० से ८०,००० तक मक्खियाँ होती हैं। इनमे रानी मक्खी केवल एक होती है व करीब २००-३०० तक नर व शेष सभी मजदूर मक्खी होती है इन तीनों प्रकार की मक्खियो के कार्य विभक्त रहते हैं।

मजदूर मक्खी—यह हल्की एवं फुर्तीली होती है तथा यह बन्ध्या (बाँझ) होती है। डनका मुख्य कार्य छत्ते सम्बन्धी विभिन्न प्रकार के कार्य करना है।

रानी—इसका आकार छोटा होता है, इसका पेट लम्बा और परों की लम्बाई से अधिक होता है। यह अपने जीवनकाल में करीब १ करोड़ अण्डे देती है।

नर—इसका पेट चौडा होने के साथ परों की लम्बाई से कम ही होता है।

मजदूर मक्खी का कार्य—मजदूर व रानी मक्खी दोनों का अन्तिम भाग एक पेनी नली में समाप्त होता है। रानी इसकी सहायता से अपने अण्डे देती है, तथा मजदूर मक्खियाँ इनकी सहायता से इनको हानि पहुंचाने वाले व्यक्तियों को डंक मार देती है।

मजदूर मक्खियाँ छत्तो का निर्माण व उनकी मरम्मत करती है, तथा छते की रक्षा करती है। उनके सिर के अगले भाग पर एक ग्रन्थि होती है, जिससे यह मोम निकालती है।

छत्तो की रचना—छते की रचना षटभुजाकर, कोष्ठों के आकार का होता है उसके अन्दर की बनावट बहुत अच्छी व व्यवस्थित होती है जिससे उसके पराग, अण्डे, बच्चे आदि सुरक्षा पूर्वक रहते है। इसमें कमरे भी भिन्न भिन्न आकार के होते है, जैसे मजदूर मक्खी के कमरे छोटे होते हैं तथा उनसे कुछ बड़े नर मक्खी के होते है तथा रानी के लिए बहुत बड़े बड़े होते हैं। रानी व नर के कमरों को मजदूर मक्खियाँ समय समय पर साफ करती है।

व ऊष्णता पर मजदूर मक्खी, अपने पंखों को हिला डुला कर रानी को हवा करके आराम पहुँचती है। रानी मक्खी अण्डे देने के अतिरिक्त कोई कार्य नहीं करती।

मजदूर मक्खी के मुँह मे एक चम्मच के आकार का एक अंग होता है। इसकी सहायता से वह फूलों से तथा अन्य मीठी वस्तुओं से मीठा रस चूस लेती है तथा फिर उसी रात को इसी अंग द्वारा छत्ते में उगल देती है। मजदूर मक्खी बसन्त ऋतु मे अत्यन्त परिश्रम करती है। क्योकि यही समय मधु इकट्ठा करने हेतु उत्तम समय है। कभी कभी अत्यधिक परिश्रम के कारण १०-१५ दिन में अपना जीवन समाप्त कर देती है।

मधु मक्खी का जीवन परिचय

नर मक्खी का रानी मक्खी से एक बार का मिलान, उसको कई वर्षों तक अण्डे देने योग्य बनाये रखता है। नर मक्खी का मुख्य कार्य मिलन करना ही है। मिलन के पश्चात् वह मर जाती है।

रानी मक्खी अण्डे छत्तो मे देती है। यह एक बार २०० से ३०० तक अण्डे देती है। दो तीन दिवस मे अण्डो से एक लार्वा (Larva) निकलता है। इसे मक्खियाँ पचा हुआ तरल पदार्थ, उसके भोजन के लिये देती है। इनको, भोजन देने का विशेष नियम है, जैसे मजदूर लार्वा को शहद, नर लार्वा को पराग, तथा रानी को मकरंद दिया जाता है। लार्वा निकलने के ५-६ दिन बाद उन्हे छत्ते के कोष्टो मे रख दिया जाता है, जिसमें शहद व पराग होता है। फिर यही कुछ दिनो बाद "प्यूपा" मे बदल जाते है। जैसे मजदूर के बच्चे १२ दिन मे प्यूपा मे बदलते है। और नर व रानी के बदलने मे काफी समय लगता है। फिर कुछ समय पश्चात् प्यूपा पूर्ण मधुमक्खी बन जाता है। जब प्यूपा से नई रानी बन जाती है तो पुरानी रानी चली जाती है, या मर जाती है। फिर कुछ समय बाद यह रानी नर के सम्पर्क मे आकर अण्डे देना प्रारम्भ कर देती है।

छत्ते बनाने का स्थान—मधु मक्खी अपने छत्ते किसी भी उचित स्थान पर बनाती हैं। इनके छत्ते, पेड, पर दीवारो पर, खम्बों पर, मकान आदि सभी स्थानों पर पाये जाते है।

प्रश्न १०—मानव के लिए सहायक और हानिकारक कीटाणु कौन २ से है ? इन पर प्रकाश डालिये ।

संसार मे अनेकों प्रकार के कीटाणु पाये जाते हैं । इनमें से कुछ ऐसे है जो मनुष्य को सहायक हैं तथा कुछ हानिकारक है ।

सुविधा की दृष्टि से कीटाणुओं को निम्नलिखित पाँच भागों में बाँटा जाता है :—

१. **विनाशी कीट**—कुछ ऐसे कीट है, जो हमको काट कर हमारा खून चूसते है, इतना ही नहीं खून चूस कर हमारे शरीर में रोग के कीटाणु छोड़ देते हैं। जैसे जूँ, मच्छर, खटमल, पिस्सू आदि । कुछ कीट हमको सताते अधिक है, किन्तु नुकसान नहीं पहुँचाते जैसे बर्रे, पतंगे, चींटियाँ आदि ।

२. **नाशक कीट**:—(अ) कुछ ऐसे कीट हैं जो कि हमारी खेती व फसलों को अल्प समय में चट करके हमको काफी नुकसान पहुंचाते हैं । जैसे; टिड्डीदल

(ब) कुछ कीट जैसे दीमक हमारी पुस्तकें, लकडी के बने सामान, फसलों, पेड पोधो मे लगकर नष्ट कर देते है ।

(स) कुछ कीट हमारे ऊनी, रेशमी कपड़ों को खाकर नष्ट करते हैं ।

(द) कुछ कीट कागज, आटा वस्त्र, फल आदि पर पनपते है । जैसे; झीगुर कोकरोच आदि ।

लाभ दायक कीट

(अ) कुछ कीट हमको काफी लाभ पहुचाते है । जैसे मधु मक्खी से हमको मोम व शहद प्राप्त होता है तथा रेशम के कीड़े से रेशम ।

(ब) कुछ कीड़े वनस्पिति जगत को लाभ दायक है । जैसे पतंगे व मधु-मक्खी से गर्भाधान (Polination) तथा निसेचन (Fertilization) की क्रिया होती है । इसके वनस्पिति जगत तथा हम काफी कृणी है । इनके कारण वन-स्पति जगत के बहुत से पेड़ पोधों का वंश चलता रहता है ।

(स) लाख के कीड़े से लाख बनती है ।

हिंसा जीवी कीट

कुछ ऐसे कीट है जो अन्य जीवित कीटों को खाकर अपना पेट भरते है । इनमे से यह कीट कुछ ऐसे कीटो को जो हमारे लिये तथा हमारी खेती के लिये

नुकसान दायक है खाकर हमारी खेती को लाभ पहुँचाते है। इसके साथ यह कुछ उन कीटों को भी खा जाते है जो हमारे लिये लाभ दायक है।

स्वच्छता में सहायक कीड़े

कुछ ऐसे कीट हैं जो कि हमको सबको सफाई करने मे सहायता करते हैं जैसे कुछ कीट, सड़े गली चीजों पेड़े पोधों या फलों को खा जाते है। भूमि पर फैलने वाली दुर्गन्ध इन कीटों से समाप्त हो जाती है।

प्रश्न १२—प्राथमिक उपचार किसी कहते हैं ? निम्ननिलिखित दुर्घटनाओं में आप क्या-क्या उपचार करेंगे।

प्राथमिक उपचार क्या है—किसी स्थान पर कुछ ऐसी अनेकों घटनाएँ हुआ करती है जहाँ तत्काल डाक्टर नही मिल सकता व रोगी को भी हम अस्पताल तक नहीं ले जा सकते। इस प्रकार की घटनाएँ जैसे, डूब जाना, जल जाना, चोट लग जाना, कपड़ों मे आग लगना, विषैले कीडों द्वारा काटना इत्यादि। ऐसे समय मे हमको शीघ्र ही किसी न किसी प्रकार का इलाज करना चाहिये। इस प्रकार जो मामूली सहायता या मरहम पट्टी करते है। वही प्राथमिक उपचार कहलाते हैं।

उपचार करते समय सावधानियां

१—दुर्घटना होने पर भीड़ इक्ट्ठी न होने देना चाहिये, भीड़ हटाकर रोगी को स्वच्छ हवा लगने देना चाहिये।

२—अगर रोगी को तेज ज्वर हो तो ठण्डे पानी या बरफ को माथे पर रखकर बुखार को उतारना चाहिये।

३—अगर रोगी को सदमा हो तो, उसे गरम खाना देना चाहिये।

४—अगर रोगी को लू लग गई हो तो, फौरन उसे छाये मे पहुँचा दो।

५—चोट लगी हो तो आवश्यकतानुसार कस कर पट्टी बाँध दो।

६—रोगी को स्थानान्तर करते समय कम से कम धक्के लगने देने चाहिये।

७—अगर रोगी को श्वास लेने मे कठिनाई हो तो फौरन ही बनावटी साँस दो।

८—नाक से खून निकल रहा हो तो नाक ऊँची करके बालों में ठन्डा पानी डालकर थपथपाओ।

९—अगर गले मे फन्दा हो तो फौरन फन्दे को काट दो।

१०—अगर किसी व्यक्ति ने जहरीली वस्तु खाली हो तो फौरन कै कराओ।

११—उपचार करते समय धीरज रखना चाहिये।

१२—डाक्टर को फौरन बुलाओ या उसे अस्पताल तक ले जाने का प्रबन्ध करो।

१३—अगर कोई व्यक्ति जल रहा हो तो शीघ्र ही कोई मोटा कम्बल या दरी डाल दो।

१४—अगर कोई मनुष्य डूब रहा हो तो शीघ्र ही उसे निकाल कर उसके शरीर का पानी निकालो।

रक्त स्राव

मनुष्य के शरीर मे रक्त नालिकाओं का जाल सा फैला हुआ है। ताकि रक्त नालिका मे आहत होने से रक्त स्राव होना प्रारम्भ हो जाता है। जब रक्त निकल रहा हो तो निम्न लिखित बातों का ध्यान रखना चाहिये :—

१—जहाँ से खून निकल रहा हो, वहाँ उंगली या गद्दी से दबा कर कस-कर पट्टी बाँध दो।

२—कभी-कभी घाव पर स्प्रिट डालते है या बर्फ रख देते है, जिससे रक्त स्राव बन्द हो जाता है।

३—टूर्निकेट बाँधना चाहिये। १५ मिनट से अधिक टूर्निकेट नही बाँधना चाहिये। कभी-कभी दो पट्टियाँ बाँधने की आवश्यकता है।

४—प्रेशर पॉइन्ट दवाना चाहिये:-जिस धमनी या सिरा के किसी भाग पर से खून निकल रहा हो तो उसके प्रेशर पाइन्ट को दवा देना चाहिये। उसे प्रेशर पॉइन्ट कहते है। उस हिस्से को दबाने से रक्त स्राव बन्द हो जाता है।

कुछ प्रेशर पॉइन्ट के उदाहरण

(अ) हथेली के किसी भाग से खून निकल रहा हो तो कलाई के नीचे वाले भाग को दबाने से खून बन्द हो जाता है।

(ब) बाँह से खून निकलने पर कन्धे व बाँह के बीच की रग को बन्द कर देना चाहिये।

(स) आँख के नीचे चोट लगने पर ठोड़ी के पास की रग को दबा देना चाहिये।

५—अगर रोगी को रक्त की कमी हो तो उसे बर्फ के छोटे-छोटे टुकडे चूसने को देना चाहिये।

६—रक्त निकलने वाले भाग पर पट्टी से बाँध देना चाहिये।

७—रक्त निकलने वाले भाग को लटकने देना नहीं चाहिये।

८—घाव गुनगुने पानी से, पुटेशियम परमेगनेट या फिटकरी के पानी से धोना चाहिये।

९—साधारण घाव पर टिंचर आयोडीन का प्रयोग करना चाहिये।

२—हड्डी का टूटना

कभी-कभी दुर्घटना होने पर हड्डी टूट जाती है या कभी उत्तर जाती है। बाहर से हमको ठीक-ठीक ज्ञान नही हो जाता कि हड्डी टूटी है या नही। कभी-कभी यह भी हो जाता है कि अन्दर ही अन्दर हड्डी अपने स्थान से हट जाय, तो ऐसी चोट को (Simple fracture) साधारण चोट कहते है। परन्तु जब हड्डी टूटने से आस पास की माँस पेशियाँ फट जाँय तो उसे कठिन चोट संयुक्त अस्थि भंग (Compound fracture) कहते है।

हड्डी टूटने की पहिचान

१—टूटा हुआ स्थान कार्य नहीं करता।

२—उस स्थान पर टेढा-पन आ जाता है।

३—कभी-कभी सूजन आ जाती है व काफी दर्द होने लगता है।

४—टूटी दशा मे साधारणतः चाहे जिधर को वह भाग घुमाया जा सकता है।

५—कभी-कभी टूटे स्थान को हिलाने से टूटी हड्डियो की रगड़ सुनाई देती है।

हड्डी टूटने पर सावधानियां व उपचार

१—आहत व्यक्ति को एक स्थान से दूसरे स्थान पर लिटाकर ही ले जाना चाहिये ।

२—उस भाग को साधारणतः पूर्वानुसार ही रखना चाहिये ।

३—उस अंग को प्राकृतिक अवस्था मे लाकर पट्टी बाँध दो । पट्टी के साथ हिलने डुलने को रोकने हेतु खपच्ची पुट्ठे इत्यादि बाँधना चाहिये ।

४—हड्डी टूटने पर उसकी ठीक-ठीक स्थिति ज्ञात करने के लिये X-Ray करवा लेना चाहिये, ताकि उसकी ठीक ठीक स्थिति ज्ञात हो जावे ।

३. झुलसना या जलना

साधारणतया अग्नि से हानि दो प्रकार से होती है । (१) शरीर अग्नि की लपट से झुलस जाता है, (२) शरीर अग्नि से जल जाता है ।

झुलसने की दशा मे शरीर का अंग लाल पड़ जाता है व जलन पड़ती है या पीड़न होती है ।

जलने पर शरीर पर फफोले पड़ जाते है तथा कभी कभी खाल तक निकल आती है ।

जलने पर सावधानियाँ

(१) अगर कपड़ों मे आग लग गई हो तो कभी भी मनुष्य को भागना नही चाहिये, भागने से अग्नि और तीव्रता पकड़ती है ।

(२) जलते हुये मनुष्य पर कोई मोटा वस्त्र, जैसे दरी या कम्बल आदि लपेट देना चाहिये ।

(३) अगर उस स्थान पर कोई अन्य व्यक्ति न हो तो उसे स्वयं जमीन पर लेट जाना चाहिये ।

(४) जले हुये स्थान पर नमक का पानी लगाना चाहिये ताकि छाले न पड सकें ।

(५) छाले पड़ने पर उन्हे फोड़ना नही चाहिये ।

(६) रोगी को गुनगुना दूध पिलाना चाहिये ।

(७) जले स्थान पर नारियल का तेल लगाना चाहिये ।

(८) नारियल का तेल व सरसो का तेल बराबर मात्रा मे मिलाकर उसमे चूने का पानी मिलाकर मलहम बनाकर लगाना चाहिये ।

(९) जब मनुष्य जल रहा हो तो फौरन उसके कपड़े फाड़ देना चाहिए ।

(अ) बिच्छू का काटना

जब किसी व्यक्ति को बिच्छू काट जाय तो हमे निम्न बातो का ध्यान रखना चाहिये ।

(१) काटे हुये स्थान के कुछ ऊपर मजबूत डोरे या पट्टी से बंध बांध देना चाहिये ।

(२) कभी-कभी प्याज भी खिलाना चाहिये ।

(३) काटे स्थान पर शुद्ध चूना और घी बराबर बराबर भाग मे मिलाकर लगाना चाहिये ।

(ब) साँप काटने पर उपचार

(१) साँप के काटे रोगी को सोने देना नही चाहिये । क्योंकि निद्रा की अवस्था मे जहर जल्दी फैल जाता है ।

(२) काटे हुये स्थान पर गर्म लोहा लगा देना चाहिये कभी-कभी इससे जहर जल जाता है ।

(३) जिस जगह पर साँप ने काटा है, उस स्थान से कुछ ऊपर मजबूत रस्सी या पट्टी से बंध बांध देना चाहिये ।

(४) अगर किसी विषैले सर्प ने काटा हो तो तेज चाकू से शीघ्र ही उस हिस्से को काट देना चाहिये । इससे बिषैला खून बाहर निकल जावेगा ।

(५) काटे स्थान पर कभी-कभी पोटेशियम परमैगनेट लगने से भी लाभ होता है ।

"विषेले व विषहीन साँप ही पहिचान व साँप के काटने की पहिचान ।"

साधारणतः सर्प निम्न प्रकार के होते हैं:—

(१) पानी में रहने वाले ।

(२) जमीन पर रहने वाले ।

(३) विषैले और

(४) विषहीन ।

(१) **पानी में रहने वाले सर्प** की पूँछ का अन्तिम भाग चौड़ा होता है। इसका यह भाग चौड़ा इस कारण होता है कि इससे उसे तैरने में सहायता मिलती है। इनका रंग अधिकतर हरा व गहरा होता है।

(२) जमीन पर रहनेवाले सर्प की पूँछ का अन्तिम भाग नुकीला होता है

(३) **विषैला सांप** जब काटता है भिन्न-भिन्न प्रकार के चिन्ह कटे हुये स्थान पर पड़ जाते है। विषैले साँप के काटने पर नीम की पत्ती कड़वी नही लगती व काटे हुये आदमी को नीद आने लगती है। इनमें कोबरा, क्रेट व वाइपर इत्यादि होते है।

(४) **विषहीन** सर्प के काटने पर एक आकार के अनेक चिन्ह शरीर पर हो जाते हैं। अधिकतर विषहीन सर्प का फन ऊपर नही उठता।

प्रश्न १३—वस्त्रों को मानव जीवन में क्या उपयोगिता है। निम्नलिखित वस्त्रों के गुणों पर प्रकाश डालिये।

यह हम सब जानते है कि वस्त्र जीवन मे अत्यन्त आवश्यक है। बिना इनके मनुष्य नहीं रह सकता। वस्त्रो का प्रयोग निम्नलिखित कारणो से होता है।

(१) गरमी या सर्दी के नुकसानदायक प्रभाव से शरीर की रक्षा करने हेतु।

(२) लोक मर्यादा की रक्षा के लिये।

(३) शरीर को सुशोभित करने के लिये।

कपड़े जिन वस्तुओ से बनाये जाते है वे साधारणतः दो वर्गों मे विभाजित की जा सकती है :—

(१) वनस्पति जगत से प्राप्त होने वाली।

(२) प्राणियों से प्राप्त होने वाली।

(१) "वनस्पति जगत से निम्नलिखित मुख्य कपड़े प्राप्त होते है" :—

(१) रुई (२) सन (३) रबर (४) बनावटी रेशम

(२) "प्राणी गत से प्राप्त होने वाले"

(१) समूर (२) चर्म और (३) रेशम।

ऊनी वस्त्र

गुण—(१) इनके मोटे व खुरदुरे होने के कारण। त्वचा मे अधिक रगड़ने से खून का प्रवाह अधिक होता है व तन्दुरुस्ती भी अच्छी रहती है।

(२) यह ताप का कुचालक होने के कारण शीतकाल मे अधिक लाभ दायक है।

(३) बिना गीले हुये यह आर्द्रता को सोख लेते हैं।

अवगुण—(१) धोने से ये सिकुड़ जाते है (२) दुगन्ध व धूल का प्रभाव इन पर अधिक होता है।

(३) इनको सावधानी से न रखने पर कीड़ा शीघ्र लगता है।

रेशम के वस्त्र

रेशम दो प्रकार का होता है (१) प्राकृतिक और (२) कृत्रिम।

(१) **प्राकृतिक**—यह एक प्रकार के कीड़े द्वारा बनता है, जिन्हे रेशम के कीड़े कहते है।

गुण—(१) धुलने पर कम सिकुड़ता है।

(२) अत्यन्त हल्के, नरम व चिकने होते हे।

(३) गरमी के कुचालक होने के कारण शर र को गरम रखते है।

अवगुण—(१) यह मँहगा होता है तथा धोना व रंगना भी खर्चीला होता है।

(२) असावधानी से कीड़े शीघ्र लगजाते है।

कृत्रिम रेशम—इस प्रकार का रेशम लकड़ी के गूदे व रुई की रसायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त होता है। यह मँहगा कम होता है व पसीना सोखने की शक्ति कम होती है। इसमे सूर्य की किरणें पास होकर त्वचा तक पहुँच जाती है।

कपास के कपड़े

कपास के सूती कपड़े अत्यधिक प्रचलित है ये कपडे सभी वर्ग के लोग पहिन सकते है।

गुण—(१) यह सस्ता हल्का व टिकाऊ होता है।

(२) यह सुगमतापूर्वक साफ किया जा सकता है।

(३) धोने से अधिक नहीं सिकुड़ते।

अवगुण—(१) ताप के सुचालक होने के कारण शरीर की गर्मी निकाल देते हैं।

(२) इसके कपड़ों में शीघ्र की बदबू आने लगती है।

(३) ये आद्रता आदि को भी नहीं सोख सकते।

ग्रीष्म ऋतु में कपड़े—ग्रीष्म ऋतु मे कपड़े इस प्रकार के पहिनने चाहिये जो शरीर के ताप को बाहर निकलने दें, पसीने को सोख लें, वायु को त्वचा तक पहुँचने मे सहायक हो। अतः इस ऋतुओ मे रुई, नाइलोन नकली रेशम आदि के कपड़े पहिनने चाहिए।

शीत ऋतु में—इस ऋतु मे ऐसे कपड़े पहिनने चाहिये जो ताप के कुचालक हो। शरीर की गरमी बाहर नही निकलने दें। अतः ऊनी, रेशमी या समूर के वस्त्र पहिनने चाहिये।

वर्षा में—ग्रीष्म काल की भाँति ही कपड़े पहिनने चाहिये।

प्रश्न १४—इमारत बनाने के लिए किस-किस सामग्री की आवश्यकता पड़ती है।

इमारत बनाने के हेतु निम्नलिखित सामग्री की आवश्यकता पड़ती है :—

(१) पकी हुई ईंट (२) पत्थर (३) चूना (४) सीमेन्ट (५) काक्रीट (६) खपरे (७) लकड़ी (८) काँच और (९) लोहा।

(१) पक्की ईंट बनाने की विधि

ईंटों के प्रकार—तीन प्रकार की मानी गई है।

(१) सर्वश्रेष्ठ ईंट जिसका गहरा लाल रंग हो, पटकने से साफ ध्वनि हो, व नाखून से खरोंची न जा सके। इसका आकार ९″×४½″ और २¾″ रहता है।

(२) दूसरे प्रकार की ईंट मध्यम कहलाती है। इसके आकार में समानता नही होती।

(३) यह नीची कोटि की ईंट होती है। इसका रंग पीला, कम पकी,

तथा पटकने से ध्वनि खराब निकलती है। व अधिक समय रखने पर शीघ्र टूट जाती है। इसके अतिरिक्त इस कोटि की ईंट, पानी अधिक सोखती है।

विभिन्न प्रकार की ईंट—ईंटों की बनाने की विधि के आधार पर चार भाग किये गये है।

(१) ग्लेण्ड ब्रिक्स (२) फ्रायर ब्रिक्स (३) काक्रीट ब्रिक्स (४) मणीन मोल्डे ब्रिक्स।

अच्छी ईंट के गुण—

(१) रंग गहरा लाल होता है। (२) आकार एकसा आयताकार होता है।

(३) टकराने पर कभी नहीं टूटती है। (४) ईंटों के टकराने पर खन्न की आवाज होती है।.

(५) नाखून से खरोचने पर निशान नहीं पड़ता।

(६) पानी अधिक नही सोखती।

(२) **पत्थर**—इमारत बनाने में निम्नलिखित पत्थर उपयोग किये जाते है –ग्रेनाइट, स्लेट, रेत का पत्थर, चूने का पत्थर और संगमरमर। इनमें ग्रेनाइट सबसे मजबूत माना गया है।

(३) **चूना**—चूने के पत्थरो को भट्टों मे गर्म कर तैयार करते है।

चूना बनाने की विधि—चूने का भट्टा त्रिकोणाकार होता है। जिसकी ऊंचाई १० से १२ फुट होगी इसको ३ फुट की तहो मे रखते है।

चूने का उपयोग—

(४) **सीमेंट**—सीमेंट चार प्रकार का होता है :—

१—हरे रंग का सीमेट २—कृत्रिम सीमेट ३—सफेद सीमेंट ४—जल्दी गाढ़ा होने वाला सीमेट।

सीमेंट का उपयोग—

सीमेंट का प्रयोग करते समय सावधानियां—मसाला बनाने के बाद ही प्रयोग करना चाहिये उसे अधिक समय तक खुला नहीं छोड़ना चाहिये पानी से तर रखना चाहिये।

मसाले के प्रकार—रेत सीमेट व चूने का अनुमान निम्न प्रकार होगा :—

चूने का मसाला:—(१) अच्छे काम के लिये १ – भाग चूना १—भाग रेत ।
(२) साधारण— १—भाग चूना २—भाग रेत ।
सीमेंट (१) अच्छे··· १–भाग सीमेंट २ भाग रेत ।
(२) साधारण— १— ,, ,, ४–भाग रेत ।

(५) **कांक्रीट**—सीमेंट, चूना और रेत को मिलकर कांक्रीट का मिश्रण बनाया जाता है । इसमे १ भाग सीमेंट २ भाग रेत व ४ भाग मिट्टी रहती है ।

उपयोग—

(६) **खपरे**—इन्हे अंग्रेजी मे टाइल्स कहते हैं । खपरे चार प्रकार के होते है—

(१) चीनी मिट्टी के (२) साधारण मिट्टी के (३) सीमेंट के और (४) भोजक खपरे ।

खपरे बनाने की विधियां—

१—**साधारण मिट्टी के**—इनका निर्माण कुम्हार उसी प्रकार करता है जिस प्रकार की ईंट बनाई जाती है । इन्हे ईंटो की भाँति अधिक नही सुखाना चाहिये ।

२—**चीनी मिट्टी के**—सर्व प्रथम चीनी मिट्टी पीसकर टंकी मे डालते है, फिर उसमे पानी भर देते है । इस प्रकार घोल तैयार किया जाता है । जब बारीक मिट्टी बैठ जावे तो मिट्टी डाल देते है । तात्पश्चात् पानी सुखाकर साँचो के द्वारा खपरे बनाये जाते है ।

३—**सीमेंट के खपरे**— सीमेन्ट के खपरे बनाने के लिए लोहे और सागोन के साँचे काम में आते है साँचो के अन्दर तेल का प्रयोग करते है ताकि सीमेन्ट चिपक न सके ।

४—**मोजक के खपरे**—इन खपरो मे वेल बूटे कढ़े रहते है । इनके साँचे मे बेल बूटे होते है । जिनमे विभिन्न रंगों का प्रयोग करते है । ये अधिक मंहगे होते है ।

७—**काँच**—काँच बनाने मे निम्न वस्तुओ की आवश्यकता होती है :—
(१) सिलिका (२) चूना (३) पोटाश (४) सोड़ा (५) रेत । इनके अतिरिक्त थूकनट, किलेनट, मेकनोशीयम आकसाइड, कापर आक्साइड आदि भी मिलते है ।

८—**लकड़ी**—इमारती लकड़ी निम्नलिखित है। सागोन शीशम फर, पाइन, बबूल, साज, खेर आदि। इनमे सागौन व शीशम की लकड़ी सबसे मजबूत होती है।

प्रयोग—

९—**लोहा**—लोहा दो प्रकार का होता है।

१—कच्चा लोहा २—फौलाद, स्टील पक्का लोहा।

प्रश्न १५— **आप हृदय तथा फेफड़े से क्या समझते हो? इनके विभिन्न अंगों का विस्तृत विवरण दीजिये ?**

हृदय—हृदय लचीले मास तन्तुओं से बना हुआ पोला अंग है, जो रक्त को पूरे शरीर मे प्रवाह करने में सहायता प्रदान करता है। इसकी तुलना पानी के पम्प से की जा सकती है। जिस प्रकार नगर में पानी का वितरण एक पम्प द्वारा किया जाता है, उसी प्रकार हृदय द्वारा सम्पूर्ण शरीर में रक्त पहुचाया जाता है।

स्थिति—यह वक्षस्थल के खोखले भाग में बाईं ओर तीसरी व छटी पसली के बीच में स्थित है। इसका चौड़ा भाग ऊपर को तथा नुकीला भाग नीचे की ओर है, वह बाईं ओर झुका रहता है।

बनावट—हृदय का आकार मनुष्य की बन्द मुट्ठी के समान होता है। इसकी लम्बाई ५ इंच व चोड़ाई ३॥ इन्च और मोटाई २½ इन्च होती है। यह चारो ओर से दोहरा थैला के आवरण म ढका रहता है। थैलो की दोनो दीवालो के बीच तल के समान चिकना पदार्थ होता है जिससे हृदय भली-भाँति सिकुड़ता आर फैलता रहता है। स्वास्थ मनुष्य का हृदय १ मिनट मे ७०-८० वारधड़कता है। बच्च की धड़कन १२० बार व वृद्ध की ८० बार होती है। इसका भार १० से १२ ओस तक हाता है।

हृदय के भाग—हृदय माँस पेशयो की खड़ी दीवाल के द्वारा दो भागो में विभक्त रहता है। यह दीवाल हृदय के बायें भाग के रक्त को दायी ओर, और दायें भाग के रक्त को बायी ओर नही आने देता। दायें भाग मे अशुद्ध रक्त तथा दाये भाग में शुद्ध रक्त संचित रहता है। इन दोनो भागो के बीच मे एक एक आड़ा पर्दा होता। इस प्रकार हृदय के कुल चार भाग है। बायें तथा

दायें भाग के ऊपरी हिस्से को (आलिन्द) ग्रहक कोष्ठ (auricle) तथा नीचे के भाग को क्षेपक कोष्ठ या प्रवेशम (ventricle) कहते हैं। क्षेपक कोष्ठ या प्रवेशम ग्राहक कोष्ठ, आलिन्द से बड़ा होता है। हृदय के चार भाग निम्न प्रकार है—

(Right Auricle)	(Right Ventricle)
१—दाहिना ग्राहक कोष्ठ	२—दाहिना क्षेपक कोष्ठ
३—बायां ग्राहक कोष्ठ	४—बायां क्षेपक कोष्ठ
Left Auricle	Left Ventricle

प्रवेशम (Ventricle)—दाये प्रवेशम से एक धमनी निकल कर फेफड़ो मे जाती है तथा बायें प्रवेशम से दूसरी बड़ी धमकी निकल कर शरीर के सम्पूर्ण अंगो मे रक्त पहुँचाती है।

आलिन्द्र Auricle:—प्रत्येक आलिन्द अपनी ओर के प्रवेशम से मिला रहता है जिसे आलिन्द प्रवेशम द्वार Auriculo Ventricular Apertue कहते है। दोनो ओर के इन द्वारो पर एक एक कपाट Valve लगा रहता है। ये वाल्व आलिन्द से रक्त को प्रवेशम में जाने देत है। परन्तु प्रवेशम से रक्त को पुनः वापिस नही आने देते। इन बाल्वो की तुलना चूहे दानी तथा साइकिल के बाल्व से कर सकते है। क्योकि चूहे दानी से कपाट के बाद चूहा अन्दर आ सकता है किन्तु वह बाहर पुनः नही आ सकता। इसी प्रकार ट्यूब में हवा वाल्व के द्वारा भीतर जा सकती है किन्तु बाल्व मे होकर बाहर नही निकल सकती।

कार्य—आलिन्द (Auricles) का कार्य रक्त को ग्रहण करना है और प्रवेशम का रक्त को हृदय से बाहर निकालना है। प्रवेशम आलिन्द की अपेक्षा बड़े होते है। प्रवेशम मे लगभग १$\frac{1}{4}$ छ० से १$\frac{1}{2}$ छ० तक रक्त आता है।

शरीर का सम्पूर्ण अशुद्ध रक्त दाहिने आलिन्द (Auricles) मे प्रवेश करता है। जब इसमे सिकुड़न होती है तो अशुद्ध रक्त दाहिने प्रवेशम मे पहुंच जाता है और फिर सिकुड़न होने पर फेफड़े की 'धमनियो' के द्वारा अशुद्ध रक्त फेफड़ों मे पहुंच जाता है। जहाँ वह शुद्ध होकर बायें (Auricle) मे फेफड़े की शिराओं

के द्वारा आ जाता है। जब आलिन्द सिकुडता है, तब शुद्ध रक्त वायें (ventricle) प्रवेशम मे आ जाता है। फिर प्रवेशम के सिकुड़ने पर शुद्ध रक्त महाधमनी (Aorta) में होकर छोटी-छोटो धमनियों के द्वारा शरीर के अंग प्रत्यंग में पहुंचता रहता है फिर यह रक्त अशुद्ध होने पर शिराओ द्वारा दायें आलिन्द मे पहुचता है। इस प्रकार सदैव रक्त का परिभ्रमण चलता रहता है।

हृदय की धड़कन—हृदय बराबर धड़कता रहता है। यह एक पम्प की भाँति कार्य करता है। यह प्रत्येक धड़कन मे ४½ ओस रक्त पम्प करता है इस प्रकार यह २४ घण्टा में २ हजार गेलन रक्त पम्प कर देता है। पहिले दोनो आलिन्द एक साथ सिकुड़ते है और फिर शीघ्र ही प्रवेशम सिकुड़ते है। फिर कुछ समय पश्चात दोनो ही फैलने लगते है।

हृदय के कार्य—(१) शरीर के अशुद्ध रक्त को शुद्ध कर फेफडो में भेजना।

(२) फेफड़ों के शुद्ध रक्त को सम्पूर्ण शरीर में प्रवाहित करना।

(३) विभिन्न अंगो मे आवश्यकतानुसार रक्त को भेज कर कार्य करने योग्य बनाना।

फेफड़े (Lungs)

फेफडे श्वासोच्छवास संस्थान के महत्वपूर्ण अवयव है। फेफडे हमारे बक्षस्थल के दोनो ओर स्थिति है। फेफडे सीने की हड्डी, रीढ की हड्डी तथा वृक्षस्थोदर के मध्यस्थ सुरक्षित रहते है। इनका रंग उम्र के अनुसार बदलता रहता है। जन्म लेने से पूर्व इनका रंग लाल, नवजात शिशु का गुलाबी होता है तथा उम्र के अनुसार रंग मे परिवर्तन होते होते अन्त मे नीलापन लिए भूरा हो जाता है।

बनावट—दायां फेफड़ा बायें की अपेक्षा कुछ चौड़ा एवं भारी होता है, ये स्पंज की भाँति होते है प्रत्येक फेफड़ा झिल्ली से ढका रहता है इसे फुफ्सावरण कहते है। फुफ्सावरण के बीच वाले स्थान को फुफ्फुसीया वरणीय गति (Plural Cavity) कहते हैं। फेफड़े चिकने और चमकीले होते है इनका आकार कुछ तिकोना होता है।

फेफड़े के भाग—बायो फेफड़ा दो टुकड़ियो मे तथा दाया तीन टुकड़ो म

विभक्त रहता हैं जिन्हे वायु कोष (Air cells) या (Alvcot) कहते है। फेफडों मे इन वायु कोषो की संख्या चालीस करोड के लगभग होती है। इन वायु कोषो मे छोटी २ खून की नलियाँ होती है। जिनमे अशुद्ध रक्त भरा रहता है। जो मनुष्य के साँस लेने से शुद्ध होता रहता है।

श्वांस क्रिया—मनुष्य एक बार मे श्वास के द्वारा ३० घन इंच वायु फेफड़ो मे पहुचाता है और इतनी ही बाहर निकालता है। जोर से साँस लेने पर १३० घन इंच वायु फेफड़ों में जाती है और बाहर निकलती है।

फेफड़ों के कार्य—

(१) शरीर के अशुद्ध रक्त को शुद्ध करना।

(२) आक्सीजन ग्रहण करना तथा कार्बन डायआक्साइड छोड़ना।

प्रश्न १६—निम्नलिखित गैसों पर प्रकाश डालकर उनको प्रयोगशाला में बनाने की विधि का वर्णन करो ?

आक्सीजन (O_2)

इतिहास—सर्वप्रथम आक्सीजन का पता जोसेफ प्रीस्टले ने पारे के लाल आक्साइड को गर्म करके लगाया। तत्पाश्चात स्वीडन के रसायनज्ञ शीले ने सल्फ्यूरिक एसिड और मेगनीज डाइआक्साइड को गर्म करके आक्सीजन का पता लगाया।

मिलने का स्थान—वायुमण्डल मे आक्सीजन सबसे अधिक पाई जाती है स्वतन्त्र अवस्था में यह हवा के आयतन में लगभग चौगुनी नाइट्रोजन में मिली हुई पाई जाती है। संयोगिक अवस्था में पानी में ८९% पाई जाती है। आक्सीजन समस्त प्राणियों के लिये अत्यावश्यक है। अगर मनुष्य को आक्सीजन नहीं मिले तो वह जीवित नहीं रह सकता।

प्रयोगशाला में आक्सीजन बनाने की विधि—

प्रयोगशाला में आक्सीजन पोटेशियम क्लोरेट और उसका चौथाई भाग मेंगनीज डायआक्साइड दोनो का बारीक पिसा हुआ मिश्रण गर्म करके बनाई जाती है।

प्रयोग—कुछ पोटेशियम क्लोरेट और उसके भार का $\frac{1}{4}$ भाग मेंगनीज डायआक्साइड बारीक पीसो, कुछ मिश्रण ताँबें या कडी काँच की नली में लो, जिसका एक सिरा बन्द हो और दूसरे में कार्क लगा हो। कार्क में निकास

नली लगी हो जो नाँद में भरे पानी में डूबी हो। नली को शिकजे में कस दो निकास नली के दूसरे सिरे पर तिपाई रखकर उसके ऊपर काफी पानी डाल दो। कुछ गैस जार पानी से भरकर नांद में उल्टे रखदो। इनमें से एक जार को तिपाई पर रखदो।

मिश्रण को सावधानी से बराबर एक सा ताप पहुँचाकर गर्म करो। थोडी देर बाद गैस निकलने लगेंगी। जब जार आक्सीजन से भर जाय तो उसे अलग नाद में रखदो। इस प्रकार लगभग ६ जार गैस से भरो।

भौतिक गुण—

आक्सीजन रंग रहित, गन्धहीन और स्वाद रहित गैस है। यह हवा से भारी है व पानी में घुलनशील है।

रसायनिक गुण—

(१) "यह लकड़ी के टुकडे व कोयले को जलने में सहायता देती है।" अगर आक्सीजन के जार में लकडी का जलता हुआ टुकडा या कोयला ले जाया जाय तो वे दोनों और तेजी से जलने लगेंगे।

(२) यह पानी में घुलने पर नीले लिटमस को लाल कर देती है।

उपयोग—आक्सीजन जलने के लिय आवश्यक है। इसके बिना कोई वस्तु नही जल सकती। यह दम घुटने पर, साँस पहुँचाने के काम में आती है। इसके अतिरिक्त इसका प्रयोग कारखाने में तथा पहाड पर चढ़ने वाले करते हैं।

नाइट्रोजन Nitrogen (N_2)

प्रश्न १७—**नाइट्रोजन गैस के बारे में क्या जानते हो ?**

इतिहास—सर्वप्रथम १७७२ ई० में ऐडमवर्ग के प्रोफेसर रुथरफोर्ड ने नाईट्रोजन का पता लगाया। इसके बाद लेबोजियर ने इसका पता लगाया और इसका नाम ऐजोट (azote) बेजानदार रक्खा। क्योकि इसमें कोई जानवर जीवित नहीं रह सकता।

मिलने का स्थान—स्वतन्त्र अवस्था में हवा के आयतन ७९% नाइट्रोजन है। संयोजिक अवस्था में यह प्राणी और वनस्पति वर्ग के अनेकों पदार्थो मे पाई जाती है।

प्रयोगशाला नाइट्रोजन बनाने की विधि—

प्रयोगशाला में नाइट्रोजन ऐमोनियम नाइट्रेट का घोल गर्म करके बनाई जाती है।

प्रयोग—लगभग १५ ग्राम सोडियम नाइट्राइट और १० ग्राम एमोनियम क्लोराइड एक छोटे फ्लास्क में लेकर फ्लास्क में करीब १०० cc. पानी डालो। फ्लास्क में एक कार्क लगाओ, जिसमें एक निकास नली लगी हो, और निकास नलो का दूसरा सिरा पानी भरी हुई नाँद में हो। फ्लास्क को गर्म करो। नाइट्रोजन निकलने लगेगी। इसे पानी हटाव की रीति से जमा करो।

गुण—नाइट्रोजन रंगहीन, गंधहीन और स्वाद रहित गैस है। यह पानी मे बहुत कम घुलनशीज है। यह हवा से कुछ हल्की होती है। यह जहरीली नहीं होती मगर जानवरों को जीने नही देती क्योकि आक्सीजन इसमे न होने के कारण जानवर जीवित नही रहता। यह गैस जलने में सहायता नही देती।

कार्बन डाइआक्साइड Co_2

प्रश्न १८—**कार्बन डाइआक्साइड गैस का संक्षिप्त परिचय दीजिये।**

इतिहास—१७ वी शताब्दी मे वान हैलमोन्ट ने कार्बन डाइआक्साइड की खोल लकडी जलाकर और घोंघों (shells) पर तेजाब की क्रिया करके की थी। किन्तु इसकी खोज को रसायज्ञ भूल गये। तत्पश्चात् जोसेफ ब्लेक ने कार्बन डायआक्साइड की दुबारा खोज की और उसका नाम "स्थिर हवा" रखा।

मिलने का स्थान—कार्बन डायआक्साइड प्रकृति मे चारो ओर फैली हुई है। यह वायुमण्डल मे भी है और मिट्टी मे भी है। इस की उपस्थिति के कारण ही स्त्रोतों के पानी का स्वाद मीठा होता है। ज्वालामुखी के प्रस्फुटन के समय यह गैस भी निकली है। संयोजिक अवस्था मे यह लवणों के रूप में जिन्हें कार्बोनेट कहते है, पाई जाती है।

बनाने की विधि—जब कार्बन अधिक मात्रा मे हवा या आक्सीजन मे जलाया जाता है तो कार्बन डायआक्साइड बनती है।

प्रयोग शाला में बनाने की विधि—प्रयोगशाला मे कार्बन डाआक्साइड संगमरमर या चूने के पत्थर पर हल्के हाइड्रोक्लोरिक ऐसिड की क्रिया से बनाई जाती है।

प्रयोग—बुल्फ बोतल में थोड़े संगमरमर या चूने के पत्थर के टुकड़े डालो और बुल्फ बोतल का मुँह एक कार्क से बन्द करदो जिसमें थिसिल फनल लगी हो, थिसिल फनल का दूसरा सिरा बोतल की पेंदी तक पहुँचना चाहिए। दूसरे मुँह मे एक कार्क लगाओ, जिसमे एक निकास नली लगाओ। निकास नली लगी कीप मे से इतना पानी डालो कि टुकडे ढक जावें और थिसिल कीप का सिरा पानी मे डूब जाय।

थिसिल कीप मे से तेज डाइड्रोक्लोरिक ऐसिड डालो। बडे जोर से क्रिया होने लगेगी और कार्बन डायआक्साइड गैस निकलने लगेगी। गैस के चार जार भरलो, यह देखने के लिए कि जार गैस से भरा है या नही, जार के मुँह के पास माचिस की काडी जलाओ। यदि जार गैस से भर गया है तो काड़ी बुझ जावेगी।

भौतिक गुण—कार्बन डाइआक्साइड रंगहीन गैस है। इसका कुछ तेजाब की तरह का स्वाद और गंध है। यह हवा से डेढ गुनी भारी है और पानी मे काफी घुलनशील है। कार्बन डायआक्साइड का घोल नीले लिटमस को लाल कर देता है।

रसायनिक गुण—

(१) यह न स्वयं जलती है न जलने मे सहायता करती है। अगर जलती हुई बत्ती गैस जार मे डालोगे तो वह बुझ जावेगी।

(२) गैस के जार म मेकनेशियम का टुकड़ा डालने से जलता रहेगा और कार्बन के छोटे-छोटे टुकड़े और सफेद चूनी बच रहेगा।

(३) गैस को चूने के पानी मे भेजने पर वह दूधिया हो जावेगा।

उपयोग—यह आग बुझाने के काम आती है, सोडा वाटर इत्यादि भी बनाने के काम आती है।

प्रश्न १९—प्रयोग द्वारा सिद्ध कीजिए कि पौधे सूर्य की रोशनी में कार्बन आक्साइड लेते हैं। और आक्सीजन छोड़ते हैं।

उत्तर—यह पूर्व में ही बताया जा चुका है कि समस्त मानव व प्राणी मात्र साँस द्वारा कार्बन डायआवसाइड छोड़ते है और आक्सीजन ग्रहण करते है। इसके अतिरिक्त जब लकड़ी जलती है या कोई पदार्थ सड़ता है तो कार्बन डायआक्साइड

गैस निकलती है। इस प्रकार वायुमण्डल की इस कार्बन डायआक्साइड को पेड पौधे ग्रहण कर लेते है और आक्सीजन छोड़ देते हैं। इस प्रकार वायुमण्डल में पेड़ों के कारण कार्बन डायआक्साइड की मात्रा अधिक नहीं होने पाती और आक्सीजन भी उचित अनुपात मे पेडों से ही प्राप्त होती रहती है। यह ध्यान रखना चाहिए कि पौधे केवल सूर्य की रोशनी में ही वायुमण्डल को शुद्ध करते है और रात्रि में पौधे और जानवर दोनों ही वायुमण्डल को गन्दा करते हैं। इसी कारण सोने के कमरे में रात्रि के समय कोई पौधा नहीं होना चाहिए।

प्रयोग द्वारा सिद्ध करना—एक बीकर में हरे पत्ते रखकर उसमें ऐसा पानी भरदो जिसमें कार्बन डायआक्साइड धुली हो। पत्तियों को कीप से ढक दो और कीप की नली पर ऐसे पानी से भरी परख नली, जिसमें कार्बन डाय-आक्साइड भेजी जा चुकी है, उल्टा दो।

बीकर को धूप में रखदो। कुछ समय बाद गैस के बुलबुले उठकर परख नली के ऊपरी भाग में इकट्ठा होने लगेंगे एक सुलगती हुई लकड़ी से गैस को परीक्षा करो। तुम देखोगे यह आक्सीजन है। इससे सिद्ध होता है कि परख नली व बीकर मे उपस्थिति कार्बन डायआक्साइड पत्तियो द्वारा सोख ली गई और आक्सीजन छोड दी गई है। इस प्रयोग मे हम कह सकते है कि सूर्य के प्रकाश मे पौधे कार्बन डायआक्साईड ग्रहण करते हैं और आक्सीजन को छोड़ते है।

१. सूर्य

सम्पूर्ण सौर मण्डल का केन्द्र सूर्य है। हमारे आस-पास की सभी शक्तियों का मूल सूर्य है इसकी आकर्षण शक्ति के कारण ही सौर संसार निरन्तर चक्कर लगाते हुये इसकी परिक्रमा करते हैं। अगर सूर्य न हो तो यह सौर मंडल गिर-कर नष्ट हो जाय। अत: सूर्य समस्त सौर मण्डल को शक्ति देने वाला स्रोत है।

यह पृथ्वी से आयतन, भार मे अधिक बड़ा है। इसका व्यास पृथ्वी से १०२ गुना, आयतन १२ लाख गुना व भार लगभग पृथ्वी से ३ लाख गुना अधिक है। यह भी अपनी धुरी पर चक्कर लगाता है जिसमें सूर्य के एक चक्कर लगाने मे लगभग २५½ दिन लगते है।

सूर्य का तापक्रम ६००० सेन्ट्रीग्रेड है। सूर्य का प्रकाश पृथ्वी तक आने मे ८ मिनट लगते है। यह हमारी पृथ्वी से सवा नौ करोड़ मील दूर प्रचण्ड आग का पिण्ड है। पृथ्वी १ वर्ष मे सूर्य का पूर्ण चक्कर लगा लेती है। दूरवीन की सहायता से कभी-कभी हम सूर्य मे प्रचण्ड तूफान देख सकते है जो कई मील ऊपर तक लौ के रूप में दिखाई देते हैं।

(२) **चन्द्र**—चन्द्रमा पृथ्वी का एक उपग्रह है जो करोड़ों वर्षों पूर्व जब पृथ्वी पिघली हुई अवस्था मे थी, तब पृथ्वी से एक भाग छिटक कर अलग हो गया, वही चन्द्रमा के रूप है। यह पृथ्वी का ही भाग होने के कारण निरन्तर पृथ्वी के चारो ओर परिक्रमा किया करता है चन्द्रमा का चक्कर पृथ्वी के चारो ओर लगभग २७ दिन ८½ घण्टा मे पूर्ण हो जाता है।

चन्द्रमा का वायुमण्डल ऐसा है कि वहाँ प्राणी क्षण भर भी जीवित नही रह सकता। दूरदर्शी यन्त्र से देखने पर पता लगा है कि इसमे बडे बडे गढ्ढे और पर्वत है। यह पृथ्वी से लगभग २ लाख ३९ हजार मील दूर है। इसका व्यास पृथ्वी के व्यास से $\frac{१}{४}$ है। यह वास्तव मे स्वतः प्रकाशित नही है, वरन् पृथ्वी की गति सूर्य से प्रकाश पाकर चमकता है। इससे पृथ्वी तक प्रकाश आने मे १¼ से० लगते हैं।

(३) **चन्द्र कलाये**—

चन्द्रमा गोलाकार है इस कारण उसका अर्ध भाग प्रकाशित और अर्ध भाग अंधकारमय रहता है। वह एक माह मे एक बार पृथ्वी का परिभ्रमण पूरा करता है। इस परिभ्रमण मे उसकी परिस्थितियाँ बदलती रहती है। इसीलिए उसका प्रकाशित भाग कम या अधिक मात्रा मे भिन्न भिन्न स्थानो से भिन्न भिन्न रूप मे दिखाई देता है। इन्हे ही चंद्रमा की कलायें कहते है। साराश यह है कि चन्द्रमा का १।१५ वाँ भाग नित्य अमावस्या के बाद बढ़ता है तथा पूर्णिमा की रात्रि के बाद भी १।१५ मान घटता रहता है। इन्ही को चंद्र की कलाओ के नाम से पुकारते हैं।

(४) **सूर्य ग्रहण और चन्द्र ग्रहण**—

कभी कभी चंद्र और पृथ्वी परिक्रमा लगाते लगाते ऐसी अवस्था आती है कि जब चन्द्रमा सूर्य और पृथ्वी के बीच मे आ जाता है। जिससे चंद्रमा सूर्य के

प्रकाश को रोक लेता है और पृथ्वी के कुछ भाग पर सूर्य का प्रकाश नही पहुंच पाता है। पृथ्वी के इस भाग के लोगों को सूर्य उस समय दिखलाई नही पडता है। यही अवस्था सूर्य ग्रहण कहलाती है। सूर्य ग्रहण केवल अमावस्या के दिन ही पड़ता है। सूर्य ग्रहण दो प्रकार का होता है (१) आंशिक (२) पूर्ण। सूर्य ग्रहण वर्ष मे २ से ७ तक होता है।

जब सूर्य और चंद्र के बीच में पृथ्बी आ जाती है। तब पृथ्वी की छाया चन्द्रमा को कुछ समय के लिए ढक लेती है, जिससे चन्द्रग्रहण पड़ जाता है। चंद्र ग्रहण पूर्णिमा के दिन ही होता है। चंद्रग्रहण भी दो प्रकार का होता है (१) आंशिक ग्रहण (२) पूर्ण चंद्र ग्रहण।

(५) सौर जगत—

समस्त ग्रह, उपग्रह, तारे, पुच्छल तारे, सूर्य आदि सभी मिलकर सौर जगत या सौर मण्डल की रचना करते है। सौर मण्डल की उत्पत्ति के विषय में कोई भी प्रमाणित रूप से मत नही है। किन्तु विभिन्न वैज्ञानिकों ने अपनी अपनी विचारधाराओ के अनुसार पृथक-पृथक सिद्धान्त स्वयं बनाये है।

समस्त सौर मण्डल का केन्द्र सूर्य है। रात्रि को ध्यान से देखने पर आकाश मे दो प्रकार के तारे दिखाई पड़ते है।

(१) जो झिलमिलाते है (२) वे जो सदैव एक ही प्रकार के प्रकाश से चमकते है।

(१) जो तारे झिलमिलाते है, वे सूर्य के समान है। किन्तु ये चमकते हैं पृथ्वी से अधिक दूर होने के कारण हमको छोटे दिखाई पड़ते है।

(२) दूसरे प्रकार के तारे ग्रह कहलाते हैं, जो सूर्य के ही आस पास चक्कर लगाते रहते है। सूर्य के निम्न लिखित ९ ग्रह है।

(१) **बुद्ध**—यह ३ करोड़ ६० लाख मील दूर है, इसको सूर्य की पूरी परिक्रमा लगाते समय ८८ दिन लगते है। यह सूर्य के सबसे निकट है।

(२) **शुक्र**—यह सूर्य से ६ करोड़ ७० लाख मील दूरी पर है, इसको परिक्रमा लगाते समय लगभग २२५ दिन लगते है।

(३) **पृथ्वी**—यह ९ करोड़ १५ लाख मील दूर है इसको पूर्ण परिक्रमा लगाने मे ३६५ दिन लगते हैं।

मंगल:—यह १४ करोड १५ लाख मील दूर है। इसे परिक्रमा लगाने मे ६८७ दिन लग जाते है, वैज्ञानिको का मत है कि इस ग्रह पर पृथ्वी के समान ही वनस्पति जीवजन्तु आदि सब कुछ विद्यमान है। उसका ऐसा विश्वास है कि लगभग १०० वर्ष के पश्चात् के इस संसार के लोग शायद इस ग्रह तक पहुँचने में सफल हो जावेंगे।

(५) **वृहस्पति:**—यह ४८ करोड़ ३० लाख मील दूर है। सूर्य की परिक्रमा लगाने में इसे लगभग १२ वर्ष लग जाते हैं। इसकी चमक शुक्र से कम है। यह ग्रह इतना बडा है कि १००० पृथ्वी इसमे समा सकती है।

(६) **शक्ति:**—यह ८८ करोड ६० लाख मील दूर है। इसको परिक्रमा करने मे ३० वर्ष लग जाते है।

(७) **यूरेनस या वारूणि:**—यह १ अरब ७८ करोड २० लाख मील दूर है इसे परिक्रमा करने मे ८४ वर्ष लग जाते है।

(८) **नेपच्यून या वरुण:**—यह २ अरब ७९ करोड ३५ लाख मील दूर है इसे परिक्रमा करने में १६५ बर्ष लग जाते हैं।

(९) **प्लूटो या यम:** यह ३६७०० लाख मील दूर है। यह सूर्य से सबसे अधिक दूर है। ईसको परिक्रमा करने में लगभग २५० वर्ष लग जाते है।

उपरोक्त ग्रह सूर्य के प्रकाश से ही चमकते है। ये सदैव सूर्य का चक्कर लगाते रहते है। अगर हम किसी ग्रह पर पहुंच कर अपनी पृथ्वी को देखें तो यह भी तारों के समान ही छोटी दिखलाई देगी। जो ग्रह पृथ्वी और सूर्य के बीच में चक्कर लगाते है वे भीतरी ग्रह कहलाते है। इनमें बुध शुक्र है और जो ग्रह पृथ्वी के बाहर की ओर चक्कर लगाते है, बाहरी ग्रह कहलाते हैं।

जो तारे आकाश में टिम टिमाते है वे नक्षत्र कहलाते हैं। कुछ तारे सूर्य से भी कई गुने बडे हैं। इसके आकार व आयतन के अनुसार भी विभिन्न रंग है। जैसे पीला, सफेद, लाल, नीला आदि। कुछ नीले तारे इतने बड़े हैं कि उनमें १००० सूर्य समा सकते है तथा कुछ लाल तारे इतने बड़े हैं कि उनमें १००० नीले तारे समा सकते हैं।

टेलिस्कोप

टेलिस्कोप को दूरदर्शक यन्त्र या दूरबीन कहते हैं। इस यन्त्र का निर्माण

सर्व प्रथम १६०९ ई० मे संसार के महान् वैज्ञानिक गैलीलियों ने की थी। इसके द्वारा बहुत दूर की वस्तु को सुगमता पूर्वक देखा जा सकता है।

बनावट:—इसमे दो उन्नतोदर लैस या ताल होते हैं। इन दोनों तालों मे एक बहुत अधिक फोक्स अन्तर (Focal lenght)का होता है जो आगे की ओर रहता है। इसे हम अभिदृश्य लैस (Object lens)कहते है। इसका ताल (लैंस) कम फोक्स अन्तर का होता है, जो आँख के पास रहता है। इसको उपनेत्र (eye piect)कहते है। ये दोनो ताल,दुरवीन की दो गोलाकार नालियों के सिरों पर लगे रहते है और इनमे से एक नली दूसरी नली के भीतर सुगमता पूर्वक अन्दर या बाहर निकाली जा सकती है। इसको अब मनुष्य टेलिस्कोप के द्वारा देखता है तो वह इन नलियो को आगे पीछे करके वस्तु का स्वच्छ बिम्ब देख सकता है। इस यन्त्र मे पूर्व मे वस्तु का बिम्ब आगे वाले ताल पर पड़ता है। यह प्रतिबिम्ब वास्तविक व छोटा व वस्तु का उल्टा होता है। किन्तु दूसरे लैस उपनेत्र (eye piece) पर जब इसका प्रतिबिम्ब पड़ता है वह अवास्तविक व बड़ा चित्र दिखाई देता है। इसको हम नालियो को आगे पीछे आवश्यकतानुसार सही दिशा मे रख कर बिम्ब को देखते है। वर्तमान काल मे दो प्रकार के दूरदर्शक यन्त्र प्रयोग मे लाये जाते है।

१—रिफ्लेक्टर (Reflector) परावर्तित दूरवीक्षण

२—रिफरेक्टर (Refrector) आवर्तित ,,

(१) **रिफ्लेक्टर दूरदर्शक यन्त्र:**—इस यन्त्र को बनाने का श्रेय प्रसिद्ध वैज्ञानिक न्यूटन को है। इस यन्त्र द्वारा हम वस्तु को बड़ी एवम चमकीली देख सकते है। इसमे एक शीशा लगा रहता है। इस शीशे पर वस्तुओ का प्रतिविम्ब पड़ता है। जिससे वस्तुओं का प्रतिबिम्ब बड़ा एवम् चमकीला हो जाता है। इसी कारण इस प्रकार के दूर दर्शक यन्त्र अधिक प्रचलित है।

२—रिफरेक्टिंग (Telescope) आवर्तीत दूरवीक्षण

इस प्रकार के यन्त्र मे बिम्ब सीधा पडता है। इस यन्त्र का आकार भी छोटा होता है इसमे किरणें बिखर जाती है अतः बिम्ब कुछ धुंधला हो जाता है।

रिफरेक्टिंग(Refrecting telescope) निम्न प्रकार के होते है।

१—ज्योतिष दूरदर्शक यन्त्र (Astronomical telescope) इसमे अन्तिम बिम्ब वस्तु की अपेक्षा उल्टा बनता है। इसलिये पहाड़, वायुयान इत्यादि वस्तुयें देखने के प्रयोग मे नही लाते है।

२—**टेरेस्ट्रियल या सांसारिक दूरवीक्षण**—ज्योतिष दूरदर्शक यन्त्र की कठिनाई को दूर करने के लिये इस प्रकार के दूरदर्शक यन्त्र की खोज की गई। इसमे उल्टा बिम्ब सीधा दिखाई पड़ता है।

३—**गेलीलियो का दूरवीक्षण**—इसको सर्वप्रथम गैलीलियो ने बनाया था। इस यन्त्र मे बिम्ब सीधा बनाता है तथा इसका आकार भी छोटा होता है, परन्तु इसमे यह दोष भी है कि इसमें किरणें बिखर जाती है अतः बिम्ब कुछ धुंधला हो जाता है।

प्रश्न २०—भू उपग्रह या स्पूतनिक के विषय में क्या जानते हो चन्द्रमा तक पहुँचने के कौन कौन से नये प्रयास किये गये है।

आज से १०० वर्ष पूर्व वैज्ञानिको ने चिड़ियो की भाँति पर लगा कर आकाश मे उड़ने की कल्पना की तो मनुष्यो ने उनका मजाक उड़ाया। किन्तु अब विश्व ही चन्द्रलोक तक पहुचने का प्रयत्न कर रहा है। वह समय दूर नही जब वह चन्द्रमा तक पहुच ही जायगा।

सर्व प्रथम रूस ने अपना उपग्रह दि० ४ अक्टूबर सन् १९५७ को अन्तरिक्ष मे छोड़कर समस्त विश्व को चकित कर दिया। इस उपग्रह का व्यास ५८ सेटीमीटर तथा भार ८३६ फेकोग्रा है। वह ऐलूमिनियम का बना है। इसके अन्दर विभिन्न यन्त्र लगे हैं जिनमे दो रेडियो ट्रान्समीटर भी लगे है। ये दस हजार किलोमीटर तक की दूरी तक संकेत देते है। शून्य मे चक्कर लगाते समय उपग्रह को अधिक गर्मी व सर्दी का सामना करना पडेगा किन्तु वैज्ञानिकों ने उसका निर्माण इस प्रकार किया है कि उसका तापक्रम नार्मल रहे ताकि यह अधिक अवधि तक चक्कर लगाता रहे। इस उपग्रह को छोड़ने के पूर्व नाइट्रोजन गैस भरी गई। इस राकेट मे बहुँत शक्तिशाली इंजिन लगे है जो राकेट को एक हजार किलोमीटर की ऊँचाई तक ले जाने मे सफल हुए है।

आरम्भ मे प्रथम उपग्रह को पृथ्वी का चक्कर लगाने मे लगभग ९६ मिनट लगाते थे तत्पश्चात् अनुमान लगाया जाता है कि इसके समय में कमी होती जाती है।

दूसरा उपग्रह रूस ने ३ नवम्बर सन् १९५७ को अन्तरिक्ष में छोड़ा। इस राकेट की सफलता ने तो समस्त विश्व को पूर्ण आशा दिलादी कि अवश्य ही निकट भविष्य में एक न एक दिन मानव चन्द्रलोक में पहुँचने में सफल हो जायगा। यह प्रथम राकेट की अपेक्षा ६ गुना भारी है। ईसका भार ५०८३ किलोग्राम है, इसकी ऊँचाई भी उसकी अपेक्षा अधिक है। यह लगभग ९३० मी० की ऊँचाई पर पृथ्वी की परिक्रमा कर रहा है। इसे एक परिक्रमा में लगभग १०० मि० लगते है। इसके अतिरिक्त इसमें रेडियो ट्रान्समोटर एवं आवश्यक संख्या में बिजली की बैटरियाँ लगी है। ईसमें बैठाकर "लाइका" कुत्ता भी भेजा गया है।

रूस की देखा देखी संयुक्त राष्ट्र अमेरिका ने भी अपना एक राकेट बनाकर १ फरवरी १९५८ ई० को अन्तरिक्ष में छोड़ा। अमेरिका का राकेट १०६ मि० में पृथ्वी का चक्कर लगा रहा है। इसकी गति का अनुमान १९,४०० मी० प्रति घण्टा है इसका भार ३० पो० है।

सोवियत राकेटों के ट्रान्समीटर खराब हो चुके है और अब प्रथम राकेट का अन्तरिक्ष में कोई पता नहीं है ऐसा अनुमान है कि वह नष्ट हो चुका है परन्तु द्वितीय की कार्य अवधि प्रथम से अधिक है। वैज्ञानिको का कहना है कि अमरीकी उपग्रह तो ढ़ाई वर्ष से लेकर दस वर्ष तक पृथ्वी की परिक्रमा लगा सकता है। निकट भविष्य मे ही सोवियत और अमेरिका के वैज्ञानिक अन्य भू-उपग्रह अन्तरिक्ष में छोड़ने जारहे है। अगर इसी प्रकार उन्नति होती रही तो वह दिन दूर नही कि मानव चन्द्रलोक में जा सकेगा।*

प्रश्न २१—पाचन संस्थान से क्या समझते हो। पाचन संस्थान में शरीर के कौन-कौन अंग कार्य करते हैं। अंगों का वर्णन कर उनके कार्य बतलायें।

पाचन संस्थान का अर्थ—हमारा शरीर असंख्य छोटे-छोटे कोष्ठों का बना हुआ है, जिन्हे कोशा (cell) कहते है। ये कोशो इतने छोटे होते है कि हम सूक्ष्म दर्शक यन्त्र के बिना इन्हे नही देख सकते। एक ही प्रकार के (cells)

***मानव ने इस क्षेत्र में सफलता प्राप्त करली है और अभी कुछ समय पूर्व गागरिन (रूसी निवासी) तदनन्तर शेफर्ड (अमेरिका वासी) अन्तरिम की यात्रा सफलता पूर्वक पूरी करके पृथ्वी पर सकुशल आगये है। दोनों स्वस्थ हैं।**

मिलकर तन्तु बनाते है तथा एक ही प्रकार के तन्तु मिलकर अंग (Organs) का निर्माण करते हैं जैसे हृदय, जीभ, फेफड़े इत्यादि। जब कई अंग मिल जाते है तो उसे संस्थान, कहते है। हमारे शरीर में कई संस्थानहै जैसे पाचन संस्थान मलमूत्र वाहक संस्थान, अस्थिसंस्थान आदि ईन्ही सस्थानो में पाचन संस्थान है। ईस संस्थान में भोजन को खाने व पचाने में जो-जो अग कार्य करते है उन्हे पाचन संस्थान कहते है।

पाचन सस्थान में निम्न लिखित अंग कार्य करते हैं।

(१) मुँह.—इस भाग मे जीभ, दाँत, लार ग्रन्थियो, मुलायम तालु आदि अवयव है। यह पाचन पथ का मुख्य अंग है। मुँह मे दो जबड़े होते है। ऊपर वाला जबड़ा स्थिर रहता है तथा नीचे वाला हिलडुल सकता है। इन 'दोनो जबड़ो मे १६-१६ दाँत होते है।"

(अ) दाँत:—दाँत चार प्रकार के होते है।

(१) चवर्क (Malars) (२) अग्र चर्वक (Premolars) (३) चीरने वाले (Curime) (४) काटने वाले (Incisers)।

दाँतों के निकालने का क्रम.—बच्चा जब ८ या ९ माह का हो जाता है, तब उसके दाँत निकलने प्रारम्भ हो जाते है। ये दाँत दो वर्ष तक क्रमानुसार निकलते रहते है। इस प्रकार बच्चे के २० दाँत निकल आते है। ये अस्थाई या दूध के दाँत कहलाते हैं। फिर दूध के दाँतो का गिरना ६-७ वर्ष की अवस्था से आरम्भ हो जाता है तथा उनके स्थान पर स्थायी दाँत आने लगते है। स्थायी दाँतों का निकलना लगभग १२-१३ वर्ष तक पूरा हो जाता है। दाँतो की संख्या प्रत्येक जाबड़े मे निम्नानुसार होती है।

(२) स्थाई		अस्थाई	
१—चर्वक	६	१—चर्वक	४
२—अग्रचर्वक	४	२—चीरने वाले	२
३—चीरने वाले	२	३—काटने वाले	४
४—काटने वाले	४		
	१६		१०

बच्चों के दातों में अग्रचर्वक नहीं होते हैं।

दातों के कार्य—

(१) **काटने वाले**—ये चपटे और पैने होते है इनसे भोजन छोटे-छोटे टुकड़ों मे बट जाता है।

(२) **चीरने वाले:**—ये लम्बे व नुकीले होते हैं। ये भोजन को फाड़ने तथा छेद करने का कार्य करते हैं।

(३) **अग्रचर्वक:**—ये भोजन को चबाने का कार्य करते है।

(४) **चर्वक:**—इनके सिरो पर तेज धार होती जिससे वे भोजन को अच्छी प्रकार चबाते है।

(ब) **जोभ.**—जीभ मास पेशियो की बनी होती है। जीभ के ऊपर व किनारो पर स्वाद ग्रन्थियां होती है। जिनको सहायता से हमे स्वादो की पहिचान होती है।

(स) **लार ग्रन्थियाँ:** —इनके तीन जोडे होते है। इन ग्रन्थियो में से एक पतला रस निकलता है जिसे लार कहते है जिससे भोजन सुगमता से निगला जा सकता है।

(२) **आहार नली:**—यह नली भोजन को मुँह से पेट या आमाशय मे पहुँचाती है इसकी लम्बाई ८ से १० इन्च होती है यह स्वाँस नली के पीछे स्थिति है।

(३) **आमाशय**— यह भोजन संस्थान का महत्वपूर्ण अंग है। यह चौडे थैले के समान होता है जो लगभग १२ इन्च लम्बा व ५ इन्च चोडा होता है इसमे दो द्वार होते है प्रथम ऊपर की ओर आहार नली से मिलता है इसका नीचे की ओर ड्यूडेनस से मिलता है इसमे भोजन को पचाने वाला मुख्य रस मिलता है जिसे आमाशय रस कहते हैं। इसमे भोजन तीन या चार घन्टे ठहरता है।

(४) **ड्यूडेनम:** - यह U के आकार की पतली नली होती है जिसका एक सिरा आभाशय से व दूसरा छोटी आँत से मिलता है।

(५) **क्षुद्र आँत:**—इसकी लम्बाई २० फीट होती है। यह कुन्डलाकार स्थिति मे होती है। यहाँ से भोजन बड़ी आंत मे जाता है।

(६) **बड़ी आँतः**—यह छुद्र आँत से जुडी होती है यह ५-६ फीट लम्बी होती है। इस भाग मे भोजन पचता है व भोजन का द्रव जैसा रूप हो जाता है। यहाँ पर भोजन का अधिकाँश भाग सोख लिया जाता है। जो अतिरिक्त भोजन बचता है वह आमाशय मे जाता है।

(७) **मलाशय**—यह बड़ी आँत का ही भाग है। इसमे मल आकर इकट्ठा होता रहता है। जब वह भर जाता है तब मल गुदा द्वारा बाहर निकल जाता है।

(८) **गुदा**—यह कूल्हे की हड्डियों के बीच स्थित है। यह भोजन पथ का अन्तिम भाग है इसी की सहायता से मल बाहर निकलता है।

(९) **यकृत**—इसे लिवर भी कहते हैं इसके बगल मे पितास्य होता है। यह शरीर के स्टोर का कार्य करता है। इसमे पचा हुआ भोजन इकट्ठा होता है। इसका वजन करीब ५० से ६० औन्स होता है। इसका रंग गहरा लाल होता है।

(१०) **पिताशा**—यह यकृत का ही भाग है। इसमे मे पित्त रस निकलता है, जो भोजन को पचाता है।

(११) **क्लोम** (Pancreas)—यह लगभग ७ इन्च लम्बा व १½ इन्च चोड़ा होता है इसका आकार पत्ती के समान होता है। यह इयूडेनम के बीच स्थित होता है। इसमे से क्लोम रस निकलता है। जो भोजन पचाने के काम मे आता है।

प्रश्न २२—**भोजन से आप क्या समझते हो ? हमारे भोजन में कौन कौन से तत्व है ? विस्तार से लिखिये ?**

भोजन

उत्तर—भोजन मानव के लिए अत्यन्त आवश्यक है भोजन के बिना मनुष्य अधिक दिनों तक जीवित नही रह सकता।

भोजन के लाभ—(१) शारीरिक श्रम करने हेतु यह शक्ति प्रदान करता है।

(२) भोजन से शरीर मे उष्मा उत्पन्न होती है जिससे शरीर गरम बना रहता है।

(३) इसकी सहायता से शरीर के अन्दर होने वाली टूट फूट की मरम्मत होती रहती है।

(४) इससे शरीर की वृद्धि होती है।

भोजन के तत्व—भोजन मे निम्नलिखित तत्व विद्यमान है।

(१) **प्रोटीन**—प्रोटीन मनुष्यो के लिए आवश्यक है यह शरीर की बढ़वार के लिए अत्यावश्यक है इसकी कमी से शरीर हृष्ट पुष्ट नहीं हो पाता। इसमें हाइड्रोजन कार्बन, आक्सीजन, गन्धक आदि सम्मिलित होता है। प्रोटीन अधिक मात्रा मे अण्डा, माँस, पनीर, दूध, दालें और मटर आदि मे होती है। प्रोटीन से निम्नलिखित लाभ है:—

(१) यह शरीर के तन्तुओ का निर्माण व टूट पूट होने पर मरम्मत करती है।

(२) यह पाचक रसो मे वृद्धि करती है।

(३) इसके शरीर मे होने से शरीर रोगमुक्त रहता है।

(४) इसकी कमी होने पर शरीर की वृद्धि रुक जाती है। इसी कारण बच्चो के शरीर की बढ़वार के लिये प्रोटीन युक्त पदार्थ अधिक देना चाहिये।

(५) शरीर मे प्रोटीन कीमात्रा अधिक होने पर वह वसा मे परिवर्तित हो जाती है जो आवश्यकता के समय शक्ति प्रदान करता है।

(२) **कार्बोहाइड्रेट**—इसके कार्बन, आक्सीजन व हाइड्रोजन आदि प्रमुख तत्व है। यह चावल, आलू, गेहूँ, मक्का, आम, केला, गाजर, मूली मूँगफली आदि मे अधिक मात्रा मे होती है। प्रोटीन के बराबर ही शक्ति प्रदान करती है। हमारे भारतीय भोजन मे कार्बोहाट्रेट की अधिक मात्रा पाई जाती है। क्योकि यहाँ की जलवायु भी गर्म है तथा देश मे ऐसे ही खाद्यान्नो की उपज अधिक होती है जिनमे कार्बोहाइट्रेट अधिक मात्रा मे पाया जाता है।

(३) **विटामिन**—इनका ज्ञान हम लोगों को इसी शताब्दी के आरम्भ मे हुआ है। विटामिन जीवन के आवश्यक तत्व है। अगर इन्हे "जीवन दाता" की संज्ञा दी जावे तो अत्युक्ति न होगी। अभी तक हमे ६ प्रकार के विटामिनो का ज्ञान है, इनका नामकरण अँग्रेजी के अक्षरों के नाम

पर किया गया है। जैसे ए, बी, सी, डी, ई के। इनको दो भागो मे विभक्त किया जा सकता है।

(१) पानी मे घुलने वाले (जैसे विटामिन B. C.)

(२) वसा fat में घुलनेवाले (जैसे A.D.E.K.)

विटामिन हमारे जीवन व स्वास्थ्य के लिए अत्यावश्यक है इनसे निम्नलिखित लाभ है :—

(१) ये रोग नाशक शक्ति उत्पन्न करते है।

(२) ये कार्बोहाइड्रेट व खनिज लवणों को शरीर के लिए उपयोगी बना देते है।

(३) इनसे शरीर का समुचित विकास होता है।

(४) इन्ही की वजह से पाचन क्रिया ठीक प्रकार से होती है।

(५) ये स्वस्थ सन्तान उत्पन्न करने में सहायक है।

विटामिन A—यह पालक, धनिया पोदीना, पान, करमकल्ला, दूध, अण्डा, शकर कन्द, याजर, पके टमाटर, बाजरा आदि में मुख्यतया पाई जाती है। इसकी कमी से शरीर में बेहरापन, खाँसी, जुकाम, नेत्ररोग व आँतो आदि की बीमारियाँ आदि उत्पन्न हो जाती है।

B—यह चावल, चौरई, गेहूँ के चोकर, दाल, पालक, सलजम, मूली, मेवा, प्याज, गाजर, अण्डा, दूध आदि मे पाई जाती है। यह अधिक समय तक खुले बर्तन में पकाने से नष्ट हो जाती है। जो व्यक्ति परिश्रम कम करते है उनमें इस विटामिन की कमी होती है।

इसकी कमी से हृदय में दुर्बलता, सिर दर्द, चित के एकाग्रता को कमी, सनक, बेरी २ लकवा आदि भयंकर रोग हो जाते है।

C—यह अँगूर, टमाटर- नीबू, सेव, आँवला, शलजम, करमकल्ला आदि में अधिक पाई जाती है। यह भी अधिक समय तक खुले बर्तन में पकाने से नष्ट हो जाती है। इसकी कमी से शरीर की रक्त नलियाँ कमजोर हो जाती है।

D—इसकी प्राप्ति दो प्रकार से करते है।

(१) उन खाद्यान्नो का सेवन करके जिनमे इसकी मात्रा अधिक होती है।

(२) सूर्य के प्रकाश द्वारा—सूर्य का प्रकाश त्वचा पर पड़ने से वह ग्रहण कर लेती है।

यह घी, मक्खन, दूध, अण्डे, मछली का तेल, तिल आदि में पाई जाती है। इसकी कमी से हड्डियों का विकास ठीक नही होने पाता, बच्चों के लिए अति आवश्यक है क्योकि इसके अभाव मे दाँत देर से निकलते हैं।

E—यह गेहूँ के अंकुर, अण्डा, मेवा, पत्तीदार तरकारियों फल आदि में पाई जाती है दूध व मांस में कम मात्रा में पाई जाती है। इसकी कमी से सन्तानोत्पत्ति की शक्ति कम हो जाती है।

K—यह टमाटर, गोभी, आलू, गेहूँ के चोकर, अण्डा, पालक, करमकल्ला आदि में विशेष मात्रा में पाई जाती है। इसकी कमी होने से रक्त पक्का नहीं होने पाता है। यह विटामिन गर्भिणी स्त्री के लिए आवश्यक है।

(४) **बसा**—इसमें कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन नामक तत्व पाये जाते है। यह विभिन्न चिकनाई के पदार्थ मे अधिक पाया जाता है। इससे निम्नलिखित लाभ है—

(१) इससे शरीर में शक्ति उत्पन्न होती है।

(२) शरीर में वसा की अधिकता से वह त्वचा के नीचे चर्बी के रूप में एकत्रित हो जाती है। जिसश शरीर सुडौल हो जाता है।

(३) इनसे शरीर में उष्मा पैदा होती है।

(५) **लवण खनिज पदार्थ**—हमारे भोजन में निम्नलिखित मुख्य लवण ब खनिज पदार्थ अति आवश्यक है।

(१) कैलिशियम (२) क्लोरीन (३) सोडियम (४) पोटेशियम (५) गन्धक (६) लोहा (७) फासफोरस (८) मैगनीज (९) कोकल्ट (१०) ताम्र (११) आयोडीन आदि।

ईन लवणो और खनिज पदार्थों का मुख्य कार्य पाचक रसों को बढाना व शरीर के विकास में योग देना हैं।

(६) **कैलशियम**—यह दूध, सन्तरा, मछली, अण्डा, हरी तरकारियों आदि में पाया जाता है। इसका कार्य दाँत व हड्डी के निर्माण में सहायता

देना है। इसकी कमी से हड्डी व दाँतों में खराबी उत्पन्न हो जाती है।

(७) **फासफेट**—यह मास, अण्डा, मेवा, दूध, पनीर, गेहूँ आदि मे पाया जाता है। इसकी कमी से हड्डियों तथा दाँत कमजोर पड़ जाते है।

(८) **आयोडीन**—यह मछली के तेल, जिगर तथा हरी तरकारियो मे पाया जाता है। इसकी कमी से मस्तिष्क का पूर्ण विकास नही होने पाता।

(९) **गन्धक**—यह सेम, मूली, पालक, दाल, करम कल्ला, अण्डा आदि मे पाया जाता है। यह भोजन पचाने म सहायता करता है।

(१०) **मेगनेशियम**—यह साग भाजियो व मॉस मे पाया जाता है। यह भी भोजन पचाने मे सहायता है।

(११) **साधारण नमक**—यह स्वास्थ्य के लिए उपयोगी है।

(१२) **पानी**—हमारे शरीर मे ७०% से अधिक पानी है। प्रोटीन, वसा तथा कार्बोहाइड्रेट के अतिरिक्त हमारे भोजन का अधिकाश भाग पानी ही होता है। यह रक्त को तरल बनाये रखता है। मूत्र, पसीना आदि के रूप मे पानी शरीर के विषैले पदार्थों को बाहर निकालता है।

प्रश्न २३—सन्तुलित भोजन किसे कहते हैं औसत व्यक्ति के लिए एक दिन के सन्तुलित भोजन की मात्रा बताओ।

उत्तर—प्रत्येक मनुष्य का भोजन मुख्यतया उसकी तीन बातो पर निर्भर है (१) जलवायु (२) मानसिक कार्य (३) परिश्रम की तीव्रता। उपरोक्त तीनो बातों को ध्यान मे रखते हुये वह भोजन जिसमे भोजन के सभी तत्व उचित मात्रा मे उपस्थित हों, ऐसे भोजन को आदर्श या 'सन्तुलित भोजन' कहते है।

विभिन्न प्रकार के कार्य करने वालो को विभिन्न प्रकार के भोजन की आवश्यकता होती। जो व्यक्ति अधिक परिश्रम करता है, उसे शरीर मे अधिक उष्म की आवश्यकता होती है। अतः उसे ऐसा ही विटामिन व वसा युक्त भोजन देना चाहिये जिससे उसके कार्य अनुसार अधिक उष्मा मिले। इसके अतिरिक्त जो व्यक्ति खाट पर लेटे रहते है उन्हें कम भोजन की आवश्यकता

होती है तथा उनकी अपेक्षा कुर्सी पर बैठकर कार्य करने वालों को अधिक भोजन चाहिये। व शारीरिक श्रम करने वालों को इनकी अपेक्षा अधिक खाना चाहिये। इसी प्रकार गर्भवती या बच्चो को दूध पिलाने वाली स्त्रियों को अन्य स्त्रियो की अपेक्षा अधिक भोजन चाहिये। तथा छोटे बच्चों के लिये भी बडों की अपेक्षा ऐसे पदार्थों की अधिक आवश्यकता होती है जिनमें उनकी समुचित बढवार हो सके।

औसत व्यक्ति के लिये जो रात दिन चारपाई पर पड़ा रहता है उसे भी प्रतिदिन ऐसे भोजन की आवश्यकता है जिससे कम से कम १७०० केलोरी ताप उत्सन्न होता हो। यह ताप उसको श्वास क्रिया हृदय को गतिशील बनाने आदि आवश्यक कार्यों मे व्यय होती है। १७०० केलोरी ताप के अतिरिक्त अन्य ताप सक्रियता व अन्य कार्य मे खर्च होती है साधारण कार्य करने वाले व्यक्ति के लिये आमतौर पर ३४०० केलोरी ताप की आवश्यकता पड़ती है। कठिन परिश्रम करने वाले व्यक्तियों को जैसे मजदूर, लकड़हारा आदि को ९-१० हजार केलोरी ताप की आवश्यकता पड़ती है।

भोजन पदार्थो के अनुसार सन्तुलित भोजन की प्रतिदिन की तालिका निम्नलिखित होनी चाहिये जोकि एक वयस्क व स्वस्थ व्यक्ति के लिये है।

(१) प्रोटीन	१०० से १०५ ग्राम
(२) कार्बोहाइड्रेट	४५० से ५०० ग्राम
(३) चर्बी	९० से १०० ग्राम
(४) लवण व खनिज	आवश्यकतानुसार
(५) विटामिन	,,

भारतीय सूचना व प्रसार मंत्रालय के अनुसार बौद्धिक तथा अधिक बैठने का काम करने वालों के लिये निम्नलिखित दैनिक भोजन की आवश्यकता पड़ती है।

(१) अनाज (गेहूँ, जौ, बाजरा इत्यादि)	१४ औस
(२) दाल	३ ,,
(३) साग	४ ,,

(४) कन्दमूल (आलू, गाजर, मूली आदि)	३ ,,
(५) अन्य हरी तरकारियाँ	३ ,,
(६) दूध	१० ,,
(७) चीनी या गुड़	२ ,,
(८) फल	३ ,,
(९) तेल घी	२ ,,
(१०) मछली मांस*	३ ,,
(११) अण्डा	१ ,,

निम्नलिखित रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए ।

१—पलको मे सूजन हो जाने पर· ···दवा प्रयोग करो । (नेत्रो को सोडे के घोल से धोकर कीटाणु नाशक)

२—अगर भोजन मे····· की कमी हो तो दाँतों के रोग लग जाते है । (केलशियम, तथा विटामिन A. D.)

३—दृष्टि दोष·· ···होते है । (लेट कर पढ़ने से होते है)

४—पागल कुत्ते के काटने पर·····के एन्जेक्शन लगवाना चाहिये । (एन्टीरेविक)

५—विकनी रोग हो जाने पर · ···लगाना चाहिए । (सिन्दूर को तेल मे मिलाकर)

६—२ या ३ साल के बच्चे के·····दाँत होते है । (२० दाँत)

७—छुद्र आँत की लम्बाई····· होती (२० फीट) है ।

८—यकृत का वजन····· होता है । (५० से ६० औस)

९—वायु मे नाइट्रोजन·····प्रतिशत होती है । (७९%)

१०—हवा में कार्बन डाइआक्साइड ··होने पर मनुष्य मर जाता है । (२५%)

११—रक्त स्राव···तीन प्रकार से होता है । (धमनी, शिराव, कैशिका द्वारा)

१२—वायु में नायट्रोजन·· व आक्सीजन···भाग है । ($\frac{४}{५}$ व $\frac{१}{५}$)

१३—रक्त में···% जल और···ठोस पदार्थ हैं । (९० व १०%)

---

*बुनियादी, तालीम में तामसिक भोजन क्या निषेध है ।

१८—रोगों के कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए···प्रयोग करना चाहिए। (कन्डीश फ्लूड)

१५—साधारण कार्य करने वाले मनुष्य को···ताप की आवश्यकता है। (३४०० केलोरी)

१६—दीमक का मुख्य भोजन····नामक पदार्थ है। (सेल्यूलोज)

१७—औसत व्यक्ति के लिये लगभग···प्रोटीन की आवश्यकता है। (१½ छ०)

१८—क्षय रोग·· नामक कीटाणुओं से होता है। (माइको बैक्टीरियम ट्यूबर क्लोसस)

१९—डिप्थारिया रोग होने पर···के इन्जेक्सन लगाओ। (एन्डीडिप्थीरिया)

२०—हैजे से बचने के लिए···प्रयोग करो। (प्याज या नीबू)

प्रश्न २४—निम्नांलिखित ठीक है या नहीं कारण सहित प्रत्येक का पांच पंक्ति में उत्तर दो।

१—कुओं, गड्ढो तथा तालाबो मे मछलियाँ व मेढक रहने देना चाहिए।

यह सही है। क्योंकि अधिकाश हानिकारक कीटाणु, कुये, गन्दे गड्ढे तथा तालाबो मे ही निवास करते है। तथा वे अपने अण्डे इन्ही स्थानो मे देते है। इस प्रकार उनकी संख्या दिन प्रतिदिन बढती जाती है। अगर इन स्थानों में मछलियाँ तथा मेंढक होने पर उपरोक्त अण्डे ही उनका प्रमुख भोजन होने के कारण वे अण्डों को खा लेते हैं। इस प्रकार अण्डो की संख्या में वृद्धि अधिक नही होने पाती। कीटाणुओं के अण्डे नष्ट होने पर उनकी संख्या मे वृद्धि नहीं होने पाती। इसी कारण कुये, गड्ढे तथा तालाबों मे मछलियाँ तथा मेंढक रहने देना चाहिए।

(२) सोते समय खिड़की व दरवाजे बन्द करके सोना चाहिए।

यह गलत है। मनुष्य सदैव आक्सीजन ग्रहण करता है तथा कार्बनडाय-आक्साइड छोड़ता रहता है। कमरे के दरवाजे व खिड़की बन्द होने से स्वच्छ वायु आक्सीजन सोते हुए मनुष्य को पर्याप्त मात्रा में नही मिल पावेगी तथा

अगर वह स्थान बन्द है तो मनुष्य द्वारा छोड़ी हुई कार्बनडायआक्साइड भी बाहर नही निकल पावेगी। जो इकट्ठी होकर मनुष्य को हानिकारक सिद्ध होगी। अतः इसी कारण कमरे के खिड़की दरबाजे वन्द करके नहीं सोना चाहिए।

(३) नाक द्वारा स्राब होने पर रोगी के पैरों को ठन्डे पानी मे डुबो देना चाहिए।

यह गलत है। सदैव रक्त स्राव होने पर पैरों को गुन गुने पानी मे डुबोना चाहिए। सदैव ठन्डा पानो सिर के ऊपर डालना चाहिए। ठण्डा पानी सिर के ऊपर डालने से रक्त का बहाव कम हो जाता है।

(४) गर्भवती स्त्री को कैलशियम की मात्रा कम देना चाहिए।

यह गलत है। गर्भवती स्त्री को कैलशियम की मात्रा साधारण स्त्री से अधिक देना चाहिए। क्योंकि उसे साधारण स्त्री से बालक की वृद्धि के हेतु अधिक मात्रा में कैलशियम की आवश्यकता होती है। अगर उसे कैलशियम की मात्रा अधिक नहीं दी जावेगी तो बालक की वृद्धि समुचित मात्रा में होना असम्भव है।

(५) अधिक प्रकाश मे आँखों के पलक अधिक व कम प्रकाश में कम खुलते हैं।

यह गलत है। अधिक प्रकाश मे आँखों के पलक सदैब कम व कम प्रकाश में अखिों के पलक अधिक खुलते हैं। क्योंकि अधिक प्रकाश की किरणें-आँखों की पुतलियों से सीधी व तेजी में टकराती हैं। इसी कारण पलक अधिक प्रकाश मे कम खुलते है।

(६) हड्डी टूटने पर X-ray कराना आवश्यक है।

यह सही है क्योंकि हड्डी टूटने पर कभी कभी साधारण फ्रेक्चर होता है तो कभी कम्पाउन्ड फ्रेक्चर होता है। कभी इस प्रकार से फ्रेक्चर होता है कि जिसके लक्षण शरीर के ऊपर कम प्रतीत होते है। अतः X-Ray कराने से हड्डी टूटने की सही स्थिति ज्ञात हो जाती है। जिससे उसका पर्याप्त उचित प्रकार से प्रबन्ध कराया जा सकता है।

(७) श्वाँस द्वारा भीतर जाने वाली वायु तथा उससे बाहर आने वाली वायु मे कोई अन्तर नही होता।

यह गलत है। श्वास के द्वारा सदैव आक्सीजन युक्त वायु ली जाती है तथा श्वास के द्वारा कार्बन डायआक्साइड वायु निकाली जाती है।

(८) धमनियो द्वारा सदैव शुद्ध रक्त फेंफडों मे पहुंचाता है।

यह गलत है। धमनियों द्वारा सदैव फेंफड़ों में अशुद्ध रक्त जाता है।

प्रश्न २५—निम्नांकित में बाई ओर समस्याओं की तालिका तथा दाहिनी ओर उन समस्याओं के उत्तर दिए गये है। इन दिए गये उत्तरों में से सही उत्तर चुनकर प्रत्येक समस्या के समक्ष लिखिए।

१—दूध मे	१—घाव को डेटोल से धोना चाहिये (२)
२—कुत्ते काटने पर	२—खाँसी आती है, गले में दर्द होता है। और कभी-कभी बुखार भी आता है (९)
३—घरेलू मक्खी की लम्बाई	३—१४ करोड़ १५ लाख मील है। (५)
४—तपेदिक मे	४—डी० डी० टी० का प्रयोग करना चाहिए। (६)
५—मंगल पृथ्वी से	५—मौसम ज्ञान होता है। (७)
६—खटमल मारने के लिए	६—लगभग ६००० ऐन्टीग्रोंड है। (८)
७—वायु दबाव से	७—कटे स्थान पर चीरा लगाकर पुटेशियम पर मेगानेट लगाना चाहिए। (१०)
८—सूर्य का तापक्रम	८—ए०, बी० डी० व ई० विटामिन होते हैं (१)
९—टोसिल बढने पर	९—$\frac{1}{3}$ इन्च होती है। (३)
१०—साँप काटने पर	१०—खाँसी आती है और बुखार रहता है (४)